DNS-01

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

प्राकृतिक चिकित्सा एवं रोगोचार विधियाँ

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

प्रो. अशोक शर्मा
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय ,
कोटा (राज.)

संयोजक एवं सदस्य

संयोजक
वैद्य नित्यानंद शर्मा
सहायक आचार्य (योग एवं स्वास्थ्य शिक्षा)
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय ,
कोटा (राज.)

सदस्य

डॉ. डी.एन. शर्मा
किच्छा, उत्तराखंड

डॉ. ओ.एन. तिवारी
विलासपुर (छत्तीसगढ़)

डॉ. दुर्गा अरोड़
नई दिल्ली

प्रो. गोविन्द शुक्ला
करवड़ जोधपुर (राज.)

डॉ. जयसिंह यादव
जोधपुर (राज.)

डॉ. राकेश जोशी
उदयपुर (राज.)

डॉ. किरण गुप्ता
जयपुर (राज.)

डॉ. गोविन्द पारीक
एनआईए, जयपुर (राज.)

डॉ. अंजना शर्मा
कोटा (राज.)

संपादक एवं पाठ लेखन

संपादक
वैद्य नित्यानंद शर्मा
BAMS, M.D., Ph.D. (योग एवं आयुर्वेद)
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय ,
कोटा (राज.)

भाषा संपादक
डॉ. अंजना शर्मा
चिकित्साधिकारी ,राज. वैद्य दा.द.जोशी.
जिला आयुर्वेद चिकित्सालय, तलवड़ी,
कोटा (राज.)

पाठ लेखक

डॉ. महेन्द्र कुमार जाजपुरा
योग एवं प्राकृतिक चिकित्सक
निदेशक, राष्ट्रीय स्वास्थ्यवर्धक योग तीर्थ,
जोधपुर (राज.)

वैद्य नित्यानंद शर्मा
आयुर्वेदाचार्य एम.डी.पीएचडी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय ,
कोटा (राज.)

डॉ. अंजना शर्मा
चिकित्साधिकारी ,राज. वैद्य दा.जोशी. जिला
आयुर्वेद चिकित्सालय, तलवड़ी, कोटा (राज.)

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. अशोक शर्मा
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय ,
कोटा (राज.)

प्रो. लीला राम गुर्जर
निदेशक, अकादमिक
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय ,
कोटा (राज.)

डॉ. शिवकुमार मिश्रा
निदेशक, पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय ,
कोटा (राज.)

उत्पादन मुद्रण - जनवरी 2018

इस सामग्री के किसी भी अंश की वमखुविवि कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिमियोग्राफी चक्रमुद्रण द्वारा या अन्यत्र पुन: प्रस्तुत कने की अनुमति नहीं है।

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय कोटा

प्राकृतिक चिकित्सा एवं वैकल्पिक रोगोपचार विधियां

अनुसूची

इकाई संख्या	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
1.	प्राकृतिक स्वास्थ्य विज्ञान	2
2.	रोग के कारण, लक्षण एवं आकृति निदान	23
3.	प्राकृतिक चिकित्सा का परिचय एवं सिद्धांत	46
4.	प्राकृतिक चिकित्सा का इतिहास एवं विकास	66
5.	षष्टम् ईशतत्व एवं उसकी चिकित्सा. विश्वास एवं प्रार्थना चिकित्सा	90
6.	आकाश (अंतरिक्ष) तत्व एवं उसकी चिकित्सा. उपवास् विश्राम, गहरी निद्रा एवं मनोचिकित्सा	99
7.	वायु (हवा) तत्व एवं उसकी चिकित्सा. यौगिक क्रिया एवं अग्निहोत्र	123
8.	अग्रि (सूर्य) तत्व एवं उसकी चिकित्सा. रंगीन प्रकाश	136
9.	मालिश चिकित्सा (धूप में तेल मालिश या उबटन)	158
10.	जल (पानी) तत्व एवं उसकी चिकित्सा. उषा:पान् स्नान, ठण्ड़ा.गरम उपचार की पट्टियाँ, सेंक यंत्र	180
11.	मिट्टी (पृथ्वी) तत्व एवं उसकी चिकित्सा	221
12.	चुम्बक चिकित्सा, गंध चिकित्सा, कल्प चिकित्सा	230
13.	रसाहार, फलाहार, आहार एवं जड़ी बूटी चिकित्सा	249
14.	गौ तत्व एवं पंचगव्य चिकित्सा. गोबर् गोमूत्र, दूध, दही एवं घी	300
15.	वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियाँ	313
16.	घासा चिकित्सा पद्धति	330
17.	Introducation of Yoga and Naturopathy	338

इकाई : 1

प्राकृतिक स्वास्थ्य विज्ञान

इकाई की रूपरेखा

1.1 उद्देश्य

1.2 प्रस्तावना

1.3 प्रकृति , जीवन और स्वास्थ्य

1.4 प्रकृति या मानव की प्रकृति

1.5 आरोग्यरूपी प्राकृतिक स्वास्थ्य

1.6 रोगी एवं स्वस्थ व्यक्ति की पहचान तथा उनके लक्षण

1.7 रोग का स्वरूप

1.8 सारांश

1.9 बोधात्मक प्रश्न

1.10 संदर्भ ग्रंथ

1.1 उद्देश्य

- प्रकृति क्या है और उसके नियम क्या है
- पंचमहाभूत का प्रभुत्व क्या है
- वनस्पतियों एवं जीवों का निर्माण कैसे हुआ है
- मानव शरीर के निर्माण में कौन.कौन से तत्व सम्मिलित है
- शरीर की प्रकृति को बनाये रखने में कौन.कौन सी सहायक शक्तियाँ सम्मिलित होकर काम करती है
- शरीर की प्रकृति को अपघटित करने में अर्थात् सहायक शक्तियों का ह्रास करने में मुख्यत: कौन.सा तत्व जिम्मेदार है
- ये शक्तियाँ क्या है, कैसे आती है, कहाँ रहती है, क्या काम करती है तथा रोगों से लडक़र जीवन की रक्षा कैसे करती है
- विजातीय द्रव्य क्या है, कैसे पैदा होता है, संचित होने पर किसे नुकसान पहूचाता है और इसका समाधान कैसे होता है
- आरोग्यरूपी प्राकृतिक स्वास्थ्य क्या और किसे कहते है

- पंच तत्वों के संतुलन से मानव शरीर को आरोग्यरूपी प्राकृतिक स्वास्थ्य कैसे मिलता है
- स्वास्थ्य के लिए विश्व स्वास्थ्य संगठन एवं विभिन्न राष्ट्रों की सरकारें क्या कहती है और उनके क्या प्रयास है
- स्वस्थ रहना ही क्यों आवश्यक है
- स्वस्थ, अस्वस्थ व्यक्ति की पहचान किन.किन लक्षणों के आधार पर की जा सकती है
- क्या स्वास्थ्य की अनुपस्थिति ही रोग है, इसका प्रभाव और दशा क्या है
- रोग के बारे में कौन क्या.क्या कहता है
- स्वास्थ्य में गिरावट कैसे आती है और रोग आने के क्या.क्या कारण है
- वैज्ञानिक एवं प्राकृतिक दृष्टि से रोग को कैसे पहचाना जा सकता है और उनकी पहचान के क्या.क्या आधार है
- शरीर में दोष कहाँ.कहाँ संचय होते है

1.2 प्रस्तावना

प्राकृतिक स्वास्थ्य विज्ञान का यह ध्येय है कि हम सौ वर्ष तक स्वस्थ रहते हुए , अपने सब कामों को करते हुए जियें। हमारा शरीर अपनी कर्म.शक्तियों से सम्पन्न रहें , शक्तियों का ह्रास न हो , हमारे सभी आंतरिक व बाहरी अंग अपना.अपना काम पूर्ण दक्षता से करते रहें। यह वास्तव में सत्य है कि प्रकृति के नियमों पर चल कर मनुष्य आजीवन स्वस्थ एवं आनन्दमय जीवन जी सकता है। परन्तु ज्यों.ज्यों मनुष्य प्रकृति से दूर अर्थात् उसके नियमों की अवहेलना करेगा , त्यों.त्यों उसके जीवन में दु:ख , समस्या, रोग आते जायेंगे, वह कष्टों से घिरता जायेगा, जीवन नीरस बनता जायेगा और जीवन के परम लक्ष्य से काफी दूर रह जायेगा। इसलिए आधुनिक जीवन.शैली एवं आहार.विहार से सतर्क (पूर्णत: सावधान) हो जाइये और प्रकृति के संग रह कर स्वस्थ तन.मन से काम कीजिए।

सभी मनुष्य स्वस्थ रहना चाहते है और यह उनका जन्म सिद्ध अधिकार भी है। उन्हें स्वस्थ रहने के लिए कोई बाधा न आये , ऐसी व्यवस्था पहले ही प्रकृति ने कर रखी है। स्वस्थ जीवन मनुष्य की सर्वोत्तम सम्पत्ति है। यदि जीवन में आरोग्यता अर्थात् स्वास्थ्य नहीं है तो मानव जीवन निरर्थक एवं भार.स्वरूप है। मनुष्य अपने स्वास्थ्य की रक्षा स्वयं करे तो ही वह स्वास्थ्य प्राप्त करने में सफल हो सकता है। उसे कब , क्या, कैसा, कितना खाना चाहिए; कैसे वातावरण में रहना चाहिए और दूसरों के साथ कैसा आचरण करना चाहिए। जो मनुष्य सादा जीवन, उच्च विचार, मोटा खाओ, मोटो पहनों, खाया.पीया पचा लो और आंतरिक व बाहरी स्वच्छता सदैव बनाये रखो जैसे विचारों को अपने हृदय में धारण कर लेता है , उसे स्वास्थ्य मिलने में सफलता मिल जाती है। उसका जीवन पार हो जाता है। अन्यथा असफल मनुष्य वास्तविक जीवन जीते नहीं बल्कि वे तो जहरीली रासायनिक दवाओं के सहारें सुलगते रहते है।

1.3 प्रकृति, जीवन और स्वास्थ्य

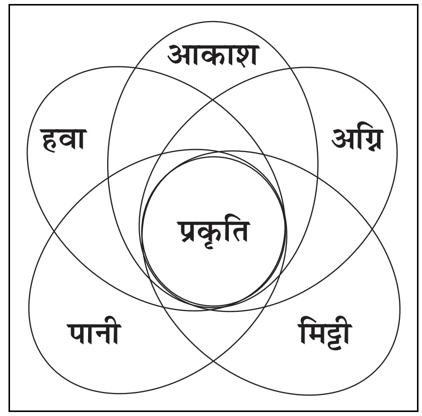

सृष्टि निर्माण से पूर्व सम्पूर्ण जीवों की अन्तरात्मा सर्व गुणों से सम्पन्न भगवद् रूप में थी। उसमें चेतना जागृत होने पर पंचमहाभूत रूपी प्रकृति (कुदरत) के शृँजन से ब्रह्माण्ड का उदय हुआ। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के हर कण.कण का निर्माता , पालनहार एवं संहारक वहीं परमात्मा है। जिसे परमाणु कहो, शक्ति कहो या प्रकृति। प्रकृति के कण.कण में बसा है 'परमात्मा'। जिसके आंतरिक स्वरूप को देखें तो उसमें मिलेंगे 'पंचमहाभूत' अर्थात् आकाश, हवा, अग्नि, पानी और मिट्टी। ये पंच तत्व जहाँ.जहाँ जागृत अवस्था में पाये जाते है , वहाँ.वहाँ जीवनरूपी जीव का प्रादूर्भाव या प्रकटीकरण होता है अर्थात् जागृत अवस्था में ये पाँच तत्व स्वयं ही जीवनरूपी जीव है। ये पंच तत्व जागृत.अजागृत अवस्था में हर जगह अलग.अलग अनुपात में पाये जाते है। प्रत्येक जागृत तत्व में किसी न किसी जीव की उत्पति होती है। कई जीव एक तत्व से निर्मित होते है तो कई जीव दो , तीन, चार एवं पाँच भिन्न.भिन्न तत्वों के संयोग से निर्मित होते है। उन जीवों की प्रकृति भी उसी प्रकार भिन्न.भिन्न पायी जाती है, जिन तत्वों से उनकी उत्पति हुई। हर समुदाय के जीव के शरीर में तत्वों का एक नियत अनुपात होता है। किसी समुदाय के जीवों में किसी विशेष तत्व की अधिकता पायी जाती है , तो अन्य समुदाय के जीवों में कमी। इस प्रकार पूरे बह्माण्ड की समस्त वस्तुओं का निर्माण , परिवर्तन, विकास और विनाश पंचतत्वों की जैव.रासायनिक मात्रा से ही हो रहा है।

जब किसी तत्व से शक्ति अलग हो जाती है तो वह अजागृत हो जाता है , उचित परिस्थितियाँ मिलने पर कुछ समय अंतराल के बाद वह फिर से जागृत अवस्था में आ सकता है। ऐसा ही हमारे शरीर में भोजन से शक्ति अलग हो जाने पर शेष अजागृत पदार्थ अपशिष्ट के समान है , शरीर में रूका हुआ पानी और हवा भी दूषित होकर अपशिष्ट बन जाते है , जिसका शरीर से बाहर निकल जाना ही श्रेष्ठ है और शरीर की प्रकृति उसे बाहर निकालने के लिए सदैव तत्पर रहती हुई जीव को स्वस्थ बनाये रखती है। शरीर की प्रकृति में जीवनी.शक्ति, प्राण ऊर्जा एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता पायी जाती है। शरीर में मौजूद अपशिष्ट (विजातीय द्रव्य) से रोगाणुओं (बैक्टेरियाँ) की उत्पत्ति एवं विकास के लिए एक अनुकूल वातावरण मिल जाता है, रोगाणु अपशिष्ट खा.खाकर संख्या में बढक़र एक पूरी फौज तैयार कर लेते है। यदि शरीर में अपशिष्ट उसी दर से निरन्तर बनता ही रहा तो वह मनुष्य के शरीर में जीवनी.शक्ति , प्राण ऊर्जा एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता का ह्रास होकर रोग पैदा करेगा और स्वास्थ्य बिगड़ जायेगा। अपशिष्ट शरीर में बढऩे पर मुख्यत: आकाश तत्व की कमी और अग्नि तत्व की अधिकता भी हो जाती है। संसार के अलग.अलग प्रदेशों में तथा वहाँ निवास करने वाले प्राणियों के शरीर में तत्वों की कमी और अधिकता निम्न प्रकार से पायी जाती है.

1. ध्रुव.प्रदेशों में पानी की अधिकता होने से वहाँ शीत के कारण सदा बर्फ जमी रहती है , वहाँ वनस्पतियाँ तो नहीं है , परन्तु कुछ जीव ही है। ऐसी विचित्रता का कारण वहाँ अग्नि तत्व की कमी होना है।
2. भूमध्य रेखिय प्रदेश जैसे. दक्षिण अफ्रिका एवं दक्षिण अमेरिका की बात करे तो वहाँ अग्नि तत्व की इतनी अधिकता है कि वहाँ का प्रदेश तवे के समान जलता रहता है , चारों दिशाएँ आग उगलती रहती है।
3. अरब और बंगाल की खाड़ी जैसे स्थानों में वायु तत्व की अधिकता होती है।
4. आसाम एवं पूर्वी द्वीप समूहों जैसे स्थानों में वर्षा की अधिकता जल तत्व की अधिकता का सूचक है।

इस प्रकार हर वस्तुओं में विभिन्नताओं का कारण उस प्रदेश की तात्विक न्यूनता या अधिकता को दर्शाति है। तत्वों की मात्राओं में अन्तर के आधार पर ही देह का ढ़ाँचा और स्वभाव अलग.अलग बनता है। ठीक ऐसा ही किसी का स्वस्थ और अस्वस्थ रहना भी तत्वों की मौजूद मात्रा पर ही निर्भर करता है। आहार.विहार की गड़बड़ी के कारण पंच तत्वों का नियत परिणाम घट.बढ़ जाता है , जिसके फलस्वरूप शरीर में रोग पैदा हो जाता है। निम्न तत्वों के परिणाम में परिवर्तन से निम्न रोग उत्पन्न होते है.

1. आकाश तत्व की मात्रा में परिवर्तन से मूर्च्छा , मिर्गी, उन्माद, पागलपन, सनक, अनिद्रा, वहम, घबराहट, अच्छे.बुरे स्वप्र, गूँगापन, बहरापन, विस्मृति आदि रोग उत्पन्न होते है।
2. वायु तत्व की मात्रा में परिवर्तन से गठिया , लकवा, दर्द, कंपवात, अकडऩ, गुल्म, हडफ़ूटना, नाड़ी विक्षेप, मंदाग्नि, शिथिलता आदि रोग उत्पन्न होते है।
3. अग्नि तत्व की मात्रा में परिवर्तन से फोड़े.फुंसियाँ, चेचक, ज्वर, रक्त.पित्त, हैजा, दस्त, क्षय, श्वास सम्बन्धी, उपदंश आदि रोग उत्पन्न होते है।
4. जल तत्व की मात्रा में परिवर्तन से जलोदर , पेचिश, संग्रहणी, बहुमूत्र, प्रमेह, स्वप्रदोष, प्रदर, नपुंसकता, बाँझपन, जुकाम, खाँसी आदि रोग उत्पन्न होते है।
5. मिट्टी तत्व की मात्रा में परिवर्तन से हाथीपाँव , तिल्ली, जिगर, रसौली, मेद वृद्धि, मोटापा आदि रोग उत्पन्न होते है।

इस प्रकार दो , तीन, चार या पाँच तत्वों के मिश्रित विकारों से अनेकानेक जटील रोग शरीर में पैदा हो जाते है। मानव शरीर में इन तत्वों की मात्रा में परिवर्तन का मूल कारण खान.पान , रहन.सहन और आचार.विचारों में मन और जीभ का प्रभूत्व होना माना गया है। शरीर में सभी तत्व अपनी.अपनी मात्रा में नियत रहें, उसके लिए मन को काबू में रखें और जीभ पर लगाम कसें; तभी उत्तम स्वास्थ्य एवं आनन्दमय जीवन को पाया जा सकता है। यदि स्वास्थ्य पर ध्यान दिया जाये या प्राकृतिक जीवन.शैली को अपनाया जाये तो बड़ी सरलता से शरीर में पंच तत्वों का नियत अनुपात बना सकता है। यहीं पंच तत्वों की प्राकृतिक चिकित्सा है। खान.पान पर विस्तृत ज्ञान आयुर्वेद में भी मिलता है तथा रहन.सहन और आचार.विचार पर विस्तृत ज्ञान योग में भी मिलता है। लेकिन आरोग्यरूपी दीर्घ जीवन के लिए तो प्रकृति

के अनुरूप ही जीवन.यापन करना सबसे सरल व सटीक है। आइये आगे के क्रमबद्ध अध्ययन के दौरान जीवनोपयोगी बातें जाने, समझे, आजमाये और सपरिवार जीवनभर स्वस्थ एवं आनन्दित रहें।

1.4 प्रकृति या मानव की प्रकृति

प्रकृति या मानव की प्रकृति (शरीर , मन एवं आत्मा) में निम्न तीन प्राकृतिक क्रियायें सदैव व स्वत: अनवरत होती रहती है.

1. विसर्ग : किसी वस्तु का ग्रहण अथवा पोषण करना।

2. आदान : आत्मसात् करना, अवशोषण करना।

3. विक्षेप : उत्सर्जन या बाहर फेंकना या निकालना।

यदि मानव शरीर को पोषक तत्व , मन को स्थिरता एवं आत्मा को शाँति न मिलें तो वास्तविक जीवन नहीं चल सकता और पोषक तत्व मिलने पर यदि उनका पाचन होकर वे आत्मसात् ï एवं उत्सर्जन न हों तब तो शरीर में मन और आत्मा एक मिनट भी नहीं ठहर सकती , बैचेन हो उठती है। इन तीनों क्रियाओं का शरीर में स्वभावत: होते रहना आरोग्य कहलाता है और इन क्रियाओं का न होना या धीमा होना रोग कहलाता और यदि ये तीनों क्रियायें एक बार भी बन्द हो जायें तो मृत्यु अवश्यम्भावी है।

शरीर के स्वास्थ्य और प्राकृतिक चिकित्सा को समझने के लिए हमें मानव की प्रकृति को बनाये रखने में सहायक शक्तियों तथा उपघटित करने में मुख्य तत्व के बारे में जानना होगा।

मानव की प्रकृति को

बनाये रखने में सहायक शक्तियाँ (प्रतिरक्षा प्रणाली)	**अपघटित करने में अजागृत तत्व**
1. जीवनी शक्ति	4. अपशिष्ट पदार्थ (विजातीय द्रव)
2. प्राण उर्जा या शक्ति	
3. रोग प्रतिरोधक क्षमता उया शक्ति	

1. जीवनी.शक्ति (Vitality)

बीमार पडक़र अच्छा होने में जितनी शारीरिक एवं मानसिक हानि है , उससे बहुत कम बीमार न पडऩे में है, लेकिन आप कहेंगे कि बीमार पडऩा चाहता कौन है? बीमार न पड़े, यह क्या सम्भव है या हमारे हाथ की बात है? जरूर सौ प्रतिशत आपके वश की बात है , लेकिन उसके लिए प्रयत्न तो करना ही पड़ेगा।

हमारे शरीर में जीवनी.शक्ति नाम की एक वस्तु है , वह मनुष्य के शरीर में यथेष्ट ï मात्रा में होने पर शरीर रोग के हमलों से बचा रहता है। यदि रोग रास्ता भूलकर आ भी जाये तो वह शक्ति उसे तुरन्त बाहर निकाल देती है। प्राकृतिक चिकित्सक शरीर की इस वस्तु को पहचानते है। वे पीले , मुरझाये चेहरे को देखकर कई बार कह देते है कि देखो तुम्हारी जीवनी.शक्ति बहुत कम हो रही है , उसे बढ़ाओ, अन्यथा तुम किसी भी रोग के चंगुल में फंस सकते हो। लेकिन जीवनी.शक्ति क्या है और वह कैसे बढ़ायी जा सकती है ? यह बहुत कम लोग जानते है। वैसे जीवनी.शक्ति को हम बल , आशा, उत्साह एवं आत्मविश्वास का पुंज कह सकते है।

यह जीवन का बोध कराने वाली आंतरिक शक्ति है। जिसके द्वारा ही कर्मेन्द्रियों, ज्ञानेन्द्रियों, मन, बुद्धि एवं वेदना के समस्त क्रियाकलापों का संचालन करती है और मनुष्य को वास्तविक जीवन प्रदान करती है।

पूर्ण स्वस्थ शरीर में रोग कैसे प्रवेश कर सकता है ? प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञों का कहना है कि शरीर जीवनी.शक्ति से भरा.पूरा होने पर रोग के कीटाणुओं की दाल वहां नहीं गलती। सिर्फ रोग ही नहीं, उसके होने के खतरे से मुक्त रहने की कीमत आप लगा सकते है? आप यह अमूल्य निधि प्राप्त कर सकते है और उसे जीवन के अंत तक बनाये रख सकते है। रोग का भय सार्वभौम है। कुछ लोगों के लिए तो रोग का डर भूत से भी ज्यादा डरावना होता है, लेकिन कोई भी सुलझे दिमाग का आदमी अपने आपको इस भय से मुक्त कर सकता है। वह अपनी जीवनी.शक्ति इतनी बढ़ा सकता है कि शरीर को रोग से सदा मुक्त रख सकता है, चाहे रोग का नाम कुछ भी क्यों न हो।

जिन नियमों पर चलने से जीवन शक्ति बढ़ती है , वे बहुत सरल है। पहले उन्हें जानना और फिर उन पर चलने की इच्छा रखते हुए नियमों का पालन करना चाहिए। एक बार के अनुसरण से वे सर्वथा स्वाभाविक रूप से आचरण में आ जाते है और फिर उनके पालन में मनोबल लगाने की जरूरत नहीं होती।

स्वास्थ्य को अच्छा बनाने अथवा जीवनी.शक्ति बढ़ाने के साधन है जैसे. आराम , नींद, धूप, हवा, पानी, भोजन और सृजनात्मक विचार एवं अच्छी आदतें है। माता.पिता के रोगी होने और उनकी गलत रहन.सहन एवं अनियमित भोजन के कारण कुछ लोग जन्म से ही बहुत थोड़ी जीवनी.शक्ति लेकर पैदा होते है, लेकिन प्रकृति की गति हमेशा उन्नति एवं पूर्णता की ओर रहती है। अत: वे भी स्वास्थ्य के नियमों पर चलकर अपनी जीवनी.शक्ति बढ़ा सकते है एवं पूर्ण स्वास्थ्य की प्राप्ति कर सकते है।

2. प्राण ऊर्जा

प्राण ऊर्जा आध्यात्मिक स्वास्थ्य की कुंजी है। आध्यात्मिक स्वास्थ्य मतलब पूजा.अर्चना , प्रार्थना, मौन रहना, शाँत रहना, ध्यान लगाना, स्वाध्याय करना, धार्मिक अनुष्ठान, संकल्प लेना, सम्मान करना, व्रत या उपवास करना आदि। प्रकृति अर्थात् पंचमहाभूत ही प्राण है , जो मनुष्य प्रकृति अर्थात् पंचमहाभूत के ज्यादा सम्पर्क में रहता है और विधिवत् उनके नियमों का पालन करते हुए जीवन यापन करता है , उसमें प्राण ऊर्जा सर्वाधिक पायी जाती है।

तत्व	प्राण ऊर्जा प्राप्त करने का तरीका
ईश्वर	मन, वचन एवं कर्म से प्रेमपूर्वक ध्यानाग्रस्त होकर प्रार्थना करना , मनोकामना के लिए याचना करना। सकारात्मक विचार रखना। प्रकृति में विश्वास रखना।
वायु तत्व	धीमी, गहरी व लम्बी श्वास.प्रश्वास करना। हरे.भरे उद्यान में आसन व प्राणायाम करना। हरी घास पर टहलना। कम से कम वस्त्रों को धारण करना।
जल तत्व	जल के विभिन्न प्राकृतिक उपचार लेना। समय.समय पर जल ग्रहण करना। समय.समय पर जल से बाहरी व आंतरिक सफाई करना।
मिट्टी तत्व	प्राकृतिक उपचार मिट्टी पट्टी या मिट्टी स्नान लेना। नंगे पैर रहना, जमीन पर बैठना व सोना या लेटना। हरी घास पर टहलना। प्राकृतिक या सात्विक भोजन करना। भोजन के समय अन्न देव से प्रार्थना करना।
अग्नि तत्व	प्राकृतिक उपचार भाप स्नान, रंगीन प्रकाश का स्नान लेना। सूर्य तप्त पानी.रस का उपयोग करना।.तेल मालिश करना। सुबह.साम टहलना। सूर्य नमस्कार करना। सूर्य देव को जल चढ़ाना और प्रार्थना करना।
आकाश तत्व	भर पेट भोजन न करके वायु व निर्वात का स्थान रखना।
अन्य कोई भी	अपने से बड़े व्यक्तियों का सम्मान व सेवा करना, प्रणाम करना, पैर छूना।

सजीव. निर्जीव वस्तु	बड़ों से मिला आर्शीवाद या आशीष से भी प्राण ऊर्जा प्राप्त होती है। अन्य सभी सजीव.निर्जीव वस्तुओं से प्राण ऊर्जा प्राप्त करने के लिए मन, वचन एवं कर्म से प्रेमपूर्वक ध्यानाग्रस्त होकर प्रार्थना करना, मनोकामना के लिए याचना करना।

मानव शरीर में 84 स्थानों पर प्राण अलग.अलग रूपों में पाये जाते है , उनमें से प्रमुख्यत: 5 का विवरण इस प्रकार है. (प्राण , अपान, समान, उदान एवं व्यान) में , अलग.अलग क्षेत्रों में (क्रमश: कण्ठ से डायफ्राम, गुदा से नाभि, डायफ्राम से नाभि, कंठ से मस्तिष्क एवं समस्त शरीर) विस्तारित होता है , जहाँ उनके केन्द्र (क्रमश: हृदय , गुदा, नाभि, कंठ एवं सम्पूर्ण शरीर) चक्र (क्रमश: अनाहत चक्र , मूलाधार.स्वाधिष्ठान चक्र, मणिपुर चक्र, विशुद्धि.आज्ञा चक्र एवं सहस्त्रार चक्र) विध्यमान होकर उनका संचालन एवं गति पर नियंत्रण रखते है। ऐसा करने से हमारे शरीर में स्वत: अद्भूत प्राण शक्ति का संचय हो जाता है। इसके अतिरिक्त कुछ तरह की वनस्पतियाँ जैसे. पीपल, तुलसी, बरगद, गुग्गल, खेजड़ी; सुगंधित पुष्प जैसे. चम्पा, गेंदा, हरसिंगार, गुलाब, मोगरा; धातुएँ जैसे. मिट्टी, ताम्र, पीतल, चाँदी एवं सोना; उत्कृष्ट पत्थर जैसे. हीरे, मोती, नीलम, पन्ना, माणिक्य, रूद्राक्ष को ग्रहण करने से प्राण ऊर्जा शरीर को मिलती है।

3. रोग प्रतिरोधक क्षमता (Immunity or Resistance power)

वैसे आंतरिक नाजुक या कोमल अंगों की सुरक्षा के लिए बाहरी कवच के रूप में त्वचा और कंकाल होता है। लेकिन हमारे शरीर के प्रत्येक हिस्से या अंग.प्रत्यंगों के रोम.रोम या कोश.कोश को आंतरिक व बाहरी सुरक्षा प्रदान करने का जिम्मा जिस शक्ति को प्राप्त है , वह रोग प्रतिरोधक क्षमता कहलाती है। शरीर के अन्दर जाने वाले मार्गो से लेकर सम्पूर्ण आंतरिक व बाहरी शरीर पर इस शक्ति का प्रभूत्व है। जब यह शक्ति प्रबल होती है तो जगह.जगह रोग प्रतिरोधक रसायनों का निर्माण भारी मात्रा में होता रहता है, तब कह सकते है कि हमारे शरीर में पूरी शक्ति विद्यमान है। इस शक्ति का मुख्य कार्य कई प्रकार के जीवाणुओं, कीटाणुओं, बैक्टीरिया, वायरसों को बाहर से शरीर के अंदर प्रवेश न करने देना है। उन्हें शरीर की बाहरी सतह पर ही जैव.प्रतिरोधक रसायन से मार गिराना है। लेकिन जब शरीर के अन्दर विजातीय द्रव्य अर्थात् गंदगी ज्यादा जमा हो जाती है तब रोग प्रतिरोधक क्षमता कम होने लगती है। ऐसे अवसर का फायदा उठा कर जीवाणु, कीटाणु, बैक्टीरिया, वायरस में से केवल मात्र कोई एक भी चोरी छिपे शरीर मे प्रवेश कर गया तो वह विजातीय द्रव्य को खा.खाकर अपनी एक विशाल फौज तैयार करके अंदर ही हमला कर देती है। तब हमारा शरीर कमजोर होकर रोगग्रस्त हो जाता है। परन्तु ऐसी अवस्था में रोग प्रतिरोधक क्षमता के साथ.साथ जीवनी.शक्ति, प्राण ऊर्जा भी मिलकर विकट परिस्थिति का सामना करते है। ऐसे आंतरिक आक्रमण से शरीर के अन्दर से बाहरी सतह तक हुई क्षति की पूर्ति जीवनी.शक्ति व प्राण ऊर्जा दोनों ही शीघ्र कर लेती है। वैसे इन दोनों का मुख्य कार्य भी दिन प्रतिदिन हुई क्षति की पूर्ति करना ही है। मानव शरीर में पायी जाने वाली प्रतिरोधक क्षमता के निम्र दो स्तर होते है.

1. प्रतिरोधक क्षमता का प्रथम स्तर

1. प्रतिरोधक क्षमता का प्रथम स्तर			
प्रतिरक्षक अंग		प्रतिरक्षक पदार्थ	प्रतिरोधी जीव
1.	त्वचा	क्षतिग्रस्त जीवाणु, चर्बीयुक्त अम्ल एवं पसीना	सूक्ष्म जीवों के विकास को रोकता है।
2.	कान	कान का मैल	सूक्ष्म जीवों से रक्षा करता है।
3.	आँखें	आँसुओं में पाये जाने वाला लाईसोजाईम	जीवाणुओं की कोशिका भित्ति पर आक्रमण कर मार देता है।
4.	मुँह	लार में पाये जाने वाला लाईसोजाईम	जीवाणुओं की कोशिका भित्ति पर आक्रमण कर मार देता है।
5.	पेट	आमाशय से जठर रस (हाइड्रोक्लोरिक अम्ल) के स्त्राव से	पानी व भोजन के साथ आने वाले जीवाणुओं को खत्म कर देता है।
6.	आँतें	आँतों में पाये जाने वाला लाईसोजाईम	जीवाणुओं की कोशिका भित्ति पर आक्रमण कर मार देता है।
7.	सामान्य जीवाणु	शरीर में पाये जाने वाले लाभदायक जीवाणु	हानिकारक जीवाणुओं की वृद्धि को रोकते है
8.	नाक	नाक से निकलने वाला लाईसोजाईम	जीवाणुओं की कोशिका भित्ति पर आक्रमण कर मार देता है।
9.	फेफड़े	सर्दी, छींक और खाँसी से	श्वसन के दौरान अन्दर पहुँचे हानिकारक जीवाणु एवं अवांछनीय पदार्थो को बाहर निकाल देते है।
10.	गुर्दा	मूत्र निष्कासन की क्रिया	सूक्ष्म जीवों से रक्षा करता है।

.

2. प्रतिरोधक क्षमता का द्वितीय स्तर			
प्रतिरक्षक अंग		प्रतिरक्षक पदार्थ की उपस्थिति	प्रतिरोधी जीव
1.	लिम्फाइड ऊतक	अस्थि-मज्जा, प्लीहा, लसिकापर्व, टॉसिल, अपेंडिक्स, थाईमस	अवांछित सूक्ष्म जीव, वाइरस, ट्यूमर कोशिका एवं परजीवी के आक्रमणों के प्रति रक्षा करते है।
2.	सभी ऊतक	मैक्रोफेगस ऊतक	हानिकारक जीवाणुओं व बड़ कणों को खाकर संक्रमण से रक्षा करती है।
3.	सभी ऊतक	लिम्फोसाइट्स (श्वेतरक्त कोशिकाएँ)	हानिकारक जीवाणुओं को मारकर संक्रमण से रक्षा करती है।
4.	सभी ऊतक	प्लाज्मा कोशिकाएँ	ये एंटीजन तैयार करके हानिकारक जीवाणुओं के प्रति एंटीबॉडीज बनाती है।

वर्तमान में अंग्रेजी चिकित्सा प्रणाली द्वारा मनुष्य में विभिन्न रोगों के हानिकारक जीवाणुओं के प्रति शरीर में प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के टीकें लगाये जाते है।

अत: जीवनी.शक्ति, प्राण ऊर्जा और रोग प्रतिरोधक क्षमता इन तीनों को एक.दूसरे के पर्याय भी कह सकते है। ये तीनों ही शक्तियाँ सम्मिलित होकर हमारे शरीर में स्थित सातों चक्रों द्वारा पूरे शरीर में संचारित होती रहती है। इनसे ही प्रकृति और हमारे शरीर के समस्त प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष कार्य सम्पन्न होते

रहते है। जीवनी.शक्ति एवं प्राण ऊर्जा ये दोनों ही रोग प्रतिरोधक क्षमता को संचालित एवं नियंत्रित भी करती है। जीवनी.शक्ति, प्राण ऊर्जा और रोग प्रतिरोधक क्षमता तीनों का सीधा सम्बन्ध गहरी नींद, उचित विश्राम, प्रेम, प्राणायाम, धारणा, ध्यान एवं समाधि की अवस्था से है। इनको सम्मिलित रूप से स्वास्थ्य रक्षक या रोग निवारक डॉक्टर भी कह सकते है।

4. अपशिष्ट पदार्थ (विजातीय द्रव्य)

मानव की प्रकृति को उपघटित करने में अजागृत तत्व मुख्यत: अपशिष्ट पदार्थ (विजातीय द्रव्य) है। साधारणत: शरीर के उत्सर्जी मार्गो द्वारा अपशिष्ट पदार्थो का उत्सर्जन कम या पूरी तरह न होने से शरीर में इससे होकर जमते व मात्रा में बढ़ते रहते है जैसे. मल.मूत्र , पसीना, कफ, दूषित वायु, दूषित सांस, दूषित रक्त, दूषित मांस के अवशेष, अमोनिया, यूरिया, एसिड, क्रियाटिनोन, फोस्फेट, अनुपयोगी लवण या इसी प्रकार की अन्य कोई वस्तु जो स्वस्थ खून और मांस के साथ मिलकर स्वस्थ शरीर का भाग नहीं बन सकती और जो शरीर को पोषण नहीं दे सकती , उल्टे उससे रोग पैदा होकर शरीर का विनाश करती है , उसी को विजातीय द्रव्य कहते है। विजातीय द्रव्य ठोस हो सकता है , तरल और वायु.सा हल्का भी हो सकता है। विजातीय द्रव्य को रोग, अपशिष्ट, दूषित पदार्थ, मल, विकार, क्लेद, संचित दुद्र्रव्य, बादीपन, विष, जहर एवं विकृति आदि नामों से भी जाना पहचाना जाता है।

विजातीय द्रव्य कीटाणुओं अर्थात् रोगाणुओं का प्रिय भोजन है। जहाँ भी विजातीय द्रव्य उपस्थित होगा वहाँ कीटाणु अपने आप पहुँच भी जायेंगे और नये भी पैदा हो जायेंगे। कई तरह के कीटाणु होते है जैसे. बैक्टीरिया, फफूँद, वाइरस, परजीवी एवं कृमि आदि। यह बहुत बड़ी खुशी की बात है कि ये हानिकारक कीटाणु विजातीय द्रव्य खा जाते है तथा साथ ही बहुत बड़ी दु:ख की बात है कि ये कीटाणु घातक विजातीय द्रव्य उत्सर्जित करते है, जो एक अति विषैला पदार्थ होता है, जो मनुष्य के लिए बड़ा ही घातक विजातीय द्रव्य है। जिससे शरीर को बड़ी.बड़ी हानियाँ होती है। यही नहीं ये कीटाणु इतने सूक्ष्म से सूक्ष्म हो जाते है कि शरीर के कोने.कोने में पहुँच जाते है। इतना ही नहीं ये कई माध्यम से एक.दूसरे के शरीर में पहुँच कर संक्रमण रोग फैलाते है। इसके विनाश करने का असफल प्रयास के साथ अपनी शक्ति, समय व धन का दुरूपयोग न करते हुए सिर्फ ओर सिर्फ अपने स्वयं के शरीर की सदैव आंतरिक व बाहरी स्वच्छता रखते हुए विजातीय द्रव्यों को शरीर में जमा ही न होने देवें। एक स्वस्थ मनुष्य के शरीर से विजातीय द्रव्य को उत्सर्जन करने वाले यंत्र लगभग 200 किलोमीटर प्रतिघंटे की रफ्तार से काम कर रहे है। प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति के उपचारों द्वारा रोगियों के शरीर यंत्रों की रफ्तार बढ़ाई जाती है। जिससे एक शरीर विजातीय द्रव्य के भार से हल्का हो जाता है। फिर रोगी प्राकृतिक जीवन शैली को अपनाकर शेष जीवन स्वस्थ व आनन्द से रह सकता है।

1.5 आरोग्यरूपी प्राकृतिक स्वास्थ्य

स्वास्थ्य रक्षकों ने स्वास्थ्य को अपने.अपने अनुभवों एवं विचारों के आधार पर निम्न प्रकार से परिभाषित किया है.

‘स्व’ अर्थात् स्वयं में स्थित होना स्वास्थ्य है। महर्षि पातंजली ‘योग सूत्र’ में लिखते है कि जिसकी चित्त वृत्तियों का निरोध हो जाएगा, वह अपने आप में, अपने वास्तविक स्वरूप में स्थित हो जायेगा और आगे ओर लिखते है कि उसे फिर किसी भी चीज की प्राप्ति की महत्वकांक्षा नहीं रहेगी। वास्तव में ऐसे लोग ही पूर्ण स्वस्थ कहलाने के अधिकारी है , परन्तु आदर्श स्वास्थ्य (आरोग्यरूपी प्राकृतिक स्वास्थ्य) वाले व्यक्ति संसार में बहुत कम ही नहीं अपितु दुर्लभ जान पड़ते है। भारतीय संस्कृति में मानव जीवन का सर्वोपरी उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति करना है। इन चारों को पाने के लिए आरोग्यरूपी प्राकृतिक स्वास्थ्य की साधना करनी होती है। आरोग्यरूपी प्राकृतिक स्वास्थ्य ऐसा विज्ञान है, जो मनुष्य को प्रकृति से संतुलन बनाकर स्वस्थ रहना सिखाता है और किसी भी प्रकार की शारीरिक एवं मानसिक अवस्था में शरीर को अपने द्वारा संपूर्ण शक्ति से काम करने देने का पूरा अवसर देकर रोगमुक्त रखती है। प्रकृति के नियमों के पालन करने में कहीं चूक होने से कोई समस्या, रोग उत्पन्न हो भी जाये तो शरीर की प्रकृति (जीवनी.शक्ति, प्राण ऊर्जा एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता) स्वयं ही उसे दूर करने में लग जाती है, तब अस्वस्थ रोगी का कर्तव्य बनता है कि वह प्रकृति के नियमों का गहराई से पालन करते हुए प्रकृति के स्वत: हो रहे सुधारात्मक कार्य को होने देवें। इस प्रकार आरोग्यरूपी प्राकृतिक स्वास्थ्य रोग.मुक्त शरीर ही है। जिसमें पंच तत्वों का संतुलन बना रहें। इन तत्वों में असंतुलन ही रोगों का प्रार्दुभाव का मुख्य कारण है। जिसका पुन: जल्दी संतुलित हो जाना ही ठीक होगा , अन्यथा उसके स्वास्थ्य को काफी नुकसान पहुँचता है।

महर्षि सुश्रुत लिखते है कि स्वस्थ वहीं है , जिसके त्रिदोष सम है, धातु सम है, अग्नि सम है; मल क्रिया सामान्य है और प्रसन्नचित्त है।

समस्त शारीरिक परेशानियों और कष्टों के अभाव की स्थिति वाली शरीर , मन और चेतना की अवस्था को स्वास्थ्य कहते है। इस अवस्था में हम अपने सभी शारीरिक और मानसिक कार्यो को समय पर तथा पूरी क्षमता के साथ पूर्ण कर सकते है। इसमें व्यक्ति की आनुवांशिक और वातावरणीय स्थिति के साथ उसकी दिनचर्या का संतुलन पूर्ण गुणवत्ता के साथ होता है।

आयुर्वेद के अनुसार ‘स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षणम्.आतुरस्य विकार प्रशमनं च। ’ अर्थात् स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य का परीरक्षण करना तथा रोगी व्यक्ति के विकारों का प्रश्मन (ईलाज) करना ही आयुर्वेद का उद्देश्य है।

आयुर्वेद के अनुसार आहार, निद्रा और ब्रह्मचर्य को ही स्वस्थ शरीर या जीवन के तीन उपस्तम्भ के रूप में लिया गया है। इन तीनों को ही मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए तथा पूर्णायु तक जीवन यापन के लिए आवश्यक माना गया है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन लिखता है कि स्वास्थ्य पूर्णरूपेण शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक स्वास्थ्य की स्थिति है। वह मात्र रोगों अथवा अपंगता की स्थिति नहीं है।

अर्थात् ऐसे भी कह सकते है कि सिर्फ बीमारी, शारीरिक एवं मानसिक निर्बलत से मुक्ति ही स्वास्थ्य नहीं है। बल्कि व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक स्तर पर शक्तिशाली जीवन यापन एवं संतुलन ही स्वास्थ्य है।

Health is a state of complete physical, mental, social and spiritual well being and not merly or abseace of desease or infirmity.

किसी भी व्यक्ति का शारीरिक , मानसिक, नैतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक दृष्टिकोण से पूर्ण स्वस्थ होने की अवधारणा ही स्वास्थ्य कहलाती है।

वास्तव में उक्त व्याख्या पंचमहाभूत की प्राकृतिक चिकित्सा के अनुसार ही है। इसका आगे ओर विश्लेषण इस प्रकार है.

1. शारीरिक स्वास्थ्य : शरीररूपी मशीन का हर अंग.प्रत्यंग पूरी क्षमतानुसार सही ढ़ंग से कार्य करता हुआ स्वस्थ रहें। शरीर के किसी अंग.प्रत्यंग में सूजन , दर्द एवं कार्यक्षमता में कमी आदि विकारों का आभास न होना ही शारीरिक स्वास्थ्य कहलाता है।

2. मानसिक स्वास्थ्य : दिल.दिमाग रूपी मन को स्थिर रखते हुए मानसिक रूप से बाहरी क्रिया.कलाप को सही और संतुलित करना तथा सकारात्मक सोच को सदैव बनाए रखना ही मानसिक स्वास्थ्य कहलाती है।

3. नैतिक (भावनात्मक) स्वास्थ्य : किसी व्यक्ति द्वारा मन , वचन और कर्म से किसी भी प्राणी को किसी भी तरह का नुकसान न हो यही नैतिक (भावनात्मक) स्वास्थ्य कहलाता है।

4. सामाजिक स्वास्थ्य : समाज में रहते हुए सामाजिक कत्र्तव्यों का पूर्णरूपेण निर्वाह करते हुए जीवन को सार्थक बनाना ही सामाजिक स्वास्थ्य कहलाता है।

5. आध्यात्मिक स्वास्थ्य : सर्वशक्तिमान ईश्वर में पूर्ण आस्था रखते हुए अपने आप को सांसारिक बंधनों से मुक्त कर देना ही आध्यात्मिक स्वास्थ्य कहलाता है।

इन उपरोक्त स्वास्थ्य को प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति का अनुसरण करते हुए अपने जीवन में आत्मसात् करते है तो हम पूर्ण स्वास्थ्य की अवधारणा को प्राप्त करने में सफल हो सकते है। प्रत्येक मानव को इन स्वास्थ्य के नियमों का कड़ाई से पालन करते हुए अपने मानव.जीवन को सार्थक बनाना चाहिए , तभी हमारा जीवन वास्तविक, पूर्ण निरोगी एवं आनन्दित बन पायेगा तथा हम जीवन के परम लक्ष्य को पाते हुए जीवन.मरण के बँधनों से मुक्त हो पायेंगे।

विभिन्न देशों की सरकारें एवं विश्व स्वास्थ्य संगठन के प्रयासों से लोगों को अच्छी स्वास्थ्य.सुविधाएँ उपलब्ध कराने के चक्कर में तथा आधुनिक जीवन.शैली ने तनिक लाभ या रिलिफ पहुँचाने वाली अनेकानेक चिकित्सा पद्धतियों को जन्म मिला और आज वे पद्धतियाँ चर्मोत्कर्ष पर भी पहुँच गयी है। लेकिन उनका परिणाम सामने है कि अस्पतालों की संख्या बढ़ी, नर्स.डॉक्टरों की संख्या बढ़ी, असली व नकली रासायनिक दवायें बढ़ी, कई दवाइयाँ बाजार में आई और छुमन्तर हो गई परन्तु रोगों की संख्या और रोगियों की संख्या में आज दिन तक एक प्रतिशत भी कमी नहीं आयी , बल्कि वह तो आज इतनी बढ़ी की दुनिया के 90 प्रतिशत से अधिक लोग किसी न किसी समस्या एवं रोग से ग्रसित है तथा दिन.प्रतिदिन नए.नए नामों से रोग हमारे सामने आ रहे है। स्वयं विभिन्न देशों की सरकारें एवं विश्व

स्वास्थ्य संगठन के आँकड़ें दर्शाते है कि प्रतिवर्ष करोड़ों लोग भिन्न.भिन्न बिमारियों से मर जाते है और मरने वालों में आधे से ज्यादा तो जहरीले रसायनों के दुष्प्रभाव से उत्पन्न हुई बिमारियों से ही मर जाते है।

इस प्रकार आधुनिक जीवन.शैली ने तो कल के सरल.सरल रोगों को बढ़ाकर जटील , गम्भीर एवं असाध्य बना दिया। इसका मूल कारण स्वास्थ्यरूपी प्राकृतिक नियमों का पालन न करते हुए आधुनिक परिवेश के सभ्य लोग एवं आधुनिक चिकित्सा पद्धतियाँ रोग के कारणों को दूर करने के बजाय सिर्फ रोग के लक्षणों को दूर करने में लगी है। परन्तु यदि व्यक्ति चाहे तो प्रकृति के नियमों का पालन करते हुए अर्थात् पंच तत्वों की प्राकृतिक चिकित्सा को अपना लेवें तो उसे जटिल से जटिल असाध्य रोगों से छुटकारा मिल सकता है और आरोग्यरूपी प्राकृतिक स्वास्थ्य को प्राप्त कर सकता है। दुनिया के श्रेष्ठ बुद्धिजीवियों ने भी अन्य चिकित्सा पद्धतियों की अपेक्षा प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति को ही सर्वोच्च माना है। उनका संक्षिप्त में यही कहना है कि मनुष्य एक प्राकृतिक जीव है और उसे प्राकृतिक नियमों का सदैव पालन करते हुए निरोगी रहना चाहिए।

आजकल एक ट्रेड और चल गया है कि दुनिया में आये हो तो मौज.शौक का मज़ा लेते रहो , सब कुछ खाते रहो , चाहे वह प्रकृति के विरूद्ध ही क्यों न हो। लेकिन समय.समय पर शरीर का शोधन (बॉड़ी क्लिनसिंग) कर लिया करों। इस प्रकार के जीवन जीने की कला के जवाब में वे ही दुनिया के श्रेष्ठ बुद्धिजीवियों का कहना है कि यह तो कुम्हार के गधे के जीवन के समतुल्य है। वह पहले तो लौट.पौट होकर मिट्टी लगाता है और फिर दौड़.दौड़ कर मिट्टी को हटाने का काम करता है। इसलिए ऐसा जीवन जीओ की रोग पास में भी न फटक सकें।

आरोग्यरूपी प्राकृतिक स्वास्थ्य को सरलता से निम्न प्रकार से जाना जा सकता है. अगर हमारे शरीर के किसी भी हिस्से में दर्द, सूजन, एवं खिंचाव जैसी असामान्य समस्या पैदा न हो, शरीर के सभी अंग उचित अनुपात में विकसित होकर पूर्णरूपेण क्रियाशील हो, सभी इंद्रियाँ अच्छी तरह कार्यरत हो , त्वचा स्वच्छ हो, पूर्ण संतुलित श्वास चल रही हो, समय.समय पर भूख.प्यास का पूरा संतुलन हो, गहरी नींद और समय पर सरलता से सभी मलों का निष्कासन सही ढग़ से होता हो तो ही सही अर्थो में उत्तम स्वास्थ्य माना जाता है।

1.6 रोगी एवं स्वस्थ व्यक्ति की पहचान तथा उनके लक्षण

आज का मानव प्रकृति से इतना दूर हो गया है। जिसका परिणाम इतना सर्वव्यापी है कि आज सारे संसार में एक भी पूर्ण आदर्श निरोग व्यक्ति का मिलना यदि असम्भव नहीं तो अत्यन्त कठिन अवश्य हो गया है। अत: यह निर्णय करना कि एक सच्चे अर्थो में आदर्श निरोग मनुष्य कैसा होना चाहिए अत्यन्त कठिन है। जबकि प्राकृतिक चिकित्सकों के मन से वही व्यक्ति निरोग कहलायेगा , जिसका शरीर विकार अथवा विजातीय द्रव्य से सर्वथा रहित है और जिसकी समस्त इन्द्रियाँ और अंग.प्रत्यंग सुचारू ढंग़ से अपना.अपना कार्य सम्पादन करते है साथ ही साथ जो शरीर , मन और आत्मा तीनों से एक साथ ही स्वस्थ है। डॉ. लूई कूने के अनुसार पूर्ण निरोगी मनुष्य वह है जिसके सम्पूर्ण अंग.प्रत्यंग साम्यावस्था में हो और बिना किसी कष्टï, भार या प्रयास के अपना.अपना कार्य करते हो तथा अवयवों का रंग.रूप अपने कार्य.संचालन के योग्य और सुन्दर हो। एक स्वस्थ मनुष्य के नेत्रों में निर्मलता और शान्ति विराजमान

रहती है ओर उसकी मुखाकृति की रेखाओं में तोड़.मरोड़ या खींचातानी नहीं होती। निरोग मनुष्य सदैव प्रसन्न रहता है और अपने शरीर का उसे भय नहीं रहता।

स्वस्थ, अस्वस्थ व्यक्ति की पहचान निम्न सारणी का अवलोकन करते हुए आप स्वयं या किसी अन्य का स्वास्थ्य जान या पहचान कर सकते है.

स्वास्थ्य सम्बन्धी कारक	**स्वस्थ व्यक्ति की पहचान**	**अस्वस्थ व्यक्ति की पहचान**
शारीरिक, मानसिक, नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक दृष्टि से	स्वस्थ हो। कष्ट या व्याधि का काई अनुभव न होता हो।	अस्वस्थ हो। कष्ट या व्याधि का कोई अनुभव होता हो।
दिल से मान लेते है कि	मैं स्वस्थ हूँ।	मैं अस्वस्थ हूँ।
शरीर की सभी शारीरिक एवं मानसिक क्रियायें	सामान्यतः पूर्ण होती हो। किसी भी प्रकार की व्याधी, सूजन और दर्द न हो।	असामान्य होकर नित्य व्याधी, सूजन और दर्द पैदा होता हो।
आयु के अनुसार शरीर के समस्त अंगों एवं बुद्धि का विकास	हुआ है।	नहीं हुआ है।
भूख	निश्चित समय पर सच्ची और खुलकर भूख लगे जो प्राकृतिक आहार से शान्त हो जाये और सन्तोष प्राप्त हो।	बिलकुल नहीं लगती है या अधिक लगती है, बार.बार खाने पर भी ओर चटपटा खाने का मन करता है।
प्यास	न अधिक और न कम लगे। शुद्ध व साधारण ताप वाले जल से प्यास बुझ जाये और शान्ति प्राप्त हो।	बिलकुल नहीं लगती है या अधिक लगती है, बार.बार पीने पर भी प्यास बन रहती है।
रसायनों, मादक एवं उत्तेजक पदार्थो का	उपयोग नहीं करता हो।	अधिकााधिक उपयोग करता हो।
भोजन	नियत समय पर सात्विक या प्राकृतिक भोजन करने की ईच्छा होना।	असमय ही राजसी एवं तामसिक भोजन करने की सदैव ईच्छा हो।
भोजन करने के बाद पेट में	गुड़गुड़ाहट न हो, न पेट भारी होकर आलस्य का अनुभव हो, पाचन ठीक हो और कोई समस्या नहीं हो।	गुड़गुड़ाहट हो, पेट भारी होकर आलस्य का अनुभव हो, पाचन सम्बन्धी अलग.अलग तरह की समस्या होती हो।
नींद	समय पर अटूट, गहरी, लम्बी और बिना किसी स्वप्न की आती हो।	नहीं आती है। वैराग और स्वप्न आते हो।

समय पर शौच	पूरी तरह खुलकर सुबह.शाम नियमित, मल त्याग के बाद गुदा में न चिपके, न बहुत कड़ा और न दस्त की तरह हो अर्थात् बँधा हुआ, रंग गेहुँआ हो और गन्ध हीन हो।	24 घंटे में एक बार अनियमित.असमय, जो गुदा में चिपके, बुरी गन्ध युक्त हो, पतली या कठोर हो, दिन में एक बार, और रंग गेहुँआ न हो।
मूत्र	त्याग में कष्ट.बेचैनी न हो, वह हल्की गर्मी लिये हुये, हल्के पीले रंग का निर्गन्ध हो। धार बँधकर बाहर निकलती हो।	त्याग में कष्ट.बेचैनी हो, वह गर्मी लिये हुये, गहरे पीले.लाल रंग का दुर्गन्ध वाला गाढ़ा हो। धार बँधकर न आती हो।
अपान.वायु अर्थात् गैस का बनना	नहीं।	हाँ।
चिंता	नहीं हो।	अनक चिंताएँ सताती हो।
जो काम के समय काम और विश्राम के समय विश्राम में	रस और आनन्द ले सकता है।	आलस्य और निट्ठला बनता हो।
नैतिक आचरण और सामाजिक व्यवहार	श्रेष्ठ हो।	अच्छा न हो।
जीवन के प्रति दृष्टिकोण	सकारात्मक हो।	नकारात्मक हो।
विचार	सकारात्मक हो।	नकारात्मक हो।
स्वभाव एवं वाणी में	मधुर या प्रसन्न। मधुर भाषी हो।	क्रोधी और चिड़चिड़ापन। मधुरता न हो।
सिर दर्द और चिंता	नहीं।	हाँ
दिल.दिमाग से	प्रसन्नचित्त हो तथा रचनात्मक कार्य में प्रवीण हो।	प्रसन्नचित्त न हो तथा रचनात्मक कार्य से दूर हो।
गुण	जो सहनशील, आशावादी, विपत्ति पड़ने पर या सख्त काम से न घबराता, जो स्वतन्त्र विचार वाला, निर्भीक, दृढ़प्रतिज्ञ, आत्म.विश्वासी, हंसमुख, दयावान, सुन्दर, मेधावी, बलवान, विनयी एवं दीर्घजीवी हो। जिसके पास सत्य, अहिंसा तथा प्रेम आदि का भण्डार हो।	अवगुणी

प्रातः उठते ही तन.मन से कार्य करने के प्रति शरीर में	पर्याप्त स्फूर्ति, उत्साह और ताजगी हो।	मन न लगता हो और आलस्य आता हो। पर्याप्त स्फूर्ति, उत्साह और ताजगी न हो।
अपने आपको सदा	ऊर्जावान और सक्रिय महसूस करना।	शक्तिहीन, थका.थका सा एवं कमजोर महसूस करना।
प्राकृतिक नियमों का	पूर्णतः पालन करता हो और प्रकृति के इशारों को समझता हो और तद्नुसार आचरण करता हो।	पालन न करता हो।
काम करने की क्षमता	बिना थके कई घण्टों तक	कुछ घण्टे के बाद ही थकान
शरीर की बनावट	शरीर सुन्दर व सुडौल हो। कमर पतली, छाती चौड़ी और पेट छाती के समानान्तर या कम हो। सिर शरीर की ऊंचाई का आठवां भाग हो।	शरीर कुरूप व बेडौल हो। कमर मोटी, छाती चौड़ी और पेट छाती से अधिक बाहर निकला हुआ हो। सिर शरीर की ऊंचाई का आठवें भाग से भी ज्यादा हो।
शरीर की नसें	उभरी हुई न हों।	शरीर की नसें उभरी हुई हों।
त्वचा	नम, नरम, मुलायम, लचीली, चिकनी, स्वच्छ ओर गर्म हो, तर न हो तथा खुजलाने से उसमें चिह्न और लकीरें न बनें। रोमकूपों के स्थान सघन, सुन्दर और मुलायम बाल हो।	त्वचा दोषपूर्ण हो।
मुख मण्डल पर	झुर्रियां, शुष्कता और होठों पर पपड़िया न पड़ती हो।	झुर्रियां, शुष्कता और होठों पर पपड़िया पड़ती हो।
चेहरा	सुन्दर, अण्ड़ाकार, उभरा हुआ और बिना दाग.धब्बे का हो, कानों के नीचे की सीमा रेखा स्पष्ट हो।	कुरूप, पतला, लम्बा, सिकुड़ा हुआ, चकत्ते वाला, फोड़े.फूँसियों युक्त, कानों के नीचे सीमा रेखा अस्पष्ट हो।
हर अवस्था में चेहरे पर मुस्कान, ताजगी व तेजस्विता पूर्ण; आँखों में चमक और सदा यौवन एवं नवशक्ति झलकती रहें।	हाँ।	पीला.पीला सा चेहरा, न हो चेहरे पर मुस्कान, न ही आँखों में चमक हो।
आँखों के आसपास सूजन व कालापन	नहीं।	हाँ।

आँखों पर चश्मा या दृष्टि.दोष	नहीं।	हाँ।
आँखें	चमकीली, स्वच्छ, बड़ी, तनाव रहित, धारियों रहित हो।	चमक न हो, तनाव युक्त, पीली.लाल, डबडबाई, धारियों सहित।
जीभ	चिकनी, गुलाबी, समतल, साफ और गीली हो।	चिकनी, गुलाबी, समतल, साफ और गीली न हो।
दांत	पूरे मजबूत और मोती के समान साफ और चमकदार हो।	पूरे मजबूत और मोती के समान साफ और चमकदार न हो।
मुंह	होंठ सटे हुए होकर बंद हो	खुला रहता हो।
सोते में मुंह	खुला न रहता हो।	खुला रहता हो।
होंठ	पतले व सुन्दर।	अधिक मोटे, लटके हुए, खुश्क, फटे हुए।
नाखून	गुलाबी	सफेद, पीले व काले; धार्रियोदार, कट्टे.फट्टे हो।
पैर या पाँव	सीधे, गठीले, जाँघों की सीमा रेखा स्पष्ट हो।	छोटे व मोटे, जाँघों की सीमा रेखा अस्पष्ट हो।
पैर के तलवे	त्वचा के रंग से मिलते हों।	त्वचा के रंग से न मिलते हों। कट्टे.फट्टे हो।
सिर	औसत आकार का।	अधिक स्थूल आकार का।
बाल	मुलायम व घने बालों से पूर्ण हो।	मुलायम व घने न हो।
गंजापन या बालों की समस्या	नहीं हो।	हाँ।
मस्तक	सपाट व चर्बी रहित।	चर्बी युक्त, झुका व दबा हुआ।
गर्दन	गोल, सीधी, न बहुत लम्बी और न धड़ में घुसी हुई हो।	बहुत लम्बी या धड़ में घुसी हुई हो।
नाक	सुगठित, न पतली न मोटी।	फूली हुई व बहुत मोटी।
मुख का स्वाद	अच्छा हो। बार.बार थूकना या गला साफ करना न पड़े।	अच्छा न हो। बार.बार थूकना या गला साफ करना पड़े।
पेट	सपाट, छाती से कम	छाती से बाहर पेट निकला हुआ।
छाती	धनुषाकार पूर्ण विकसित हो।	अन्दर को झुकी हुई।
प्रत्येक अंग की प्रकृति	सुडौल तथा अपना कार्य सुचारू रूप से करने वाला हो।	अविकसित तथा अपना कार्य पूरी तरह न होता हो।
सदा यौवन एवं नवशक्ति झलकती	हाँ।	नहीं।

तन और मन से	निर्मल, प्रसन्नचित एवं ह्रदय से सदैव आनन्द से परिपूर्ण, अच्छे कार्यो में प्रवीण	चिड़चिड़ा, आलसी और विध्वंसात्मक कार्यो में प्रवीण।
चित्त	संयमित हो।	असंयमित हो।
शरीर की त्वचा, मुँह और श्वास से दुर्गन्ध	नहीं आती है।	आती है।
शरोर की चाल या गतिशीलता	सामान्य हो।	असामान्य हो।
श्वास की गति	साधारण हो।	असाधारण हो।
शरीर में पाँचों तत्वों का समावेश	संतुलित हो।	असंतुलित हो।
त्रिदोष (कफ, पित्त एवं वात)	संतुलित हो।	असंतुलित हो।
जीवन को	पूरी आस्था, विश्वास के साथ जीते हुए जीवन के परम लक्ष्य को पाने की ईच्छा।	नास्तिक ढ़ंग से जैसे.तैसे ही जीना।

प्राकृतिक प्रेमी श्री घासीराम जाजपुरा कहते कि

''आज दुनिया में अधिकाँश लोग धन.दौलत कमाने की अँधी.दौड़ में सेहत खो देते है

तो सेहत पाने की अँधी.दौड़ में कमाई हुई धन.दौलत खो देते है।

इस दुनिया में ऐसे सम्भलकर जीयोंकि सेहतरूपी धन.दौलत आपके पास हो।'

1.7 रोग का स्वरूप

पूर्ण स्वास्थ्य की अनुपस्थिति ही रोग है। रोग एक ऐसी दशा है, जो जीवन को शक्ति, अवधि और आनन्द की दृष्टि से सीमित कर देती है। अत: रोग स्वास्थ्य की दशा में स्खलन या बाधक है।

मानव शरीर की कार्य.प्रणाली में किसी भी प्रकार के असंतुलन की स्थिति रोग कहलाती है।

हम सभी जानते है कि हमें किसी भी प्रकार की शारीरिक एवं मानसिक तकलीफ होती है तो उसे अस्वास्थ्य अर्थात् रोग कह देते है। रोग को अन्य कई नामों से भी जाना जाता है जैसे. बीमारी , व्यथा, समस्या, दर्द, पीड़ा, कष्ट, बेरामी, असुख, दु:ख एवं अशांति आदि। साधारणत: गलत खान.पान , गलत रहन.सहन एवं गलत आचार.विचार (अनियमित जीवनी.यापन) के कारण शरीर में विजातीय द्रव्य बढने, रक्त के दूषित होने तथा मन के अस्थिर होने पर स्वास्थ्य की अवस्था में आया परिवर्तन ही रोग का प्रादुर्भाव है। रोग हमारे लिए वह चिह्न या चेतावनी है कि विजातीय द्रव्य रूपी शत्रु ने हमारे शरीर में अड्डा या अतिक्रमण कर लिया है , शरीर का रक्त दूषित हो गया है और मन अस्थिर हो गया है , जिनसे हमें सजग और सावधान हो जाना चाहिए। अत: यह कह सकते है कि स्वास्थ्य और रोग एक ही चीज की दो अवस्थायें है।

वैसे तो हमारे शरीर से गंदगी फेफड़ों , त्वचा, आँतों और गूर्दो द्वारा क्रमश: श्वास , पसीना, मल व मूत्र के रूप में सदा निकलता रहता है, जिसे अपशिष्ट या विजातीय द्रव्य कहते है। यदि किसी कारणवश इन मार्गों

से शरीर का अपशिष्ट पूरी तरह नहीं निकलता है तो शरीर में अपशिष्ट की मात्रा बढने लगती है। जो अपशिष्ट सुषुप्तावस्था में शरीर में निराकार रूप में विद्यमान रहता है। जब शरीर की प्रकृति को अनुकूल परिस्थिति लगती है तब प्रकृति रोगी के कल्याणार्थ अपशिष्ट ï को शरीर से बाहर निकालने के लिए अनेकों तरीकों को काम में लाती है। जिसे साधारण भाषा में रोग कहा जाता है और प्राकृतिक चिकित्सा.विज्ञान की भाषा में इसे मूल रोग के लक्षण कहते है। असल में रोग तो वह अपशिष्ट अर्थात् ï विजातीय द्रव्य ही होता है, जो शरीर के भीतर बहुत पहले से संचित हो रहा था , जिसको शरीर से बाहर निकालने के लिए प्रकृति ज्वर, दस्त, फोड़ा, सिरदर्द, चेचक एवं गूंगी आदि असाधारण तरीकों को काम में लाती है। इस प्रकार शरीर की प्रकृति शरीर की रक्षा और शरीर से अपशिष्ट निकालने के लिए प्रयत्न और प्रबन्धन करती है। यह बात शत् ï प्रतिशत सत्य है कि रोग मनुष्य के शरीर को स्वास्थ्य प्रदान करने के लिए आता है। हम अक्सर देखते और अनुभव भी करते है कि बीमार पडने के पहले से अब बीमारी ठीक होने पर शरीर हल्का.फुल्का अर्थात् तन्दुरूस्त हो गया है।

रोग शरीर में निराकार और साकार दोनों रूपों में विद्यमान रह सकता है। परन्तु यह कहना बहुत कठिन है कि अमुक शरीर सर्वथा रोगहीन या स्वस्थ है। क्योंकि ऊपर से देखने में वह शरीर भले ही स्वस्थ प्रतीत होता है, किन्तु वर्षों के अनियमित जीवनी.यापन करते रहने से शरीर में अपशिष्टï जमा होता रहता है। जो किसी अंग विशेष या समस्त शरीर में किसी न किसी रोग की सुषुप्तावस्था के रूप में विद्यमान हो सकता है। सुषुप्तावस्था में रोग का न तो कोई नाम और न उसकी कोई शक्ल.सुरत होती है पर ज्यों ही उसे अनुकूल परिस्थिति मिलती है, वह बाहर निकलने के लिए साकार रूप धारण कर लेता है। अर्थात् प्रकृति रोगी के कल्याणार्थ अपशिष्ट ï को शरीर से निकालने के लिए अनेकों तरीकों को अपनाती है , उन्हीं को हम रोग का नाम देते है।

यह भलीभांति जान लेना चाहिए कि किसी भी शरीर में रोग अपना साकार रूप अचानक धारण नहीं कर लेता, बल्कि ऐसा करने में उसे कभी.कभी बहुत दिन.महिने.साल लग जाते है। रोग प्रकट होने पर शरीर में संचित अपशिष्टï द्रव्य आसानी से बाहर निकल जाने पर शरीर कुछ ही दिनों में रोगमुक्त हो जाता है, परन्तु ऐसा न होने पर अपशिष्ट द्रव्य शरीर के स्वस्थ अवयवों को घुन या दीमक की भांति चाटता रहता है , जिसका परिणाम यह होता है कि शरीर की नस.नस में उसका दूषित विकार व्याप्त हो जाता है और शरीर कमजोर, अस्वस्थ होने से उसका ह्रास होने लगता है। रोग की यह स्थिति अतीव भयानक होती है। जब हम प्रकृति से दूर होने लगते है और विचारने , श्वास लेने, भोजन करने, कपड़ा पहनने, आराम करने, आहार.विहार करने आदि सभी मामलों में प्रकृति के नियमों के विरूद्ध आचरण करते है , उसकी अपेक्षाओं का उल्लंघन करते है। तब प्रकृति एक सुयोग्य और अच्छी माता की भांति हमें अपना अबोध शिशु समझकर, हमारे कल्याणार्थ, कभी.कभी मीठी.मीठी फटकार दे बैठती है। उसी प्रकृति की मीठी फटकार को 'रोग' का नाम दिया जाता है। इस दृष्टिकोण से रोग हमारी भूलों और बेवकूफियों का परिणाम सिद्ध होती है।

1.8 साराँश

प्राकृतिक स्वास्थ्य विज्ञान से सम्बन्धित उपरोक्त जीवनोपयोगी विवेचनाओं से स्पष्ट हो जाता है कि मानव जीवन में आरोग्यरूपी प्राकृतिक स्वास्थ्य पाना बहुत ही आवश्यक है। दुबारा मानव जीवन मिले या न मिलें। इस बार के जीवन को ही सही उपयोग करके धर्म , अर्थ, काम और मोक्ष के भागीदार बन जायें। अन्यथा प्रकृति रूपी दण्ड़ जैसे. दु:ख, पीड़ा, दर्द, अशाँति, समस्या एवं रोग से कभी नहीं बचा जा सकता है। इस संसार में सामान्य व छोटी -छोटी गलतियों के कारण ही अनेकानेक मनुष्य प्रकृति रूपी दण्ड़ के भयानक परिणामों को भोगते है। प्रस्तुत इकाई में प्रकृति , जीवन और स्वास्थ्य , मानव की प्रकृति , आरोग्यरूपी प्राकृतिक स्वास्थ्य, रोगी एवं स्वस्थ व्यक्ति की पहचान तथा उनके लक्षण, रोग का स्वरूप का संक्षेप में वर्णन किया गया है।

1.9 बोधात्मक प्रश्न

1. प्रकृति, जीवन और स्वास्थ्य के बारे में लिखिए
2. आरोग्यरूपी प्राकृतिक स्वास्थ्य को समझाइयो
3. आरोग्यरूपी प्राकृतिक स्वास्थ्य
4. स्वस्थ, अस्वस्थ व्यक्ति की पहचान अर्थात् उनके लक्षण लिखिए
5. अस्वास्थ्य अर्थात् रोग पर टिप्पणी लिखो|

1.16 संदर्भ ग्रंथों की सूची

संदर्भ ग्रंथों की सूची में सम्मिलित ग्रन्थों एवं उनकी सहायक सामग्री का उपयोग हमने इस ग्रन्थ के निर्माण में सहायक के रूप में किया है। हम इन संदर्भित ग्रन्थों, उनके लेखकों, प्रकाशकों एवं संस्थाओं के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

संदर्भ साहित्य	**लेखक**	**संदर्भ साहित्य**	**लेखक**
आरोग्य प्रकाश	वैद्यराज पं. रामनारायण शर्मा	स्वयं स्वस्थ रहने की कला	डॉ. ेरिन, डॉ. . रा. गाला, डॉ. संजय
मौलिक चिकित्सा कौन सी?	डॉ. चंचलमल चोरडिया	स्वस्थ रहने के प्राकृतिक ढ़ग क्यों न अपनाए जायें	डॉ. इन्द्रजीत कौर, भक्त पूर्ण सिह
100 वर्ष कैसे जीयें	आचार्य श्याम सुन्दर सुमन	साधारण रोगों की यौगिक एवं प्राकृतिक चिकित्सा	के.यो.प्रा.चि.अ. परिषद
नीरोग होने का सच्चा उपाय	आर.टी. ट्राल	प्राण शक्ति उपचार; प्राचीन विज्ञान कला	चौ. कोक सुई
स्वस्थवृत विज्ञान	प्रो. रामहर्ष सिंह	प्राकृतिक स्वास्थ्य एवं योग	डॉ. बृजभूषण गोयल
प्राकृतिक स्वास्थ्य शास्त्र	आचार्य शेषांद्रि स्वामीनाथन	स्वास्थ्य परीक्षण	डॉ. बृजभूषण गोयल
योग द्वारा स्वास्थ्य	डॉ. राकेश प्रकाश निगम	आपका आरोग्य आपके हाथ में	देवेन्द्र वोरा
आदिऊर्जा प्राण	अमश्ता भारती	प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग वैज्ञानिक प्रयोग	डॉ. नागेन्द्र कुमार नीरज
स्वास्थ्य के सोपान	नरूपमल सुराणा	जीवेम् शरद शतम्	पं. श्री राम शर्मा आचार्य वाङ्मय

सरल प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. लक्ष्मी नारायण शर्मा	बिना औषयिों के कायाकल्प	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
बिना दवा इलाज	डॉ. जय माला जशनानी	निरोग जीवन का राज मार्ग	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
बिना दवा परफेक्ट हेल्थ	डॉ. बलराम पटेल	दीर्घ जीवन की प्राप्ति	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
पातंजली योगसूत्र	स्वामी विवेकानंद	पंच तत्वों द्वारा सम्पूर्ण रोगों का निवारण	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
घरेलू आयुर्वेदिक इलाज	वैद्य सुरेश चतुर्वेदी	रोगों की सरल चिकित्सा	विट्ठलदास मोदी
स्वास्थ्य रक्षा के सरल उपाय	डॉ. ओम प्रकाश आनन्द	जीने की कला	विट्ठलदास मोदी
प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग	श्रीमत्ती राज कुमारी गुप्ता	स्वास्थ्य कैसे पाया	विट्ठलदास मोदी
100 वर्ष निरोगी रहिए	माणेक लाल म. पटेल	हमारा स्वास्थ्य	शाम अष्टेकर तथा अनुवादक कालिंदी देशपांडे
रोगों की अचूक चिकित्सा	जानकी शरण वर्मा	तंदुरूस्त कैसे रहें	श्री बर्नर मैकफेडन
प्रकृति से मैत्री	प्रकाशन विभाग	ब्रह्मचर्य ही जीवन हैं	स्वामी श्री शिवानन्द जी
आरोग्य की कुंजी	राष्ट्रपिता महात्मा गाी	नव्य जन स्वास्थ्य तथा स्वास्थ्य विज्ञान	डॉ. मुकुन्द स्वरूप वर्मा
मैं तन्दूरूस्त हूँ या बीमार?	लूई कूने	रिर्टन टू नेचर (प्राकृतिक जीवन की ओर)	एडोल्फ जस्ट
आकृति से रोग की पहचान	लूई कूने	स्वास्थ्य ही सही दिशा प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. िरेन, डॉ. . रा. गाला, डॉ. संजय गाला
स्वस्थ जीवन	प्रताप सिह सुराणा	टॉक्सीमिया	डॉ. टील्डन
जीवनी शक्ति कैसे जगायें	डॉ. चन्द्र दीप सिंह	हाइजेनिक सिस्टम	डॉ. शेल्टन

****

इकाई - 2

रोग के कारण, लक्षण एवं आकृति निदान

इकाई की रूपरेखा

2.1 उद्देश्य

2.2 प्रस्तावना

2.3 रोग के कारण

2.4 रोग की पहचान अर्थात् स्वास्थ्य परीक्षण

2.5 शरीर के प्रमुख अंगों पर दोष.संचय

2.6 शरीर के प्रमुख अंगों पर दोष की पहचान

2.7 सारांश

2.8 बोधात्मक प्रश्न

2.9 संदर्भ ग्रंथ

2.1 उद्देश्य

- विभिन्न अंगों पर रोग के लक्षण क्या.क्या है
- शरीर के विभिन्न अंगों की शक्ति कैसे पहचानी जाती है
- क्या मनोविकृतियाँ भी रोग पैदा करती है
- प्रयोगशाला में रोगों को कैसे पहचानते है
- रोग के पहचान के साथ.साथ रोगी के बारे में क्या.क्या जानना जरूरी है
- शरीर, मन और आत्मा को स्वस्थ रखने के लिए रोग के प्रकारों का वर्गीकरण क्या कहता है
- तीव्र एवं जीर्ण रोग क्या है, कौन.कौन से है
- जीर्ण रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा के दौरान प्रकट उभार क्या है
- जीर्ण रोग व उभार के लक्षणों का तुलनात्मक अन्तर क्या.क्या है
- प्राकृतिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित विभिन्न जानकारियाँ कौन.कौन सी है
- प्राकृतिक चिकित्सा सम्बन्धी रोगी, चिकित्सक, नर्स तथा मित्र एवं परिवारजनों के लिए मुख्य कर्तव्य क्या है।

2.2 प्रस्तावना

प्रकृति अर्थात् प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति का यह लक्ष्य है कि 'मनुष्य को रोगग्रस्त ही न होने देना अर्थात् रोग को शरीर में प्रवेश करने से पहले ही रोक देना है Prevention is better than cure.' इस प्रकार यह प्रकृति शरीर की आंतरिक शक्तियों में वृद्धि करके शरीर में रोगों से लडने की क्षमता उत्पन्न करती है, रोगों से शरीर की रक्षा करती है और आयु बढ़ाती है।

आज जन.स्वास्थ्य के क्षेत्र में विश्व स्वास्थ्य संगठन और विभिन्न राष्ट्रों की स्थानीय सरकारों द्वारा अनेकों जागरूकता कार्यक्रम चलाये जा रहे है। हमारा भी प्रयास यही है कि हम स्वास्थ्य के प्रति आपको जागरूक करते हुए जीवनोपयोगी ज्ञान दे सकें। आशा है कि आप इसे जानेंगे , समझेंगे, आजमायेंगे और दूसरों को बताने का एक सफल प्रयास भी करेंगे।

2.3 रोग के कारण

संसार में कोई बात अकारण नहीं हुआ करती प्रत्येक कार्य का कारण कुछ न कुछ होता ही है। अत: रोगोत्पत्ति का भी कारण होना अनिवार्य है। जैसाकि.

ज्योतिषी वर्ग:. रोग का कारण ग्रहों का फेर मानते है।

वैद्य वर्ग:. त्रिदोष. वात, पित्त, कफ की विषमावस्था को रोग कहते है।

डॉक्टर वर्ग:. प्रत्येक रोग के लिए रोग के कीटाणु विशेष को ही दोषी ठहराते है।

प्राकृतिक चिकित्सक वर्ग:. रोगोत्पत्ति का कारण प्राकृतिक चिकित्सक उक्त सभी वर्गो से भिन्न बताता है। वे न तो ग्रहों को, न भूत.प्रेत को और न त्रिदोष और न ही कीटाणु को रोग का कारण मानते। वे तो समस्त रोगों, दोषों एवं दु:खों का एक ही मुख्य कारण शरीर में इसका विजातीय द्रव्यों को ही मानते है। रोग के कारक अर्थात् विजातीय द्रव्य क्या है , रोगी के शरीर में विद्यमान विजातीय द्रव्य कहाँ से आये है , विजातीय द्रव्य पैदा कैसे हुए , विजातीय द्रव्य की मात्रा कैसे बढ़ी और रोग कैसे पैदा हुआ ? इनका विवरण इस प्रकार है.

1. प्राकृतिक रूप से जीवन यापन करना ही आज की फैली हुई समस्त बीमारियों और स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्त दोषों की एक मात्र दवा या समाधान है। लेकिन हमारा प्रकृति के नियमों के विरूद्ध जीवन यापन करना ही रोग से परिचित होना है। यदि 'दु:ख पर शासन' करना चाहते हो तो 'भौतिक सुख.सुविधा' को मिटा दो, यदि 'अपमान पर शासन' करना चाहते हो तो 'सम्मान' को मिटा दो। यदि 'शोक पर शासन' करना चाहते हो तो 'हर्ष' को मिटा दो। इसी तरह यदि 'रोग पर शासन' करना हो तो 'भौतिक सुख.सुविधा के भोग (अप्राकृतिक जीवन) ' को मिटाना ही पड़ेगा। यही प्राकृतिक चिकित्सा का सिद्धान्त है। वास्तव में हममें कुछ ऐसी आदतें है जो हमें स्वस्थ रहने ही नहीं देती है, जैसे.

    1. पंचतत्वों का कम उपयोग करना. जिससे शरीर में उनका अनुपात असंतुलित हो जाता है।

2. सूर्य.प्रकाश का अभाव. शरीर को धूप लगने ही न देना।

3. स्वच्छ हवा एवं पानी का अभाव. प्रदूषित पानी पीते रहा और प्रदूषित वातावरण में निवास करना या काम करना।

4. भोजन सम्बन्धी बुरी आदतें. भूख न होने पर भी ठूस.ठूस कर खाना।

5. अपौष्टिक आहार का सेवन. चटपटे भोजन को ऐसे तैयार किया जाता है कि उनमें पौष्टिक तत्व ही न बचें।

6. बेमेल व विपरीत आहार का सेवन करना ।

7. गरिष्ठ व रेशेरहित भोजन का सेवन करना।

8. मिलावटी, प्रिजरवेटिव, रसायनिक प्रभाव वाले खाद्य.पदार्थो का सेवन करना।

9. कृत्रिम वस्तुओं में ज्यादा विश्वास और उपभोग करना।

10. जहरीले, उत्तेजक, नशीली व मादक पदार्थो का अधिक सेवन करना।

11. अनियमित भोग.विलास करना।

12. असंयमित जीवन जीना।

13. अपर्याप्त निद्रा. देर रात तक जगते रहना।

14. आराम का अभाव. शरीर व दिमाग को न रात को और न ही अधिक परिश्रम के बाद आराम करने का मौका देना ।

15. यौगिक.क्रियाएँ एवं श्रम का अभाव. आलस्य के कारण दोनों को न अपनाना।

16. क्षमता से अधिक परिश्रम करना और शरीर को कमजोर बनाना।

17. थकान और आलस्य. ये दोनों ही अप्राकृतिक जीवन जीने वालों के प्रिय मित्र है , जो काम से जी चुराते है।

18. मानसिक कुविचार. अमूल्य जीवन को ऐसे विचारों में फँसाएँ रखना।

19. अनिष्टकारी मनोवृत्तियों का असंगत प्रयोग कर स्वयं को गर्त में डूबोना और दूसरों को बेवज़ह परेशानियों में डालना।

20. अहितकर चिन्ता , कल्पना, भय, क्रोध एवं तनाव आदि मनोविकारों से व्यक्तित्व बिगाडऩा ।

21. प्रदूषित वातावरण में रहना और रोगों से लड़ते रहना।

22. स्वच्छता में कमी. आंतरिक व बाहरी स्वच्छता के प्रति उदासीन बने रहना , जिससे शारीरिक व मानसिक रोग बढ़े।

23. संक्रमण. अस्वच्छता के कारण ही प्रदूषित वातावरण पैदा होकर संक्रमण का प्रभाव बढ़ता है।

24. मिथ्योपचार. मूल रोग के कारणों को दूर किये बिना ही लक्षणों बार.बार दबाते रहना और अकाल मृत्यु की ओर बढना।

25. भौतिक साधनों का उपयोग. मन लुभावनी सुख.सुविधा के लिए ऐसे.ऐसे खतरनाक आविष्कार कर लिए गए है , जिनसे सभी के स्वास्थ्य पर प्रत्यक्ष.अप्रत्यक्ष रूप से बुरा प्रभाव पड़ रहा है।

प्राकृतिक जीवन संयम का जीवन है , उसे सदाचार भी कहते है। संयम , सदाचार, सच्चरित्रता एक ही चीज के तीन नाम है। असंयम या कदाचार ही वस्तुत: समस्त रोगों की जड़ है।

2. हमारे शरीर के समस्त संस्थान विजातीय द्रव्य एवं शरीर की मृत कोषों को दूर करने का बराबर प्रयत्न करती रहती है। इसकी सुन्दर व्यवस्था प्रकृति ने नो द्वारों (एक मुँह , एक नाक, दो आँखें, दो कान, एक त्वचा एवं दो गुप्त मार्ग) के रूप में की है। नासिका और असंख्य रोम कूपों द्वारा अशुद्ध वायु सांस के रूप में , रोम कूपों द्वारा अनावश्यक पदार्थ पूर्णत: पसीना के रूप में , गुदा द्वारा अपचित खाद्य.पदार्थ विष्ठा या मल के रूप में , मूत्रेन्द्रिय द्वारा अनावश्यक रसायन मूत्र के रूप में, नाक व मुंह द्वारा कफ और गन्दे थूक के रूप में, नेत्रों द्वारा कीचड़ (घीड़) व अश्रु के रूप में, कान द्वारा कर्ण.मल के रूप में , जटील प्रोटीन्स नाखून व बालों के रूप में तथा विषाक्त रक्त स्त्रियों में मासिक धर्म के रूप में शरीर से बाहर निकलता रहता है। जब शरीर में विजातीय द्रव्य की मात्रा बढ़ जाती है तो शरीर के ये उक्त उत्सर्जन प्रणालियाँ अपनी क्षमता से अधिक विजातीय द्रव्य शरीर से बाहर न निकाल पाने के परिणामस्वरूप दिनोंदिन विजातीय द्रव्य शरीर में ही संचित होने लगता है और संचित होने से उक्त उत्सर्जन प्रणालियों की कार्य क्षमता पर विपरित प्रभाव पडऩे से विजातीय द्रव्य का उत्सर्जन और कम होने लगता है। ऐसी अवस्था में शरीर में संचित विजातीय द्रव्य सडऩे लगता है , रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है और हानिकारक जीवाणुओं की संख्या बढ़ जाती है, जीवनी.शक्ति व प्राण.ऊर्जा का ह्रास होने लगता है, ऐसी अवस्था पैदा होते.होते रोग उत्पन्न हो जाते है।

3. शरीर में विजातीय द्रव्य की मात्रा कैसे बढ़ती है? इसे एक उदाहरण द्वारा समझिए.

जिस प्रकार कार में शुद्ध पेट्रोल इस्तेमाल करने से उसमें कम कार्बन बनेगा और वह कार्बन समय पर बाहर भी निकल जायेगा। परन्तु मिलावटी अर्थात् अशुद्ध पेट्रोल इस्तेमाल करने से अधिक कार्बन बनेगा और कार की क्षमता से अधिक कार्बन बनने पर कार के इंज़न में कार्बन जमने लगेगा और कार जल्दी ही काम करना धीमा कर देगी और एक बंद हो जायेगी। इसी प्रकार अनावश्यक और अप्राकृतिक भोजन के फलस्वरूप हमारे शरीर में विजातीय द्रव्य अधिक बनता और एकत्र होता है जो हमें अस्वस्थ , कमजोर, रोग, वृद्ध और मृत्यु के मार्ग की ओर ले जाता है।

4. जैविक चक्र के अनुसार शरीर के भीतर स्वत: कई प्रकार के जैव.रसायनिक पदार्थ बनते रहते है, जिनका उपयोग मुख्यत: शारीरिक एवं मानसिक कार्यो में समय पर नहीं होने की स्थिति में वे जैव.रसायनिक पदार्थ विष की तरह शरीर को नुकसान पहुँचाते है। ऐसी अवस्था में वे जैव.रसायनिक पदार्थ विजातीय द्रव्य ही होते है।

5. निरोग रहने के लिए सप्राण भोजन , व्यायाम, परिमित परिश्रम , समुचित निद्रा , संयम तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमों की आवश्यकता होती है और इन नियमों को भंग करना यानी रोगों को निमन्त्रण देना है। उसी प्रकार काम , क्रोध, लोभ, मोह, स्वार्थ.परता, चिन्ता, तनाव, कल्पना, भय, हिंसा, प्रतिहिंसा, निराशा, अहंकार, आलस्य, ईर्ष्या, द्वेष, शोक, घृणा, अज्ञान, असहिष्णुता, काम.लिप्सा, अविश्वास, वहम एवं उन्माद आदि मलिन मनोवृत्तियों के व्यवहार से तन और मन दोनों में तरह.तरह के रोग उत्पन्न होते है। रोगों के बाह्य कारण स्थूल भाव से शरीर पर और आंतरिक कारण सूक्ष्म रूप से मन पर प्रभाव डालते है। सभी रोग पहले मन से उपजते है। फिर शरीर पर प्रगट होते है।

मनुष्य का मन ही उसके लिए स्वर्ग या नर्क है। स्वर्ग कहीं ऊपर अंतरिक्ष में और नर्क कहीं पृथ्वी पर नहीं है। मन ही नर्क और मोक्ष का कारण है। .मिल्टन

अत: कहा जा सकता है कि मनुष्य अपने रोगी या निरोगी रहने का स्वयं ही जिम्मेदार है। हम जैसे अपने कार्यों से रोगी होते है, वैसे ही विचारों से भी रोगी हो जाते है।

'कायर बिना मौत मरता है' यह कहावत झूठी नहीं।

क्योंकि महामारी, हैजा एवं प्लेग आदि रोगों से जितने रोगी नहीं मरते उससे अधिक उस रोग के भय से मरते है।

काल बुद्धीन्द्रियार्थानां योगोमिथ्यान चातिच। द्वयाश्रयाणां व्याधीनां त्रिविधो हेतु संग्रह:॥

शरीर सत्व संज्ञयव्याधीनामा श्रयोमत:। तथा सुखानां योगस्तु सुखानां कारणं शम:॥ .चरक

अर्थात् काल, बुद्धि, एवं इन्द्रिय विषयों का मिथ्या योग , अयोग और अतियोग तीन प्रकार का व्यापार होना ही शारीरिक तथा मानसिक व्याधियों का कारण है। शरीर और मन दोनों ही रोग के अतिष्ठान है अर्थात् रोग शरीर और मन दोनों में होते है और काल , बुद्धि एवं इन्द्रियों का उचित योग रहने से रोग न होकर सुख की प्राप्ति होती है।

वास्तव में हम अपनी नासमझी के कारण ही रोगी होते है। वरना स्वाभात: स्वस्थ रहना तो हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है। हम यदि स्वस्थ रहना न जाने या जानकर तद्नुसार आचरण न करें तो रोगी तो हम होंगे ही।

अर्थात् जैसा बोयेंगे वैसा ही तो काटेंगे।

6. अधिकाधिक कामनाएँ, वासनाएँ एवं इच्छाएँ मनुष्य में उत्तेजना पैदा करती है। जिससे शरीर की समस्त इन्द्रियों की भूख बढ़ जाती है और शरीर की संचित प्राण ऊर्जा शीघ्र ही काम में लाई जाती है तब शरीर में प्राण ऊर्जा की कमी होने लगती है और कमजोरी तन.मन को घेर लेती है।

शरीर अन्दर से कमजोर हो जाता है। कमजोर शरीर में विजातीय द्रव्य रूपी रोग जल्दी पैदा होते है और फैलते है।

7. उदरम् व्याधि मन्दिरम्। अर्थात् विजातीय द्रव्य का सर्वप्रथम शरीर के मल निकालने वाले मार्गों में या उनके आस.पास विशेषकर पेडू व उदर में संचय होना प्रारम्भ होता है और धीरे.धीरे समस्त शरीर में व्याप्त हो जाता है। विजातीय द्रव्य से भरे हुये अवयवों के कार्य एवं वृद्धि में बाधा उत्पन्न होती है। क्योंकि शरीर में जहां कहीं विजातीय द्रव्य होता है , वहां पोषक द्रव्यों (रक्तादि) की जगह घेर लेता है।

8. विजातीय द्रव्य में अपने रूप को बदलते रहने की सहज शक्ति होती है। इसका निर्माण विशेषत: उन कणों से होता है, जो घुलनी.शील और अलग.अलग हो जाने वाले होते है अथवा पिसे जा सकते है। यह उन तत्वों से बना होता है जिनमें उद्वेग हो सकता है। उद्वेग की दशा में विजातीय द्रव्य में बहुत बारीक कीटाणु उत्पन्न हो जाते है। जो आक्रान्त स्थान पर बड़ा परिवर्तन कर देते है और विजातीय द्रव्य की मात्रा में वृद्धि कर देते है। उद्वेग से गर्मी उत्पन्न होती है.जितना अधिक उद्वेग होगा उतनी ही अधिक गर्मी होगी। जैसा कि दो या अधिक वस्तुओं की रगड़ और मन्थन से गर्मी की उत्पत्ति होती है। इसी उद्वेगजनित गर्मी के कारण सारे तीव्र रोग. ज्वर , जुकाम, सिर दर्द, पेट दर्द , बदन.दर्द, अजीर्ण, अरूचि, तृषा, वमन एवं अतिसार शरीर में मलोपस्थिति (विजातीय द्रव्य) के आरम्भिक चिह्न होते है।

9. श्वास के साथ हवा में उड़ते रहने वाले छोटे.छोटे कीटाणु, धूल.कण, धुंआ आदि शरीर में जाकर विजातीय द्रव्य की मात्रा बढ़ाते है।

10. प्राकृतिक प्रकोप, ऋतु परिवर्तन, बाह्यघात, मानसिक उद्वेग, अस्वच्छता एवं प्रदूषण आदि से शरीर स्थित विजातीय द्रव्य में एक विशेष प्रतिक्रिया के होने से रोग प्रकट होने की अनुकूल परिस्थितियाँ बनती है। उस समय विजातीय द्रव्य को बाहर निकालने के लिए यदि रोगी द्वारा उचित उपचार नहीं लिया जाये तो विजातीय द्रव्य शरीर के अभीष्ट अंग में ताप उत्पन्न होगा। जिससे विजातीय द्रव्य जलेगा, सुखेगा, सड़ेगा और रोग पैदा करेगा। तब रोग का नाम रोगग्रस्त अंग के नाम से पुकारा जाता है।

11. शक्ति से अधिक श्रम करना, रात्रि में कार्य करना, गहरी नींद न लेना, आराम न करना, जहरीली रासायनिक दवाओं का सेवन एवं मिथ्योपचार (रसायन व शल्य क्रिया) कराना आदि से शरीर में रोगों से लडऩे वाली जीवनी.शक्ति की कमी हो जाती है। जिससे विजातीय द्रव्य के लिए अनुकूल परिस्थिति है। यह सर्वविदित है कि साधारणत: दुर्बल अंगों और दुर्बल व्यक्तियों में ही रोग पैदा होते है और पनपते है।

12. शक्तिहीन.शरीर में पड़े हुए कूड़े.कचरे (विजातीय द्रव्य) को बाहर निकालकर निर्मल बनाने की ताकत नहीं होती। इस तरह विजातीय द्रव्य की मात्रा बराबर बढ़ते जाने से वह व्यक्ति निस्तेज हो जाता है, उसका सारा सौन्दर्य और आकर्षण धूल में मिल जाता , स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाता, भूख मर जाती, नींद हराम हो जाती, शरीर का विकास रूक जाता और शरीर में हमेशा एक न

एक रोग डेरा डाले ही रहता। इसलिए प्राकृतिक चिकित्सा.पद्धति में सर्वप्रथम शरीर की जीवनी.शक्ति को बढ़ाने की चिकित्सा की जाती है , इसके बिना मूल रोग के निवारण करने की आशा करना दुराशा मात्र है।

13. रोगी के शरीर में विजातीय द्रव्य के मूल कारणों को दूर करने के बजाय रोग के लक्षणों को देखकर अत्यन्त विषैली रासायनिक व नकली दवाओं का सेवन कराना , यंत्रों द्वारा रसायनों को रोगी के शरीर में प्रवेश कराना एवं शल्य.क्रिया करके अंगों को ही काट देना (अन्त्रपुच्छ की शोथ और पिताशय की पथरी में) आदि तो सिर्फ मिथ्योपचार है, जिससे विविध प्रकार के बाहरी विष शरीर में प्रवेश कर विष की मात्रा (रोग) को बढ़ा देते है , रोगी का जीवन और मुश्किल हो जाता है और भविष्य में रोगी का रोग पुराना, जटिल एवं गम्भीर बन जाता है।

14. शरीर में कुछ वेग पैदा होते है जैसे. मल.मूत्र , अपान वायु (गैस), शुक्र (वीर्य), छींक, हिचकी, डकार, जभांई, भूख.प्यास, आँसू, निद्रा.विश्राम, उल्टी.दस्त आदि। इन वेगों को रोकने से विजातीय द्रव्यों का निष्कासन अवरूद्ध हो जाता है , शरीर के अभीष्ट अंगों पर और खासकर माँसपेशियों पर दबाव व तनाव पैदा होता है। ऐसी स्थिति रोग पैदा होने में सहायक बन जाती हैं।

15. मुंह की समय.समय पर पूरी तरह से सफाई न होने के कारण मुँह के द्वारा जल में मिश्रित कीटाणु और गंदगी आदि शरीर में पहुँच जाती है और विजातीय द्रव्य की मात्रा बढ़ाते है।

16. विषैले जन्तुओं (सांप, बिच्छु, कीट.पतंगें, पागल कुत्ता एवं अन्य जानवर आदि) के काट खाने से उनका विष शरीर में प्रवेश कर जाता है और विजातीय द्रव्य की मात्रा बढ़ाते है।

17. प्राकृतिक नियम जैसा बीज वैसा फल। ठीक इसी प्रकार कमजोर व रोगग्रस्त माता.पिता की संतानें भी वैसी ही होगी। इसका मुख्य कारण रोगी के शरीर में वंश परम्पराजन्य वही विजातीय द्रव्य एवं रोग के विकार उत्पन्न संतान में खून के साथ आना स्वाभाविक है। भले ही वह मात्रा में बहुत कम हो। इस तरह से माता.पिता अथवा उनके पूर्वजों के बहुत से रोग व दोष संतान में आ जाते है।

18. वैसे तो प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति कीटाणुओं को शत्रु नहीं , मित्र मानती है। क्योंकि दुनिया में कीटाणुओं का कार्य. गंदगी साफ करना होता है। गंदगी अर्थात् विजातीय द्रव्य जहाँ भी होगे वहाँ कीटाणु पैदा होते है, चाहे शरीर के अन्दर ही क्यों न हो। अत: यह कह सकते है कि रोग कीटाणुओं से पैदा न होकर सिर्फ ओर सिर्फ विजातीय द्रव्य के कारण ही पैदा होते है। कीटाणुओं में रोग पैदा करने की शक्ति नहीं होती है।

2.4 **रोग की पहचान अर्थात् स्वास्थ्य परीक्षण**

दु:ख, दर्द, सूजन, जलन, समस्या एवं रोग के बारे में वास्तविक जानकारी स्वयं रोगी को ही होती है, वहीं सही मायने में सच्चा डॉक्टर है , उसके द्वारा प्राकृतिक चिकित्सक को बताये व कहे अनुसार ही रोग के लक्षणों का निरीक्षण एवं रोगी की तात्कालिक जीवन.शैली का विशेषण कर रोग की पहचान एवं रोग के मूल कारणों को जाना.पहचाना जाता है। इसी को रोग निदान या रोग की जाँच कहते है। प्राकृतिक

चिकित्सा विशेषज्ञ रोगी शरीर में जैव.रासायनिक परिवर्तनों एवं विजातीय द्रव्य के फलस्वरूप शरीर में दोष.संचय से उत्पन्न विकृतियों जैसे. शारीरिक, जैव.रासायनिक, रचनात्मक एवं संघटनात्मक आदि तथा मन में उत्पन्न मनोविकृतियों को पहचानने में ही विश्वास रखता है। शरीर की प्राकृतिक क्रिया में होने वाली विकृति का अध्ययन करना विकृति विज्ञान (पैथोलॉजी) कहलाता है।

प्राकृतिक चिकित्सा के अनुसार रोग के प्रारम्भिक लक्षणों अर्थात् विकृतियों के बारे में निम्न जानकारी.

1. विजातीय द्रव्य या अपशिष्ट या विषमयता (Toxemia): ये जहरीले पदार्थ रक्त में मिलकर रक्त व शरीर को विषाक्त बनाते है।
2. उल्टी.दस्त (Vomiting and Diarrhoea) : हवा , पानी और भोजन के साथ शरीर में हानिकारक पदार्थो के पहुँचने पर तुरन्त ही बाहर निकालने की क्रिया है।
3. फोड़ें.फूंसियाँ (Pimples) : त्वचा क्षेत्र में फँसे अपशिष्टों का बाहर निकलना।
4. सर्दी.जुकाम.खाँसी (Cold and Cough) : श्वसन संस्थान में जमे हुए अपशिष्टों को अनुकूल परिस्थिति में बाहर निकालना।
5. एलर्जी (Cold and Cough) : अपशिष्टों से भरे शरीर में थोड़ा.सा अपशिष्ट और आने पर प्रतिक्रिया करना।
6. वायु विकार.अपच (Gastric and Indigestion) : गरिष्ठ व अनुपयोगी भोजन अपच और वायु की समस्या पैदा करते है।
7. सूजन एवं दर्द (Inflammation and Pain): अपशिष्ट का रक्तवाहिनियों , पेशियों में जमा हो जाना। जिससे वे मोटी होकर उभर जाती है, गरमी पैदा होती है, अभीष्ट स्थान पर लाली, जलन, तनाव एवं दर्द पैदा होता है। कहीं.कहीं पर तो अपशिष्ट झिल्लियों से रीस.रीस कर समीपस्थ अंगों में भी चला जाता है। जिससे संक्रमण और ज्यादा बढ़ जाता है।
8. वज़न में परिवर्तन (Changing of weight) : कुछ रोगों में वज़न घट जाता है तो कुछ में बढ़ जाता है।
9. रक्त में परिवर्तन (Changing of blood component) : रक्त का संघटन गड़बड़ हो जाता है और उसकी गुणवत्ता में कमी आ जाती है , जैसे. रक्तकण और हिमोग्लोबीन की मात्रा घट जाती है।
10. खून की कमी या पांडु रोग (Anemia) : रक्त का संघटन गड़बड़ होकर रक्तकण और हिमोग्लोबीन की मात्रा कम हो जाती है।
11. ल्यूकेमिया (Leukemia) : रक्त का संघटन गड़बड़ होकर अविकसित श्वेतकणों की संख्या में भारी वृद्धि हो जाती है।
12. ल्यूकोपीनिया (Leukopinea): रक्त का संघटन गड़बड़ होकर श्वेतकणों की संख्या में भारी कमी हो जाती है।

13. एम्बोलिजम (Ambolisem) : रक्त का संघटन गड़बड़ होकर शिराओं में हिलमेसी की गठान हो जाती है, जो स्थान बदलती रहती है।

14. रक्तस्त्राव (Hemorrhage) : रक्त का संघटन गड़बड़ होने पर रक्त वाहिनियों से रक्त का बाहर आ जाना है।

15. हायपरमिया (Hypermia) : रक्त का संघटन गड़बड़ होने पर शिराओं में रक्त बढ़ जाना।

16. इस्चेमिया (Ischemia) : रक्त का संघटन गड़बड़ होने पर अचानक शरीर के किसी अंग.विशेष में रक्त का कम हो जाना या रक्त की पूर्ति कम होना।

17. इडेमा (Edema) : रक्त शिराओं का पानी संयोजक पेशियों में चले जाने से सूजन पैदा हो जाती है।

18. एट्रोफी (Atrophy) : छोटे कोषों के कारण पेशियाँ छोटी रह जाती है।

19. इंफिल्ट्रेशन (Infiltration) : पेशियों में कैल्शियम साल्ट का सूख जाना।

20. फैटी डिजेनेरेशन (Fatty degeneration) : चर्बी का विघटित होना।

21. ग्रेन्युलर डिजेनेरेशन (Granular degeneration)) : कोशों में असाधारण परिवर्तन आकर टूट जाते है, जिससे पाचन, अवशोषण, पोषण, उत्सर्जन में गड़बड़ी हो जाती है।

22. हाइलाइन, म्युकोइड, ऐमीलौइड, कोलौइड डिजेनेरेशन (Hyline, Mucold, Amyloid, Colloid degeneration) : कोशों का विघटन होकर रंगहीन एल्ब्यूमीन में बदल जाना।

23. अल्सरेशन (Ulceration) : कुछ कोश मृत हो जाने पर समीपस्थ कोशों द्वारा उसे हटाने का प्रयत्न।

24. नेक्रोसिस (Necrosis): शरीर के किसी हिस्से या अंग की पेशियों में विकृति से काम करना बंद कर देती है।

25. सपरेशन (Suppuration) : अपशिष्ट और कीटाणुओं के कारण पस या मवाद का बनना।

26. ऐबसेस (Abscess) : मवाद का एक जगह इक्क_ा होकर उभरना।

27. नाड़ीव्रण (Fistula of cinus) : शरीर में आघात और मवाद के कारण पीली नली उत्पन्न होती है, जो तनाव, दर्द व जलन पैदा करती है। जैसे. गुदा के पास, पैरों व हाथों के बगल में।

28. सडऩ या कोथ (Gangrene) : शरीर के किसी हिस्से में आघात और मवाद के कारण रक्त की पूर्ति व पोषण न मिलने से वहाँ सड़ान पैदा हो जाती है।

29. ज्वर व सिर दर्द (Fever and Headache) : विषाक्त पदार्थ को रक्त में ही जलाने के लिए शरीर का तापमान 98.40 स्न से अधिक हो जाना।

30. वृद्धि (Hypertrophy) : पेशी के कोशों में विस्तार होना।

31. ग्रंथिल (Tumour) : नई पेशियों के उत्पन्न होते समय रक्त की विकृति एवं अपशिष्टों के हलाहल के कारण नवीन पेशियाँ गाँठ के रूप में उत्पन्न हो जाती है। जो बढक़र नुकसान पहुँचाती है।

32. सीस्ट (Sist) : यह भी ग्रंथिल का ही रूप है परन्तु नुकसान नहीं पहुँचाती है।

33. अर्बुद या कैसर (Cancer) : रक्त की विकृति एवं अपशिष्टों के हलाहल के कारण ऐपीथेलियम कोशों की अनियंत्रित वृद्धि के कारण उत्पन्न विकट समस्या है। जो बढऩे पर नुकसान पहुँचाता है।

2.5 शरीर के प्रमुख अंगों पर दोष.संचय

अंग / दोष.संचय	सम्पूर्ण शरीर	पार्श्व भाग	पृष्ठ भाग	अग्र भाग
शरीर	मोटा, भद्दा, भारी	क्षीण, बड़ा		
कान के पीछे सीमा रेखा	विलुप्त	गायब	गायब	बहुत पीछे
आकृति	असामान्य		पीछे से असामान्य	
रंग	पीला, विकृत			
सिर	बहुत बड़ा	सामान्य, आगे झूका, चौड़ा	पीछे अकि बड़ा, झूका	बाल कम, गंजा
मस्तिष्क	चर्बी से भरा	सामान्य चर्बी	सामान्य चर्बी	अकि चर्बी
चेहरा		दुबला, चौरस		
मुँह	खुला	खुला	उभरा	
नाक	बहुत मोटी	सूजन, फूली		उभरी, मोटी
आँख	बहुत दबी	कम दबी	बाहर उभरी	दबी
कान	पीछे भारी सूजन			
गर्दन	अकि छोटी.मोटी	बड़ी व भारी, पिण्डाकार	पीछे से अकि मोटी	बहुत खिंचाव, पिण्डाकार
कें	ढ़ालू		ढ़ालू, गोल	
पीठ			पिण्डाकार	

छाती	खोखली	खोखली		
हाथ.पैर				बड़ें, फूले हुए
पेडू	आगे लटका हुआ			बाहर निकला हुआ
प्रभावित अंग		गुदें, फेफड़ा	गुदें, गर्भाशय, जनन, स्नायु, बवासीर	फेफड़ा, यकृत, हृदय, वात

2.6 शरीर के प्रमुख अंगों पर दोष की पहचान

	अवयव	संचय	शरीर पर प्रभाव
1.	यकृत	दक्षिण (दायां) पार्श्व	त्वचा पीली एवं खूब पसीना आना
2.	गुदा	पृष्ठ वाम (बायां) पार्श्व	पसीना कम आना एवं आँखों के नीचे की चमड़ी का सिकुड़ना
3.	फेफड़ा	अग्र व पृष्ठ पार्श्व	क्षय रोग एवं फेफड़ों में सूजन
4.	हृदय	अग्र व वाम (बायां) पार्श्व	हृदय दर्द
5.	गर्भाशय	पृष्ठ	बंध्यत्व, गर्भ काल में कष्ठ एवं दू में कमी आना
6.	वात रोग	वाम (बायां) पार्श्व	पसीना पूरा न आना

प्राकृतिक चिकित्सा में रोग की पहचान रोगी के बताये अनुसार अभीष्ट अंग का निरीक्षण निम्र प्रकार से किया जाता है.

त्वचा पर रंगों के धब्बों से रोग की पहचान			
त्वचा पर रंगीन लक्षण		समस्या या विकार या रोग	पंच तत्व की मात्रा
1.	हरा	यकृत और नाड़ी संस्थान की समस्या	अधिक अप्राण वायु
2.	पीला	प्लीहा, अग्राशय, पेट और लिम्फेटिक प्रणाली की समस्या	अधिक पृथ्वी तत्व
3.	नीला	ज़हर के विकार	प्राण वायु की कमी
4.	लाल	हृदय, मस्तिष्क और रक्त वाहिकाओं की समस्या	अधिक अग्नि तत्व
5.	काला	मूत्र और जनन संस्थान तथा कामवासना की समस्या	कम आकाश तत्व

6.	सफेद	त्वचा और श्वास संस्थान की समस्या	अग्नि व जल तत्व की कमी

त्वचा के निरीक्षण से रोग की पहचान		
त्वचा पर प्रकट लक्षण		समस्या या विकार या रोग
1.	त्वचा का रूखा होना	आँतों में विकार तथा शरीर में जल की कमी
2.	त्वचा का गर्म होना	बुखार, सिरदर्द होना और विजातीय द्रव्य का जलना
3.	त्वचा पर खुजली होना	छोटी व बड़ी आँतों में खुश्की होना
4.	त्वचा पर दाने तथा मुँहासे होना	रक्त विकार तथा हार्मोन्स का असंतुलन
5.	त्वचा पर काले धब्बे होना	रक्त विकार तथा यकृत की समस्या होना
6.	त्वचा पर पसीना अधिक आना	टी.बी. सम्भावना
7.	त्वचा का लाल होना	तनाव
8.	त्वचा का फीका होना	रक्ताल्पता
9.	त्वचा का पीला होना	पीलिया
10.	त्वचा का स्वेदयुक्त होना	ज्वर

चेहरे के निरीक्षण से रोग की पहचान		
चेहरे पर प्रकट लक्षण		समस्या या विकार या रोग
1.	शरीर के अन्य अवयवों की अपेक्षा सिर का बड़ा होना	कष्टप्रद रोग लेकिन साध्य (ठीक हो सकता) है
2.	चेहरे पर हीनता होना, पलकों का झुका होना तथा आँखों का धंसा होना	क्षय और तपेदिक रोग
3.	प्राकृतिक रूप से चेहरे का हीन लगना	छाती के रोग और जोड़ों का दर्द
4.	चेहरे पर झेप और शर्मिलापन होना	शरीर में ऊर्जा की कमी
5.	चेहरे पर थकान दिखना	कब्ज और तनाव
6.	गर्भवती स्त्री का चेहरा मुरझाना	गर्भ का गिरना या गर्भ–स्त्राव होना
7.	चेहरे का सून्ना होना	शरीर में भयंकर रोग होने को सम्भावना
8.	चेहरे लाल या लाल धब्बे होने	खसरा और रक्त विकार होना
9.	चेहरा पीला या नीला पड़ना	पीलिया, रक्ताल्पता और रक्त विकार होना

10.	चेहरा व पलकों पर सूजन	गुर्दे की सूजन और समस्या होना
11.	चेहरे का फीका पड़ना	तपेदिक रोग और ज्वर का होना
12.	चेहरे पर घबराहट	मानसिक तनाव होना
13.	मुँह खुला रहना और उससे सांस लेना	श्वास संस्थान के रोग
14.	कान में खुजली करना	कान की समस्या
15.	चेहरे पर काले दाग	कब्ज व पेट की समस्या
16.	चेहरे पर मुँहासे	कब्ज व काम वासना का मानसिक दबाव की समस्या
17.	दाहिनी तरफ का गाल लटकना	हर्निया या आँत वृद्धि
18.	दोनों गाल लटकना	पाचन क्रिया की समस्या व टाँगों का दुर्बल होना
19.	माथे पर समतल रेखाएँ या माथे पर सिकुड़न या माथे से नाक की जड़ तक की सिकुड़न	चिंता व अन्य मानसिक पीड़ा तथा शर्करा व वसा का अधिक होना।
20.	कनपटी की तरफ उभरी हुई शिरयें	उच्च रक्तचाप, क्रोध, चिंता
21.	चेहरे पर दायें खड़ी रेखा	कमजोर यकृत
22.	चेहरे पर बायें खड़ी रेखा	कमजोर प्लीहा
23.	गले पर झुर्रियाँ	फेफड़ों की दुर्बलता
24.	नाक के आधार पर गहरी नाली नुमा समतल रेखा	एलर्जी की सम्भावना से ग्रस्त व यौन शक्ति की कमी
25.	आँख में स्थित उपतारा के चारों तरफ गोल घेरा	अधिक कोलेस्ट्रोल
26.	आँखों के नीचे झुर्रीदार त्वचा या जामुनी रंग के धब्बे	गुर्दे के रोग व कमजोर रक्त संचार
27.	चेहरे पर आड़ी रेखायें	कमजोर दृष्टि व यकृत
28.	गाल के मध्य संवेदनशील क्षेत्र	साइनोसाईटिस व पाचन की समस्या
29.	नाक की लाल नोक	हृदय पर अधिक दबाव
30.	मुँह के किनारों पर गहरी खड़ी रेखा	प्रजनन संस्थान की कमजोरी
31.	ऊपरी होंठ पर खड़ी रेखाएँ	अधिक धूम्रपान व रतिक्रियाओं में कमी
32.	विख्यात हँसने की रेखा	अग्राशय की समस्या, मधुमेह
33.	होठों का नीला पड़ना	हैजा रोग और यकृत की समस्या
34.	होठों पर सफेद धब्बे या दाग	बड़ी आँत में परजीवी।
35.	होठों पर बैंगनी धब्बे या दाग	कब्ज के कारण कमजोर रक्त संचार
36.	होठों पर काले धब्बे या दाग	बड़ी आँत की समस्या
37.	ठुड्डी पर गहरी अधिचाप रेखा	पश्चाताप, हतासा, असक्षम यौन शक्ति

38.	दोहरी ठुड्डी	थाइराईड की कमजोरी
39.	ठुड्डी के नीचे माँस का लटकना	स्त्रियों में मासिक धर्म की खराबी
40.	चेहरे पर लाल–पीले छोटे दाने और गले में भारीपन	खसरा

बालों के निरीक्षण से रोग की पहचान		
बालों पर प्रकट लक्षण		समस्या या विकार या रोग
1.	बालों का रूखा व शुष्क होना	गुर्दो की समस्या
2.	बालों सफेद होना	नजला, जुकाम, दमा एवं अन्य श्वास की समस्या
3.	बालों झड़ना तथा कमजोर होना	सिर में रक्त संचार कम होने से पिट्यूटरी ग्रंथी की क्रियाशीलता में कमी आना तथा पाचन संस्थान की समस्या

आँखों के निरीक्षण से रोग की पहचान		
आँखों पर प्रकट लक्षण		समस्या या विकार या रोग
1.	आँखों का अन्दर धस जाना	श्वेत प्रदर, रक्त स्त्राव का बढ़ना, दुर्बलता, प्रमेह रोग, स्वप्न दोष
2.	आँखों की सूजन	रूमेटाइड अर्थराईटिस, यकृत, गुर्दो व ह्दय की समस्या
3.	आँखों का उभरा हुआ होना	सिर में रसौली होना
4.	आँखों की पुतलियों का फैलना	मोतियाबिन्द, मिर्गी होना तथा साँप का काटा जाना
5.	आँखों की पुतलियों का सिकुड़कर छोटो हो जाना	अफीम का नशा करना
6.	आँखों की झिल्ली सफेद होना	रक्तहीनता होना
7.	आँखों का लाल होना	नजला, जुकाम, उच्च रक्तचाप, तेज बुखार और आँखों का संक्रमण
8.	आँखों के आगे अंधेरा छाना	चक्कर, बेहोशी, सिरदर्द, अवरूद्ध रक्तसंचार के कारण धड़कन बढ़ना
9.	आँखों के चारों ओर काले घेरे बनना	पेट के रोग होना
10.	आँखों में दर्द होना	पित्त बढ़ना और ह्दय रोग होना
11.	आँखों को बार–बार खुजलाना	ह्दय और यकृत रोग की सम्भावना
12.	आँखों में धुँधला दिखना	रक्त विकार होना व अँधापन आना
13.	आँखों में एक का दो प्रतिबिम्ब दिखना	यकृत, गुर्दा, अग्राशय की समस्या होना तथा मधुमेह रोग होना

14.	नींद में पलकें थोड़ी-सी खुली रहना	प्लीहा से यकृत में रक्त का संचार कम मात्रा में होना
15.	आँखों की पुतलियाँ गायब, आँखों का रंग बदलने लगे और आँखें स्थिर हो जायें	मृत्यु
16.	आँखें एकदम सफेद हो जाना	असाध्य क्षय रोग
17.	जल्दी-जल्दी आँखों का घुमना	मानसिक स्थिति अव्यवस्थित
18.	आँख से आँख न मिलाना	झूठा
19.	पलकें कम झपकाना	आत्मविश्वासी, एकाग्रता, आवश्यकता से अधिक सावधान
20.	पलकें जल्दी-जल्दी झपकाना	मानसिक परेशानी, तनावग्रस्त, झूठा, संकोचो, डरपोक।

कान के निरीक्षण से रोग की पहचान		
कान से सम्बन्धित प्रकट लक्षण		समस्या या विकार या रोग
1.	कान का दर्द व सूजन तथा कान से पानी व मवाद आना	कान के बीच के भाग का प्रदाह व कान की विकट समस्या
2.	किसी भी कान के नीचे सूजन या कड़ापन	कान की समस्या व बहरापन

नाक के निरीक्षण से रोग की पहचान		
नाक से सम्बन्धित प्रकट लक्षण		समस्या या विकार या रोग
1.	नाक में खुजली	पेट में कृमि, पेट में खराबी व सर्दी लगना

गला (गर्दन) के निरीक्षण से रोग की पहचान		
गला से सम्बन्धित प्रकट लक्षण		समस्या या विकार या रोग
1.	गल ग्रंथि की सूजन	टाँसिल
2.	गले के निचले भाग पर सूजन	घेंघा
3.	गले के दाहिने भाग पर सूजन	पुराना कब्ज
4.	गले के भीतर सूजन	डिफ्थेरिया व कैंसर
5.	केवल गर्दन पर सूजन	दिमाग की कमजोरी

पेट के निरीक्षण से रोग की पहचान		
पेट से सम्बन्धित प्रकट लक्षण		समस्या या विकार या रोग
1.	बच्चों का बढ़ा हुआ पेट	रक्त की कमी और यकृत की समस्या
2.	बड़ों का बढ़ा हुआ पेट	कब्ज, गैस, मधुमेह, हर्निया व मस्से की समस्या

3.	पेट के ऊपरो भाग का बढ़ना	पेट के विभिन्न रोग व आमाशय का कैंसर
4.	पेट के निचले भाग का बढ़ना	मूत्राशय का बढ़ना, आँतों में अधिक मल जमना, छोटी आँत में बायु बनना, स्त्रियों में गर्भाशय की रसौली।
5.	सीने के नीचे अर्थात् दाहिनी पसली के नीचे सूजन या दर्द	यकृत रोग
6.	बायीं पसली के नीचे सूजन या दर्द	प्लीहा रोग
7.	निचली पसलियों के बीच त्रिकोण में दर्द	आमाशय में छाले व आँतों के बीच सूजन
8.	नाभि के पास दाहिनी तरफ कड़ापन	कब्ज
9.	नाभि के दाहिनी तरफ दर्द	आँत्रपूँछ में सूजन अर्थात् अप्पेंडिसाइटिस
10.	नाभि के बायीं तरफ दर्द	गैस, वायु विकार
11.	असहनीय दर्द पेट से शुरू होकर कमर व कंधों तक फैल जाना	मूत्र मार्ग व अन्न नाली में पथरी
12.	स्त्रियों की नाभि के नीचे सूजन	मासिक धर्म की समस्या
13.	स्त्रियों के पेट की त्वचा छूने से छोटी–छोटी गांठों का मालुम चलना	मासिक धर्म की समस्या
14.	छाती और पेट के बीच थोड़ा बायीं तरफ दर्द	पित्ताशय की पथरी, कब्ज, आमाशय का अल्सर, पेट में गैस
15.	नाभि के नीचे थोड़ा दर्द	हर्निया, गुर्दो की समस्या

छाती के निरीक्षण से रोग की पहचान		
छाती से सम्बन्धित प्रकट लक्षण		समस्या या विकार या रोग
1.	एक ओर से सीने का बढ़ना	फुफ्फुसावरण (प्लूरिसी) से स्त्राव होना
2.	भारी साँस आना	दमा रोग व फफड़े का प्रदाह
3.	फेफड़ों का फूलना	प्लूरिसी से पानी आकर निचले भाग में इकट्ठा होना
4.	ह्रदय प्रदेश में फुलाव	ह्रदय का बढ़ना
5.	झटके के साथ साँस आना	दमा

हड्डियों के निरीक्षण से रोग की पहचान		
हड्डियों पर प्रकट लक्षण		समस्या या विकार या रोग
1.	हड्डियों के जोड़ पर विकृति दिखना	गठिया, अर्थराइटिस
2.	हड्डियों के जोड़ पर सूजन व दर्द	संधिवात
3.	हड्डियों का टेढ़ा होना	कैल्शियम की कमी

4.	हड्डियों का सामान्य आकार से बढ़ जाना	हड्डियों पर यूरिक एसिड जम जाना

कमर के निरीक्षण से रोग की पहचान		
कमर से सम्बन्धित प्रकट लक्षण		समस्या या विकार या रोग
1.	कमर का कड़ापन व सूजन	टाँगों की कमजोरी
2.	कमर के नीचे थोड़ा दाहिनी तरफ दर्द	गर्भाशय रोग, पुरूषों में पौरूष ग्रंथि के रोग

पीठ के निरीक्षण से रोग की पहचान		
पीठ से सम्बन्धित प्रकट लक्षण		समस्या या विकार या रोग
1.	दोनों कंधों के मध्य रीढ़ पर सूजन	भुजाओं की कमजोरी

अंगुलियों के निरीक्षण से रोग की पहचान		
अंगुलियों पर प्रकट लक्षण		समस्या या विकार या रोग
1.	अंगुलियों के जोड़ों में दर्द	संधिवात
2.	अंगुलियों में विकृति	गठिया
3.	अंगुलियों में लाली का कम होकर पीलापन दिखना	रक्त अल्पता

नाखून के निरीक्षण से रोग की पहचान		
नाखून पर प्रकट लक्षण		समस्या या विकार या रोग
1.	लम्ब नाखून पर अपारदर्शी चाँद का होना	थायराईड का बढ़ना
2.	नाखून आकार में बड़े होना	फेफड़े, हृदय और मस्तिष्क विकार की सम्भावना
3.	नाखून आकार में छोटे होना	आँतों के रोग, रक्त विकार तथा कमर व पैरों में दर्द होने की सम्भावना
4.	नाखून का पतला होना	शरीर कमजोर, दुर्बल रक्त संचार, सुस्ती तथा हृदय रोग की सम्भावना
5.	मुड़े हुए नाखून होना	फेफड़ों के रोग व रीढ़ की हड्डी में विकार होने की सम्भावना
6.	नाखून बीच में से उठे हुए होना	फेफड़े और दिल की कमजोरी, यकृत में सूजन
7.	नाखून का एक ओर कम और दूसरी ओर ज्यादा चौड़ा होना	संधिवात
8.	नाखूनों का झुर-झुर टूटना	कैल्शियम और चिकनाई की कमी,
9.	नाखूनों का काँच की तरह टूटना	स्नायुविक रोग की सम्भावना
10.	नाखूनों का पीला होना	पीलिया रोग, यकृत रोग

11.	नाखून के नीचे हल्का नीलापन	बार–बार जुकाम का होना
12.	नाखून का नीला होना	अधिक कार्बन होना
13.	नाखूनों का सफेद होना	खून की कमी व हृदय रोग
14.	नाखूनों पर सफेद धब्बे होना	मानसिक तनाव, स्नायु मंडल की कमजोरी
15.	नाखूनों पर काले धब्बे होना	जीवनी–शक्ति का कम होना, जल्दी ही बीमार होने का संकेत
16.	सभी नाखूनों पर काले धब्बे होना	जीवनी–शक्ति का बहुत कम होना, जल्दी ही गंभीर रोग होने का संकेत
17.	धुएँ जैसे नाखून का होना	अधिक धूम्रपान करना
18.	नाखून नुकीले और चपटे होना	लकवा तथा पक्षाघात
19.	नाखून पर उभरी हुई धारिया या रेखा	यकृत विकार
20.	नाखून पर आड़ी धारिया या रेखा	रोग होने की सम्भावना
21.	नाखून पर लम्बी धारिया या रेखा	मानसिक कार्य की अधिकता या अधिक सोचना
22.	नाखून पर लम्बी व टेढ़ी धारिया या रेखा	आँखों पर दबाव एवं आँखों की समस्या
23.	नाली युक्त नाखून	बड़ी आँत में सूजन
24.	चम्मच की तरह नाखून	सुजाक, चम रोग, थायराईड की समस्या
25.	सफेद, भुरभुरा व आगे से उठा हुआ नाखून	अधरंग (जल्दी बीमार होने) का खतरा बढ़ना

थूक (मुँह की लार या श्लेष्मा) के निरीक्षण से रोग की पहचान		
थूक के लक्षण		समस्या या विकार या रोग
1.	थूक का पतला होना	शरीर में पानी की अधिकता तथा सर्दी के कारण
2.	थूक का बदबूदार होना	दाँत व मुँह समेत पाचन संस्थान के रोग
3.	थूक का पीपयुक्त होना	मसूड़ों व फेफड़ों में फोड़ा होना
4.	थूक का गाढ़ा होना	आँतों, गुर्दो व प्लीहा की कमजोरी
5.	थूक चिकना होना	अपच होना और प्लीहा की समस्या
6.	थूक का हरा होना	यकृत की समस्या व पीलिया रोग
7.	थूक का रंग नारंगी या मटमैला होना	श्लेष्मिक सन्निपात
8.	थूक में झाग बनना	वात विकार होना
9.	थूक के साथ रक्त का आना	टो.बी. या फेफड़ों के रोग
10.	थूक का चिपचिपा होना	ब्रोंकाइटिस

मुँह के स्वाद व जीभ के निरीक्षण से रोग की पहचान		
मुँह के स्वाद व जीभ पर प्रकट लक्षण		समस्या या विकार या रोग
1.	जीभ का रंग लाल होना	शरीर में गर्मी बढ़ना, पानी की कमी होना तथा मूत्र विकार होना
2.	जीभ का रंग काला होना	टाइफाइड रोग होना
3.	जीभ पर लाली ज्यादा होना	शरीर में जलन होना
4.	जीभ की लाली कम होना	खून की कमी होना
5.	जीभ पर मैल की परत	आमाशय में हल्की सूजन व अपच
6.	जोभ का रंग सीसे जैसा होना	फेफड़ो व अग्नाशय के रोग तथा हैजा
7.	जीभ का खुश्क होना	शरीर में पानी की कमी और वायु विकार होना
8.	जीभ पर छाले होना	पेट में विषों व मलों का आधिक्य, कब्ज, पाचन की समस्या तथा मूत्र में गर्मी व विकार
9.	जीभ की जड़ में सफेदी का होना	पुराना कब्ज होना, आँतों की कमजोरी व गम्भीर रोग
10.	जीभ का सफेद होना	रक्ताल्पता
11.	जीभ का नीला होना	शरीर में ऑक्सीजन की कमी होना, हृदय विकार व समस्या
12.	जीभ भूरी, बैंगनी या जामुनी होना	धीमा रक्त संचार
13.	जीभ का पीला होना	धीमी उपापचय
14.	जीभ का पीला और मैल की मोटी तह	बदहजमी, अम्लता, यकृत में समस्या
15.	जीभ पर दाँतों के निशान पड़ना	यकृत में समस्या, माँसपेशियों और आमाशय के रोग
16.	जीभ ज्यादा समय तक मुँह से बाहर रहे	मस्तिष्क में रक्त का जमाव
17.	स्थिर जीभ का कांपना	मस्तिष्क में विकार
18.	जीभ का कांपना तथा लडखडाना	शारीरिक कमजोरी
19.	जीभ का तीखा व नुकीला होना	मस्तिष्क विकार तथा स्नायुविक तंत्र का कमजोर होना
20.	जीभ के किनारे और नोंक लाल होना	टायफाईड
21.	जीभ का टेढ़ा होकर एक तरफ ही घुमना	जीभ का पक्षाघात
22.	जीभ का लम्बा होना	मस्तिष्क में समस्या की सम्भावना
23.	जीभ का चौड़ा व रक्तहीन होना	शरीर में नमक की कमी होना
24.	जीभ पर काली तह का जमना	चेचक रोग होना तथा यकृत रोग के कारण मृत्यु की पूर्व सूचना
25.	जीभ का सीसे जैसा होकर उस पर छाले पड़ना	मृत्यु की पूरी सम्भावना

26.	जीभ सून्न होना	स्नायु विकार
27.	जीभ पर चिकना स्वाद	अपच
28.	मुँह में रस की अधिक मात्रा	भूख लगना
29.	मुँह का कड़वा स्वाद	अपच और बुखार या अम्लता की पूर्व सूचना
30.	मीठा खाए बिना ही मुँह का स्वाद मीठा	मधुमेह
31.	जीभ पर सूजन होना	थायराईड की समस्या
32.	जीभ का फटा होना	पेट में महीन घाव

मल के बारे में निरीक्षण से रोग की पहचान		
मल से सम्बन्धित प्रकट लक्षण		पेट की समस्या या विकार या रोग
1.	मल रस्सी के समान बँधा हुआ तथा साफ रंग का	स्वस्थ शरीर की पहचान
2.	मल का पतला व झागदार होना	दस्त व पेचिश
3.	मल का पीला होना	पीलिया
4.	मल का सख्त होना	कब्ज
5.	रिबन की तरह संकुचित मल	मलाशय में रूकावट
6.	मल में पस की अधिक मात्रा	बड़ी आँत की सूजन
7.	मल का अर्धपारदर्शी चिपचिपा श्लेष्मायुक्त होना	कब्ज व ऑव
8.	चिकना बदबूदार मल आना	अपच, पुराना अल्सर, पुरानी दस्त, नासूर, मवाद व ऑव
9.	मल के साथ रक्तरंजित श्लेष्मा आना	मलाशय में उभार व सूजन
10.	मवाद व खून के साथ श्लेष्मा युक्त मल आना	ऑव, पेचिस, बड़ी आँत का कैंसर, आँतों का क्षय
11.	मल के साथ ज्यादा मात्रा में श्लेष्मा का आना	बड़ी आँत में सूजन तथा रक्त की कमी हो जायेगी

मल के रंग से रोग की पहचान			
रंगिन मल का प्रकट होना		पेट की समस्या या विकार या रोग	खाद्य–पदार्थ या दवाईयाँ
1.	मिट्टी जैसा मल आना	आँतों में अवरोधक, पीलिया रोग	बेरियम सल्फेट की उपस्थिति
2.	मल का लाल होना	बवासीर, बड़ी आँत या मलाशय में रक्त स्त्राव	चुकन्दर का सेवन या ब्रोम सल्फालोन दवा
3.	मल का काला होना	अल्सर, आँतों या मलाशय में रक्त स्त्राव	आयरन, बिस्मथ लवण व चारकोल की उपस्थिति
4.	मल का हरा होना	दस्त	पालक या बिलीर्वडीन और एंटीबायोटिक्स का सेवन
5.	मल का सफेद होना	अम्लीयता	अम्लत्व नाशक पदार्थो का सेवन

पेशाब (मूत्र) के निरीक्षण से रोग की पहचान		
पेशाब (मूत्र) से सम्बन्धित प्रकट लक्षण		समस्या या विकार या रोग
1.	पेशाब कम आना	शरीर में अधिक गर्मी होना
2.	पेशाब बहुत अधिक आना	मधुमेह, डर लगना
3.	सर्दी में पेशाब कम आना	शरीर में अधिक गर्मी होना
4.	गर्मी में पेशाब बहुत कम आना	शरीर में अधिक गर्मी होना
5.	गर्मी में पेशाब बहुत अधिक मात्रा में आना	मधुमेह, डर लगना
6.	बदबूदार पेशाब आना	शरीर में अपशिष्ट बढ़ना, रोग होने की सम्भावना
7.	पेशाब का रंग पीला	पीलिया, यकृत की समस्या
8.	पेशाब में जलन व दर्द	पथरी व मूत्रमार्ग में संक्रमण
9.	पेशाब पर चींटी का आना	मधुमेह
10.	पेशाब का वेग विकृत	पथरी, अधिक सहवास,
11.	पेशाब का गाढ़ापन होना	शरीर में अपशिष्ट बढ़ना, रोग होने की सम्भावना

पसीने के निरीक्षण से रोग की पहचान		
पसीने से सम्बन्धित प्रकट लक्षण		समस्या या विकार या रोग
1.	पसीना कम आना	त्वचा के रोम छिद्रों का बंद होना, विजातोय द्रव्य का अधिक होना
2.	पसीना बहुत अधिक आना	विजातोय द्रव्य का अधिका होना
3.	सर्दी में पसीना आना	विजातीय द्रव्य का अधिका होना तथा शरीर में अधिक गर्मी होना
4.	गर्मी में पसीना नहीं आना या बहुत कम आना	त्वचा के रोम छिद्रों का बंद होना, विजातीय द्रव्य का अधिका होना
5.	गर्मी में पसीना बहुत अधिक मात्रा में आना	विजातीय द्रव्य का अधिका होना
6.	कपड़े पर पसीने के दाग पड़ना	त्वचा क्षेत्र में विजातीय द्रव्य का सड़ना
7.	बदबूदार पसीना आना	त्वचा क्षेत्र में विजातीय द्रव्य का सड़ना

2.7 **साराँश**

जिन्हें आध्यात्मिक सुख तो क्या मिलना, शारीरिक सुख व मानसिक शाँति भी नसीब नहीं होती है। दण्ड के भागी मनुष्यों ने जटिल जीवन.शैली अपनाकर स्वयं को इतना जटिल बना दिया कि उसका ध्यान सामान्य प्राकृतिक नियमों की ओर नहीं जाता है , जबकि ये छोटे.छोटे सरल नियम अपनाने से प्रकृति रूपी दण्ड़ माफ तो हो ही जाता है, साथ ही उसकी जीवन.शैली व स्वयं भी सरल, निर्मल एवं स्वस्थ हो

जाता है। आशा करता हूँ कि आप भी जीवनोपयोगी साधारण प्राकृतिक नियमों को अपनाकर आरोग्य लाभ लेवेंगे अर्थात् 'पहला सुख निरोगी काया' की कहावत तो अवश्य सिद्ध करें।

2.8 **बोधात्मक प्रश्न**

1. प्रकृति, जीवन और स्वास्थ्य के बारे में लिखिए
2. आरोग्यरूपी प्राकृतिक स्वास्थ्य को समझाइये
3. रोग के कारण के बारे में लिखिए
4. रोग की पहचान अर्थात् स्वास्थ्य परीक्षण को समझाइये
5. शरीर के प्रमुख अंगों पर दोष.संचय को समझाइये
6. शरीर के प्रमुख अंगों पर दोष की पहचान बताएँ|

2.9 **संदर्भ ग्रंथों की सूची**

संदर्भ ग्रंथों की सूची में सम्मिलित ग्रन्थों एवं उनकी सहायक सामग्री का उपयोग हमने इस ग्रन्थ के निर्माण में सहायक के रूप में किया है। हम इन संदर्भित ग्रन्थों, उनके लेखकों, प्रकाशकों एवं संस्थाओं के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

संदर्भ साहित्य	**लेखक**	**संदर्भ साहित्य**	**लेखक**
प्राकृतिक आयुर्विज्ञान	डॉ. राकेश जिन्दल	प्राकृतिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य	डॉ. महेन्द्र कुमार जाजपुरा
वृहद प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. ओ. पी. सक्सेना	व्यावहारिक प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. हेनरी लिंडलार
स्वस्थवृत विज्ञान	प्रो. रामहर्ष सिंह	प्राकृतिक स्वास्थ्य एवं योग	डॉ. बृजभूषण गोयल
प्राकृतिक स्वास्थ्य शास्त्र	आचार्य शेषाद्रि स्वामीनाथन	स्वास्थ्य परीक्षण	डॉ. बृजभूषण गोयल
योग द्वारा स्वास्थ्य	डॉ. राकेश प्रकाश निगम	आपका आरोग्य आपके हाथ में	देवेन्द्र वोरा
आदिऊर्जा प्राण	अमस्ता भारती	प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग वैज्ञानिक प्रयोग	डॉ. नागेन्द्र कुमार नीरज
स्वास्थ्य के सोपान	नरूपमल सुराणा	जीवेम् शरद शतम्	पं. श्री राम शर्मा आचार्य वाड्मय
सरल प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. लक्ष्मी नारायण शर्मा	बिना औषधियों के कायाकल्प	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
बिना दवा इलाज	डॉ. जय माला जशनानी	निरोग जीवन का राज मार्ग	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
बिना दवा परफेक्ट हेल्थ	डॉ. बलराम पटेल	दीर्घ जीवन की प्राप्ति	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
पातंजली योगसत्र	स्वामी विवेकानंद	पंच तत्वों द्वारा सम्पर्ण रोगों का निवारण	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
घरेलू आयुर्वेदिक इलाज	वैद्य सुरेश चतुर्वेदी	रोगों की सरल चिकित्सा	विट्ठलदास मोदी
स्वास्थ्य रक्षा के सरल उपाय	डॉ. ओम प्रकाश आनन्द	जीने की कला	विट्ठलदास मोदी
प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग	श्रीमत्ती राज कुमारी गुप्ता	स्वास्थ्य कैसे पाया	विट्ठलदास मोदी
100 वर्ष निरोगी रहिए	माणेक लाल म. पटेल	हमारा स्वास्थ्य	शाम अष्टेकर तथा अनुवादक कालिंदी देशपांडे
रोगों की अचूक चिकित्सा	जानकी शरण वर्मा	तंदुरूस्त कैसे रहें	श्री बर्नर मैकफेडन
प्रकृति से मैत्री	प्रकाशन विभाग	ब्रह्मचर्य ही जीवन हैं	स्वामी श्री शिवानन्द जी
आरोग्य की कुंजी	राष्ट्रपिता महात्मा गाी	नव्य जन स्वास्थ्य तथा स्वास्थ्य विज्ञान	डॉ. मुकुन्द स्वरूप वर्मा
मैं तन्दूरूस्त हूँ या बीमार?	लूई कूने	रिर्टन टू नेचर (प्राकृतिक जीवन की ओर)	एडोल्फ जस्ट
आकृति से रोग की पहचान	लूई कूने	स्वास्थ्य ही सही दिशा प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. ेिरन, डॉ. . रा. गाला, डॉ. संजय गाला
आरोग्य प्रकाश	वैद्यराज पं. रामनारायण	स्वयं स्वस्थ रहने की कला	डॉ. ेिरन, डॉ. . रा. गाला, डॉ.

	शर्मा		संजय
मौलिक चिकित्सा कौन सी?	डॉ. चंचलमल चोरडिया	स्वस्थ रहने के प्राकृतिक ढ़ग क्यों न अपनाए जायें	डॉ. इन्द्रजीत कौर, भक्त पूर्ण सिह
100 वर्ष कैसे जीयें	आचार्य श्याम सुन्दर सुमन	साधारण रोगों की यौगिक एवं प्राकृतिक चिकित्सा	के.यो.प्रा.चि.अ. परिषद
नीरोग होने का सच्चा उपाय	आर.टी. टाल	प्राण शक्ति उपचार; प्राचीन विज्ञान कला	चौ. कोक सुई
स्वस्थ जीवन	प्रताप सिह सुराणा	टॉक्सीमिया	डॉ. टील्डन
जीवनी शक्ति कैसे जगायें	डॉ. चन्द्र दीप सिंह	हाइजेनिक सिस्टम	डॉ. शेल्टन
प्रेक्टिकल नेचर क्योर	डॉ. के. लक्ष्मण शर्मा	अखिल भारतीय प्राकृतिक जीवन संघ द्वारा प्रकाशित एन.डी. कोर्स के लेख (भूज, गुजरात)	

****

इकाई : 3

प्राकृतिक चिकित्सा का परिचय एवं सिद्धांत

इकाई की रूपरेखा

3.1 उद्देश्य

3.2 प्रस्तावना

3.3 प्राकृतिक चिकित्सा का अर्थ

3.4 प्राकृतिक चिकित्सा की परिभाषा एवं अन्य नाम

3.5. प्राकृतिक चिकित्सा की आधारभूत धारणा एवं सिद्धान्त

3.6 सारांश

3.7 बोधात्मक प्रश्न

3.8 संदर्भ ग्रंथ

3.1 उद्देश्य

- प्राकृतिक चिकित्सा का अर्थ क्या है
- प्राकृतिक प्रेमियों व संगठनों ने इसे कैसे परिभाषित किया है जिनसे इसे अन्य किन.किन नामों से जान सकते है
- प्राकृतिक चिकित्सा के आधारभूत सिद्धान्त कौन.कौन से है

3.2 प्रस्तावना

अप्राकृतिक जीवन, प्रदूषण एवं रसायनों का प्रहार , डॉक्टर एवं दवाओं का बढ़ता ताण्ड़व , मिलावटियों का मीठा.मीठा प्यार, प्रशासन की आँख.मिचौली एवं सच्चा पिसता जाये तो झूठा मौज़ मनाये ऐसा बना दिया इंसान ने संसार। क्या आने वाली पीढ़ियों को वसीयत में ऐसा ही मिलेगा संसार ? जरा सोचो और बदल डालो यह सब कुछ। अब भी समय है , सावधान हो जाओ ..... प्रकृति की तरह सरल हो जाओं। जैसा दोगे वैसा पाओगे , जैसा बोओगे वैसा फल पाओगे और जैसा कर्म करोगे वैसा भाग्य में पाओगे। बिना मेहनत के छल.कपट से पाकर तो चाहे जीवनभर मौज़ मनाते रहना परन्तु उससे जीवन का उद्धार होने वाला नहीं है।

प्रकृति की सरल विधियों के प्रति अपना मानस बनाओं , चिंता छोड़ो , बुरी आदतों से मुँह मोड़ों , खुशी.खुशी कर्तव्य समझकर काम करों , आज का दिन आपका है , आप उसके स्वामी है , आप उसका

उपयोग अच्छे कामों में और आने वाली पीढिय़ों के लिए कर सकते हो , यह आपके वश में ही है और आपकी समझ में भी है।

उक्त विचार प्राकृतिक प्रेमियों एवं प्राकृतिक चिकित्सकों के अनुसार 'जन कल्याण, प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचार.प्रसार एवं मानव जीवन के उद्धार के लिए समर्पित है।' इस क्षेत्र में कार्य करने वालों ने नि:स्वार्थ भाव से स्वयं व दूसरों का स्वास्थ्य सुधारा है।

आज जन.स्वास्थ्य के क्षेत्र में छोटे.बड़े संगठन स्वास्थ्यरूपी आँकड़ों का खेल खेल रहे है और वे खेलते ही रहेंगे; क्योंकि संगठनों का काम ही यहीं है। आपको वास्तव में आनन्द, आरोग्य एवं शाँति की चाह हो तो आप स्वयं जागरूक होकर इस सरल मार्ग पर बढ़ते जाओं। आपके प्रयास आपके उद्धार के साथ आने वाली पिढिय़ों के लिए नि:संदेह बहुत ही जीवनोपयोगी होगा। सीखने वाले तो पशु.पक्षियों से भी सीख लेते है। न सीखने वाले इस प्रकृति को दूषित करते है, बदले में दण्ड पाकर ऐसे ही चले जाते है। आशा है कि आप पुस्तक का अवलोकन कर कुछ तो जानेंगे , समझेंगे, आजमायेंगे और दूसरों को बताने का एक सफल प्रयास भी करेंगे।

3.3 प्राकृतिक चिकित्सा का अर्थ

जीवन का तत्व (पंच महाभूत का) ज्ञान। यह जीवन को जीने की कला सिखाती है। प्राकृतिक चिकित्सा में अप्राकृतिक आहार.विहार से शरीर में विजातीय द्रव्य की उत्पत्ति ही रोगों का मूल कारण मानी जाती है तथा उसके सुधार से रोगों की निवृत्ति होती है।

3.4 प्राकृतिक चिकित्सा की परिभाषा एवं अन्य नाम

1. 'पंचमहाभूत' अर्थात् हवा, पानी, मिट्टी, अग्नि और आकाश से रोग की चिकित्सा ही पंचतत्व चिकित्सा या प्राकृतिक चिकित्सा कहलाती है। प्राकृतिक चिकित्सा में पंचतत्वों के अतिरिक्त छठा तत्व रामनाम शामिल किया गया है।

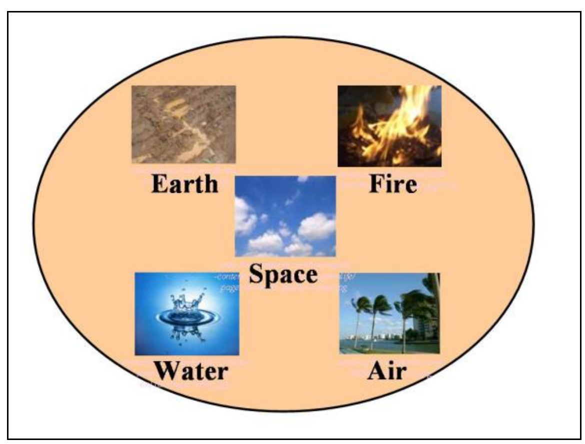

2. शरीर में पंच तत्वों को संतुलित करने की पद्धति या विद्या ही प्राकृतिक चिकित्सा कहलाती है।
3. प्राकृतिक अर्थात् प्रकृति के नियमों का पालन करते हुए स्वस्थ जीवन यापन करना ही प्राकृतिक चिकित्सा कहलाती है।
4. प्राकृतिक नियमों व सिद्धान्तों का पालन करते हुए रोग के कारणों तक पहुँचकर उसे दूर करना ही प्राकृतिक चिकित्सा कहलाती है।

5. प्रकृति की गोद में अर्थात् पूर्णत: प्रकृति पर निर्भर रहकर जीवन जीना ही प्राकृतिक चिकित्सा कहलाती है। जहाँ शुद्ध हवा , शुद्ध स्वच्छ वातावरण, हरा.भरा जंगल, झरने, नदी, सरोवर, शुद्ध सात्विक भोजन, उपवास एवं व्यायाम आदि का समावेश हो।

6. मनुष्य एक प्राकृतिक जीव है, इसलिए उसे प्रकृति के साथ सामन्जस्य स्थापित करके ही स्वस्थ जीवन जीना चाहिए। प्रकृति के नियमानुसार नित्य प्रतिदिन की दैनिक क्रिया समय पर पूरी कर संतुलित आहार.विहार करना , साप्ताहिक उपवास, आवश्यक निद्रा व आराम , ब्रह्मचर्य का पालन, परिश्रम व व्यायाम , ईश.वंदना और अपने स्वास्थ्य की रक्षा करना प्राकृतिक जीवन.शैली है, यहीं प्राकृतिक चिकित्सा कहलाती है।

7. गाँधी द्वारा अपनाई गई चिकित्सा एवं राम नाम ही प्राकृतिक चिकित्सा कहलाती है।

8. कुदरती उपचार ही प्राकृतिक चिकित्सा कहलाती है।

9. प्राकृतिक जीवन, प्राकृतिक आहार.विहार, नित्य व्यायाम, आंतरिक व बाहरी शारीरिक सफाई व स्वच्छता पर निर्भरता ही प्राकृतिक चिकित्सा कहलाती है।

10. विषैली रासायनिक दवाओं या औषधियों रहित चिकित्सा ही प्राकृतिक चिकित्सा कहलाती है।

11. बिना दवा ईलाज ही प्राकृतिक चिकित्सा कहलाती है।

12. शरीर से विजातीय द्रव्यों अर्थात् अपशिष्टों को बाहर निकालकर जीवनी.शक्ति में वृद्धि करने वाली चिकित्सा ही प्राकृतिक चिकित्सा कहलाती है।

13. प्रकृति के निर्माणकारी सिद्धान्तों के अनुसार शारीरिक , मानसिक, नैतिक, भावनात्मक व आध्यात्मिक धरातलों पर संतुलन स्थापित करने के साथ मानव निर्माण की व्यवस्था ही प्राकृतिक चिकित्सा कहलाती है।

14. स्वस्थ जीवन जीने की कला ही प्राकृतिक चिकित्सा कहलाती है। इसके अनुसरण से रोग पैदा ही नहीं होते है।

15. जीवन के समग्र विज्ञान की कुंजी ही प्राकृतिक चिकित्सा कहलाती है।

16. प्राकृतिक चिकित्सा एक ऐसी चिकित्सा पद्धति है , जिससे सर्वसाधारण व्यक्ति भी यह सीख सकता है कि उसे कब, क्या, कैसा एवं कितना खाना.पीना; दैनिक कार्यो का निर्वाह कब, कैसे एवं कितना करना और परिवार या समाज में कैसा आचरण करना चाहिए है।

17. दिनचर्या, रात्रिचर्या तथा ऋतुचर्या के अनुसार जीवन को जीना और शरीर में रोग ही पैदा न होने देना प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति कहलाती है।

18. रोग, प्रकृति के नियमों को भंग करने से होते है, क्योंकि प्रकृति के नियमों को भंग करने से शरीर में दोष अथवा विजातीय द्रव्य की उत्पत्ति एवं जमाव होता है। इसका प्राकृतिक तरीके से निवारण करना प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति कहलाती है।

19. प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति एक स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करती है, रोगग्रस्त व्यक्ति को रोग से मुक्ति दिलाती है, रोगियों के कष्टों का निवारण करती और उसकी आयु बढ़ाती है।

20. वैकल्पिक चिकित्सा ही प्राकृतिक चिकित्सा कहलाती है।

21. निसर्गोपचार ही प्राकृतिक चिकित्सा कहलाती है।

22. प्राकृतिक चिकित्सा केवल स्वास्थ्य प्राप्ति की विधि ही नहीं है बल्कि यह 'जीवन जीने की कला' है।

23. Naturopathy is not only a system of healing but also a way of life.

A WAY OF LIFE : Four foundational elements of healthy natural life.

1.	आचार (Aachaar)	Right conduct
2.	विचार (Vichaar)	Right thinking
3.	आहार (Aahaar)	Right food habits
4.	विहार (Vihaar)	Right daily routine

24. According to Hippocrates (Father of medicine 460.357BC) : Nature cures, not the physician.

25 Nature cure is a constructive method of treatment, which aims at removing the basic cause of disease through the retional use of the elements freely available in nature.

26. According to Central Council for Research in Yoga and Naturopathy (CCRYN): Naturopathy is a system of own building in harmony with the constructive principles of nature on physical, mental, moral and spiritual planes of living. It has great health promotive, disease preventive and curative as well as restorative potential.

27 According to the manifesto of British naturopathic association (BNA): Naturopathy is a system of treatment which recognizes the existence of the vital curative force within the body.

28 According to Medical definition of naturopathy: A system of treatment of disease that avoid drugs and surgery and emphasizes the use of natural

agents (as air, water and herbs) and physical means (as tissue mainipulation and electrotherapy).

So, Beliefs.

(1) Nature Cure believes that all the diseases arise due to accumulation of morbid matter in the body. If scope is given for its removal, it provides cure or relief.

(2) Nature Cure also believes that the human body possesses inherent self constructing and self healing powers.

3.5 प्राकृतिक चिकित्सा की आधारभूत धारणा एवं सिद्धान्त Naturopathy of basic concepts and principles

Only three basic concepts of nature cure प्राकृतिक स्वास्थ्य की केवल तीन आधारभूत धारणाएँ

1. Accumulation of morbid matter.

अपशिष्ट (विजातीय) का संचित होना।

2. Abnormal composition of blood & lymph.

रक्त और लसीका की अनियमितता अर्थात् उनकी रचना व क्रिया असामान्य होना।

जीवन शक्ति का कम होना

Nature Cure does not believe in the specific cause of disease and its specific treatment. It looks at all the factors responsible for diseases, which include:

1. One's un.natural habits in living, thinking, working, sleeping, relaxation, sexual indulgence etc.

2. The environmental factors involved. This disturbs normal functioning of body leading to a morbid, weak & toxic state.

हमारे पूर्वजों ने हजारों वर्षों से अथक् प्रयत्न कर प्रकृति के विभिन्न रहस्यमय ज्ञान का गहन अनुसंधान किया तथा उन्हें अपनी भारतीय संस्कृति में समाहित करते रहे और मानव.जीवन के उद्देश्य की पूर्ति करते हुए जीवन को आनन्दमय बनाया है। लेकिन पाश्चात्य संस्कृति का दुष्प्रभाव दुनिया पर हावी होने के कारण हमारे पुरखों द्वारा निर्मित भारतीय संस्कृति को बहुत बड़ा धक्का लगा। आज पूरी दुनिया पर पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से प्राकृतिक नियमों एवं सिद्धान्तों में फेर.बदल हो गया है। जिससे मानव जीवन अर्थहीन हो गया है। आज पूरी दुनिया का वातावरण दूषित होने से वे प्राकृतिक नियमों एवं प्रकृति से दूर होते जा रहे है।

वर्तमान में कई चिकित्सा पद्धतियां प्रचलित है , पर प्राकृतिक चिकित्सा एक ऐसी पद्धति है , जिसको अपनाकर व्यक्ति अपने शरीर से रोगों को समूल नष्ट कर सकता है। इस चिकित्सा पद्धति में दवाइयों एवं चीर.फाड़ की आवश्यकता ही नहीं होती है। रोगी बड़ी सरलता एवं आसानी से निरोग होकर आनन्दमय जीवन बिता सकता है, क्योंकि यह प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति जीव.मात्र के कल्याण के लिए सर्वोपरि है। समस्त प्राणियों और आने वाली पीढ़ी का कल्याण हो , इस हेतु प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति को अपने जीवन में स्थान देकर अपनाना होगा। प्राकृतिक चिकित्सा के आधारभूत सिद्धान्तों का निम्नानुसार वर्णन किया गया है :.

1. वास्तव में सभी रोग एक, उनके कारण, निदान एवं चिकित्सा भी एक ही है

भारतीय संस्कृति में मानव शरीर एक है, समूचा मनुष्य एक है, सारा विश्व एक है, अखिल ब्रहामाण्ड एक है, सारे ब्रहामाण्डर को एक नियम के सूत्र में बांधने वाली सत्ता की शक्ति एक है और यही सर्वखल्विदं ब्रहमा का अर्थ है। एकता का यही दार्शनिक सिद्धान्त, प्राकृतिक चिकित्सा दर्शन का भी प्रमुख सिद्धान्त है। सभी दार्शनिक सिद्धान्तों में इस अद्वैत सिद्धान्त का प्रमुख स्थान है कि एकमेवाद्वितीयं ब्रहमा अर्थात् ब्रहमा एक ही है , दूसरा नहीं, उसे जान लेने पर फिर कुछ जानना शेष भी नहीं रह जाता है। ठीक इसी प्रकार प्राकृतिक चिकित्सा विज्ञान भी एक दर्शन है। इसके सिद्धान्तों में यह पहला सिद्धान्त सार्वभौतिक मूलभूत सिद्धान्त के नाम से भी जाना जाता है। इसके अनुसार.

1. समस्त रोग वस्तुत: एक ही है (Unity of diseases)

2. सभी रोग का कारण एक ही है (Unity of causation of diseases)

3. सभी रोग का निदान एक ही है (Unity of diagnosis of diseases)

4. सभी रोग की चिकित्सा भी एक ही है (Unity of treatment of diseases)

जिस प्रकार स्वर्ण विविध नाम और रूप के आभूषणों में प्रदर्शित होता है, उसी प्रकार प्राकृतिक चिकित्सा विज्ञान का यह एक अटल सिद्धान्त है कि मानव शरीर में स्थित एक ही विजातीय द्रव्य अनेक रोगों के रूप में तथा विभिन्न नामों से जाने जाते है।

सूक्ष्म रूप से देखने और विचार करने से मनुष्य को सताने वाले विभिन्न प्रकार के रोगों में एकरूपता प्रत्यक्ष रूप से परिलक्षित होगी। सारे रोग अनेक होते हुए भी वस्तुत: एक ही होते है। केवल उनके रूप और प्रकार में ही विशिष्टता होती है। इस तथ्य का एक दृष्टान्त यह है कि एक घर में चार प्राणी रहते है। जो उत्तेजक और मादक द्रव्यों का सेवन करते है , ठूंस.ठूंस कर अनाप.शनाप गरिष्ठ भोजन खाते है , कसरत नहीं करते तथा निर्मल जल, धूप तथा स्वच्छ वायु आदि प्राकृतिक उपादानों का उचित रूप में सेवन नहीं करते है।

इस प्रकार उनके अप्राकृतिक जीवन व्यतीत करने के फलस्वरूप शरीर से दूषित मल का यथाशीघ्र निष्कासन न होने से रक्त विषाक्त हो जाता है। जिसको प्राकृतिक चिकित्सा की भाषा में विजातीय द्रव्य कहते है। परिणाम यह होता है कि प्रकृति को उनके भीतर स्थित विजातीय द्रव्य को बाहर निकालकर स्वस्थ बनाने का मौका मिलते ही उन चारों को बीमार पडऩा ही है। यह शरीर के किसी एक भाग में

दृष्टिगोचर होता है, जिसे हम कोई रोग मान बैठते है। परिस्थिति , आयु, प्रकृति आदि के अनुृसार उन चारों में से प्रत्येक एक ही रोग से आक्रांत नहीं हो सकते , हालांकि चारों के रोगों का कारण एक ही है , उनके शरीर में विजातीय द्रव्य की उपस्थिति। उनमें से किसी को दस्त आना , किसी को ज्वर आना, तो किसी को गठिया रोग और किसी को बवासीर हो सकता है। ये सभी रोग एक दूसरे से भिन्न है , पर वस्तुत: वे एक ही है अर्थात् मुख्य बात यह कि शरीर में उपस्थिति विजातीय द्रव्य का बहिष्करण विभिन्न तरीकों से होना। अब प्राकृतिक रूप से इस विजातीय द्रव्य का बहिष्करण कार्य में रोगी और उसके चिकित्सक का कर्तव्य केवल यही है कि प्रकृति के उस कल्याणकारी कार्य में सहूलियत पैदा करना, मदद देना। अर्थात् उपवास या युक्ताहार से जीवनी.शक्ति को बढ़ाना तथा जलोपचार, मिट्टी की पट्टी, सेंक, मर्दन एवं एनिमा आदि से शरीर के मल.मार्गों को पूर्णत: खोलकर उनको क्रियाशील कर देना ताकि वे शरीर के मल या विजातीय द्रव्य का बहिष्करण करने में सफल हों। इस तरह हम देखेंगे कि संसार के सभी रोग वास्तव में एक ही है तथा उनके कारण, निदान एवं चिकित्सा भी एक ही है।

बहुधा ऐसा देखा गया है कि रोगी अपने किसी एक रोग का उपचार कराने प्राकृतिक चिकित्सक के पास आता है, तो प्राकृतिक उपचार होने पर उस एक रोग के साथ.साथ रोगी के अन्य सभी रोग भी सदैव के लिए उससे विदा हो जाते है। यह इस बात का ज्वलंत प्रमाण है कि सभी रोग होते है और वे सब के सब एक ही प्रकार के इलाज से चले भी जाते है, क्योंकि उन रोगों के होने का कारण केवल एक ही है. शरीर में विजातीय द्रव्य या मल का एकत्र हो जाना।

2. वास्तव में प्रकृति स्वयं चिकित्सक या अच्छी स्वास्थ्य सुधारक है

प्राकृतिक चिकित्सा में यह माना जाता है कि जीवन का संचालन एक विचित्र , आश्चर्यजनक एवं सर्व शक्तिमान शक्ति द्वारा होता है जो प्रत्येक के जीवन के पाश्र्व में रहकर उसके जन्म.मरण , स्वास्थ्य.रोग आदि सभी बातों की देखभाल करती है। उस महान् शक्ति को प्राकृतिक चिकित्सक जीवन.शक्ति , ईश्वरवादी ईश्वरी.शक्ति एवं अनीश्वरवादी प्रकृति कहते है। यह शक्ति ही हमारे शरीर को रोग मुक्त अर्थात् स्वस्थ बनाये रखती है। जैसाकि श्री भगवत् गीता में कहा गया है कि

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रित:। प्राणापान समायुक्त: पचाम्यन्नं चतुर्विधम्।।

अर्थात् मैं ही समस्त प्राणियों की देह में वैश्वानर अग्निरूप होकर प्राण और अपान.समीकरण और बहिष्करण.इन दो प्राणधारक क्रियाओं से युक्त हुआ, चार प्रकार के अन्न (भक्ष्य, भोज्य, लेहा व चोष्य) को पचाता हूँ। अत: शरीर की समस्त क्रियायें और अवस्थाएं एकमात्र उसी अन्तर्भूत शक्ति की ही उपस्थिति के फलस्वरूप होती है। वह न केवल शारीरिक विकारों को अपितु मानसिक विकारों को भी दूर करने वाला होता है।

यह कितने आश्चर्य की बात है कि परमात्मा ने किस कौशल और बुद्धिमानी से मानव शरीर की रचना की है। मस्तिष्क, नाड़ी.संस्थान, हृदय, यकृत, पाचन संस्थान चाहे जिस अंग को लें उसके निर्माण और उसके भीतर ही उसकी साज.संभार के लिए सारी आवश्यक वस्तुओं की पूर्ति करने में जो महान् कौशल दिखाया है, जीवनी.शक्ति इन्हीं वस्तुओं के योग से रोग होने पर रोगों का शमन करती है और जन्म से लेकर मरण तक यही शक्ति शरीर के निर्माण और सुधार का काम करती रहती है। यही शक्ति अपने प्रयोग

में तभी विफल होती है, जब हम स्वयं अथवा मिथ्योपचारक, अज्ञानवश उसके रास्ते में रोड़े अटकाते है या हम खान.पान, रहन.सहन एवं परिश्रम में गलतियाँ करते है।

प्राकृतिक चिकित्सा हमें इसी बात का ज्ञान कराती है कि प्रत्येक व्यक्ति इस संसार में ऐसी शक्ति लेकर पैदा हुआ है जिसकी मदद से वह अपने स्वास्थ्य की स्वयं रक्षा कर सकता है। प्रकृति स्वंय चिकित्सक है, इसके कुछ उदाहरण लीजिये.

1. पानी पीते समय पानी श्वास नली में चला जाता है तो खांसी लाकर कौन उसको ठीक करता है?

2. जब कोई जहरीली चीज पेट में चली जाती है तो उल्टी के जरिये उसे कौन बाहर निकालता है?

3. घाव हो जाने पर उसे कौन भरता हैं?

4. हड्डी के टूट जाने पर उसे कौन जोड़ता है?

प्रकृति ही तो यह सारा काम करती है। इसी तरह फोड़ा.फुन्सी से लेकर हैजा, दमा, गठिया आदि सभी रोग शरीर शुद्धि के लिये प्रकृति के प्रयास ही तो है अर्थात् ये रोग वास्तव में रोग न होकर प्रकृति की चिकित्सा विधियां ही तो है। अत: यह सदैव स्मरण रखना चाहिए कि रोगी को रोग से मुक्ति अपने आप ही मिलती है अर्थात् रोगी के रोग का निवारण उसका शरीर स्वयं करता है। प्राकृतिक चिकित्सक का कार्य केवल इतना ही होता है कि वह शरीर के इस कार्य में उसकी मदद करें, जिससे प्रकृति की रोग निवारण शक्ति का अपेक्षाकृत अधिक पूर्णता से विकास हो सकें। आत्म.साहस ही मनुष्य की मुक्ति का बीज मंत्र है , रोग मुक्ति की सम्भावना चाहे कितनी ही कम क्यों न हो प्रकृति उसकी मदद के लिये कोई कमी नहीं रखती और रोगी के आखरी दम तक प्रयत्नशील रहती है।

3. जीवाणुओं। रोगाणुओं। कीटाणुओं से रोग पैदा नहीं होते बल्कि रोग से इनकी उत्पति

एलोपैथ का सिद्धान्त है कि रोगाणु अर्थात् कीटाणु ही रोगों के कारण होते है लेकिन प्राकृतिक चिकित्सा के प्रथम सिद्धान्त द्वारा स्पष्ट हो गया कि शरीर में एकत्र दूषित मल या विजातीय द्रव्य ही रोगों के एक मात्र कारण है।

कीटाणु सर्वत्र विद्यमान है , लेकिन प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति यह नहीं मानती कि इन कीटाणुओं के कारण रोग पैदा होते है। अमुक रोग वाले रोगी के शरीर में अमुक कीटाणु मिलते है , यह भी सही है , लेकिन रोगी के शरीर में इन कीटाणुओं का पाया जाना , रोग का कारण नहीं , वरन् रोग का एक लक्षण मात्र है। अब तो कीटाणु शास्त्र ने भी यह स्वीकार कर लिया है कि शरीर में ऐसी शक्ति होती है जो हमें रोग से बचाकर स्वस्थ बनाये रखती है अर्थात् जीवनी.शक्ति।

प्राकृतिक चिकित्सक कहते है कि जिस शरीर में यथेष्ट जीवनी.शक्ति होती है, कीटाणु उस स्वस्थ व्यक्ति का कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते। गंदे स्थान तथा शरीर के उस स्थान पर जहां गंदगी अर्थात् विजातिय पदार्थ जमा हो जाते है। वही पर कीटाणु अधिक मात्रा में जमा होकर गंदगी की सफाई करते है। जिस प्रकार फल सड़ जाता है, तब उसमें कीड़े पडक़र उसे खाने लगते है।

दुनिया में कीटाणुओं का कार्य ही . गंदगी साफ करना है। ये कीटाणु अपने भोजन की तलाश में रहते है , जहां गंदगी सड़ रही हों। स्वस्थ शरीर में चाहे करोड़ों कीटाणु क्यों न डाल दिये जायें , वे वहां जाकर

अवश्य ही मर जायेंगे , क्योंकि वहां उनके खाने लायक कोई चीज नहीं मिलेगी। अत: गंदे शरीर में कीटाणुओं का मिलना इस बात का परिचायक है कि वे सफाई के उस पवित्र कार्य को कर रहे है , जिनके लिए उनका जन्म हुआ है। इस दृष्टि से यह प्रमाणित होता है कि गंदगी अर्थात् विजातिय पदार्थ के कारण ही कीटाणु पैदा होते है, न कि कीटाणुओं के कारण रोग।

यदि हम प्राकृतिक जीवन जीने के अभ्यासी है तो कीटाणु जो सारे संसार में फैले हुये है, वे हमारे शरीर में प्रविष्ट ही नहीं हो सकते है। लेकिन यदि हमारा खान.पान अनियमित एवं अप्राकृतिक है तो वे ही सर्वव्यापी असंख्य कीटाणु हमारे शरीर में प्रवेश करेंगे। जीवाणु प्रत्येक बीस मिनट में वृद्धिकर दूगुणा हो जाते है। प्रत्येक चौबीस घण्टों में एक जीवाणु से पाँच हजार अरब जीवाणु पैदा हो जाते है। जीवाणुओं की इतनी बड़ी संख्या पूरे मानव.जाति के संहार के लिए पर्याप्त है। फिर भी भयंकर से भयंकर जीवाणु भी रोग उत्पन्न नहीं कर सकते है। इस सम्बन्ध में प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञों ने कई प्रयोग कर सिद्ध किया है , जैसे. क्षय, डिफ्थेरिया, कॉलेरा, न्यूमोनिया और टाइफॉइड के लाखों की संख्या में जीवाणुओं को विविध तरीकों से शरीर में प्रवेश कराया गया। लेकिन शरीर में उन जीवाणुओं की वंशवृद्धि एवं पोषण की सानुकूल परीस्थितियां न होने से रोग उत्पन्न नहीं हो सका।

यह एक प्राकृतिक नियम है कि सृष्टि में जितने पदार्थ है, इनके सूक्ष्म परमाणु अनवरत रूप से गतिशील रहते है। जिन वस्तुओं के परमाणु एक.सी गति रखते है , उनमें परस्पर आकर्षण होता है और विरूद्ध गति वाले परमाणु एक दूसरे से दूर भागते है। अत: इस सिद्धान्तानुसार रोग के कीटाणुओं का अस्तित्व उन्हीं शरीरों में सम्भव है, जिनमें पहले से ही रोग का कारण विजातीय द्रव्य विद्यमान होता है या जो रोगग्रस्त है या जिनमें रोग के ग्रहण करने की योग्यता है। लेकिन जिन शरीरों के भीतर कीटाणुओं के विपरीत पोषक तत्व विद्यमान होंगे अर्थात् जो विजातीय द्रव्य से सर्वथा मुक्त होंगे और सही मानों में जो स्वस्थ होंगे, उन पर उपर्युक्त प्राकृतिक नियम के अनुसार कीटाणुओं का आक्रमण होना असम्भव है और यदि यह कार्य सम्भव भी मान लिया जायें तो ऐसे शरीरों में निषेधक शक्ति पहले से ही विद्यमान होने के कारण रोगाणुओं का विषकृत प्रभाव ही नष्ट हो जायेगा और वे स्वयं नाश को प्राप्त हो जायेंगे। निर्मल शरीर में संसार के सारे रोगाणु एक साथ मिलकर भी रोग उत्पन्न नहीं कर सकते। परन्तु जिस शरीर में कीटाणुओं के पोषण योग्य मल विद्यमान है , उसमें रोगाणु अवश्य उत्पन्न होंगे, पनपेंगे तथा वृद्धि को प्राप्त होंगे। इस तरह हम देखते है कि कीटाणु रोग के कारण नहीं होते बल्कि रोग ही कीटाणु के कारण है।

4. आपका न कीटाणु शत्रु है न ही रोग, वे तो परम मित्र है

कीटाणुओं में रोग पैदा करने की शक्ति ही नहीं होती है। इस प्रकार प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति कीटाणुओं को शत्रु नहीं, मित्र मानती है। अत: प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति इस बात से सहमत नहीं है कि कीटाणुओं को मारने के लिए लगाये गये टीके और इंजेक्शन आदि से रोग चला जाता, लेकिन इस विधि से तो शरीर में जहर ही इकठ्ठा होगा।

एलोपैथिक डॉक्टरों मत है कि रोग की चिकित्सा करने के लिए रोग के कारण का पता लगाना आवश्यक हैं और जब रोग के कारण का पता लग जाता है तो चिकित्सा करना सरल हो जाता है। यदि यह सही है कि कीटाणुओं के कारण रोग पैदा होते है और अमुक कीटाणु अमुक रोग पैदा करते है तो फिर चिकित्सा

की जरूरत ही क्या रह जाती है? वह रोग तो संसार से उन कीटाणुओं को मारकर खत्म कर देने से ही दूर किया जा सकता है। लेकिन ऐसा होता कहां? कीटाणु रोग पैदा करते है, इस सिद्धान्त के जन्मदाता पाश्चर थे। लेकिन क्या किसी रोग की आज की स्थिति में और पाश्चर के पहले की स्थिति में कोई अंतर आया है? यक्ष्मा (टी.बी.) के कीटाणु का पूरा पता लग गया है , फिर भी यक्ष्मा उसी तरह फैला हुआ है , जैसा सैंकड़ों साल पहले फैला हुआ था। कीटाणुओं को मारकर इस रोग का कोई भी रोगी अच्छा नहीं किया जा सकता। लेकिन सबसे अच्छी बात यह है कि हमारा शरीर कैसा हो ? हम रोगों से कैसे बचे ? तो प्राकृतिक चिकित्सा के अनुसार प्राकृतिक नियमों का पालन करने पर आप निरोग बने रह सकते है।

हम जिसे रोग कहते है, वह वास्तव में चिकित्सा है। रोग होने पर हमें अपनी गलतियों के बारे में सोचना चाहिए कि हमने खान.पान, रहन.सहन एवं परिश्रम में जो गलतियाँ की है, उनके बदले हम रोगी बन कर प्रायश्चित कर रहे है, जो स्वयं के हित में ही है क्योंकि गलतियों का सिलसिला जारी रहने से विकार शरीर में बढ़ते जाते और निकट भविष्य में उसका परिणाम भयंकर होता है , जैसे. जीवन बेकार हो जाता , अकाल मृत्यु हो जाती अथवा जाने क्या.क्या अनिष्ट होकर रहता? अत: हमें रोग से डरने की कोई आवश्यकता नहीं है, बल्कि उसका बुद्धिमानी से प्राकृतिक इलाज करना है।

प्राकृतिक चिकित्सा में उल्टी, दस्त, सर्दी.जुकाम, फोड़े.फूंसियाँ एवं ज्वारादि तीव्र रोगों में विजातीय द्रव्य से लदे हुए शरीर को मल रहित करने की स्वभाविक कोशिश सदैव क्रियाशील रहती है। जो हमारे शरीर के उत्सर्जी मार्ग (त्वचा, फेफ्फड़ें, गुर्दा एवं आँतें आदि) से प्रतिदिन उत्सर्जित होते रहते है। हमें प्राकृतिक इलाज को प्राथमिकता देनी चाहिए। यदि किसी कारण से उस विजातीय द्रव्य को बाहर निकलने का रास्ता न मिलें तो वह शरीर में उभार उत्पन्न करके ही बाहर निकलेगा। जैसा कि एक घेंघा वाले रोगी को प्राकृतिक इलाज देने पर कुछ ही दिनों में घेंघे की सूजन 50 प्रतिशत कम हो गई। पर एक दिन पुन: उभार आया और उसकी सूजन कुछ बढ़ी.सी मालूम हुई साथ ही साथ उसमें एक फोड़ा.सा भी बना , जिसमें से बहुत सड़ा पीप (पस) निकला और एक.दो दिन में ही सूजन चली गयी। तब कहिये उस फोड़ें को शत्रु समझे या मित्र। इस तथ्य को समझ लेने से यह स्पष्ट हो जाता है कि रोग हमें स्वास्थ्य देने आते है , अस्वस्थ बनाने नहीं। दृष्टान्तस्वरूप मान लीजिये कि पेट के मल को साफ करना है , तो इस कार्य को प्रकृति उल्टी या दस्त लाकर ठीक करेगी और यदि मस्तिष्क के विकार को ठीक करना है तो सर्दी.जुकाम होकर स्वास्थ्य प्राप्त होगा।

5. वास्तव में चिकित्सा रोग की नहीं रोगी के पूरे शरीर की होती है

प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति में रोगी के समूचे शरीर की चिकित्सा करके उसे नया बनाया जाता है। जिससे रोग के चिन्ह शरीर से गायब हो जाते है। जबकि अन्य चिकित्सा पद्धतियों में ऐसा नहीं होता है। अन्य चिकित्सा पद्धतियाँ रोग के कई कारण मानती है परन्तु प्राकृतिक चिकित्सा रोग का वास्तविक कारण शरीर के भीतर का हुआ विजातीय द्रव्य या विष को मानती है। अत: चिकित्सा रोग नामधारी रोग चिन्हों की न होकर वास्तविक रोग की ही होनी युक्ति संगत है। जो प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली में किया जाता है। जैसाकि सिर दर्द होने पर सिर दर्द की दवा नहीं लेनी चाहिए , अपितु सिर दर्द होने का कारण पाचन प्रणाली के दोष या समूचे शरीर के रक्त दोष की प्राकृतिक चिकित्सा होनी चाहिए। जिसके करने से सिर दर्द अपने आप चला जायेगा। प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली से प्रत्येक रोग अच्छा किया जा सकता है ,

परन्तु प्रत्येक रोगी नहीं। क्योंकि रोगी का अच्छा होना या न होना नीचे लिखी पांच बातों पर निर्भर करता है:.

1. रोगी के शरीर में विजातीय द्रव्य की मात्रा कितनी है?

2. रोग निवारण के लिये यथेष्ट जीवन.शक्ति उसमें हैं या नहीं?

3. रोगी किस हदतक चिकित्सा करा चुका है या कर रहा है तथा वह धैर्य को खो तो नहीं रहा है?

4. प्राकृतिक चिकित्सा आरम्भ करने से पहले रोगी को घातक दवाइयाँ तो नहीं दी गई थी या कोई बड़ा ऑपरेशन तो नहीं हुआ था?

5. रोगी प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली में विश्वास करता हैं या नहीं?

उदाहरण के लिये क्षय रोग की अत्यन्त बढ़ी अवस्था में प्राकृतिक चिकित्सा करने पर भी बहुत से रोगी मर जाते है। लेकिन इतना अवश्य है कि प्राकृतिक चिकित्सा करते.करते मरने वालों की मृत्यु शान्तिदायिनी होती है। जो एक बड़ा लाभ है। कारण यह कि उपवास , फलाहार आदि द्वारा शरीर निर्मल हो जाने पर रोगी की मृत्यु आसानी से और बिना किसी प्रकार के कष्ट के होती है और मरने वाले को अपने पैदा करने वाले भगवान से सच्ची लौ लगाकर मोक्ष प्राप्त करने का मौका मिलता है।

कभी.कभी ऐसा होता है कि आरम्भ से ही प्राकृतिक चिकित्सा होने पर भी रोगी नहीं बच पाता जिसमें रोगी के पैतृक रोग उसकी अल्प जीवनी.शक्ति एवं उसके पूर्व संस्कार को कारण माना जाता है। वैसे प्राकृतिक चिकित्सकों का तो दावा है कि प्राकृतिक चिकित्सा से कभी कोई हानि हो ही नहीं सकती। ऐसा कभी नहीं होते देखा गया कि अन्य चिकित्सा प्रणालियों से बच सकने वाला रोगी इस चिकित्सा से न बच सके और मर जायें।

6. रोगी को रोग का अनुभव है, इसलिए रोग.निदान (जाँच) की विशेष आवश्यकता नहीं

जैसा कि आगे स्पष्ट हो गया है कि प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली में रोग की चिकित्सा नहीं अपितु रोगी के पूरे शरीर की होती है। ऐसी दशा में इस चिकित्सा में रोग.निदान का प्रश्न ही नहीं उठता। रोग.निदान की अनावश्यकता की ओर पुष्टी इस बात से हो जाती है कि यदि प्रकृति को स्वीकार होता तो मानव शरीर के भीतरी अवयवों (हृदय, वृक्क एवं आंतों आदि) और उनकी प्राकृतिक क्रियाओं को देखने हेतु मनुष्य के शरीर पर अपारदर्शी चमड़े और मांस का खोला चढ़ा कर उसे दृढ़ता के साथ न जकड़ती बल्कि मानव शरीर पर एक ऐसा पारदर्शी झिल्ली लगा देती, जिसके जरिये डाक्टर लोग आसानी से देख पाते कि शरीर के भीतर के अंगों में क्या गड़बड़ी है और इस तरह रोग के निदान करने में उन्हें सुविधा होती। इससे सिद्ध होता है कि प्रकृति यह कभी नहीं चाहती कि कोई खाम.खाह रोगों के निदान के लिए माथा.पच्ची करें , जबकि चिकित्सा के लिये वह बिल्कुल अनावश्यक हैं और इस बात के कहने की तो जरूरत नहीं मालूम होती कि निदान की खींचातानी के लिए मानव.बुद्धि ने आज जितने यन्त्र बना रखे है , वे प्राकृतिक और परमात्मा के गूढ़ रहस्यों का पता लगाने में अक्षम है अत: उनसे पूर्ण रूप से रोग निदान की आशा ही कैसे की जा सकती है और यही कारण है कि निदान करने वाले 90 प्रतिशत निदान सरासर गलत होते है और 10 प्रतिशत जो सही होते है वे केवल दैवयोग या अकस्मात्। अब यह आसानी से समझा जा सकता है

कि इन गलत निदानों पर आधारित गलत चिकित्सा करके डॉक्टर लोग मानव समाज का कितना अहित करते है, कितनी बड़ी जिम्मेदारी अपने सिर लेते है। निश्चय ही परिणाम अतिभयानक होता है। जिसे रोगियों को भुगतना पड़ता है।

थोड़ी देर के लिये मान लिया जाय कि रोग का सही निदान भी हो गया। पर केवल निदान हो जाने से तो रोग चला नहीं जाता। इस सम्बन्ध में बड़े.बड़े डाक्टरों का अनुभव बताता है कि औषधोपचार पद्धति में सही निदान हो जाने पर भी बहुत से रोगों पर चिकित्सा का कोई प्रभाव नहीं पड़ता , उल्टे बहुत से रोग जीर्णावस्था में परिणत हो जाते है और उनमें से कुछ तो असाध्य भी करार दे दिये जाते है। ऐसी अवस्था में प्राकृतिक पद्धति ही एक ऐसी पद्धति है, जिसमें निदान की विशेष आवश्यकता नहीं समझी गई और जो थोड़ा.बहुत नाममात्र का निदान होता है , उसमें किसी प्रकार की भूल के कारण रोग के बढने की कोई सम्भावना ही नहीं रहती।

इस प्रकार कह सकते है कि रोगी के शरीर में विजातीय द्रव्य का एकत्र होना ही रोग है। निदान के लिए एक प्राकृतिक चिकित्सक को केवल यह देखना होता हैं कि वह विजातीय द्रव्य (बादीपन) शरीर के किस भाग में स्थित है. सामने, बगल में या पीछे अथवा समस्त शरीर में व्याप्त है, जिसके उदाहरण मोटे आदमी होते है। यदि बादीपन सामान्य हुआ तो उसे प्राकृतोपचार से शीघ्र दूर किया जा सकता है , यदि बगल वाला हुआ तो सामने वाले बादीपन की अपेक्षा उसे जरा कठिनाई से दूर किया जा सकता है और यदि पीछे का या समस्त देह का बादीपन हुआ तो समस्या जटिल समझी जाती है। इसके अतिरिक्त रोगी के मुख और गर्दन की रूपान्तर दशा और त्वचा के अनेक तरह के बुरे रंगों को देखकर तथा उसकी अस्वस्थता की कहानी उसके मुख से सुनकर भी निदान कर लिया जाता है। सिद्धान्त हर हालत में यही रहता है कि यह पता लगाया जाये कि रोगी के शरीर के किस भाग में किस अंग विशेष पर विजातीय द्रव्य (बादीपन) का भार अधिक है। जिसे सूक्ष्म दृष्टि से देखने से न केवल एक प्राकृतिक चिकित्सक अपितु कोई भी देख सकता है और देखकर उचित उपचार सोच सकता है। इस तरह हम देखते है कि प्राकृतिक चिकित्सा की निदान विधि, जिसमें भटकने और बहकने का भय ही नहीं।

डाक्टरों के रोग निदान और प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति के रोग.निदान में एक अन्तर ओर यह है कि डाक्टर लोग मुख्यतया मुर्दों को चीर.फाड़ कर निदान का ज्ञान प्राप्त करने का मुद्दतों तक यत्न करते है , जबकि एक प्राकृतिक चिकित्सक जीवित शरीर में होने वाली कार्यवाहियों पर दृष्टिपात करके मिनटों में अपना काम निकाल लेता है।

7. प्राकृतोपचार में रासायनिक दवाइयों का कोई स्थान नहीं

रासायनिक दवाइयों का सिद्धान्त है कि रोग बाहरी चीज है अर्थात् रोग जीवाणुओं से पैदा होते है , जिसका शरीर पर आक्रमण होने पर शक्तिशाली से शक्तिशाली साधन अर्थात् विषैली रासायनिक दवाइयों जैसे. पारा, अफीम, संखिया आदि का प्रयोग करके रोगों से निपटने का प्रयत्न तो शरीर को युद्ध क्षेत्र बनाना है। लेकिन वे जरा भी खयाल नहीं करते कि विष आखिर विष ही है , चाहे उसकी मात्रा कम हो या अधिक। वह हर हालत में जीवन अर्थात् शरीर कोषों के लिये घातक है, जिससे रोग घटने के बजाये दिन पर दिन गम्भीर तथा प्राणशक्ति क्षीण हो जाती है। इसलिये प्राकृतोपचार में उत्तेजक दवाइयों का

प्रयोग अनावश्यक ही नहीं , अपितु प्राणघातक भी समझा जाता है। क्योंकि प्राकृतिक चिकित्सा का सिद्धान्त इस सम्बन्ध में रासायनिक दवाइयों के सिद्धान्त से एकदम विपरीत है। प्राकृतिक साधनों एवं तरीकों को अपनाकर हम रोगों से बचे रहते है , उन्हीं तरीकों को रोग होने पर भी अपनाकर हम रोग का निवारण करते है , ठीक उसी प्रकार एक इंजन का चालक उसको एक ही वाष्प शक्ति से केवल मशीन घुमाकर आगे व पीछे चला देता है। इंजन पीछे चलता है तो चालक उसको आगे चलाने के लिये कोई बाहरी चीज इंजन की मशीन में नहीं डालता। इसी प्रकार जब हमारा शरीर रोगी होता है तो उसको निरोग करने के लिये हमें किसी बाहरी चीज (रासायनिक दवा) की आवश्यकता नहीं होती और न होनी चाहिए। शरीर की जो शक्ति हमें उत्तम स्वास्थ्य प्रदान करती है, वही रोग से मुक्ति भी दिलाती है।

जहरीली रासायनिक दवाइयों में शरीर के लिये आवश्यक जीवन तत्व एक प्रतिशत भी नहीं होते उनके प्रयोग से शरीर में जो प्रतिक्रिया होती है। वह भी वास्तव में रासायनिक दवाइयों की नहीं होती वरन् उस शरीर के जैविक पदार्थो की होती है , जिसमें वे जीवनहीन जहरीली रासायनिक दवाइयाँ प्रवेश करती है। शरीर के जैविक पदार्थो की प्रकृति है कि वह अपशिष्ट व विष को जल्दी से जल्दी शरीर से बाहर निकाल कर निर्मल हो जायें। यदि जहरीली रासायनिक दवाइयों से प्राण मिलते हो तो क्यों न जहरीली रासायनिक दवाइयों का प्रयोग एक मुर्दे पर करके देखें। ये जहरीली रासायनिक दवाइयों शरीर पर तीव्र प्रभाव डालती है। ये किसी भी हालत में शरीर को स्वस्थ नहीं कर सकती है। अत: प्राकृतिक चिकित्सक जीवन.तत्वहीन विषैली दवाइयों को शरीर के लिए अनावश्यक ही नहीं अपितु घातक भी समझते है।

विषैली औषधियों को जब हम तन्दुरूस्ती की हालत में ग्रहण नहीं करते और न कर सकते , परन्तु समझ में नहीं आता वे रोग की दशा में क्यों सेवन कराई जाती है और किस आशा से। जो औषधि तन्दुरूस्ती की दशा में आदमी को हानि पहुँचा सकती है वही बीमार पडने पर उसको लाभ करें, यह कैसे सम्भव हो सकता है?

जैसा कि आगे बताया गया है कि प्रकृति ही चिकित्सक है अर्थात् रोग से मुक्ति प्रकृति देती है , दवा नहीं और दवा का काम रोग छुड़ाना नहीं है। दवा तो वह सामग्री है जो प्रकृति के द्वारा मरम्मत के रूप में काम ली जायें तथा शरीर से विजातीय द्रव्य को बाहर निकालने में लगायी जायें। इस प्रकार की सप्राण औषधियों की सूची में हवा , धूप एवं जल से लेकर फल.सब्जी और बहुत.सी विषहीन जड़ी.बूटियों तक जो खाद्य वस्तुओं की तरह ही काम में आ सकती है। प्राकृतिक चिकित्सा में ये खाद्य भी औषधियां ही है अर्थात् भोजन ही दवा है।

इस तरह काष्ठ (वनस्पति) औषधियां प्राकृतिक चिकित्सा के अन्तर्गत है। परन्तु शर्त यह है कि वे शुद्ध , ताजी हों अनुत्तेजक हों और अकेली या सजातीय होने पर दो.तीन से अधिक एक साथ न मिलायी गयी हो, साथ ही साथ मात्रा में अधिक न हों और रोगी के स्वभाव के अनुकूल हों। प्राकृतोपचार में काष्ठ औषधोपचार और खाद्योपचार एक वस्तु के दो नाम है। प्राय: सभी उद्रिज पदार्थो में जो मनुष्य के भोजन का अंश हो सकता है , वह प्राण के लिए अच्छी और ताजी काष्ठौषधियां होती है , जिनका प्रयोग प्राकृतोपचार के रोगी के स्वभाव की सहायता पहुंचाने के लिए धड़ल्ले के साथ करते है।

8. धैर्य रखें, आरोग्य लाभ में समय लग सकता है

प्राकृतिक चिकित्सा से रोगी बहुत जल्दी अच्छे हो जाते है , इतना ही नहीं संसार में जितनी चिकित्सा.पद्धतियां आजकल प्रचलित है , उन सब में प्राकृतिक चिकित्सा सबसे तेज रफ्तार वाली चिकित्सा है, मगर हमारी परेशारी तो यह है कि हमको सब तरफ से निराश हुये असाध्य रोग के रोगी ही उपचार के लिए मिलते है। उस वक्त वे रोग से ग्रस्त ही नहीं रहते उनके शरीर में सिर्फ रोग का जहर ही नहीं होता, वरन् दवाओं का भी जहर लिए वे जटिल एवं घातक होते है। इस तरह प्राकृतिक चिकित्सक को वास्तविक रोग का ही इलाज नहीं करना पड़ता, बल्कि उन दवाओं के विषों को भी उनके शरीरों से बाहर निकालना पड़ता है, जिसमें महीनों से लेकर सालों लग सकता है। इसके अतिरिक्त इस प्रणाली में रोग अच्छा होने का मतलब सिर्फ रोग का ही दूर होना नहीं बल्कि नवजीवन प्राप्त करना , पूर्ण रूप से तन्दुरूस्त, मजबूत और शक्तिशाली होना भी है। अत: स्वास्थ्य लाभ की इस प्रकार की प्रक्रिया में छूमंतर जैसी कोई बात नहीं है और उसके लिये पर्याप्त समय लग सकता है।

प्रकृति का समस्त कार्य तेजी से नहीं , धीरे.धीरे होता है। जो शक्ति धीरे.धीरे संचित होती है , वह युक्त होकर पहाड़ तक को विदीर्ण कर सकती है। परन्तु क्या कोई शक्ति पलक मारते बीज को वृक्ष में परिणित कर सकती है? जल्दी का काम शैतान का प्रसिद्ध है ही। पेड़ काटना मिनटों का काम है , पर पेड़ उगाना वर्षों का। प्रकृति की नियमावली में संहार जल्दी सम्भव है, पर जल्दी विकास असम्भव। रोग का विकास और विनाश दोनों धीरे.धीरे ही होता है। रोग के चिन्ह प्रगट होने से यह नहीं समझना चाहिए कि रोग उसी वक्त हुआ बल्कि बहुत पहले शरीर में घर कर चुका होता है। इसी तरह रोग का चिन्ह मिट जाने से यह समझना भी भूल है कि रोग अच्छा हो गया। रोग पूर्णत: अच्छा होने में फिर भी देर हो सकती है और होती है, उसके बाद ही रोग का बीज नष्ट होता है, वह नवजीवन और दीर्घायु प्राप्त करता है।

प्राकृतिक चिकित्सा में ऐसे रोगी आते है, जिनका रोग पुराना था परन्तु अल्पकाल में ही साधारणतौर पर स्वस्थ हो गये और चिकित्सा छोड़ बैठे पर उनमें से अधिकांश रोगियों का आरोग्य कुछ ही दिनों तक टिक सका और वे पुन: बीमार पड़ गये। क्योंकि उन्होंने जल्द.बाजी की। एक उदाहरण भी है कि एक व्यक्ति जो दवा खाते.खाते और सूइयां लेते.लेते अपनी जीवनी.शक्ति खो बैठा , फिर भी उसका रोग नहीं गया, बल्कि ओर असाध्य हो गया उसकी नाडिय़ों की शक्ति क्षीण हो गई। रक्त में विष भर गया सारा बदन सूज गया और मल मार्गों के स्वाभाविक कार्य में शिथिलता आने लगी, पाचन खराब हो गया, दस्त आने लगे तथा मस्तिष्क में कुछ खराबी आ गई। ऐसे रोगी को प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली ही क्यों, कोई भी चिकित्सा प्रणाली पलक मारते ही ठीक करने का वादा नहीं कर सकती। ऐसा रोगी कई वर्षों में भी यदि अच्छा हो जाये तो भगवान की बड़ी कृपा समझनी चाहिए।

अक्सर ऐसा देखा गया है कि किसी फकीर ने कोई यन्त्र दे दिया और रोगी का रोग जाता रहा , किसी ने कोई नुस्का बता दिया और मामूली.सा कोई रोग अच्छा हो गया तथा किसी का रोग मानसोपचार आदि से मन्त्रवत् चला गया, इन दशाओं में हमें यह न भूलना चाहिए कि उपर्युक्त प्रयोग प्राय: उन्हीं मौकों पर कारगर होते या अपना चमत्कार दिखाते है, जब रोगी की वास्तविक चिकित्सा प्रकृति द्वारा पूरी कर चुकी होती है अर्थात् रोगी के शरीर से विजातीय द्रव्य बाहर निकलने लगता या निकल चुका होता है।

9. नि:संदेह प्राकृतिक चिकित्सा से दबे रोग जड़ से उखड़ते है

जहां उभरे या प्रकट रोग दवाओं से दब जाते है, वहां दबे रोग प्राकृतिक उपचार से जड़ से ही उखड़ जाते है और सदा के लिये शरीर से चले जाते है। प्राकृतिक चिकित्सा के इस सिद्धान्त को समझने के लिए पहले हमें यह समझना होगा कि प्राकृतिक उपचार में'उभार या उभाड़' से क्या मतलब होता है?

उभार को चिकित्सा की भाषा में रोग का तीव्र रूप , रोग की अपकर्षावस्था, पुराने रोग का प्रत्यावर्तन, आरोग्यप्रद दारूण स्थिति, रोग उपशम संकट आदि कई नामों से पुकारते है। इसका सीधा.सादा मतलब है, पुराने (जीर्ण) रोग के उपचार काल में किसी समुचित समय पर उस रोग की तीव्र प्रतिक्रिया का होना या दबे रोग का प्राकृतोपचार द्वारा अर्जित प्रबल जीवनी.शक्ति के प्रभाव, जड़ से उखड़ कर सदा के लिए चले जाने के लिए प्रस्तुत हो जाना और थोड़े समय तक अपना जलवाभर ताण्ड्व दिखाकर रोगी का शरीर (पिंड) हमेशा के लिए छोड़ देना। उभार साधारणत: दो.चार दिन या हद से हद एक सप्ताह रहकर शांत हो जाता है और शरीर को निरोग अवस्था प्रदान करता है। उभार की क्रिया में यह एक विलक्षण बात है कि रोगी के शरीर में जिस क्रम से जो.जो रोग पहले से दबे हुये रहते है , उभार काल में उनके विपरीत.क्रम से एक.एक रोग उभड़ते जाते है और शरीर से बाहर होते चले जाते है और हर दो रोग के उभार के बीच में जो अन्तराल होता है वह सात का भाग देने पर कट जाने वाला कोई अंक होता है जैसे. यदि रोगी को पहले दस्त की बीमारी हुई और दवा से दब गई, फिर दर्द हुआ और वह भी दबा दिया गया, उसके बाद ज्वर हुआ और वह भी दब गया। तो प्राकृतोपचार से जब उभार होने शुरू होंगे तो सर्वप्रथम ज्वर की बीमारी 7 या 14 दिन पर उभरेगी और चली जायगी फिर दर्द उभरेगा। उसके 7, 14 या 21 दिन बाद और वह भी चला जायेगा। फिर सब के बाद दस्त का रोग उभरेगा दर्द चले जाने के बाद उसके शरीर को निरोग अवस्था प्रदान होगी।

इस सिद्धान्त के अपवाद भी हो सकते है, परन्तु साधारणतया ऐसा ही देखा गया है कि दबे रोग को उभरने में प्रकृति को निश्चित काल तक काम करना पड़ता है , तत्पश्चात् दूसरे दबे रोग उभारते और उसके बाद तीसरे और चौथे। हर तैयारी के बाद उभार आता है। उदाहरणार्थ पलट.पलट कर आने वाले मलेरिया ज्वर को लीजिये। प्राकृतोपचार करने पर इसमें कुछ दिनों तक ज्वर का बढन्ना और तेज बना रहना आरम्भ हो जायेगा, जो उभार है। प्रत्येक उभार को तन्दुरूस्ती की एक मंजिल समझनी चाहिए, स्वास्थ्य के मार्ग की एक सीढ़ी, जिसे हम दु:ख के बाद सुख पाते है। बादी के रोगों में प्राय: सात घंटे या सात के पहाड़े वाले घंटे अथवा सात घड़ी, सात पहर या सात दिन या सात सप्ताह आदि के हिसाब से रोग का उभार होता है। इसे ही बारी.बारी से रोग का आना भी कहते है , परन्तु यह वस्तुत: रोग की उग्रता का विभिन्न कालों में विभक्त हो जाना है।

यह सात का अंक प्रकृति की किताब में एक बड़ा विचित्र अंक है. सात वर्ष तक बच्चा एकदम निस्सहाय होता है, चौदह वर्ष तक की अवस्था कुमारावस्था, इक्कीस वर्ष तक की किशोरावस्था, अठाईस वर्ष तक की जवानी, पैंतीस वर्ष तक की अवस्था स्थिर प्रौढ़ावस्था कहलाती है। इसी तरह यह सप्तक.चक्र मानव.जीवन की प्रत्येक अवस्था के उभार में सिद्धान्त: लागू होता है , जो एक अति गोपनीय प्राकृतिक रहस्य है, जिससे भगवान की विचित्र लीला का आभास मिलता है। जैसाकि सृष्टि के संचालन में मुख्यत: प्रकृति की दो शक्तियां रचनात्मक और विनाशक विशेषरूप से कार्य करती है। प्राकृतिक रोगोपचार में

प्रकृति की यह रचनात्मक शक्ति रोगी में रोग उपशम संकट उत्पन्न करके रोगी को रोग.मुक्त कर स्वस्थ बना देती है। जबकि विनाशक शक्ति का काम रोगी में विध्वंसकारक रोग संकट पैदा करके रोगी की मृत्यु का कारण बनना। यह अवस्था उस वक्त पैदा होती है , जब रोगी के शरीर में भरा विजातीय द्रव्य (मल) शरीर के उत्सर्जी.मार्गो (पेशाब, पाखाना, प्रश्वास एवं रोमकूपादि) द्वारा शरीर से बाहर नहीं निकलता और परिणाम उस रोगी का निधन होता है , क्योंकि मृत्यु तभी होती है , जब विजातीय द्रव्य की मात्रा रोग निवारक शक्ति से बहुत अधिक बढ़ जाती है।

प्रकृति की इन शक्तियों को ओर भी निम्र उदाहरणों द्वारा समझते है.

1. गर्मियों में कभी.कभी बड़े जोरों से गर्मी होकर उमस बढ़ जाती है। उसे ऋतु उपशम संकट कह सकते है। क्योंकि उसके थोड़ी देर बाद निश्चत रूप से हवा तेजी से बहने लगती है या आंधी अथवा कुछ हल्की या तेज बारिश होने लगती है और फिर शान्ति मिल जाती है।

2. जाड़ा बीत जाने के बाद पतझड़ से पेड़ों की पत्तियां गिर पड़ती है और वे नंगे बूचे हो जाते है। प्रकृति ऐसा करके उन पेड़ों के लिये रोग उपशम संकट उपस्थिति करती है , क्योंकि उसके बाद थोड़े ही अर्से में वे पहले से भी अधिक हरे.भरे और पल्लवित दिखने लगते है।

3. जब नौकर हमारा कमरा बुहारता है तो गर्द.गुबार से वह कमरा भर जाता है। यह उस सुन्दर कमरे के लिए रोग उपशम संकट ही है, क्योंकि कमरा बुहार जाने के बाद जब गर्द व गुवार साफ होकर कितना खूबसूरत लगता है।

4. मल.मूत्र निकलने के पहले जो थोड़ी.सी तकलीफ के साथ हाजत महसूस होती है। वह प्रकृति का उभार क्रिया के अतिरिक्त और क्या है? क्योंकि उस हाजत के बाद तबियत पहले से कितनी हल्की हो जाती है।

5. स्त्रियों का प्रतिमास मासिक.धर्म का होना, उसकी प्रसव वेदना, पके हुये फोड़े की असह्य पीड़ा और चुभे हुये कांटे को निकालते समय की वेदना आदि सभी प्राकृतिक उभार क्रिया के ही तो उदाहरण है।

सभी तीव्र रोग जैसे. हैजा , ज्वर, दस्त एवं चेचक आदि हमारे विजातीय द्रव्य (मल) से लदे शरीर की जीवनी.शक्ति द्वारा विजातीय द्रव्य को अति वेग के साथ निकाल फेंकने में शीघ्रता करते है। उसे हम रोग का तीव्र रूप या तीव्र उपशम संकट कह सकते है।

इस तरह हम देख सकते है कि उपचार काल में उभार का होना कितना कल्याणकारी , मंगलमय और अतिआवश्यक है, जिससे घबराने और डरने की जगह रोगी को प्रसन्न होना चाहिए। लेकिन यह विशेष ध्यान देने की बात है कि उपचार के दौरान उभार को जल्दी बुलाना या उसे विकट रूप देना बुद्धिमानी नहीं है। इस काल में जल्दबाजी से काम लेना हानि कर सकता है। प्रकृति द्वारा शनै: शनै: कार्य सम्पादन होने का नियम यहां भी लागू होने देना चाहिये। यही उत्तम है , परेशान करने वाले उभार उन्हीं रोगियों की चिकित्सा में अक्सर होते देखे गये है जो चिकित्सा के पहले बहुत.सी विषाक्त दवाइयां लिया करते थे और जिसको निकालने में प्राकृतिक चिकित्सक बहुधा जल्दी करते है। जो प्राकृतिक जीवन व्यतीत करते

है और दवाओं से बचे रहते है , उनके बीमार पडने पर या तो उभार होता ही नहीं या बहुत हल्के होते है और इतने ही से वे पूर्ण रूप से स्वस्थ हो जाते है।

10. वास्तव में हमारे शरीर, मन और आत्मा तीनों की चिकित्सा एक साथ होती है

शरीर, मन और आत्मा.तीनों के स्वास्थ्य.सामंजस्य का नाम ही पूर्ण स्वास्थ्य है। यही प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली की सबसे बड़ी विशेषता है। प्राकृतिक चिकित्सक मनुष्य के मानसिक स्वास्थ्य को उसके शारीरिक स्वास्थ्य से अधिक आवश्यक और गुरूत्तर समझते है और आत्मिक स्वास्थ्य या आत्म बल को सर्वापरि एवं गुरूत्तम। एक प्राकृतिक चिकित्सक की नजर में शारीरिक स्वास्थ्य का अर्थ केवल रोगरहित शरीर ही नहीं होता , अपितु वह यह भी जानता है कि मनुष्य के शरीर के स्वास्थ्य का सम्बन्ध उसके मन और आत्मा से बड़ा घनिष्ठ होता है। मृत मनुष्य केवल शव मात्र होता है , परन्तु जीवित मनुष्य के शरीर में मन का अविच्छेद सम्बन्ध होता है। दोनों को मिलाकर एक समझना होगा और एक को छोडक़र दूसरे का विकास किया भी नहीं जा सकता। मस्तिष्क को उन्नत रखते हुए शरीर को बलशाली करने वाला व्यक्ति सुख के मार्ग पर होता है।

प्राकृतिक जीवन, प्राकृतिक रहन.सहन तथा प्राकृतिक खान.पान ही हमारे जीवन में सात्विकता लाकर मन को संयमित कर हमें आध्यात्म की ओर ले जाते है। यह असत्य नहीं है कि यदि मानवजाति प्राकृतिक चिकित्सा दर्शन का अनुकरण करें, उसे अपनावें तो निर्दयता, पाशुविकता, पैशाचिकता संसार से एकदम उठ जायें और पृथ्वी पर स्वर्ग उतर आवें। रोगी शरीर , निर्बल आत्मा और कलुषित मन तीनों की चिकित्सा के लिये ईश.प्रार्थना अथवा राम नाम जप तो प्राकृतिक चिकित्सा का प्रमुख अंग है , रामबाण चिकित्सा है।

3.6 सारांश

प्राकृतिक चिकित्सा से रोगी बहुत जल्दी अच्छे हो जाते है , इतना ही नहीं संसार में जितनी चिकित्सा.पद्धतियां आजकल प्रचलित है , उन सब में प्राकृतिक चिकित्सा सबसे तेज रफ्तार वाली चिकित्सा है, मगर हमारी परेशारी तो यह है कि हमको सब तरफ से निराश हुये असाध्य रोग के रोगी ही उपचार के लिए मिलते है।

प्रकृति का समस्त कार्य तेजी से नहीं , धीरे.धीरे होता है। जो शक्ति धीरे.धीरे संचित होती है , वह युक्त होकर पहाड़ तक को विदीर्ण कर सकती है। परन्तु क्या कोई शक्ति पलक मारते बीज को वृक्ष में परिणित कर सकती है? जल्दी का काम शैतान का प्रसिद्ध है ही। पेड़ काटना मिनटों का काम है , पर पेड़ उगाना वर्षों का। प्रकृति की नियमावली में संहार जल्दी सम्भव है, पर जल्दी विकास असम्भव। रोग का विकास और विनाश दोनों धीरे.धीरे ही होता है।

3.7 **बोधात्मक प्रश्न**

1. प्राकृतिक चिकित्सा का अर्थ लिखिए।
2. प्राकृतिक चिकित्सा की परिभाषा एवं अन्य नाम लिखिए।
3. प्राकृतिक चिकित्सा की आधारभूत धारणा एवं सिद्धान्तसमझाइए।

3.8 **संदर्भ ग्रंथ**

संदर्भ ग्रंथों की सूची में सम्मिलित ग्रन्थों एवं उनकी सहायक सामग्री का उपयोग हमने इस ग्रन्थ के निर्माण में सहायक के रूप में किया है। हम इन संदर्भित ग्रन्थों, उनके लेखकों, प्रकाशकों एवं संस्थाओं के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

संदर्भ साहित्य	**लेखक**	**संदर्भ साहित्य**	**लेखक**
प्राकृतिक आयुर्विज्ञान	डॉ. राकेश जिन्दल	प्राकृतिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य	डॉ. महेन्द्र कुमार जाजपुरा
वृहद प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. ओ. पी. सक्सेना	व्यावहारिक प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. हेनरी लिंडलार
स्वस्थवृत विज्ञान	प्रो. रामहर्ष सिंह	प्राकृतिक स्वास्थ्य एवं योग	डॉ. बृजभूषण गोयल
प्राकृतिक स्वास्थ्य शास्त्र	आचार्य शेषांद्रि स्वामीनाथन	प्राण शक्ति उपचार; प्राचीन विज्ञान कला	चौ. कोक सुई
योग द्वारा स्वास्थ्य	डॉ. राकेश प्रकाश निगम	आपका आरोग्य आपके हाथ में	देवेन्द्र वोरा
आदिऊर्जा प्राण	अमश्ता भारती	प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग वैज्ञानिक प्रयोग	डॉ. नागेन्द्र कुमार नीरज
स्वास्थ्य के सोपान	नरूपमल सुराणा	जीवेम् शरद शतम्	पं. श्री राम शर्मा आचार्य वाङ्मय
सरल प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. लक्ष्मी नारायण शर्मा	बिना औषयिों के कायाकल्प	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
बिना दवा इलाज	डॉ. जय माला जशनानी	निरोग जीवन का राज मार्ग	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
बिना दवा परफेक्ट हेल्थ	डॉ. बलराम पटेल	दीर्घ जीवन की प्राप्ति	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
पातंजली योगसूत्र	स्वामी विवेकानंद	पंच तत्वों द्वारा सम्पर्ण रोगों का निवारण	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
घरेलू आयुर्वेदिक इलाज	वैद्य सुरेश चतुर्वेदी	रोगों की सरल चिकित्सा	विट्ठलदास मोदी
स्वास्थ्य रक्षा के सरल उपाय	डॉ. ओम प्रकाश आनन्द	जीने की कला	विट्ठलदास मोदी

प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग	श्रीमत्ती राज कुमारी गुप्ता	स्वास्थ्य कैसे पाया	विट्ठलदास मोदी
रोगों की अचुक चिकित्सा	जानकी शरण शर्मा	उपवास के लाभ	विट्ठलदास मोदी
पंचतत्व के रोगों की चिकित्सा	डॉ. शरण प्रसाद	आहार चिकित्सा	अर्नाल्ड एहरट (ले.) विट्ठलदास मोदी (अनु.)
ब्रह्मचर्य ही जीवन हैं	स्वामी श्री शिवानन्द जी	जल चिकित्सा	सेबस्टीयन नीप (ले.) विट्ठलदास मोदी (अनु.)
आदर्श आहार	डॉ. सतीश चन्द्र दास	प्राकृतिक जीवन की ओर	एडोल्प जुस्ट (ले.) विट्ठलदास मोदी (अनु.)
100 वर्ष निरोगी रहिए	माणेक लाल म. पटेल	हमारा स्वास्थ्य	शाम अष्टेकर तथा अनुवादक कालिंदी देशपांडे
रोगों की अचूक चिकित्सा	जानकी शरण वर्मा	निरोग होने का सच्चा उपाय	आर.के.ट्राल(ले.) वासुदेवशरण अग्रवाल(अ.)
प्रकृति से मैत्री	प्रकाशन विभाग	प्राकृतिक चिकित्सा. महिला के लिए	ए. पी. दीवान
आरोग्य की कुंजो	राष्ट्रपिता महात्मा गाी	नव्य जन स्वास्थ्य तथा स्वास्थ्य विज्ञान	डॉ. मुकुन्द स्वरूप वर्मा
मैं तन्दूरूस्त हूँ या बीमार?	लूई कूने	वैज्ञानिक प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. हीरालाल
आकृति से रोग की पहचान	लूई कूने	अभीनव प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. कुलरंजन मुखर्जो
आरोग्य प्रकाश	वैद्यराज पं. रामनारायण शर्मा	दैनोंदिन रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. कुलरंजन मुखर्जी
मौलिक चिकित्सा कौन सी?	डॉ. चंचलमल चोरडिया	पुराने रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. कुलरंजन मुखर्जी
100 वर्ष कैसे जीयें	आचार्य श्याम सुन्दर सुमन	साधारण रोगों की यौगिक एवं प्राकृतिक चिकित्सा	के.यो.प्रा.चि.अ. परिषद
नीरोग होने का सच्चा उपाय	आर.टी. ट्राल	कुदरती जीवन, आरोग्य की कुंजी	राष्ट्रपिता महात्मा गाी
स्वस्थ जीवन	प्रताप सिह सुराणा	स्वास्थ्य ही सही दिशा प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. ेिरैन, डॉ. . रा. गाला, डॉ. संजय गाला

तंदुरूस्त कैसे रहें	श्री बर्नर मैकफेडन	स्वस्थ रहने के प्राकृतिक ढ़ग क्यों न अपनाए जायें	डॉ. इन्द्रजीत कौर, भक्त पूर्ण सिह
जीवनी शक्ति कैसे जगायें	डॉ. चन्द्र दीप सिंह	स्वयं स्वस्थ रहने की कला	डॉ. ेिरन, डॉ. . रा. गाला, डॉ. संजय
प्रेक्टिकल नेचर क्योर	डॉ. के. लक्ष्मण शर्मा	Diet and diet reform	Sebastian kneipp
Return to Nature	एडोल्प जुस्ट	Food combining made easy	Dr. Herbert m. Shelton
The true healing art	R. T. Trall	The new science of healing, The doctrine of unity of diseases	Louis Kuhne and Benedict Lust
Mucusless diet healing system	Arnold ehret	A complete handbook of nature Cure – edition 4	Dr. H. K. Bakhru
Fasting can save your life	Dr. Herbert m. Shelton	My water.cure	Sebastian kneipp

इकाई : 4

प्राकृतिक चिकित्सा का इतिहास एवं विकास

इकाई की रूपरेखा

4.1 उद्देश्य

4.2 प्रस्तावना

4.3 विदेश के प्रमुख प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञ

4.4 देश के प्रमुख प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञ

4.5 सारांश

4.6 बोधात्मक प्रश्न

4.7 संदर्भ ग्रंथों की सूची

4.1 उद्देश्य

- प्राकृतिक चिकित्सा का इतिहास क्या रहा है
- प्राकृतिक चिकित्सा किन कारणों से अब तक पिछड़ी रही है तथा अब इसका विकास कैसा है
- विदेश के प्रमुख प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञ कौन.कौन एवं उनका योगदान क्या रहा है
- देश के प्रमुख प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञ कौन.कौन एवं उनका योगदान क्या रहा है
- प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में विभिन्न स्वास्थ्य संगठन कौन.कौन से है और उनका योगदान क्या है
- प्राकृतिक चिकित्सा के ही स्वास्थ्यप्रद नियमों को अप्रत्यक्ष रूप से अन्य चिकित्सा पद्धतियों द्वारा रोगी को देकर कैसे चंगा (स्वस्थ) बनाया जा रहा है तथा शेष कुछ ही नियमों के खिलाफ होकर अपनी विशेष पहचान बनाने में कैसे सफल है।

4.2 प्रस्तावना

प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति उतनी ही पुरानी है जितनी कि प्रकृति स्वयं या इसके आधार 'महतत्व एवं पंचमहाभूत (आकाशतत्व, वायु तत्व, अग्नि तत्व, जल तत्व एवं पृथ्वी तत्व) द्वारा उत्पन्न प्रथम जीव '। महत्तत्व एवं पंचमहाभूत समन्वित यह प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति अपौरूषेय अर्थात् मनुष्यकृत नहीं है। अत: प्राकृतिक चिकित्सा अनादि और अनन्त है। यह पद्धति संसार में प्रचलित सभी चिकित्सा पद्धतियों

की जननी मानी जाती है। संसार के आदि ग्रन्थ वेदों , श्रुतियों, मनुस्मृति, अष्टांग संग्रह, आयुर्वेद एवं पौराणिक ग्रंथों में भी इसकी सभी मोटी-मोटी बातों का उल्लेख मिलता है।

आदि सृष्टि का इतिहास देखने से पता चलता है कि आदि युग में न औषधियां , न डॉक्टर और न अस्पताल थे। फिर भी आदमी अधिक सुख से जीते और दीर्घायु पाते थे। उस समय लोग असमय में ही निर्बल, असक्त एवं वृद्ध नहीं हुआ करते थे। उनकी शारीरिक , मानसिक तथा आत्मिक तीनों शक्तियां मृत्यु.पर्यन्त बलवती रहती थी। वे लोग सच्चे अर्थों में प्रकृति के उपासक होते थे। उनका प्रकृति से रिश्ता अटूट और सनातन था। उसी काल से भारतवर्ष में तीर्थ स्थानों का भ्रमण , व्रत, उपवास, दूध व फल कल्प.वास, सात्विक भोजन, सप्ताह में एक दिन लवणहीन भोजन तथा रामनाम स्मरण एवं आकाश , वायु, अग्नि, जल एवं पृथ्वी का पूजन आदि अचूक प्राकृतिक उपचार स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त आवश्यक होने के कारण इन्हें हमारी धर्म.संस्कृति का अंग बना दिया गया। तब रोगों से लोहा लेने के लिये मनुष्य के पास प्राकृतिक उपायों के अलावा और कोई दूसरा उपाय न था। प्राकृतिक चिकित्सा में यौगिक क्रियाओं का एक विशिष्ट स्थान है। हमारे देश में आसनों द्वारा स्वास्थ्य सुधार का प्रचलन आदि काल से ही चला आ रहा है। अनेक यौगिक क्रियाओं को भारतीय महर्षियों ने मानव जाति के कल्यान हेतु हजारों वर्षों तक परिश्रम , अन्वेषण और प्रयोग किये है। जिसकी आज भी शारीरिक , मानसिक एवं आध्यात्मिक उन्नति के लिए वैज्ञानिकता सिद्ध है। इनका प्रयोग आज भी असाध्य और पुराने रोगों को दूर करने के लिए ही किया जाता है। प्रकृति के समीप रह कर सदैव प्रकृति के नियमों का पालन करते थे , प्राकृतिक उपचारों और यौगिक क्रियाओं से शरीर का मल या विष दूर करते थे , जिससे उनकी काया निर्मल और सुख की प्राप्ति होती। इस तरह का जीवन प्राकृतिक जीवन शैली कहलाता। उनके वे सभी सरल.सरल जीवनोपयोगी स्वास्थ्य नियम ही मूलत: प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति के अन्तर्गत आते है। प्राकृतिक जीवन शैली से जीने वाला मनुष्य अपने मानव जन्म का उद्धार कर लेता है।

प्राचीन काल में न केवल भारत में ही बल्कि संसार के कोने.कोने में (जैसे. चीन , मिस्र, यूनान आदि) प्राकृतिक चिकित्सा का किसी न किसी रूप में अच्छा प्रचार था। वैदिक काल के साथ.साथ प्रकृति अर्थात् प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति की गोद में मूल आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति उन्नति कर चर्मोत्कर्ष पर पहुँच गयी। फिर कई सदियों बाद रामायण काल में भी आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति का विशाल वृक्ष बहुत हरा.भरा शुद्ध था।

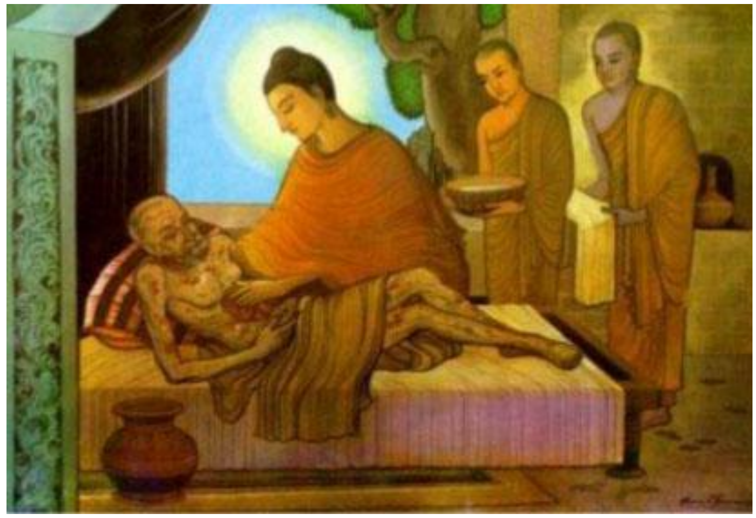

जैसे-जैसे मनुष्य में भौतिक लालसा का उपयोग बढ़ा , वैसे-वैसे प्रकृति से उसकी दूरियाँ बढ़ी और उसके जीवन जीने का तरीका अप्राकृतिक हो गया। समय के साथ अनेक नए -नए आविष्कारों व अनुसंधानों ने चिकित्सा क्षेत्र में नई चिकित्सा पद्धतियों को जन्म दिया। जिससे प्राकृतिक जीवन शैली में मनुष्यों का रूझान कम हो गया और पीढ़ी दर पीढ़ी होता ही गया। प्रकृति से उनकी दूरियाँ बढ़ती गई और जीवन शैली अप्राकृतिक हो गई। वे नई चिकित्सा पद्धतियों के आदी बन गये। उनका आनन्दित जीवन दु:खों , समस्याओं व रोगों से भर गया। संसार में अप्राकृतिक जीवन शैली जीने वालों की संख्या जितनी अधिक बढ़ती गई उतने दु:खी और रोगी बढ़ते गये। जिससे नई चिकित्सा पद्धतियों के विकास में तो चार चाँद लग गयें। वे तब से बढ़ती हुई आज सिर्फ लुटपाट का उद्योग बन गई तथा स्वास्थ्य व आयु में निरन्तर गिरावट आज का बड़ा ही विचारणीय विषय बन गया है।

भारतीय इतिहास पर प्रकाश डाले तो मालुम चलेगा कि यहाँ नालन्दा, तक्षशिला जैसे समृद्धि प्राप्त अनेक छोटे-बड़े विद्या के मंदिरों में जीवनोपयोगी सैंकड़ों विषयों को पढ़ाया जाता था। ऐसा नहीं हो सकता है कि भारतीय प्राकृतिक जीवन शैली से अपरिचित थे बल्कि वे इससे अच्छी तरह परिचित थे। भारतीयों की सभ्यता-संस्कृति, रीति-रिवाज एवं दैनिक-जीवन में प्राकृतिक जीवन शैली का जितना प्रचलन भारत में था और अभी है, उतना न किसी विदेशी देश में था और न ही अभी है। भारत हर क्षेत्र में पारंगत होने के कारण विश्वगुरू कहलाया।

यहाँ पर हजारों वर्षो से अब तक भी जीवन जीने का ही ज्ञान दिया जाता है। ऐसा जीवनोपयोगी ज्ञान तो भारतीयों के रग-रग, रोम-रोम में अभी भी समाया हुआ है। भारत की भूमि पर पैदा होने वाले पग -पग पर ढ़ाई-आखर के शब्द ‘ध्यान’ को जीवन भर सिखता ही रहता है। ऐसी भारत भूमि के वासी प्राकृतिक जीवन शैली से अपरिचित नहीं हो सकते बल्कि सबसे ज्यादा परिचित थे और अभी.भी है। आपको यह भी ज्ञात होगा कि यहाँ अनेक आक्रत विदेशी आक्रमण हुए जिन्होंने नालन्दा , तक्षशिला जैसे अनेक छोटे-बड़े विद्या के मंदिरों को क्षीण.भिन्न कर आग के हवाले कर दिया। तब से एक लम्बे अन्तराल में किसी ने भी इस विषय को संकलित नहीं किया। इस कारण प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति का जनक हिपोक्रेटीज नामक व्यक्ति को माना गया। जो ईशा से कुछ वर्षो पूर्व प्रसिद्ध हुआ और उसने रोगियों को प्राकृतिक उपचारों से रोगमुक्त करने का अच्छा काम किया था।

हिपोक्रेटीज के समकालिन भारतीय साक्ष्य 'महाबग्ग' नामक बोधग्रंथ में है, जिसमें वर्णन मिलता है कि महात्मा बुद्ध को एक बार साँप ने काट लिया तो उन्होंने चिकनी मिट्टी , गाय का गोबर व मूत्र का लेप ज़हर के नाश के लिए किया। उसी ग्रंथ में भयंकर रोग से पीड़ित एक भिक्षु के बारे में भी वर्णन मिलता है कि उसके शरीर को कुछ दिनों तक सुबह.साम पानी की भाप लगाई गई , फिर कुछ दिन ठण्ड़ा.गर्म स्नान कराया गया तो वह भिक्षु पुन: स्वस्थ हो गया। यहीं नहीं भारतवर्ष में तो पुराने रीती.रिवाज़ों को गहराई से समझा जाये तो उनमें प्रकृति के अनेकानेक नियमों का पालन होना मालुम चलता है। अनेकों सभ्यताओं की खुदाई में मिली अनेक अवशेषी वस्तुएँ , स्नानाघार और नगर नियोजन की व्यवस्थाएँ प्रकृति के नियमों के अनुरूप ही सिद्ध होती है।

हिपोक्रेटीज

हमारे ऋषि.मुनियों के अथ्क प्रयासों द्वारा प्रकृति की राह पर चल कर ही भारत 'विश्वगुरू' बना। भारत में अंग्रेजी काल के प्रारम्भिक शोधकत्र्ता एवं अधिकारियों ने स्वास्थ्य के बारे में लिखा है कि 'यहाँ के लोग हर दृष्टि से स्वस्थ है ' और फिर लिखते है कि 'उसका मूल कारण इनका प्रकृति से घनिष्ट सम्बन्ध है। ' अंग्रेजी काल में यहाँ के प्राकृतिक स्वास्थ्य का बहुत ह्रास हुआ , जो आज भी जारी है। आज स्वास्थ्य के प्रति आँकड़ों पर दृष्टि डाले तो परिणाम यह बतायेगा कि अमुक.अमुक बिमारी से इतने करोड़ लोग रोगग्रस्त है। सरकारें स्वास्थ्य के क्षेत्र में अधिक से अधिक सुविधाएँ जुटाने में लगी है , फिर भी रोगियों की संख्या में कमी न आकर निरन्तर बढ़ती ही जा रही है। जुटाई गई सुविधाएँ अच्छी होते हुए भी स्वास्थ्य पर कालिख बनी हुई है।

इसका मतलब लोगों की जीवन.शैली में ही कोई न कोई गड़बड़ी है। जिसे सुधारे बिना रोगियों की बड़ी.बड़ी लाईनें खत्म नहीं हो सकती। भारत के कोने.कोने में अनेक स्थानों पर आज भी लोग प्राकृतिक जीवन शैली में स्वस्थ व आनन्दित जीवन यापन कर रहे है। वास्तव में आज उनके जीवन से स्वास्थ्य समझने व आजमाने की मुख्य जरूरत है। अत: इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय इस प्राकृतिक जीवन शैली से अनभिक्य नहीं थे बल्कि इसका ज्ञान पूरे विश्व में भारत से ही पहुँच है।

अठारहवीं शताब्दी के मध्य से प्राकृतिक चिकित्सा की पुन:स्थापना लिपीबद्ध हुई और तभी से हम प्राकृतिक चिकित्सा की उपयोगिता के सम्बन्ध में पुन: जानने लगे। इस सरल व अचूक प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति को जन.जन तक पुन: पहुँचाने और संसार में इसका प्रभूत्व बढ़ाने हेतु इसके कम प्रचलन के कारणों को भी ध्यान में रखना होगा, जो निम्र है.

1. जब कोई बीमार पड़ता है , तब स्वाभावत: वह जल्द

अच्छा हो जाना चाहता है। मनुष्य की इस इच्छा के कारण ही अन्य चिकित्सा.पद्धतियों का उदय हुआ जो दवाओं का अंधाधुंध प्रयोग कर शीघ्र रोग में आराम करने का वादा करती है।

2. ज्यों.ज्यों विषैली रासायनिक चिकित्सा का प्रभाव बढ़ता गया। त्यों.त्यों प्राकृतिक चिकित्सा को लोग भूलते गये। क्योंकि विषैली रासायनिक दवाईयाँ रोगों को तत्काल दबा देने के कारण उनका प्रभाव जनता के सामने प्रकट होने लगा तो परिणामस्वरूप जनता धोखे में आकर रोग के उस चमत्कारिक , तात्कालिक एवं क्षणिक शमन को ही पूर्ण रूपेण उत्तम चिकित्सा समझने लगी। उनको क्या पता कि दवाईयों से रोग अच्छे नहीं होते , केवल दब जाते है। जो रोगावस्था से भी भयानक अवस्था है। साधारण जनता का यही मिथ्या.विश्वास अन्य चिकित्सा पद्धतियों में भी होने लगा। जिसका फल दिनोंदिन मानव के स्वास्थ्य गिरता गया और उनकी आयु का ह्रास भी होता गया।

3. आधुनिक युग में सरकारों और कानूनों द्वारा विषैली रासायनिक चिकित्सा को प्रोत्साहन एवं संरक्षता का मिलना तथा प्राकृतिक चिकित्सा के प्रति उनका उदासीन प्रदर्शन का होना एक बहुत बड़ी बात है।

4. विषैली रासायनिक चकित्सा रोग को चमत्कारिक रीति से दबा देने के अतिरिक्त सरल भी है। अर्थात् रोग हुआ, डॉक्टर या वैद्य जी से दवा ले ली। उन्हें प्राकृतिक चिकित्सा की भाँति न उपवास की आवश्यकता , न टब.स्नान और न एनिमा आदि का झंझट।

5. विषैली रासायनिक चिकित्सा में जहां अनेक अवगुण है , वहां एक अवगुण यह भी है कि दवा लेते.लेते मनुष्य दवा का आदी बन जाता है और तब उसकी जीवनी.शक्ति इतनी कमजोर हो जाती है कि वह प्राकृतिक चिकित्सा के सजीव नियमों को बर्दाश्त करने में अपने को अक्षम समझकर प्रयोग में नहीं लाता है। लेकिन उसका एक छोटा.सा प्रयास भी उसके लिए प्राणदायक होता है।

6. अन्य चिकित्सा पद्धतियों के आने से प्राकृतिक चिकित्सा को जनता उपेक्षा की दृष्टि से देखने लगी और साथ ही उन पद्धतियों ने प्राकृतिक चिकित्सा की जड़ें खोद डाली। फलत: उन पद्धतियों का प्रचार दिन.दुना और रात.चौगुना बढ़ता गया और प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली दिन ब दिन अवनति के अंधकार में विलीन होती गयी।

4.3 विदेश के प्रमुख प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञ

प्राकृतिक चिकित्सा की पुन:स्थापना और प्रचार.प्रसार करने वाले देश.विदेश के अनेक प्रभावशाली ऐसे व्यक्ति हुए है। जो औषधि व अन्य चिकित्सा का कटुफल चख लेने पर प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा अपने प्राण बचाये। यहाँ ऐसे ही प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञों का वर्णन किया जा रहा है :.

डॉ. ईसाफ जेनिग्स :

सर्वप्रथम सन् 1788 में अमेरिका के डॉ. ईसाफ जेनिग्स ने प्राकृतिक नियमों को लिपी बद्ध कर प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति का प्रादुर्भाव किया। इन्होंने प्राकृतिक चिकित्सा का खूब प्रचार.प्रसार किया। ये प्रकृति एवं सफाई के साथ उपवास , विश्राम, अत्यधिक जल.पान और शाँत वातावरण को अधिक महत्व देते थे। उनके इस उपचार पद्धति को 'आर्थोपैथी' के नाम से जाना जाता है। इन्हीं विधियों से जब उस समय बुखार व टाइफाइड के हजारों रोगियों की जान बची और मृत्युदर में भारी गिरावट को देखकर इन्होंने एलोपैथी छोड़ दी। इससे उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला की रोग कोई बाहरी वातावरण की देन नहीं है , बल्कि

जीवनी.शक्ति के ह्रास की देन है। सर्वप्रथम जीवनी.शक्ति के बारे में बताने का श्रेय आपको ही जाता है। इनकी तीन पुस्तकें है. The medicial reform, Philosophy of human life, The tree of human life as human degeneracy.

जॉन वेस्बे :

ये समाज सेवी अपने क्षेत्र के रोगियों को पानी पीना सिखाते और ठण्ड़े पानी के उपचार देकर रोग मुक्त करते थे।

सन जान फ्लायर और जेम्स क्यूरी :

ये दोनों अठारवीं शताब्दी के एलोपैथिक डॉक्टर थे। डॉ. फ्लायर इग्लैण्ड के लिचफिल्ड में एक सोते के पानी में कुछ किसान रोगियों को कुछ दिन नहाते देखा , जो बाद में स्वास्थ्य हो गये थे। जल के स्वास्थ्यवद्र्धक प्रभाव को देखकर उनके मन में प्रबल ईच्छा हुई कि इसके बारे में ओर ज्यादा समझने व लिपीबद्ध करने की।

लिवर पूल का निवासी डॉ. जेम्स क्यूरी ने सन् 1717 ई. के लगभग जल चिकित्सा सम्बन्धी पुस्तक लिखकर प्रकाशित करवाई थी।

विनसेंज प्रिस्निट्ज (1799) : जर्मन डॉ. विनसेंट प्रिस्निट्ज ने एक घायल हिरण को बार.बार रोज़ तालाब के पानी में आकर बैठा देखता और कुछ ही दिनों के बाद हिरण का घाव भरने से पुन: स्वस्थ हो गया। ऐसा देखकर जल चिकित्सा करने लगा तो किसी मामले में उसे न्यायालय में पेश होना पड़ा। न्यायालय ने जल चिकित्सा के हित में फैसला दिया तो उन्होंने ही सर्वप्रथम प्राकृतिक चिकित्सा का अधिकाधिक लोगों तक व्यावहारिक रूप से प्रचार.प्रसार किया। इसी कारण कुछ विद्वान इसे ही 'आधुनिक प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली एवं जल चिकित्सा प्रणली का जनक ' मानते है।

जोहान्स स्क्राथ : स्क्राथ ने भी प्रिस्निज के समकालीन ही प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति का स्वतन्त्ररूप से प्रचार.प्रसार किया। एक साधु द्वारा उत्साहित किये जाने पर सर्व प्रथम इन्होंने अपने घुटने की कड़ी चोट को जल चिकित्सा से ठीक किया। बाद में इन्होंने अपने घायल कुत्तों और घोड़ों पर आशातीत सफलता प्राप्त होने पर अनेक रोगियों को अच्छा किया। यह भी प्रिस्निज की भांति औषधि चिकित्सकों द्वारा बहुत निन्दा का पात्र बना। 1849 ई. में जब घायल बर्टेम्बर्ग के ड्यूक के जख्मों को स्क्राथ ने कुछ ही दिनों में बिल्कुल ठीक करने पर उसकी चिकित्सा प्रणाली को लोग स्क्राथ चिकित्सा के मान से जानने लगे।

फादर सेबस्टियन नीप :

जे. स्क्राथ के समकालीन ही बवेरिया निवासी प्रकृति उपासक पादरी नीप ने बड़े उत्साह और जबरदस्त लगन के साथ जल चिकित्सा की अनेक विधियों का आविष्कार एवं जड़ी.बूटियों का प्रचार.प्रसार किया। इसने अपने स्वास्थ्यगृह का संचालन लगभग 45 वर्षो तक बड़ी तत्परता और सफलता के साथ किया। नीप ने जल चिकित्सा पर एक अति उत्तम पुस्तक रू 4 2ड्डह्लद्गह्म् ष्ह्वह्म्द्ग लिखी है। इसका हिन्दी भाषा में रूपान्तरण 'जल चिकित्सा' के नाम से आरोग्य मंदिर , गोरखपुर द्वारा किया गया।

फादर सेबस्टियन नीप

ये जर्मनी से भारत मे 'प्रकृति निकेतन विद्यापीठ , डायमण्ड हार्बर , जिला. चौबीस परगना (पश्चिमी बंगाल) ' में आकर शेष जीवन तक यही पर रोगियों की सेवा करते रहें। यहाँ ये प्रधानाध्यापक थे और चार वर्षीय पाठ्यक्रम का संचालन करते थे। इन्होंने यहाँ 'प्रकृति वाणी ' नामक मासिक पत्रिका का सम्पादन भी किया और लगभग 40 पुस्तकें हिन्दी व अंग्रेजी भाषा में लिखी।

आर्नल्ड रिक्ली :

आस्ट्रिया का व्यापारी रिक्ली प्राकृतिक चिकित्सा के गुणों पर मुग्ध होकर अपना शेष जीवन इसके प्रचार.प्रसार में लगा दिया। इन्होंने अपने ही देश के टेल्डास नामक स्थान पर सन् 1848 ई0 में धूप और वायु चिकित्सा का सेनिटोरियम स्थापित किया, जो अपने ढ़ंग का संसार में 'सर्वप्रथम प्राकृतिक चिकित्सालय ' था और जिसकी नकल बाद में प्राय: सभी प्राकृतिक चिकित्सकों ने की। इन्होंने ही सबसे पहले रोगियों को सात्विक आहार पर रखकर वायु और सूर्य द्वारा सारे रोगों को अच्छा करने की प्रणाली निकाली थी। डॉ0 रिक्ली मुख्यत: कब्ज के रोगियों को ठीक करता था। रिक्ली 97 वर्ष की आयु में भी स्वस्थ और स्फुर्तिवान बने हुए थे।

आर्नल्ड रिक्ली

लूई कूने

एडोल्फ जुस्ट

लूई कूने (1844) :

सन् 1864 ई0 में जर्मनी के जल चिकित्सक डॉ0 मेलजर , डॉ0 थियाडोरहैन और डॉ0 रसे के आश्रमों में कूने ने 20 वर्ष की आयु में मस्तिष्क, फेफड़ों तथा पेट के फोड़े के असाध्य रोग की चिकित्सा कराकर प्राकृतिक चिकित्सा के गुणों को ग्रहण कर स्वयं एक प्रसिद्ध जल चिकित्सा के चिकित्सक बन गये। प्राकृतिक चिकित्सा की प्रणाली की वर्तमान उन्नति का श्रेय प्रिस्निज , नीप और कूने तीनों चिकित्सकों को है। डॉ0 कूने ने जर्मन भाषा में The new science of healing और The science of facial expression प्रसिद्ध पुस्तकें है। इन पुस्तकों का अनुवाद संसार की प्राय: सभी प्रसिद्ध भाषाओं में हुआ है। सन् 1883 ई0 में डॉ0 कूने ने जर्मनी के लिपजिंग में स्वास्थ्यगृह खोला। जल चिकित्सा के प्रयोग में आने वाले एक विशेष उपक्रम 'हिप.बाथ' की डिजाइनिंग करने का श्रेय आपको ही जाता है। हिप बाथ में बैठकर 'मेहन स्नान' करने की विधि का श्रेय भी आपको ही जाता है।

एडोल्फ जुस्ट :

जर्मन चिकित्सक ए. जुस्ट ने प्राकृतिक चिकित्सा पर एक प्रसिद्ध पुस्तक Return to nature लिखी। वह साधारण मिट्टी के प्रयोग द्वारा समस्त रोगों को दूर किया करता था। जिसके कारण संसार में उसे बड़ी ख्याति प्राप्त हुई। इसने रोगियों को अपने आप 'वैज्ञानिक मालिश' करने की क्रिया को सिखाया था। इनको ही 'वैज्ञानिक मालिश' का श्रेय प्राप्त होता है। जिसका हिन्दी भाषा में अनुवाद श्री विठ्ठलदास मोदी ने 'प्राकृतिक जीवन की ओर' नाम से किया।

एडबर्ड हूकर डेवी :

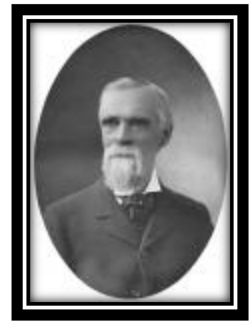

बरनर मैकफेडन की भांति डेवी भी भोजन और उपवास चिकित्सा का नामी विशेषज्ञ था। इसी ने सबसे पहले हृश No break fast plan अर्थात् स्वास्थ्य रक्षार्थ प्रात: समय कुछ न खाने की सत्यता प्रमाणित की।

हेनरी लिण्डल्हार (1 मार्च, 1953) :

यह एलोपैथी डॉ. प्राकृतिक चिकित्सा के गुणों पर मुग्ध होकर प्राकृतिक चिकित्सा का अनुयायी बन गया। इसने प्राकृतिक उपचारों के साथ.साथ् अनुत्तेजक होम्योपैथिक औषधियों से रोगों का उपचार किया करता। इसने ही सिद्ध किया कि ‘तीव्र रोग अपना चिकित्सक स्वयं है।’ इसने अपने नाम से शिकागो और एल्महस्ट में दो सेनीटोरियम खोलें।

इसकी लिखी दो पुस्तकें Iridiagnosis और The philosophy and practice of natural therapeutic, Practice of care, Cooc book संसार प्रसिद्ध रही है। इन्होंने ही विश्व का प्रथम प्राकृतिक चिकित्सा कॉलेज लंदन में स्थापित किया। जिसका नाम ‘ब्रिटिश कॉलेज ऑफ नेचुरल थेराप्यूटिक्स’ रखा। जिसमें चार वर्षीय पाठ्यक्रम चलाया गया।

बेडिडिक्ट लुस्ट (3 फरवरी, 1872) :

यह जर्मनवासी 20 वर्ष की आयु में ही फादरनीप का प्रिय शिष्य बना। इसने अमेरिका में जल चिकित्सा का प्रचार.प्रसार करने हेतु ‘नीप वाटर क्योर’ नामक एक मासिक पत्र निकाला। बाद में एक और पत्र ‘नेचर्स पाथ’ भी

प्रकाशित किया।

बेडिडिक्ट लुस्ट

हैरी बेनजामिन

लुस्ट ने बटलर न्यूजेरसी और टैजरिन फ्लोरिडा में अस्पताल खोलें। इनकी संस्थान न्युयार्क में ‘अमेरिकन स्कूल ऑफ नेचुरोपैथी’ व ‘अमेरिकन स्कूल ऑफ केरोप्रैक्टिक’ से शिक्षा प्राप्त चिकित्सक आज संसार के हर कोने में चिकित्सा कार्य कर रहे है। इन्होंने अंग्रेजी तथा अन्य कई भाषाओं में बहुत.सी पुस्तकें प्रकाशित हुई।

हैरी बेनजामिन :

लन्दन के डॉ0 हैरी बेनजामिन की आंखे बचपन से ही खराब थी और जैसे.जैसे आयु बढ़ती गयी उनकी दृष्टि क्षीण होती चली गयी। पर अन्त में उन्होंने डॉ. बेट्स की पुस्तक ‘चश्मे के बगैर पूर्ण दृष्टि’ को पढक़र अपनी आंखों को बिल्कुल ठीक कर लिया। तभी से आपने प्राकृतिक चिकित्सा सीखी।

इनकी लिखी प्रसिद्ध पुस्तकें Your diet in health and disease, Every body's guide to nature cure ÌÍæ Better sight without glasses से लोगों को बहुँत लाभ पहुंचा।

स्टैनली लीफ :

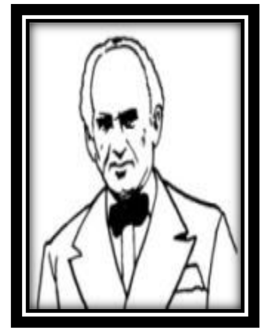

रूस के अमेरिका जाकर डॉ0 मैकफेूरडन के प्राकृतिक शिक्षालय से प्राकृतिक चिकित्सा की शिक्षा ग्रहण की। तत्पश्चात् इग्लैण्ड में प्राकृतिक चिकित्सा का प्रचार.प्रसार किया। डॉ. लीफ ने इग्लैण्ड में Lief's nature cure resort मासिक पत्रिका Health for all का प्रकाशन किया। आपकी प्रसिद्ध पुस्तकें Diet reform simplified और ॥ How to feed children from infancy on ward है। लंदन का प्रसिद्ध 'ब्रिटिश कॉलेज ऑफ नेचुरोपैथी' भी आपके ही तत्वाधान में उन्नति की।

बरनर मैकफेडन :

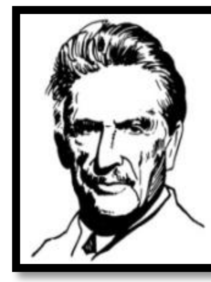

आप उपवास विज्ञान के प्रवर्तक और समर्थक है। आप Physical culture पत्रिका से सम्पादक तथा क्चशशद्म शद्ध Book of Health Fasting for health आदि प्रसिद्ध पुस्तकों के लेखक है। आपने आजीवन संसार की समस्त व्यायाम पद्धतियों का स्वयं अनुभव करके Father of physical cultrue की उपाधि प्राप्त की। उपवास एवं व्यायाम पद्धतियों के आधार पर रोगियों को स्वस्थ करते थे।

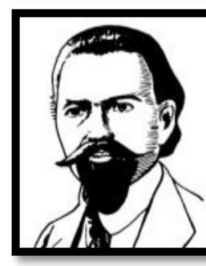

प्रो. आर्नल्ड एहरेट :

जर्मनी के एहरेट ने अमेरिका में फलाहार और उपवास के द्वारा प्राकृतिक चिकित्सा कराते। एहरेट की प्रसिद्ध पुस्तकें Rational fasting और Muculess diet healing system है।

जे. एच. केलांग (26 फरवरी, 1852) :

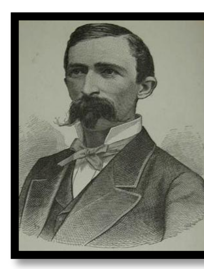

अमेरिका के डॉ. केलाँग का 'बैटिल क्रीक सेनीटोरियम' संसार में अपने ढंग का एक ऐसा सेनीटोरियम है , जहाँ संसार में प्रचलित लगभग सभी चिकित्सा प्रणालियाँ जैसे. जल चिकित्सा , आहार चिकित्सा , मालिश क्रिया , धूप चिकित्सा, शल्य चिकित्सा, स्वीडिश मूवमेन्ट तथा विद्युत चिकित्सा आदि द्वारा रोगों का इलाज होता है। डॉ. केलांग की प्रसिद्ध पुस्तकें 'दि न्यु डायटेटिक्स', 'रैशनल हाइड्रो थिरैपी' तथा 'होम हैंड बुक ऑफ हाइजीन एण्ड मेडिसिन' है। आपको 'विद्युत प्रकाश स्नान (Electric lights bath))' के आविष्कार का श्रेय प्राप्त है।

जे. एच. टिल्डेन :

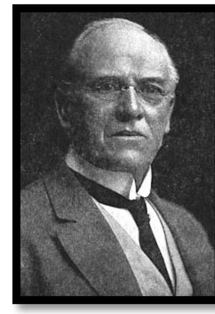

जे. एच. टिल्डेन

जेम्सी सी. थामसन

डॉ. टिल्डेन अमेरिका के अग्रण्य प्राकृतिक चिकित्सक है। आपके उपचार सम्बन्धी अच्छे विचार यह है कि 'सर्वप्रथम उन कारणों को ही दूर किया जाये, जिनसे रोग उत्पन्न होते है। तत्पश्चात् रोगी को शिक्षा दी जाये कि उसे स्वस्थ रहने के लिए किस प्रकार का जीवन व्यतीत करना चाहिए। ' डॉ. टिल्डेन की अधिक प्रसिद्ध पुस्तकें Impaired health और Food बड़ी खोज के साथ लिखी है, जो प्राकृतिक आहार विज्ञान सम्बन्धी अद्वितीय पुस्तकें है।

श्वेनिंगार :

एलोपैथिक डॉक्टर डॉ. श्वेनिंगार एक अच्छे प्राकृतिक चिकित्सक बने। इन्होंने प्रचलित जहरीली तथा प्राणघातक औषधियों की कटू सत्य आलोचना The doctor नामक प्रसिद्ध पुस्तक में की।

जेम्सी सी. थामसन :

Kingston Clinic, Edinburhg में डॉ. थामसन का एक कालेज व 40 रोगियों का एक सुन्दर चिकित्सालय है। आपने 'रूड.हेल्थ' नामक एक मासिक पत्र निकाला। आपकी अनेक प्रसिद्ध पुस्तकें Nature cure form Inside, Influenjam, Two health problems, The heart, Appendicitis, High and low blood pressure तथा How to obtain healthy hairs है।

अल्फेड लीहरे :

आपका स्वास्थ्य खराब होने के कारण सन् 1900 ई0 में बरनार मैकफेडन के सम्पर्क में रहकर आहार शास्त्र का अध्ययन किया। आप 10 साल तक 'ब्रिटिश नेचरोपैथ्स एसोसियेशन ' मन्त्री रहे। आप बी.बी.सी. पर प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति पर ब्राडकास्ट करते रहे है।

अर्शविर तेर होवानैसियन (एतेरहोव)

विश्व में आहार क्रान्ति का श्रेय ईरान के एतेरहोव को जाता है। 'रोगी रहने पर जब किसी भी औषधि से लाभ नहीं मिले , तब अपक्व आहार को अपनाने से स्वास्थ्य लाभ प्राप्त होता है। ' यह एतेरहोव ने सिद्ध कर दिया। इस लोकप्रिय पद्धति को करोड़ों लोग ने अपनाकर अपने असाध्य रोगों से छुटकारा पाया है।

रसेल टी. ट्राल :

एलोपैथिक डॉक्टर डॉ. रसेल टी. ट्राल भी एक महान् प्राकृतिक चिकित्सक बने। इन्होंने फ्लोरेन्स में 'हाइजिनिक थेराप्युटिक कालेज' की स्थापना की।

मारगेरेट बे्रडी :

डॉ. मारगेरेट ब्रैडी माता , गर्भिणी और शिशुपालन सम्बन्धी समस्याओं पर प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति का वैज्ञानिक दृष्टि से 'हेल्थ फॉर ऑल नामी ' पत्रिका में स्त्रियों को परामर्श देना प्रारम्भ किया। आपने 'सुख.प्रसव' और 'बालस्वास्थ्य' के नाम से पुस्तकें प्रकाशित कराई।

सर विलियम अर्बुथ नाट लेन :

आप एलोपैथी चिकित्सक होते हुए प्राकृतिक चिकित्सा का बहुत अधिक प्रचार.प्रसार किया। आपने Good health नामक पुस्तक लिखीं।

रोलियर ए. :

आपने सन् 1900 ई. में स्वीट्जरलैण्ड में यक्ष्मा के रोगियों के लिये पहली धूपशाला खोली जिसके प्रयोगों के आश्चर्यजनक परिणाम को देख कर सारा संसार धूप की रोगनाशक शक्ति का कायल हो गया। आपने इसी विषय पर Helio therpy नामक पुस्तक लिखी।

हेनरिच लेहमैन :

प्राकृतिक चिकित्सा के सम्पर्क में आकर जर्मनी के डेरस डेन में एक स्वास्थालय खोला। इन्होंने मानव स्वास्थ्य के लिए पोषक तत्वों की आवश्यकता पर अनुसंधान करके यह सिद्ध कर दिया कि 'स्वस्थ रहने के लिए आहार ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

राबर्ट हावर्ड :

ये प्राकृतिक आहार पर विशेष जोर देने वाले श्रेष्ठ प्राकृतिक चिकित्सक थे।

डैंसविली :

न्यूयार्क में जैक्शन सेनीटोरियम की स्थपना करके प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में बहुत अच्छा काम कर रही है।

सर विलियम :आप एलोपैथी चिकित्सक होते हुए भी प्राकृतिक चिकित्सा में अगाध विश्वास था। आपने The principles practice of medicine नामक पुस्तक लिखीं।

उक्त प्राकृतिक चिकित्सकों के अलावा बेल सेलमन , विन्टर निट्रल, ओटो कार्क, एडगर, जे. सैकसन, शेल्टन, इलियर, पंज, ओसवाल्ड, हरबर्ट स्पेन्सर, टर्न वेटर जान, बोन पीजली, हैन्स माल्टेन, इडविन डी, बैबिट एन.डी., मिल्टन पावल आदि नामी चिकित्सक हुए।

देश के प्रमुख प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञ

भारत में प्राकृतिक चिकित्सा लुई कूने की प्रसिद्ध पुस्तक New science fo healing का भारतीय भाषाओं में अनुवाद के साथ पुन: प्रादुर्भाव हुआ। सन् 1894 में इसका तेलगु भाषा में श्री डी. वेंकट चेलापति शर्मा तथा सन् 1904 में हिन्दी तथा उर्दू भाषाओं में बिजनौर निवासी कृष्ण स्वरूप श्रोत्रिय ने अनुवाद किया था। इन पुस्तकों से लुई कूने के प्राकृतिक सिद्धान्तों व सरल चिकित्सा विधियों से असाध्य तथा जीर्ण रोगों से पीड़ित रोगी लाभान्वित होने लगे।

डॉ. के. लक्ष्मण शर्मा :

भारत के प्राकृतिक चिकित्सा जगत् के पितामह डॉ. के. लक्ष्मण शर्मा ने अपना सारा जीवन प्राकृतिक चिकित्सा के लिए समर्पित कर दिया। अंग्रेजी भाषा में लिखा 'प्रेक्टिकल ऑफ नेचर क्योर' विशालग्रन्थ उनकी अमर कृति है। देश.विदेश में उनके सैकड़ों शिष्य प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचार.प्रसार में कार्यरत है।

राष्ट्ररपिता महात्मा गांधी :

गांधीजी एडोल्फ जुस्ट की प्रसिद्ध पुस्तक Return to nature से बड़े प्रभावित होकर प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति का बहुत गहराई से अध्ययन कर अपने व आश्रमवासियों पर प्रयोग किया। तभी भारतवासियों के स्वास्थ्य संवर्धन के लिए प्राकृतिक चिकित्सा का व्यापक प्रचार.प्रसार हेतु भारत में सर्वप्रथम प्राकृतिक चिकित्सालय अप्रैल 1946 उरूली कांचन, पुना में स्थापना की। जिसके वे प्रथम चिकित्सक थे। उन्होंने राम नाम को प्राकृतिक चिकित्सा का अंग बनाया और 'आरोग्य की कुंजी' 'Diet & diet reform' नामक पुस्तकें लिखी , जिसका अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ। महात्मा गांधी प्राकृतिक चिकित्सा के ऐसे अनुयायी थे। जिन्होंने 'नवजीवन तथा हरिजन साप्ताहिक ' में प्राकृतिक चिकित्सा के संबंध में अनेक लेख लिखे। लाखों लोगों ने स्वास्थ्य लाभ उठाया।

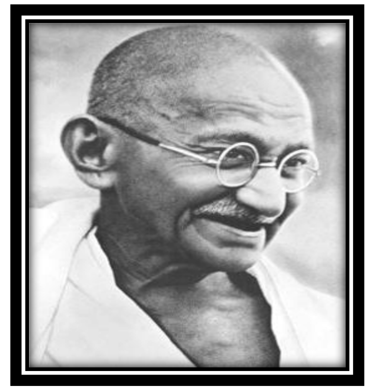

राष्ट्रपिता महात्मा गाी

डॉ. कुलरंजन मुखर्जी

श्री कृष्ण स्वरूप श्रोत्रिय

डॉ. कुलरंजन मुखर्जी :

आप प्रकृति व प्राकृतिक चिकित्सा के प्रखण्ड़ प्रणेता थे। सन् 1930 में किशोरावस्था से ही प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति के अनुसार जटील असाध्य व पुराने रोगियों का रोग हरने वाले डॉ. मुखर्जी की तुलना एलोपैथी के श्रेष्ठ डॉ. विधान चन्द्रा के समतुल्य की जाती है। आपसे स्वास्थ्य के बारे में स्वयं गाँधी जी भी परामर्श लिया करते थे। आप ही के प्रयासों से सन् 1956 में 'केन्द्रीय योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा अनुसंधान परिषद , दिल्ली' नामक निकाय स्थापित कराई गई है। आप अपनी कुल आय का आधा हिस्सा प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचार.प्रसार एवं रोगियों की सहयतार्थ खर्च करते थे। आपने अनेक पुस्तकें लिखी. -
Protective foods in health & disease हिन्दी व अंग्रेजी भाषा , अभिनव प्राकृतिक चिकित्सा, दैनन्दिन रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा, पुराने रोगों की गृह चिकित्सा, स्त्री रोगों की गृह चिकित्सा, शिशु रोगों की गृह चिकित्सा, खाद्य की नयी विधि, सत्य की खोज आदि।

श्री कृष्ण स्वरूप श्रोत्रिय :

आपने लुई कूने की प्रसिद्ध पुस्तक 'न्यू साइंस आफ हीलिंग' का उर्दु और हिन्दी भाषा में अनुवाद किया। जिसका उपयोग कितने ही चिकित्सकों ने कर हजारों रोगियों को स्वास्थ्य लाभ दिया।

श्री सन्त विनोबा भावे :

महात्मा गांधी के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी आचार्य विनोबा भावे प्राकृतिक जीवन और शिक्षण के लिए तन.मन से समर्पित रहे। उन्होंने अपनी 'गीता प्रवचन और राम नाम' एक

चिन्तन पुस्तक में प्राकृतिक जीवन के मूलभूत आदर्शों का बड़े सुन्दर ढंग से विवेचन किया है तथा उनकी दूसरी पुस्तक 'गांवों की स्वास्थ्य योजना ' स्वास्थ्य के लिए एक मार्गदर्शिका है। अखिल भारतीय प्राकृतिक चिकित्सा के अनेक राष्ट्रीय सम्मेलनों में उन्होंने देश के प्राकृतिक चिकित्सकों का विशेष मार्गदर्शन किया। आपने पंचमहाभूत के साथ छठा तत्व रामनाम को बताया।

श्री सन्त विनोबा भावे

श्री मोरारजी देसाई : भारतरत्न की उपाधि से विभूषित श्री मोरारजी भाई देसाई प्राकृतिक चिकित्सा परिषद के शीर्षस्थ नेताओं में से एक है। आप की आत्म कथा पढऩे से प्राकृतिक जीवन जीने एवं नि:स्वार्थ जन सेवा करने की प्रेरणा मिलती है। आपने पूर्णत: 'प्राकृतिक जीवन शैली' को अपनाकर एक सौ वर्ष की आयु (जीवेम शरद: शतम्) प्राप्त कर एक जीवन्त उदाहरण प्रस्तुत किया।

श्री घासी राम जाजपुरा : आपने अपना जीवन प्राकृतिक प्रेमी के रूप में सफलता पूर्वक बिताया। आपका एक अटल नियम या सिद्धान्त था कि 'आज के इन समझदार लोगों को ज्यादा कुछ समझाने में समय और दिमाग नहीं लगाना चाहिए, बल्कि उन्हें अपनी प्राकृतिक जीवन.शैली की झलक दिखा दो। उनकी मर्जी होगी और स्वस्थ होने की प्रबल इच्छा होगी तो वे भी मेरी तरह प्राकृतिक जीवन.शैली को अपनाकर स्वत: रोगमुक्त हो जायेंगे। ' इस प्रकार आपकी नियमित दिनचर्या एवं जीवन जीने के अद्भूत तरीकों को हजारों लोगों ने अपनाया और जटिल से जटिल रोगों से मुक्ति पायी तथा संसार में स्वस्थ एवं प्रसन्नचित्त जीवन जीना सीखा।

डॉ. लक्ष्मी नारारण चौधरी : आप देश के प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक एलौपेथी के दुष्प्रभावों से सैकड़ों रोगियों को बचाया और प्राकृतिक चिकित्सा से रोगमुक्त किया तथा प्राकृतिक चिकित्सा की अनेक पुस्तकें लिखी।

डॉ. जानकी शरण वर्मा : सफल प्राकृतिक चिकित्सक डॉ. जानकी शरण वर्मा द्वारा लिखी 'रोगों की अचूक चिकित्सा और उसके प्रयोग ' प्राकृतिक चिकित्सा जगत् की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक है।

डॉ. जानकी शरण वर्मा

डॉ. बालेश्वर प्रसाद

डॉ. वेगिराज कृष्णम् राज

डॉ. बालेश्वर प्रसाद सिंह : डॉ. बालेश्वर प्रसाद जी महात्मा गांधी से प्रेरणा लेकर जीवन.पर्यन्त भारत के कोने.कोने में प्राकृतिक चिकित्सा के शिविरों का आयोजन कर हजारों लोगों को रोग मुक्त किया तथा अनेक युवकों को प्रशिक्षण देकर सुयोग्य प्राकृतिक चिकित्सक बनाया। आपने 'जीवन सखा' मासिक पत्रिका का सम्पादन भी किया।

डॉ. वेगिराज कृष्णम् राजू : भारत के प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक डॉ. कृष्णम् राजू जी ने आन्ध्र प्रदेश के भीमावरम में एक विशाल प्राकृतिक चिकित्सालय व शिक्षण संस्था की स्थापना की।

डॉ. खुशीराम दिलकश

आप पंजाब के निवासी होकर उत्तर प्रदेश के लखनऊ में आकर 'आरोग्य निकेतन' की स्थापना करके संस्थापक , संचालक व एक अच्छे चिकित्सक का कार्य किया। आपने 'केन्द्रीय योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा अनुसंधान परिषद , दिल्ली' से अनुदानित भारत का पहला बी.एन.वाई.एस. पाठ्यक्रम चार वर्षीय प्रारम्भ किया। इस प्रकार आपने प्राकृति क चिकित्सा के वैज्ञानिक अध्ययन की नींव डाली। लेकिन सन् 1987 में परिषद के नियमों का पालन न करने की वज़ह से पाठ्यक्रम को बंद कर दिया। 'प्राकृतिक जीवन ' पर वार्षिक पत्र का सम्पादन भी करते। आपने अनेकों अच्छी.अच्छी पुस्तकें लिखीं।

डॉ. महावीर प्रसाद पोद्दार :

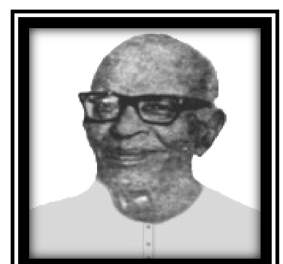

डॉ. महावीर प्रसाद पोद्दार ने महात्मा गांधी से प्रेरणा लेकर प्राकृतिक चिकित्सा को अपनाया। वे आरोग्य मंदिर , गोरखपुर के संस्थापक रहे। जेसीडीह के प्राकृतिक चिकित्सालय में रहकर हजारों निराश रोगियों को नया जीवन दिया। आपने लुई कूने द्वारा लिखित पुस्तकों में से रूपांतरण कर एक पुस्तक लिखी. आकृति से रोग की पहचान।

स्वामी श्री रामदेव, हरिद्वार

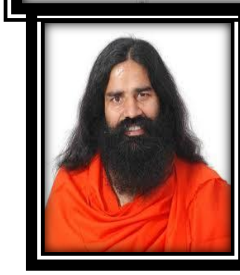

आपने स्वास्थ्य के क्षेत्र में करोड़ों लोगों को आयुर्वेद के साथ.साथ योग व प्राकृतिक चिकित्सा से जोडने का बहुत.बहुत सराहनीय कार्य किया है। जैसे ही योग नाम आता है तो भारत माता का बच्चा.बच्चा आपको पहचानता है। आपने हरिद्वार के योगग्राम में एक प्राकृतिक चिकित्सालय की स्थापना की है।

डॉ. शरण प्रसाद :

आप अनेक वर्षो तक भारतीय प्राकृतिक चिकित्सा विद्यापीठ , कलकत्ता के प्राचार्य एवं मुख्य चिकित्सक रहे। फिर कई वर्षो तक गाँधी जी द्वारा स्थापित निसर्गोपचार केन्द्र, उरूलीकंचन में मुख्य चिकित्सक रहें।

महात्मा जगदीश्वरानन्द जी :

आपने सन् 1936 में डॉ. बालेश्वर प्रसाद सिंह से विधिवत् ह.ष्ठ.ष्ठ.ङ्घ. का प्रशिक्षण प्राप्त कर मिट्टी, पानी, धूप व हवा द्वारा चिकित्सा, यौगिक शोधक क्रियाओं, आयुर्वेदिक, राम नाम, दान, यज्ञ व पवित्र मंत्रों द्वारा समाज के लाखों रोगियों के स्वास्थ्य लाभ में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

महात्मा जगदीश्वरानन्द जी

डॉ. हीरालाल :

आपने आरोग्य मन्दिर, गोरखपुर में प्राकृतिक चिकित्सा सीखकर उन्नाव में प्राकृतिक चिकित्सा का स्वतन्त्र कार्य किया। केन्द्रीय योग एवं प्राकृतिक अनुसंधान परिषद (भारत सरकार) के आप संस्थापक सदस्य , अखिल भारत प्राकृतिक चिकित्सा परिषद एवं अन्तर्राष्ट्रीय प्राकृतिक एवं योग परिषद के महामंत्री के रूप में देश भर में प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचार.प्रसार का कार्य किया। आपकी अनेक हिन्दी.अंग्रेजी में पुस्तकें प्रकाशित हुई।

डॉ. हीरालाल

डॉ. युगल किशोर चौधरी : आपने राजस्थान में प्राकृतिक चिकित्सा का प्रचार.प्रसार किया और असंख्य रोगियों का उपचार किया। आपने अब तक की सर्वाधिक पुस्तकें लिखकर प्राकृतिक चिकित्सा साहित्य को समृद्ध किया।

डॉ. विठ्ठलदास मोदी : आपका रोग लम्बे समय तक अंग्रजी_दवाओं ठीक न होने पर डॉ. बालेश्वर प्रसाद सिंह के मार्ग दर्शन में प्राकृतिक ईलाज कराया और एकदम चंगा ही नहीं बल्कि ऐसी आस्था और निष्ठा जगी कि प्राकृतिक चिकित्सा के ऐसे अग्रदूत बन गये कि उत्तर प्रदेश के गोरखपुर शहर में सन् 1940 में एक विशाल प्राकृतिक चिकित्सालय ‘आरोग्य मंदिर’ के नाम से स्थापित कर दिया। जिसके संचालन में आपका पूरा परिवार रोगियों रोग दूर करने में व्यस्त हो गया।

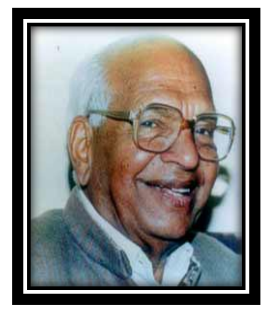

डॉ .विठ्ठलदास मोदी

आपने सन् 1962 में 'गोरखपुर स्कूल ऑफ थेराप्यूटिक्स ' शिक्षण संस्थान की स्थापना करके हजारों स्वस्थ.अस्वस्थ व्यक्तियों को 'योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा ' का प्रशिक्षण देकर ऐसे विशेषज्ञ तैयार किये, जो आज भारत ही नहीं संसार के कोने.कोने में योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा का प्रचार.प्रसार कर रहे है। आपकी प्रसिद्ध मासिक पत्रिका 'आरोग्य' से देश.विदेश के हजारों लोग प्राकृतिक चिकित्सा का लाभ उठा रहे है। आपने गाँधी जी की रचनात्मक प्रवृत्तियों पर केन्द्रित पत्रिका 'जीवन.साहित्य' का संपादन भी किया। आपने एडोल्फ जस्ट की प्रसिद्ध पुस्तक Return to Nature का हिन्दी अनुवाद 'प्राकृतिक जीवन की ओर' किया। आपने प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में अनेक अच्छी.अच्छी पुस्तकें लिखी. दुग्ध.कल्प, उपवास के लाभ, स्वास्थ्य कैसे पाया, यूरोप यात्रा, रोगों की सरल चिकित्सा, बच्चों का स्वास्थ्य और उनके रोग , जीने की कला , कश्मीर के पंद्रह दिन , स्वास्थ्य के लिए फल.तरकारियाँ , यादें, सुखमय बुढ़ापा, Nature cure for common diseases आदि।

डॉ. विमल कुमार मोदी : डॉ. विठ्ठलदास मोदी के स्वर्गवास के बाद आरोग्य मंदिर, गोरखपुर तथा 'आरोग्य' मासिक पत्रिका का संचालन डॉ. विमल कुमार मोदी बड़ी कुशलता से कर रहे है। आप 'गोरखपुर स्कूल ऑफ थेराप्यूटिक्स ' शिक्षण संस्थान के प्रधानाचार्य और 'प्राकृतिक प्रेमी संस्थान' के संचालक पद पर सुशोभित है। आप कर्मठ, सेवाभावी, अनुभवी और मिलनसार व्यक्ति है। आपने 'शरीर रचना एवं क्रिया विज्ञान' नामक पुस्तक लिखी है।

डॉ. विमल कुमार मोदी

डॉ. कृष्णमुरारी मोदी : आप आस्टियोपैथी के बहुत बड़े विद्वान चिकित्सक है। आपने कमर दर्द पीठ दर्द, र्गन दर्द, सायिटिका, लम्बैगौ, माइग्रेन, मासिक समस्या आदि से पिड़ित लाखों मरीजों को ठीक किया है। आपकी प्रसिद्ध पुस्तकें 'आस्टियोपैथी सिद्धान्त और व्यवहार , , Cure aches and pains through osteopathy, Health farming आदि।

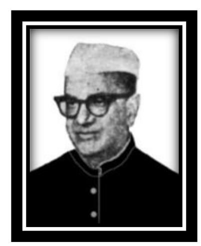

डॉ. मन्नारायण अग्रवाल : आपने गांधी जी और सन्त विनोबा जी द्वारा संचालित राष्ट्र सेवा के रचनात्मक कार्यों में अपने जीवन को समर्पित कर दिया। आप भारत सरकार के स्वास्थ्य मंत्रालय की योजनाओं में प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचार.प्रसार , अनुसंधान एवं आर्थिक सहायता की। गुजरात के राज्यपाल के रूप में आपने गुजरात में प्राकृतिक चिकित्सा को विधिवत् मान्यता प्रदान की। आप वर्षों तक 'केन्द्रीय गांधी स्मारक निधि ', 'अखिल भारतीय प्राकृतिक चिकित्सा परिषद् ' एवं 'गांधी स्मारक प्राकृतिक चिकित्सा समिति' के अध्यक्ष पद को भी सुशोभित करते रहे।

डॉ. बी वेंकट राव व डॉ. विजय लक्ष्मी :

भारतीय प्राकृतिक चिकित्सा के इतिहास में इस दम्पति का महत्वपूर्ण योगदान रहा। इन्होंने भीमावरम में डॉ. कृष्णम् राजू से विधिवत् प्रशिक्षण प्राप्त कर हैदराबाद में विशाल प्राकृतिक चिकित्सालय और उसमानिया युनिवरसिटी से मान्यता लेकर 'नेचर क्योर कॉलेज' की स्थापना कर एम.डी. चार वर्षीय

पाठ्यक्रम चलाया। जो आज आज पाँच वर्षीय है। इन्होंने अंग्रेजी , हिन्दी, दक्षिण प्रान्तीय भाषाओं में अनेक पुस्तकों का प्रकाशन कराया।

डॉ. गौरीशंकर मिश्रा :

डॉ. गौरीशंकर मिश्रा ने डॉ. कुलरंजन मुखर्जी के सानिध्य में शिक्षण प्राप्त कर उत्तर.प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, हरियाणा आदि राज्यों में प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग शिविरों का संचालन कर हजारों रोगियों को स्वास्थ्य लाभ दिया है। आपने सन् 1980 में महर्षि दयानन्द प्राकृतिक योग प्रतिष्ठान की स्थापना की। आपने स्वास्थ्य पर तीन महत्वपूर्ण पुस्तकें भी लिखी।

डॉ. एस. स्वामी नाथन :

आपने डॉ. के. लक्ष्मण शर्मा के सानिध्य में प्राकृतिक चिकित्सा सीखकर सन् 1948 से प्राकृतिक चिकित्सा का प्रचार.प्रसार में उल्लेखनीय कार्य नि:स्वार्थ भाव से किया। आप केन्द्रीय योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा अनुसंधान परिषद के सलाहकार सदस्य रहे और 'लाईफ नेचुरल' अंग्रेजी मासिक पत्रिका और 'जीवन सखा' मासिक पत्रिका के विशेष सम्पादक है।

सेठ धर्मचन्द सरावगी :

आपने प्राकृतिक चिकित्सा विद्यापीठ के लिए लाखों रूपये की अमूल्य भूमि दान में देकर विशाल प्राकृतिक चिकित्सालय एवं कॉलेज की स्थापना की। अखिल भारतीय प्राकृतिक चिकित्सा परिषद के संस्थापक सदस्य एवं 'स्वस्थ जीवन' मासिक पत्रिका के सम्पादक रहे। आपके 85 वर्ष की आयु में भी अपने सुन्दर, सुडौल, स्वस्थ स्वास्थ्य से लोगों को प्राकृतिक जीवन की ओर आकर्षित और प्रेरित करते रहे। आपने प्राकृतिक चिकित्सा एवं रोगों पर अनेक पुस्तकें लिखी।

वैद्य महावीर प्रसाद शर्मा :

आप योगीराज डॉ. देवेन्द्र शर्मा के प्रमुख शिष्य है और उनके द्वारा संस्थापित गंगा शहर में देवेन्द्र योग संस्थान एवं राजस्थान प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र का 30 वर्षों से सफलतापूर्वक संचालन कर रहे है। आप 'मंगल ग्राम' पत्रिका के सम्पादक भी है।

डॉ. जगदीश चन्द जौहर :

आपने पट्टी कल्याण प्राकृतिक चिकित्सा के संस्थापक पं. ओम प्रकाश त्रिखा के मार्गदर्शन में आयुर्वेद के साथ प्राकृतिक चिकित्सा का बहुत प्रचार.प्रसार किया। आपने 1960 से 1993 तक 'स्वस्थ जीवन' पत्रिका के संपादक रहें। आप 'गांधी नेशनल अकादमी ऑफ नेचरोपैथी' व 'गांधी स्मारक प्राकृतिक चिकित्सा समिति, नई दिल्ली' में मंत्री पद पर आसीन रहे। आपने महात्मा गाँधी द्वारा लिखी गई पुस्तक 'आरोग्य की कुंजी' का उर्दू में अनुवाद किया।

डॉ. बी वेंकट राव
व डॉ. विजय लक्ष्मी

डॉ. गौरीशंकर मिश्रा

डॉ. एस. स्वामी नाथन

सेठ र्मचन्द सरावगी

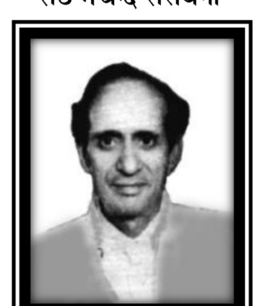

डॉ. जगदीश चन्द जौहर

डॉ. एम.एल. राठौर :

सागर (म.प्र.) के डॉ. एम.एल. राठौर ग्रामीण और प्राकृतिक वातावरण में पले। इन्होंने सागर में ही एक प्राकृतिक चिकित्सालय की स्थापना की। आपने प्राकृतिक चिकित्सा, भोजन और चुम्बक चिकित्सा पर पुस्तकें लिखी।

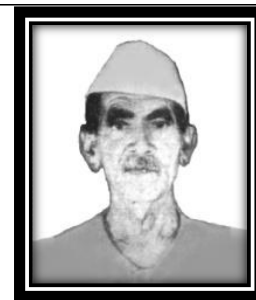

डा. एम.एल. राठौर

डॉ. रविन्द्र चौधरी :

डॉ. रविन्द्र चौधरी ने बिहार में एक विशाल प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र की स्थापना कर उन्माद , हिस्टीरिया आदि रोगों की सफल चिकित्सा करते है। आपने आहार तथा ऋतुचर्या सम्बन्धी पुस्तकें लिखी है।

डॉ. भोजराज छाबडिया :

डॉ. भोजराज छाबडिया

आपने इन्दौर में प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र लगाकर में हजारों रोगियों को रोग मुक्त किया और अनेक लोगों को प्रशिक्षण देकर अच्छे प्राकृतिक चिकित्सक बनायें। आपने बिना दवा तन्दुरूस्ती, स्वास्थ्य एवं सुडौलता तथा भोजन द्वारा चिकित्सा आदि उल्लेखनीय पुस्तकें लिखी।

डॉ. देवेन्द्र स्वरूप शर्मा :

डॉ. देवेन्द्र स्वरूप शर्मा

आप गंगा शहर में देवेन्द्र योग संस्थान एवं राजस्थान प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र की स्थापना कर हजारों रोगियों को रोग मुक्त किया। आप योग और प्राकृतिक चिकित्सा के अतिरिक्त आयुर्वेद और यूनानी में भी पारंगत थे।

डॉ. इन्द्र प्रसाद गुप्त :

डॉ. इन्द्र प्रसाद गुप्त वाराणसी प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचार.प्रसार व प्रशिक्षण का कार्य करते है। आपने 'स्वस्थ जीवन' मासिक पत्र का प्रकाशन भी किया। आपने 'यौगिक पद्धति' नामक एक अनुपम ग्रन्थ लिखा। आप विपश्यना साधना शिविरों का आयोजन भी करते हैं।

डॉ. बी. टी. चिदानंद मूर्ति :

डॉ. बी. टी. चिदानंद मूर्ति

आप हालही में केन्द्रीय योग एवं प्राकृतिक अनुसंधान परिषद (भारत सरकार) के निदेशक पद पर कार्यरत है और इससे पूर्व राष्ट्रीय प्राकृतिक चिकित्सा संस्थान (भारत सरकार , स्वास्थ्य मंत्रालय) पुणे के भी निदेशक पद पर रहें। आप एक कुशल प्राकृतिक चिकित्सक है। आपने कई मुख्य संस्थाओं में मुख्य चिकित्सक के रूप में कार्य किया। शिक्षण संस्थाओं में प्रधानाचार्य के पद पर भी सुशोभित रहे। आप कर्मठ , सेवाभावी, अनुभवी और मिलनसार व्यक्ति है।

डॉ. एन. एस. अधिकारी :

डा. एन. एस. आकारी

आप अन्तर्राष्ट्रीअप्राकृतिक स्वास्थ्य एवं योग प्रतिष्ठान के सचिव है।

प्राकृतिक चिकित्सा प्रचार, प्रसार के लिए नि:स्वार्थ भाव से लगे हुए है।

डॉ. जे.एम. जस्सावला :

आप प्राकृतिक चिकित्सा के अच्छे अनुभवी चिकित्सक थे और अनेकों उच्च कोटि की प्रमाणिक पुस्तकें लिखी।

डॉ. एस.जे. सिंह :

डॉ. एस.जे. सिंह

वैद्य महेन्द्र कुमार गुप्त

डॉ. एस. जे. सिंह ने विदेश से प्राकृतिक चिकित्सा का प्रशिक्षण लेकर अपना सारा जीवन प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचार.प्रसार व प्रशिक्षण के लिए समर्पित कर दिया। वे प्रकृति निकेतन विद्यापीठ , प. बंगाल व प्राकृतिक चिकित्सा कॉलेज के प्रिंसिपल एवं मुख्य चिकित्सक रहे। आपने एक मासिक पत्र 'प्रकृति वाणी' का सम्पादन तथा अंग्रेजी.हिन्दी में कई पुस्तकों का प्रकाशन किया।

वैद्य महेन्द्र कुमार गुप्त :

आप 'मोदी प्राकृतिक चिकित्सा.योग केन्द्र, मोदीनगर' में मुख्य चिकित्सक रह हजारों रोगियों को स्वास्थ्य लाभ दिया है।

डॉ. श्याम नारायण पाण्डेय :

आप प्रथम प्राकृतिक चिकित्सक है, जो भारत सरकार द्वारा स्थापित केन्द्रीय योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा अनुसंधान परिषद् नई दिल्ली में नियुक्त हुए थे।

श्री जय प्रकाश :

आप सूर्या फाउण्डेशन के चेयरमैन है। आपने डॉ. महावीर प्रसाद पोद्दार के सानिध्य में नवजीवन पाया। तभी से आप प्राकृतिक जीवन की ओर अग्रसित हुए।

डॉ. श्रीमती उमा जिन्दल :

आप कई वर्षों से प्राकृतिक चिकित्सा का प्रचार.प्रसार कर रही है। आपने हजारों रोगियों को प्राकृतिक चिकित्सा से लाभान्वित किया है।

डॉ. राकेश जिन्दल :

आपकी कृति 'प्राकृतिक आयुर्विज्ञान' वास्तव में गागर में सागर है। आपने इस पुस्तक में जीवन जीने की कला को सरल भाषा में लिपी बद्ध कर जन साधारण को लाभ पहुँचाया है। आप कई वर्षों से प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचार.प्रसार में लगे हुए है।

श्री जयप्रकाश अग्रवाल

श्री जयप्रकाश अग्रवाल

आप सूर्या फाउण्डेशन के उद्योगपति है। आपके ही सहयोग से 'इंटरनेशनल नैचुरोपैथी ऑर्गेनाइजेशन, नई दिल्ली' की स्थापना लगभग 20 वर्षो पूर्व की गई। आप प्राकृतिक चिकित्सा के प्रखाण्ड अनुयायी एवं प्रनेता है। आपने इंटरनेशनल नैचुरोपैथी ऑर्गेनाइजेशन के माध्यम से 'योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा' का देश के कोने.कोने में जन.आंदोलन शुरू किया है। आप समय.समय पर देश में 'योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा ' के कार्यक्रम आयोजित करते रहते है। आपके प्रयासों से एक वार्षिक कार्यक्रम झिंजोली , सोनीपत, हरियाणा में आयोजित किया जाता है। इस क्षेत्र में आपके कार्य बड़े ही सराहनीय है।

4.4 इंटरनेशनल नैचुरोपैथी ऑर्गेनाइजेशन, नई दिल्ली के सक्रिय कार्यकर्त्ताश

इंटरनेशनल नैचुरोपैथी ऑर्गेनाइजेशन, नई दिल्ली के प्रमुख सक्रिय प्राकृतिक चिकित्सा के प्रणेताओं की संक्षिप्त सूची निम्नानुसार है.

1.	श्री जयप्रकाश अग्रवाल, दिल्ली	24.	डॉ. नित्यानन्द शर्मा, कोटा
2.	डॉ. अनन्त बिरादर, नई दिल्ली– 63	25.	डॉ. अंजना शर्मा, कोटा
3.	पद्मभूषण डॉ. वीरेन्द्र हेगड़, धर्मस्थल, कर्नाटक	26.	डॉ. हरीसिंह सोलंकी
4.	पद्मश्री डॉ. कैलाश मानव, नारायण सेवा संस्थान, उदयपुर	27.	डॉ. इस्माइल टांक, जयपुर
5.	डॉ. विमल कुमार मादी, आरोग्य मंदिर, गोरखपुर, उ.प्रदेश	28.	डॉ. विरेन्द्र अग्रवाल
6.	श्रीमति अनुसूइया, उइकी	29.	यौगिनी पुष्पलत्ता गर्ग, जयपुर
7.	डॉ. सी.पी. गुप्ता, न्यू अशोक नगर, दिल्ली–96	30.	श्री बी.पी. गौड़, जोधपुर
8.	डॉ. शिव कुमार शर्मा, हनुमानगढ़	31.	डॉ. प्रकाश कुमार प्रजापत, उदयपुर
9.	डॉ. अमृत मूनत, रतलाम, मध्यप्रदेश	32.	डॉ. रवि राँकावत, जोधपुर
10.	डॉ. एस.सी. मनचँदा	33.	डॉ. एकलव्य बोहरा, जयपुर
11.	डॉ. नागेन्द्र निरज, हरिद्वार	34.	श्रीमति राजगुप्ता, जोधपुर
12.	डॉ. सलिला तिवारी, चम्पावत, उत्तराखण्ड	35.	डॉ. धनरूप सुराना, जोधपुर
13.	डॉ. जीतेन्द्र आर्य, पूणे, महाराष्ट्र	36.	डॉ. लीलाधर लठ्ठा
14.	डॉ. जीतेन भट्ट, बड़ौदा, गुजरात	37.	डॉ. राजेन्द्र सिंह राठौर

15.	डॉ. डी.एन. शर्मा, उत्तराखण्ड	38.	डॉ. भरतलाल गुजर
16.	डॉ. आर.एस. डवास, दिल्ली- 92	39.	डॉ. देवाराम काकर
17.	डॉ. कृतिदा अजमेरा	40.	योगाचार्य नीतू श्रीवास्तव, दिल्ली
18.	डॉ. के.एल. रंगवानी	41.	डॉ. जयसिंह यादव, जोधपुर
19.	डॉ. प्रवीण कुमार सूरी, पिंजोर, चण्डोगढ़	42.	डॉ. कल्पना वर्मा
20.	डॉ. विनोद कश्यप	43.	डॉ. कोशल्या प्रजापत, अहमदाबाद, गुजरात
21.	श्री सुरेश राठी, जोधपुर	44.	डॉ. पियूष वी. पण्ड्या, बडौदा, गुजरात
22.	डॉ. महेन्द्र कुमार जाजपुरा, जोधपुर	45.	डॉ. विशाल मथुरियाँ, जोधपुर
23.	डॉ. सुषमा प्रजापति, जोधपुर	46.	डॉ. अजय उमराव, जोधपुर ……..

प्रमुख वेब.साईड्स

www.ccryn.org	Indian Government – AYUSH
www.indianmedicine.nic.in/naturopathy.asp	Indian Government – AYUSH
www.punenin.org	Indian Government – Bapu Bhavan
www.nccam.nih.gov/health/naturopathy	US Government – Clinical trials and research papers
www.arogyamandir.org	Arogya Mandir, Gorakhpur – Vimal Kumar Modi
www.en.wikipedia.org/wiki/Naturopathy	Wikipedia
www.inosurya.com	INO, New Delhi

4.5 साराँश

हजारों.हजारों वर्षो से भारत की भूमि पर देव और ऋषि.मुनियों ने एक ऐसी संस्कृति की स्थापना की जिसमें निवास करने वाले मनुष्यों का जीवन मूल रूप में प्रकृति से ही जुड़ा रहता। उनका जीवन जीने का प्राकृतिक तरीका बहुत.बहुत सरल रहा है। आगे चलकर जीवन जीने का प्राकृतिक तरीका 18वीं शताब्दी में प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति के रूप में विश्व पटल पर उभर कर सामने आया। जिसे अन्य विकसित चिकित्सा पद्धतियों की भाँति ही वैज्ञानिक तरीके से परिभाषित किया , सिद्धान्तों को लिपिबद्ध एवं उपचारों को नवीनरूप प्रदान किया आदि.आदि। अन्य विकसित चिकित्सा पद्धतियों के विकासकाल में उच्च व मध्यम वर्ग के लोगों की जीवन शैली में भारी विकृति आई और उनका जीवन अप्राकृतिक हो गया। जैसे.जैसे प्रकृति से उनकी दूरियाँ बढ़ी वैसे.वैसे ही रोग , समस्या, दु:ख एवं अशांति का वातावरण बनना शुरू हुआ। फिर भी उच्च व मध्यम वर्ग के लोग काम.काज में व्यस्त होने एवं साधन.सम्पन्न होने

के कारण अन्य चिकित्सा पद्धतियों को अपनाते ही रहे और प्राकृतिक जीवन शैली का महत्व सिर्फ और सिर्फ उच्च व मध्यम वर्ग के लोगों में ही कम होता गया। आज भी देहातों में निम्र वर्ग के लोग प्राकृतिक जीवन शैली से जीवन जी रहे है, क्योंकि उनके पास समय है, प्राकृतिक संसाधन है और देवऋषि.मुनियों की संस्कृति के प्रति सम्मान है।

देश.विदेश के उच्च व मध्यम वर्ग के लोगों में समझदार व्यक्तियों ने समय निकाला, प्राकृतिक संसाधानों का महत्व समझा एवं अन्य चिकित्सा पद्धतियों के अर्थहीन झंझाल को परख लिया ; वे पुन: प्रकृति की ओर लौट आये और प्रकृति से नाता जोड़ा लिया। शनै:.शनै: प्राकृतिक जीवन शैली को प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति का रूप देकर पूरे विश्व को पुन: बता दिया कि ‘अब लौट आओ प्रकृति की ओर। ’ अप्राकृतिक जीवन शैली के मार्ग में रेगिस्तान की मरिचिका है, आँख मिचौली और राई का पहाड़ है, वह वास्तविक मानव जीवन नहीं है। उन भटकें हुए लोगों को प्रकृति की ओर लौटने में समस्या न हो उसके लिए देश.विदेश के हजारों.हजारों नामी प्राकृतिक प्रेमियों , प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञों ने कमान कसकर प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति की श्रेष्ठता , महान्ता का अपने.अपने क्षेत्र में सामथ्र्य के अनुसार प्रचार.प्रसार करना शुरू कर दिया। वास्तव में प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति को जिन्होंने भी अपनाया उनका रोग जड़ से ही चला गया और उनमें ऐसा अगाध विश्वास जगा कि वे भी मानव कल्याण के लिए अपना महत्वपूर्ण योगदान प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति को अर्पित करने लगते है।

4.6 बोधात्मक प्रश्न

1. प्राकृतिक चिकित्सा का अर्थ बताइये।
2. प्राकृतिक चिकित्सा का इतिहास एवं विकाससमझाइये।
3. प्रमुख वेब.साईड्स के नाम लिखिए।
4. प्राकृतिक चिकित्सा बनाम अन्य चिकित्सा पद्धतियाँलिखिए।

4.7 संदर्भ ग्रंथों की सूची

संदर्भ ग्रंथों की सूची में सम्मिलित ग्रन्थों एवं उनकी सहायक सामग्री का उपयोग हमने इस ग्रन्थ के निर्माण में सहायक के रूप में किया है। हम इन संदर्भित ग्रन्थों, उनके लेखकों, प्रकाशकों एवं संस्थाओं के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

संदर्भ साहित्य	लेखक	संदर्भ साहित्य	लेखक
प्राकृतिक आयुर्विज्ञान	डॉ. राकेश जिन्दल	प्राकृतिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य	डॉ. महेन्द्र कुमार जाजपुरा
वृहद प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. ओ. पी. सक्सेना	व्यावहारिक प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. हेनरी लिंडलार
स्वस्थवृत विज्ञान	प्रो. रामहर्ष सिंह	प्राकृतिक स्वास्थ्य एवं योग	डॉ. बृजभूषण गोयल
प्राकृतिक स्वास्थ्य शास्त्र	आचार्य शेषांद्रि स्वामीनाथन	प्राण शक्ति उपचार; प्राचीन विज्ञान कला	चौ. कोक सुई
योग द्वारा स्वास्थ्य	डॉ. राकेश प्रकाश निगम	आपका आरोग्य आपके हाथ में	देवेन्द्र वोरा
आदिऊर्जा प्राण	अमशता भारती	प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग वैज्ञानिक प्रयोग	डॉ. नागेन्द्र कुमार नीरज

स्वास्थ्य के सोपान	नरूपमल सुराणा	जीवेम् शरद शतम्	पं. श्री राम शर्मा आचार्य वाङ्मय
सरल प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. लक्ष्मी नारायण शर्मा	बिना औषयिों के कायाकल्प	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
बिना दवा इलाज	डॉ. जय माला जशनानी	निरोग जीवन का राज मार्ग	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
बिना दवा परफेक्ट हेल्थ	डॉ. बलराम पटेल	दीर्घ जीवन की प्राप्ति	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
पातंजली योगसूत्र	स्वामी विवेकानंद	पंच तत्वों द्वारा सम्पर्ण रोगों का निवारण	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
घरेलू आयुर्वेदिक इलाज	वैद्य सुरेश चतुर्वेदी	रोगों की सरल चिकित्सा	विट्ठलदास मोदी
स्वास्थ्य रक्षा के सरल उपाय	डॉ. ओम प्रकाश आनन्द	जीने की कला	विट्ठलदास मोदी
प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग	श्रीमत्ती राज कुमारी गुप्ता	स्वास्थ्य कैसे पाया	विट्ठलदास मोदी
रोगों की अचुक चिकित्सा	जानकी शरण शर्मा	उपवास के लाभ	विट्ठलदास मोदी
पंचतत्व के रोगों की चिकित्सा	डॉ. शरण प्रसाद	आहार चिकित्सा	अर्नाल्ड एहरट (ले.) विट्ठलदास मोदी (अनु.)
ब्रह्मचर्य ही जीवन हैं	स्वामी श्री शिवानन्द जी	जल चिकित्सा	सेबस्टीयन नीप (ले.) विट्ठलदास मोदी (अनु.)
आदर्श आहार	डॉ. सतीश चन्द्र दास	प्राकृतिक जीवन की ओर	एडोल्प जुस्ट (ले.) विट्ठलदास मोदी (अनु.)
100 वर्ष निरोगी रहिए	माणेक लाल म. पटेल	हमारा स्वास्थ्य	शाम अष्टेकर तथा अनुवादक कालिंदी देशपांडे
रोगों की अचूक चिकित्सा	जानकी शरण वर्मा	निरोग होने का सच्चा उपाय	आर.के.ट्राल(ले.) वासुदेवशरण अग्रवाल(अ.)
प्रकृति से मैत्री	प्रकाशन विभाग	प्राकृतिक चिकित्सा. महिला के लिए	ए. पी. दीवान
आरोग्य की कुंजी	राष्ट्रपिता महात्मा गाी	नव्य जन स्वास्थ्य तथा स्वास्थ्य विज्ञान	डॉ. मुकुन्द स्वरूप वर्मा
मैं तन्दूरूस्त हूँ या बीमार?	लूई कूने	वैज्ञानिक प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. हीरालाल
आकृति से रोग की पहचान	लूई कूने	अभीनव प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. कुलरंजन मुखर्जी
आरोग्य प्रकाश	वैद्यराज पं. रामनारायण शर्मा	दैनोंदिन रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. कुलरंजन मुखर्जी
मौलिक चिकित्सा कौन सी?	डॉ. चंचलमल चोरडिया	पुराने रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. कुलरंजन मुखर्जी
100 वर्ष कैसे जीयें	आचार्य श्याम सुन्दर सुमन	साधारण रोगों की यौगिक एवं प्राकृतिक चिकित्सा	के.यो.प्रा.चि.अ. परिषद
नीरोग होने का सच्चा उपाय	आर.टी. ट्राल	कुदरती जीवन, आरोग्य की कुंजी	राष्ट्रपिता महात्मा गाी
स्वस्थ जीवन	प्रताप सिह सुराणा	स्वास्थ्य ही सही दिशा प्राकृतिक	डॉ. ैरेन, डॉ. . रा. गाला,

		चिकित्सा	डॉ. संजय गाला
तंदुरूस्त कैसे रहें	श्री बर्नर मैकफेडन	स्वस्थ रहने के प्राकृतिक ढ़ग क्यों न अपनाए जायें	डॉ. इन्द्रजीत कौर, भक्त पूर्ण सिह
जीवनी शक्ति कैसे जगायें	डॉ. चन्द्र दीप सिंह	स्वयं स्वस्थ रहने की कला	डॉ. ेिरन, डॉ. . रा. गाला, डॉ. संजय
प्रेक्टिकल नेचर क्योर	डॉ. के. लक्ष्मण शर्मा	Diet and diet reform	Sebastian kneipp
Return to Nature	एडोल्प जुस्ट	Food combining made easy	Dr. Herbert m. Shelton
The true healing art	R. T. Trall	The new science of healing, The doctrine of unity of diseases	Louis Kuhne and Benedict Lust
Mucusless diet healing system	Arnold ehret	A complete handbook of nature Cure – edition 4	Dr. H. K. Bakhru
Fasting can save your life	Dr. Herbert m. Shelton	My water.cure	Sebastian kneipp

इकाई 5

षष्टम् ईशतत्व एवं उसकी चिकित्सा. विश्वास एवं प्रार्थना चिकित्सा

इकाई की रूपरेखा

5.1 उद्देश्य

5.2 प्रस्तावना

5.3 प्रकृति के गुण

5.4 विश्वास चिकित्सा (साधन और कर्म में विश्वास)

5.5 प्रार्थना चिकित्सा (ईश.प्रार्थना)

5.6 सारांश

5.7 बोधात्मक प्रश्न

5.8 संदर्भ ग्रंथ

5.1 उद्देश्य

- ईशतत्व क्या और कितना प्रभावशाली है
- प्राकृतिक चिकित्सा को ईश्वरीय चिकित्सा कैसे कह सकते है

- विश्वास चिकित्सा (साधन और कर्म में विश्वास) एवं प्रार्थना चिकित्सा (ईश.प्रार्थना) मानव जीवन का उद्धार कैसे कर सकती है
- प्रार्थना का श्रेष्ठ समय, स्थान व विधि क्या है।

उपरोक्त समस्त जिज्ञासाओं का उत्तर पाना ही इस अध्याय का उद्देश्य है।

5.2 प्रस्तावना

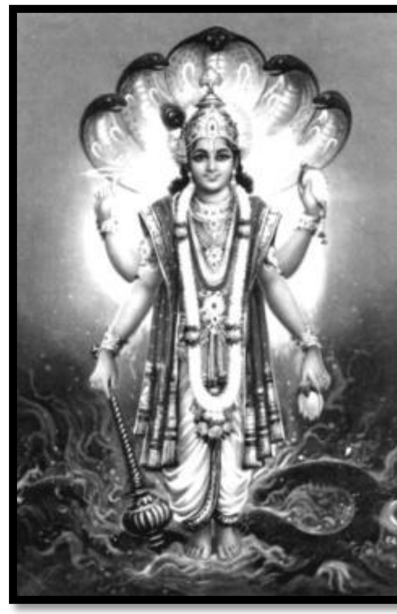

षष्टम् ईशतत्व को अनेक नामों से भी जाना जाता है जैसे. महतत्व, आत्मतत्व, चेतनतत्व, जागृततत्व, अमृत्तत्व एवं रामनाम। इसकी विश्वास चिकित्सा (साधन और कर्म में विश्वास) एवं प्रार्थना चिकित्सा (ईश.प्रार्थना) मानव जीवन का उद्धार करने वाली सिद्ध है।

सर्व शक्तिमान परमात्मा से पंचमहाभूत. आकाश, वायु, अग्नि, जल और मिट्टी के क्रम में आर्विभूत हुए। केवल इसी क्रम से उनका प्रयोग करके मनुष्य अपने जीवन में स्वास्थ्य , आनन्द और सुख.शांति का भागी हो सकता है। वो इस प्रकार कि ईश्वर (रामनाम) के बिना तो हमारी कोई सत्ता ही नहीं है , इस षष्टम् ईशतत्व का स्मरण हमें अनवरत होते रहना चाहिए। यह हमारे जीवन, सुख एवं समृद्धि के लिए सर्वाधिक आवश्यक तत्व है। तत्पश्चात् हमारा सम्पर्क आकाश तत्व में अटूट रहना परमावश्यक है। उसके बाद वायु तत्व; वायु से कम हमें अग्नि तत्व की आवश्यकता होती है। अग्नि से कम जल तत्व की; और सबसे कम जिस तत्व की आवश्यकता हमारे जीवन.यापन के लिए होनी चाहिए, वह है मिट्टी प्रदत्त भोजन , कपड़ा और मकान। इस प्रकार हम ज़रा सोचकर विचार करे तो पायेंगे कि हमारी जीवन.रक्षा के लिए रामनाम सबसे अधिक आवश्यक है, जिसे तो हम वस्तुत: एक प्रकार से भूल ही गये या उसकी आवश्यकता ही नहीं समझते है। हमें पूरे आत्मविश्वास के साथ रामनाम लेना चाहिए। जबकि हमारे जीवन में इसका ठीक उल्टा ही हो रहा है और हम वास्तव में विपरीत दिशा में जीवन के मार्ग पर जा रहे है। जहाँ हमें मिट्टी तत्व की सभी तत्वों से सबसे कम आवश्यकता है वहीं हम इसके रूप. भोजन , कपड़ा और मकान को ज्यादा से ज्यादा महत्व दे रहे है और सिर्फ और सिर्फ इनको पाने के लिए ही जी रहे है। जिसके परिणामत: हम दिनोंदिन स्वास्थ्य, आयु, शांति और नैसर्गिक सौन्दर्य को खो रहे है।

पंचतत्वों के सूक्ष्म (आकाश , वायु, अग्नि) और स्थूल (जल व मिट्टी) दो रूप है। हमारे स्थूल जगत् व स्थूल शरीरों की रचना स्थूलतत्वों से हुई तथा सूक्ष्म जगत् व सूक्ष्म शरीरों की रचना सूक्ष्म तत्वों से हुई। हमारा सूक्ष्म शरीर चूँकि अदृश्य सूक्ष्मतत्वों से निर्मित है। इसलिए वे अधिक शक्तिशाली होकर हमारे स्थूल शरीर का संचालन करते है। हमारी जीवनी शक्ति और प्राण शक्ति सूक्ष्म शरीर के अधीन रहकर अपना कार्य सम्पादित करती है। अत: ये पाँचों तत्व हमारे लिए परम आवश्यक है।

आदीकाल से ही इन पंचतत्वों को शुद्ध, स्वच्छ एवं जीवन्त बनाये रखने का कार्य देव व ऋषि.मुनियों ने किया, तो उस सभ्यता.संस्कृति के लोगों ने उसका फल भी पाया। लेकिन आज के सभ्य बुद्धिजीवियों ने आधुनिक युग के चहुमुँखी विकास की प्रतिस्पर्धा में तो उस परम्परा को ही तोड़ दिया। जिन पंचतत्वों पर हमारा जीवन निर्भर है, उसे ही प्रदूषित एवं नष्ट करने का कार्य किया जा रहा है। जहाँ यज्ञों की आहुतियाँ देकर प्राण बचाने की परम्परा थी, वहाँ बमों की आहुतियाँ देकर जीवन हरने का काम हो रहा है। क्या यहीं विकास है? वैदिक युग और आधुनिक युग में तो आकाश.पाताल जितना अन्तर हो गया। यह बात वास्तव में सही है कि 'जैसा बोयेंगे, वैसा ही जीवन में पायेंगे।'

प्राकृतिक प्रेमी श्री घासीराम जाजपुरा कहते थे कि ''इस आधुनिक युग में सभी अपनी मर्जी के मालिक है, कौन किसे समझाये और कोई भी व्यक्ति दूसरों की बात क्यों मानें ? बेचारा न चाहने वाला भी इस अँधी.अँधाधुंध दौड़ में अनाजों में पडऩे वाले 'घुन' की तरह पिसता जा रहा है। उसे तो अकेले ही अपने मानव जीवन का उद्धार करना होगा। '' आगे कहते है कि ''ऐकला चालो रे .... , ऐकला चालो। आपने जीवन रो खुद ही उद्धार करो। ऐकला चालो रे ......, ऐकला.ऐकला (अकेला.अकेला) चालो।''

''मन में राम, तन में राम, साँसों में राम, धडक़न में राम, धरती के कण.कण में ..... धरती के कण.कण में बसा है राम, सब में रमता है राम ..... सब का राम ..... सब का राम्, रामो.कृष्णम् ..... रामो.कृष्णम्।''

अत: हमें पंचमहाभूत की प्राकृतिक चिकित्सा के साधनों के साथ 'षष्टम् ईशतत्व' को भी अपनाना होगा। इसके बिना प्राकृतिक चिकित्सा व मानव जीवन अधूरा है। वास्तव में रामनाम (सब में रमण करने वाला) के बिना पंचमहाभूत की कोई सत्ता एवं गति नहीं होती।

5.3 प्रकृति के गुण

क्रम संख्या तत्व	प्रकट गुण	अप्रकट (गुप्त) गुण	उपाधी
शून्य (षष्टम्) तत्व	ईशतत्व सर्वगुण सम्पन्न	.	परम पिता
प्रथम तत्व	आकाश तत्व शब्द	स्पर्श + रूप + रस + गन्ध	देव
द्वितीय तत्व	वायु तत्व शब्द + स्पर्श	रूप + रस + गन्ध	प्राण
तृतीय तत्व	अग्नि तत्व शब्द + स्पर्श + रूप	रस + गन्ध	नेत्र
चतुर्थ तत्व	जल तत्व शब्द + स्पर्श + रूप + रस	गन्ध	जीवन
पंचम् तत्व	मिट्टी तत्व शब्द + स्पर्श + रूप + रस + गन्ध	.	माता

5.4 विश्वास चिकित्सा (साधन और कर्म में विश्वास)

एक प्राकृतिक चिकित्सक जानता है कि प्रत्येक प्राणी के भीतर आरोग्य प्रदान करने वाली एक शक्ति होती है, जो उसे स्वस्थ तथा निरोगी रखती है , आवश्यकता पडऩे पर शरीर को स्वच्छ और निरोग करने के लिए तीव्र रोगों की उत्पति करती है तथा वहीं फिर से शरीर को उन रोगों से मुक्ति भी देती है। उसी शक्ति को कोई जीवन.शक्ति, कोई परमात्मा, कोई अंतरात्मा और कोई राम.श्याम.हरी.देवी आदि कह कर

पुकारता है। इस तरह प्राकृतिक चिकित्सा को ईश्वरीय चिकित्सा भी कह सकते है। यह तत्व प्राकृतिक चिकित्सा का मूलाधार है।

ईश्वर ने हर वस्तु व हरेक जीव को यथास्थान, साधन व कर्म सौप दिया है, उसे फल की चिंता किये बिना साधनों का उपयोग और कर्म पूरे विश्वास व निष्ठा के साथ करते रहना चाहिए। ठीक ऐसा ही प्राकृतिक चिकित्सा में हमकों साधनों (आकाश, वायु, अग्नि, जल और मिट्टी) का विधिवत् उपयोग करते हुए ईश्वर के प्रति आत्मसमर्पण की भावना (तेरा तुझको अर्पण , मेरा कुछ नाहीं) रखनी चाहिए। ऐसा करने से सब कुछ ठीक हो जाता है। यही प्राकृतिक चिकित्सा की जान है।

इस सम्बन्ध में महात्मा गाँधी जी ने भी कहा कि मनुष्य का ईश्वर से अटूट सम्बन्ध है। इसलिए मनुष्य जितने अंशों में अपने आप को पहचानकर सुधारेगा, उतने ही अंशों में वह पापों, समस्याओं और रोगों से मुक्त हो जायेगा और अंततः मुक्त रहेगा। इस तरह ईश्वर के नाम में लीन हो जाना रोगों को दूर करने का एक अमोघ अस्त्र है। यह प्रकृति प्रभु का प्राँगण है। इसलिए प्रकृति के नियमों को जानना प्रभु को कुछ.कुछ पहचानना है। यह शरीर तो प्रकृति का बनाया हुआ पुतला है। इसलिए प्रकृति के नियमों को जानना हमारा कर्तव्य है। तभी शरीर की शुद्धि, मन की पवित्रता और आत्मा को शांति दिला पायेंगे।

5.5 प्रार्थना चिकित्सा (ईश.प्रार्थना)

महात्मा गाँधी जी का कथन है कि श्रद्धा से मनुष्य का जो रोग मुक्त हो जाता है , उसका रहस्य यही है कि ईश्वर, जिसकी हम भक्ति करते है स्वयं सत्य , स्वास्थ्य और प्रेम है और वह तो वैद्य भी है , इसलिए रामनाम का आश्रय लेने से हर प्रकार के रोग.शोक के दूर होने में देर नहीं लगती।

जीवन में दुःख.सुख तो धूप.छाँव की तरह आते.जाते रहते है। मन में शांति बनाये रखें। शांति के लिए सर्वोत्तम मार्ग 'रामनाम' जप, आत्मचिन्तन और ईश्वर की प्रार्थना है। प्रार्थना द्वारा परमात्मा के चरण कमलों में आश्रय लेने से रोग, शोक, दुःख, समस्या एवं विपत्ति सबसे छुटकारा मिल जाता है।

उस समय हमें बोध होता है कि जो कुछ बुरा भला हो रहा है, सब ईश्वर की ईच्छा से हो रहा है और हमारी भलाई के लिए ही हो रहा है। ईश्वर की मर्जी के बिना एक पत्ता भी नहीं हिल सकता। केवल इस प्रकार की अनुभूति से ही पूरी शांति प्राप्त हो जाती है। अतः जब कभी किसी प्रकार की विपत्ति का सामना हो तो मनुष्य को भगवान की प्रार्थना करते हुए उक्त विचारों को मन में लाकर शांति प्राप्त करनी चाहिए।

सभी धर्म एवं सम्प्रदाय कहते है कि अपने आप को जितना जानकर स्वयं को सुधार लिया उतना आपने परमात्मा को जान लिया। यह जानने की विधि सिर्फ 'प्रार्थना या नमाज या प्रेयर या भजन या स्वाध्याय आदि' है। प्रार्थना से सांसारिक समस्त चिंताओं और क्लेशों का नाश हो जाता है। मनुष्य जिनकी कल्पना तक नहीं कर सकता, ऐसी चीजें प्रार्थना द्वारा प्राप्त हो जाती है। इससे हमारी समझ में यह बात आ जाती है कि एक महाशक्ति है जो सर्वत्र उपस्थित रह कर सब कुछ करती रहती है।

उपनिषदों में इसकी व्याख्या आयी कि 'एक ही चेतन तत्व इस सारे ब्रह्माण्ड को चला रहा है।' प्रार्थना द्वारा जब उस महाशक्ति का ज्ञान होता है तो उसके चरणों में लिपट जाने की प्रबल इच्छा का होना स्वाभाविक ही है। यही प्रार्थना की पराकाष्ठा है।

महर्षि श्री अरविन्द घोष ने लिखा है कि 'मनुष्य के अन्दर भगवान है। यह एक महान् सत्य है। प्रार्थना और तत्पश्चात् ईश्वरानुग्रह से ही मनुष्य इस सत्य का साक्षात्कार कर सकता है।'

प्रार्थना से मन का कलुष धुल जाता है और आत्मा विशुद्ध हो जाती है। आत्मा विशुद्ध होने पर ही वह अपना सम्बन्ध परमात्मा के साथ स्थापित कर सकता है, जिससे उसे स्थायी सुख.शांति की प्राप्ति होती है।

सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्मयो वेद निहिंत गुहायां परमे व्योमन्।

सोश्नुते सर्वान् कामान्।। .उपनिषद्

अर्थात् ब्रह्म सत्य और ज्ञान अनन्त है। वह हृदयाकाश की गुफा में रहता है। जो उसे जान लेता है , उसकी कामनाएँ पूर्ण हो जाती है।

जिस प्रकार धूल जमें शीशे में चेहरा साफ नहीं दिखता , उसी प्रकार मनुष्य के कलुषित हृदय में परमात्मा की झलक की आशा करना दुराशा मात्र है। गाँधी जी कहते थे कि'मनुष्य को रामनाम रूपी झाड़ू से अपने हृदय को साफ.स्वच्छ कर देना चाहिए। ऐसे स्वच्छ हृदय की सच्ची प्रार्थना करने पर कठिनाई से मुकाबला करने का बल मिलने के साथ ही सुख की प्राप्ति भी होती है।'

प्रार्थना से मनुष्य का हृदय स्वच्छ होकर उसका स्वभाव बदल जाता है, जिससे उसे संतोष और शांति की उपलब्धि होती है।

आचार्य विनाबा भावे 'ईश.प्रार्थना' को भूख से भी बढक़र मानते थे। भूख से बढक़र हमारे पास उपमा के लिए शब्द नहीं है, इसलिए भूख के साथ प्रार्थना की तुलना करते है।

लेकिन दरअसल प्रार्थना ऐसी चीज है, जिसकी उपयोगिता का वर्णन करने के लिए हमारे पास शब्द नहीं है। परमेश्वर का भज़न , उसका नाम स्मरण , व्यक्तिगत तौर पर और सामूहिक तौर पर मिलकर करना चाहिए। अकेले एकांत में भी कर सकते है. मनुष्य जीवन के लिए , उन्नति के लिए, सामाजिक उन्नति के लिए, चित्त शुद्धि के लिए, आत्मनिष्ठा की प्राप्ति के लिए और शौक.मोह आदि प्रसंगों में सावधान रहने के लिए बहुत ही उपयोगी है।

प्रार्थना का श्रेष्ठ समय, स्थान व विधि. ईश.प्रार्थना का श्रेष्ठ समय प्रात:काल शैय्या छोड़ते तथा सायंकाल शैय्या पर जाने से पहले।

प्रात:कालिन ईश.प्रार्थना कैसे करे. नए दिन का ईश्वर को प्रणाम करते हुए आपके शेष बकाया कार्य और नए कार्य अच्छी तरह पूर्ण हो, जिससे किसी भी प्राणी को मन, वचन एवं कर्म से हानि या कष्ट न हो। इस प्रकार के विचारों की धारणा बनानी चाहिए।

सांयकालिन ईश.प्रार्थना कैसे करे. पूरे दिन के कार्यो का मन ही मन अवलोकन करके ईश्वर का उसके लिए धन्यवाद दें। दिनभर में आपसे किसी भी प्राणी को आपके मन , वचन एवं कर्म से जाने.अनजाने में हानि या कष्ट हुआ हो तो उसके लिए ईश्वर से क्षमा.याचना करें और मन ही मन प्रतिज्ञा करे कि भविष्य में ऐसा न हो पायें।

ऐसी हृदय से की गई ईश.प्रार्थना वास्तव में एक विचित्र प्रकाश एवं अलौकिक दैवीय.शक्ति का हृदय में संचार होता है। जिससे जीवन.यात्रा सुखद् एवं सफल बन जाती है।

स्वामी विवेकानन्द जी ने कहा कि प्रार्थना आत्मिक उन्नति के लिए और 'सर्वे भवन्तु सुखिन: ' सबके कल्याण के लिए करनी चाहिए। सफल प्रार्थना के लिए आवश्यक है कि प्रार्थना पूरे विश्वास , श्रद्धा एवं शांति से करनी चाहिए और सबसे महत्वपूर्ण बात है प्रार्थना में 'ध्यान' लगाने की। ध्यान को आत्मा का प्राण कहा जाता है। ईश्वर ने हमारे मस्तिष्क से इन्द्रियों को जोड़ रखा है। मनुष्य को ये इन्द्रियाँ बहुर्मुख होकर बाहरी संसार का ही बोध कराती रहती है। ऐसा तब तक होता रहेगा जब तक हम ध्यान मग्न न हो जाये। ध्यान मग्न होते ही हमारी इन्द्रियाँ अन्र्तमुख हो जाती है। ध्यान के लिए मौन और यौगिक.क्रियाओं का अभ्यास शनै:.शनै: करते रहने से मन की चंचलता या बंदर.प्रवृति दूर होकर चित्त 'ध्यान' में प्रवृत हो जाता है।

ईश.प्रार्थना को सफल बनाने के लिए निम्न बातें अतिआवश्यक है.

1.	प्रभु पे्रम	6.	ध्यान
2.	प्रभु गुणगान	7.	विशुद्ध हृदय
3.	हरिनाम या रामनाम चिन्तन	8.	शांत वातावरण
4.	आत्मसमर्पण	9.	मौनावलम्बन
5.	अपनापन	10.	अनाशक्ति

ईश.प्रार्थना द्वारा रोग निवारण

प्रार्थना तो अमोघ आध्यात्मिक अस्त्र है, वह मनुष्य का भाग्य और परिस्थितियाँ बदल कर भारी सफलता एवं अनुकूल परिस्थितियाँ पैदा कर सकता है, फिर रोग.शोक किस लेखे में है। जब स्वयं रोगी या प्रभावित व्यक्ति या उसके शुभ.चिंतक रोग निवृति या सफलता के लिए ईश.प्रार्थना करते है , तो शरीर की प्रकृतिजन्य सूक्ष्म अणु जागृत होकर रोगी या प्रभावित अभिष्ट व्यक्ति के मस्तिष्क की कोशों में प्रवेश करके भारी बदलाव पैदा कर सकते है। प्रार्थनाओं से इस धरा पर अनेकों बार मौत के चंगुल से बचाने में सफलता मिली। काफी प्रयासों के बाद शरीर और मन के शुद्धिकरण होने पर उत्तम स्वास्थ्य एवं पवित्रता

उत्पन्न होकर आत्मा को भी शुद्ध , पवित्र और स्वस्थ बनाती है। तभी मानव जीवन की सफलता का लक्ष्य सार्थक हो पाता है और 'आत्मा का परमात्मा से मिलन हो जाता है।'

हमारे देव व ऋषियों.मुनियों ने प्रार्थना और उक्त लक्ष्य की सिद्धी के लिए हजारों.हजारों वर्षो पूर्व ही ऐसे प्राकृतिक चिकित्सालय खोल दिये थे, जो 'मन्दिर और आश्रम' के नाम से जाने जाते है।

5.6 सारांश

मेरा व्यक्तिगत अनुभव कहता है कि ईश्वर द्वारा प्रदत्त साधन और कर्म में विश्वास करते हुए अपना ध्यान 'ईश.प्रार्थना' में लगाने से स्वयं के ही नहीं अपितु अभिष्ट ध्यानाग्रस्त प्राणी का भी शारीरिक , मानसिक, नैतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक उद्धार या उन्नति पाने की , यह रामबाण दवा व सरल.सटीक ईलाज है। यह दवा अज़र.अमर है , हमें सिर्फ ओर सिर्फ इसी का अनुसरण करना चाहिए। क्योंकि इस संसार में आज भी करोड़ों मनुष्य उस नकली दवा को पाने की होड़ में डॉक्टरों और वैद्यों के दिन.रात चक्कर काटते ही रहते है। फिर भी उनको अंतत: न सफलता मिलती और न ही उद्धार का मार्ग। क्यों न हम समय पर ही लम्बे जीवन के मार्ग में आने वाली सारी कठिनाईयों को जीत लेवें। ऐसा पाने के लिए प्राकृतिक चिकित्सा का अध्ययन कर जाने, समझे, आजमायें और दूसरों के कल्याणार्थ के सफल भागी बनें।

5.7 बोधात्मक प्रश्न

1. षष्टम् ईशतत्व को ओर किन.किन नामों से जाना जाता है?
2. पंचतत्वों का आर्विभूत किस क्रम में हुआ?
3. 'रामनाम के बिना तो हमारी कोई सत्ता ही नहीं है।' स्पष्ट कीजिए।
4. हमारे जीवन में क्या ठीक उल्टा ही हो रहा है?
5. 'रामनाम' का क्या अर्थ है?
6. 'इस अँधी अंधाधुंध दौड़ में अनाजों में पडने वाले घुन की तरह पीसता जा रहा है। ' यहाँ घुन किसे कहा गया है?
7. प्राकृतिक चिकित्सा को ईश्वरीय चिकित्सा कैसे कह सकते है?
8. विश्वास चिकित्सा को संक्षिप्त में समझाइयें।
9. प्रार्थना चिकित्सा का विस्तार से वर्णन करो।
10. आचार्य विनाबा भावे ने ईश.प्रार्थना को किस तरह की भूख माना है?
11. प्रार्थना का श्रेष्ठ समय, स्थान व विधि बताइये।
12. ईश.प्रार्थना को सफल बनाने के लिए कौन.सी बातें अतिआवश्यक है?
13. ईश.प्रार्थना द्वारा रोग निवारण कैसे होता है? समझाएँ।
14. 'मन्दिर और आश्रम' क्या है?

15. 'आत्मा का परमात्मा से मिलन हो जाता है।' कैसे सम्भव है?

16. स्वामी विवेकानन्द के प्रार्थना पर क्या विचार रहें? बताइये।

17. प्राकृतिक चिकित्सा की जान क्या है?

5.8 संदर्भ ग्रंथों की सूची

संदर्भ ग्रंथों की सूची में सम्मिलित ग्रन्थों एवं उनकी सहायक सामग्री का उपयोग हमने इस ग्रन्थ के निर्माण में सहायक के रूप में किया है। हम इन संदर्भित ग्रन्थों, उनके लेखकों, प्रकाशकों एवं संस्थाओं के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

संदर्भ साहित्य	**लेखक**	**संदर्भ साहित्य**	**लेखक**
प्राकृतिक आयुर्विज्ञान	डॉ. राकेश जिन्दल	प्राकृतिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य	डॉ. महेन्द्र कुमार जाजपुरा
वृहद प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. ओ. पी. सक्सेना	प्राण शक्ति उपचार; प्राचीन विज्ञान कला	चौ. काक सुई
स्वस्थवृत विज्ञान	प्रो. रामहर्ष सिंह	जीवनी शक्ति कैसे जगायें	डॉ. चन्द्र दीप सिंह
प्राकृतिक स्वास्थ्य शास्त्र	आचार्य शेषांद्रि स्वामीनाथन	आपका आरोग्य आपके हाथ में	देवेन्द्र वोरा
आदिऊर्जा प्राण	अमश्ता भारती	प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग वैज्ञानिक प्रयोग	डॉ. नागेन्द्र कुमार नीरज
स्वास्थ्य के सोपान	नरूपमल सुराणा	जीवेम् शरद शतम्	पं. श्री राम शर्मा आचार्य वाड्मय
सरल प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. लक्ष्मी नारायण शर्मा	बिना औषयियों के कायाकल्प	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
पातंजली योगसूत्र	स्वामी विवेकानंद	निरोग जीवन का राज मार्ग	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग	श्रीमत्ती राज कुमारी गुप्ता	दीर्घ जीवन की प्राप्ति	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
प्राकृतिक जीवन की ओर	श्री एडोल्फ जस्ट	पंच तत्वों द्वारा सम्पूर्ण रोगों का निवारण	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
100 वर्ष निरोगी रहिए	माणेक लाल म. पटेल	रोगों की सरल चिकित्सा	विट्ठलदास मोदी
रोगों की अचूक चिकित्सा	जानकी शरण वर्मा	जीने की कला	विट्ठलदास मोदी

प्रकृति से मैत्री	प्रकाशन विभाग	आरोग्य प्रकाश	वैद्यराज पं. रामनारायण शर्मा
आरोग्य की कुंजी	राष्ट्रपिता महात्मा गाी	मौलिक चिकित्सा कौन सी?	डॉ. चंचलमल चोरडिया
कुदरती चिकित्सा	राष्ट्रपिता महात्मा गाी	100 वर्ष कैसे जीयें	आचार्य श्याम सुन्दर सुमन
		अखिल भारतीय प्राकृतिक जीवन संघ द्वारा प्रकाशित एन.डी. कोर्स के लेख (भूज, गुजरात)	

****

इकाई 6

आकाश (अंतरिक्ष) तत्व एवं उसकी चिकित्सा. उपवास, विश्राम, गहरी निद्रा एवं मनोचिकित्सा

इकाई की रूपरेखा

6.1 उद्देश्य

6.2 प्रस्तावना

6.3 उपवास का शाब्दिक अर्थ एवं परिभाषाएँ

6.4 उपवास के प्रकार

6.5 उपवास की उपयोगिता

6.6 उपवास और भुखमरी में अन्तर

6.7 उपवास के लाभ

6.8 शरीर पर उपवास का प्रभाव

6.9 उपवास कब और कब नहीं

6.10 उपवास कालीन विभिन्न लक्षण , उपद्रव और संकट

6.11. उपवास की सर्व सुलभ विधि

उपवास से पूर्व की तैयार , उपवास के समय की तैयारी , उपवास के समापन की तैयारी या उपवास कैसे तोडऩा चाहिए, उपवास की समाप्ति पर आहार का चुनाव , सामान्य आहार.क्रम, उपवास और उपवास के बाद स्वास्थ्य निर्माण हेतु आहार

6.12. उपवास के दौरान सावधानियाँ

1. उपवास काल में रखी जाने वाली सावधानियाँ

2. उपवास के बाद रखी जाने वाली सावधानियाँ

6.13. पेट को आराम देने के उपवास के कई तरीकें

1. आंशिक उपवास, 2. नाश्ते से परहेज, 3.चौबीस घंटे का उपवास

6.14. सारांश

6.15. बोधात्मक प्रश्न

6.16. संदर्भ ग्रंथ

6.1 उद्देश्य

- उपवास का शाब्दिक अर्थ एवं परिभाषाएँ जानना
- उपवास को किस आधार पर कितने प्रकारों में बाँटा गया है
- उपवास की उपयोगिता को विभिन्न उदाहरणों द्वारा समझना। उपवास के दौरान किन.किन बातों पर ध्यान देना अति आवश्यक है
- उपवास और भुखमरी में मूल अन्तर
- उपवास के लाभ
- रोगग्रस्त स्थिति और उपवास के दौरान शरीर.विज्ञान के भीतर ठीक.ठीक क्या और कैसे घटित होता है को जानना
- उपवास कब और कब नहीं करना चाहिए
- उपवास कालीन विभिन्न लक्षण, उपद्रव और संकट को पहचानना और उसका समाधान
- उपवास करने के लिए सर्व सुलभ विधि से जान सकेंगे कि उपवास से पूर्व की तैयार, उपवास के समय की तैयारी , उपवास के समापन की तैयारी या उपवास कैसे तोडऩा चाहिए , उपवास की समाप्ति पर आहार का चुनाव, फिर सामान्य आहार.क्रम
- उपवास के दौरान सावधानियाँ
- पेट को आराम देने के उपवास के अन्य तरीकें जैसे. 1. आंशिक उपवास, 2. नाश्ते से परहेज, 3.चौबीस घंटे का उपवास के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।

उपरोक्त समस्त जिज्ञासाओं का उत्तर पाना ही इस अध्याय का उद्देश्य है।

6.2 प्रस्तावना

सर्वप्रथम ईशतत्व से प्रकट होने वाला आकाश तत्व प्रकृति का प्रमुख तत्व है। शरीर में खाली स्थान या अवयवों में रिक्त स्थान होना आकाश तत्व का द्योतक है। आसमान के नीचे खुले वातावरण में रहने, सोने एवं काम करने पर आकाश तत्व की शरीर में वृद्वि होकर शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक शक्ति का संचार होता है। जब शरीर रोग ग्रस्त हो जायें तो सर्वप्रथम शरीर को इसी आकाश तत्व की सर्वाधिक पूर्ति करानी चाहिए। इस हेतु उपवास सबसे प्रमुख उपचार है , जिसके साथ.साथ सहायक उपचार विश्राम , गहरी निद्रा एवं सकारात्मक मनोदशा भी अपनायी जाती है। ये उपचार बहुत ही सरल , सहज, सस्ता एवं अचूक है। हजारों रूपयों की जहरीली दवायें खाने और समय व शरीर बर्बाद करने से अच्छा है कि उपवास, विश्राम, गहरी निद्रा एवं मनोचिकित्सा इन सभी का एक साथ रोगी स्वयं ही उपयोग करके स्वास्थ्य एवं दीघार्यु प्राप्त कर सकता है। इसी कारण प्राकृतिक चिकित्सा में इनको ब्रह्मास्त्र की संज्ञा दी गई

है। नवीन शोधों से भी स्पष्ट हो चुका है कि यह स्वयं में ही एक सम्पूर्ण चिकित्सा का काम करती है। उपवास जैसी जीवन जीने की कला का प्रारम्भ प्रकृति में जीवों की उत्पति के साथ ही उदय हो गया। हमारे ऋषि.मुनियों ने उपवास को धार्मिक महत्व देते हुए रीति.रिवाजों में विशेष स्थान दिया। नवरात्री , रामनवमी, बीज, तीज, एकादशी, पूर्णिमा, अनेक जयन्तियाँ, कार्तिक स्नान, साप्ताहिक वारों का व्रत एवं रोजे आदि छोटे.बड़े उपवासों को बड़े ही श्रद्धा व विश्वास के साथ किया जाता है। दुनियाँ के सभी धर्मो में उपवास को विशेषरूप से अपनाया जाता है। महात्मा गाँधी जी ने तो अहिंसात्मक आन्दोलनों में उपवास को ही सहारा लिया था।

6.3 उपवास का शाब्दिक अर्थ एवं परिभाषाएँ

यह रोगों के उपचार की प्राकृतिक एवं वैज्ञानिक पद्धति है जिसके अन्तर्गत रोगी आवश्यकता के अनुसार कम या अधिक समय के लिए सिर्फ पानी के अतिरिक्त अन्य किसी भी प्रकार का ठोस, तरल एवं गैस की अवस्था का आहार ग्रहण नहीं करता है। उपवास यानी ‘जीवन जीने की एक कला।’ जीवन जीने की यह कला सीखकर स्वस्थ और आनन्दमय रह सकते है।

विजातीय द्रव्यों को नियंत्रित करने का सर्वोत्तम उपाय उपवास है।

उपवास को जीवनी.शक्ति का प्राण कहा गया है। औषधियों के उपयोग के बदले उपवास श्रेष्ठ है।

सभी प्रकार के भोजनों को कुछ निश्चित काल के लिए त्याग करना तथा पाचन.तंत्र को विश्राम देने वाली कला उपवास कहलाती है।

अंग्रेजी का ‘फास्टिंग’ शब्द मूल ‘फास्टेन’ से बना है, जिसका अर्थ ‘दृढ़ या निश्चित’ से है।

उपवास एक ऐसी साधारण प्रक्रिया है , जिसको पूरी विधिवत् श्रद्धा व विश्वास के साथ अपनाने से शारीरिक, मानसिक, नैतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त होती है। जिसमें कोई संदेह व अतिशयोक्ति नहीं है।

6.4 उपवास के प्रकार

उपवास अवधि के आधार पर दीर्घ व संक्षिप्त दो प्रकार के होते है। आवश्यकता से थोड़ा कम खा लेना स्वास्थ्य, शक्ति, सौन्दर्य और वृद्धि के लिए अधिक उपयोगी है। अधिक खाना शरीर में विष का भार बढ़ाना है। फिर उसे दूर करने हेतु उपवास करना ही एकमात्र उपाय है। सात दिन से अधिक चलने वाला उपवास दीर्घ या सम्पूर्ण उपवास होता है। उससे कम दिनों के लिए किया गया उपवास संक्षिप्त उपवास माना जाता है। मुख्य बात यह है कि उपवास की अवधि का निर्णय प्रकृति द्वारा ही होना चाहिए। जिस प्रकार व्यक्ति में जितनी अधिक बीमारी अर्थात् शरीर में भरा पड़ा अपशिष्ट विष है, उसे उतना ही लम्बा उपवास करने की आवश्यकता है।

उपवास की स्थिति से परिचित होने के लिए गृहणियों के चुल्हे या भाप.इंजन को समझ लेना चाहिए। जैसे. नियमित लकड़ी या कोयला ड़ालने पर ऊर्जा की प्राप्ति नियमित होती रहती। अन्यथा चूल्हा बूझ जायेगा या रेल रूक जायेगी। यदि चूल्हे और इंजन में अधिक राख इकट्ठी हो गयी हो तो उसे बाहर

निकालना भी अतिआवश्यक है। उस समय नियमित लकड़ी/कोयला देना व्यर्थ ही होगा , क्योंकि उसे जलने के लिए स्थान व हवा की आवश्यकता है। ठीक इसी प्रकार बीमार शरीर से अपशिष्ट विष शरीर से बाहर निकालना आवश्यक है। यह विष शरीर से कितने दिनों में बाहर निकला जायें। कहा नहीं जा सकता, लेकिन प्रकृति का नियम है कि उपवास समाप्त होने की सूचना स्वत: प्रकृति दे देती है। यह की जब स्वाभाविक भूख लौट आये तो उपवास पूर्ण हो जाना माना जाता है।

यदि हम छोटे.छोटे उपवास करें तो उपवास के दिनों में हम खो देते है उन दिनों का भोजन , लेकिन उसके बदले में हम वह शक्ति पाते है , जो भोजन के पाचन और निष्कासन में खर्च होती है और तमाम उस विषाक्त एवं अनुपयोगी संकलन से भी बच जाते है।

शरीर का समस्त विकार, बीमारी, अपशिष्ट.विष को निकालने हेतु सम्पूर्ण उपवास ही श्रेष्ठ एवं लाभदायक होते है। उपवास के दौरान वे समस्त रोग और कमजोरी निदान हेतु सामने प्रकट हो जाती है। अपशिष्ट बाहर जाने पर दोष दूर हो जाता है। लम्बे उपवास द्वारा निराहार रहा जा सकता है और एनिमा लेने से मल प्रणाली स्वच्छ हो जाती है।

यदि कोई व्यक्ति उपवास के बारे में नहीं समझता तो उसे छोटे उपवास ही कराने चाहिए। व्यक्ति कैसे मान सकता है कि उसके शरीर में कोई अपशिष्ट मौजूद है। उसका यह उपाय सर्वोत्तम है कि 1.2 समय का भोजन न करने पर यदि उसका सिर दर्द होता है तब तो उसको सिरदर्द ठीक न हो जाये और वास्तविक भूख न लग जावें, तब तक उपवास करना होगा। उसका सिरदर्द शरीर में उपस्थित किसी अपशिष्ट का रक्त प्रणाली में मिलकर मस्तिष्क तक पहुंच जाने से हुआ है। संक्षिप्त उपवास उन व्यक्ति को करने जरूरी है , जो अत्यधिक दुर्बल है, लम्बी बीमारी जैसे. राजयक्ष्मा से पीड़ित है।

लम्बे उपवास से मानसिक अवस्था बदली जाती है। उसकी संकल्प.शक्ति, आत्मबल और आत्मसम्मान दृढ़ हो जाता है। वह जीवन में पहली बार शरीर को पहुंचने वाले अपशिष्ट विषों के अत्याचार से मुक्त हो जाता है। फिर तो वह इच्छाओं का स्वामी होता है।

6.5 उपवास की उपयोगिता

उपवास की पद्धति को समझने के लिए यह उदाहरण काफी है कि रोगग्रस्त शरीर एक गंदे कमरे के समान है। स्वस्थ शरीर अर्थात् साफ सुथरा कमरा। कमरे के दरवाजे एवं खिड़कियों से आने वाली हवा और धूल शरीर के भोजन के समान है। यदि कमरे की अच्छी सफाई करनी हो तो आवश्यक होगा कि दरवाजा एवं खिड़कियां बंद कर हवा.धूल को अन्दर आने से रोक दें, फिर ही अच्छी सफाई का प्रयास करें। ठीक इसी प्रकार शरीर को रोगों से मुक्ति दिलाकर स्वस्थ बनाने हेतु आहार बंद कर उपवास किया जावे , तो ही अच्छा स्वास्थ्य प्राप्त हो पायेगा। अन्यथा रोगग्रस्त शरीर के लिए भोजन पोषण का नहीं , विष का काम करता है। उपवास में नये आहार को शरीर में पहुंचने से बंद कर देने के कारण तथा विजातीय द्रव्यों के निष्कासन में सहायक होने के कारण उपवास करना एक ऐसी पद्धति है , जिससे शरीर विकृतियों से मुक्त होकर स्वच्छ, ताजा एवं स्वस्थ हो जाता है। उपवास द्वारा आंतरिक अवयवों का अवरोध दूर कर रक्त को

शरीर के समस्त भागों में पहुंचाना है। इस प्रकार रक्त के संचालन में संतुलन आये और शरीर को सामान्य स्थिति प्राप्त हो।

एक विशेष बात यह है कि हम लोग दिन में कई बार आवश्यकता से अधिक और बिना चबाये भोजन पेट में ठूंस देते है तथा थके हुए पाचन तंत्र के अंगों को उत्तेजक पेयों के चाबुक से चलाने के लिए बाध्य करते है। जिससे शरीर की शक्तियों का क्षय होता है। अच्छे स्वास्थ्य के लिए शरीर को आराम भी चाहिए। जो नींद और पेशियों के विश्राम से मिलता है। नींद से तो केवल बाह्य पेशियों को ही आराम मिल पाता है। आंतरिक पेशियों एवं अंगों को आराम तभी मिल पायेगा , जब आप आरोग्य की सही विधियोंं का अनुसरण करेंगे अर्थात् शरीर को सम्पूर्ण आराम केवल उपवास द्वारा ही प्राप्त हो सकता है। उपवास द्वारा शरीर के अपशिष्ट और मरणशील कोषों से छुटकारा तथा उनके स्थान पर नये कोषों के निर्माण से शरीर को स्फूर्ति प्राप्त होती है। लम्बे उपवास मस्तिष्क, समस्त नाड़ी, पेशी एवं ग्रंथी संस्थान को अभिनव शक्ति प्रदान करते है। लम्बे उपवास से मस्तिष्क अधिक सक्रिय होकर विचार शक्ति को बढ़ाता है।

इस धरातल पर मनुष्य ही सर्वाधिक अस्वस्थ प्राणी है। मनुष्य के बराबर किसी भी प्राणी ने भोजन संबंधी नियमों का उल्लंघन नहीं किया है। किसी भी जानवर का आहार मनुष्य के आहार की तरह अयुक्त , अप्राकृतिक नहीं होता है। इसलिए उपवास के दौरान निम्न बातों पर ध्यान देना अति आवश्यक होगा.

1. आप जितने अधिक दिनों तक उपवास करेंगे , उतना ही अधिक आरोग्य प्राप्त होगा यह बात दिमाग से निकाल दें।

2. उपवास प्रारम्भ करने से पूर्व आहार में क्रमशः परिवर्तन करते हुए श्लेष्माहीन आहार की ओर बढ़िए और मृदु रेचकों तथा एनिमा के जरिये आंतों की सफाई कर उपवास को सरल बनाने का प्रयत्न कीजिए।

3. अल्प श्लेष्मा या श्लेष्माहीन आहार चलाते हुए बीच.बीच में छोटे.छोटे उपवास जैसे 4.5 दिन के कीजिए।

4. यदि आपने रासायनिक द्रव्यों. पारा, शोरा आदि अधिक मात्रा में सेवन किया है तो उपवास की तैयारी के लिए आहार को अधिक दिनों तक धीरे.धीरे बदलते जाना आवश्यक होगा।

5. विशेषतः रोगी को उपवास उसकी क्षमता के अनुसार ही कराना है। वह जीभ के साफ होने का इंतजार नहीं करता है अर्थात् जीभ के साफ होने तक उपवास करना भी पागलपन है।

6. समयानुसार छोटे उपवास ही करने चाहिए। क्योंकि चारों तरफ आप रसायन से घिर चुके है और आपकी चटपटी आहार प्रणाली श्रेष्ठ नहीं है।

7. आज आपके प्रत्येक खाद्य पदार्थ में भारी मात्रा में रसायन है। खेतों में रसायन डाला जा रहा है , फसल को रोगमुक्त करने के लिए रसायन , फल और बीज पकाने एवं अधिक उत्पादन के लिए रसायन, खाद्य पदार्थ की सुरक्षा के लिए रसायन , आहार को स्वादिष्ट बनाने के लिए रसायन , शरीर की सुन्दरता और मॉर्डन बनाने के लिए रसायन , शरीर में रोग दबाने के लिए रसायन का अधिकाधिक उपयोग करने के कारण ही मानव यंत्र ठप्प हो रहा है अर्थात् हमारी कार्य करने की

क्षमता कम हो रही है। इनका निदान बहुत ही सरल है. खेतों में जैविक खाद एवं जैविक कीट नाशक का उपयोग करे; फसल, फल व बीज पकाने में जल्दबाजी न करे, उसके लिए प्राकृतिक तरीके अपनाये; खाने में प्राकृतिक भोजन को ही श्रेष्ठता देवें और प्राकृतिक स्वाद अपने में पैदा करें तथा सुन्दरता के लिए प्राकृतिक संसाधनों जैसे. उबटन, गरम.ठण्ड़ा सेंक, फल.सब्जियों का रस व गूदा का लेप , मिट्टी का लेप और खाने.पीने में फल.सब्जियों का रस , सूप, सलाद एवं मौसमानुसार पानी पीयें।

6.6 उपवास और भुखमरी में अन्तर

उपवास के समय शरीर को आहार देना बंद कर देने पर अत्यन्त अनुपयोगी पदार्थो को सबसे पहले भस्म कर शरीर से निष्कासित कर दिया जाता है और शरीर आहार के अभाव में स्वयंपोषी बन जाता है। उपवास के अन्तराल शरीर पर कई संकेत उभरते है जिनका रोगी स्वयं ध्यान रखें व चिकित्सक को सही.सही बात समय पर बतायें। उपवास के दौरान शरीर के हर हिस्से में छिपे विषों को बाहर निकाल कर शरीर स्वस्थ बनाता है, उसे स्वाभाविक भूख लगने लगती है , जीभ साफ हो जाये, श्वास की दुर्गन्ध दूर होकर मधुर हो जाये तथा शरीर का तापमान और नाडियां सामान्य हो जायें , तब उसके उपवास की अवधि समाप्त कर भोजन देना चाहिए। यदि ऐसी अवधि में उपवास समाप्त नहीं किया तो भुखमरी (क्षुधावस्था) की अवधि प्रारम्भ हो जायेगी। अर्थात् यह कह सकते है कि उपवास प्रारम्भ होता है, भोजन को त्यागने से और अंत होता है स्वाभाविक भूख के पुनरागमन से। इसी प्रकार भुखमरी प्रारम्भ होती है , स्वाभाविक भूख के पुनरागमन से और अन्त होता है मृत्यु पर। भुखमरी शरीर के लिए विघातक एवं हानिकारक होती है और शरीर का क्षय होता है , जबकि उपवास लाभदायक, रोगोपचारक, जीवनदायी एवं शक्तिदाता एवं मानसिक रूप से नवशक्ति की प्राप्ति कराता है।

भुखमरी से होने वाली मृत्यु की अनुमानित हानियों का उल्लेख निम्नवत् है. वसा 97 प्रतिशत, पेशियां 30 प्रतिशत, यकृत 56 प्रतिशत, प्लीहा 63 प्रतिशत, रक्त 17 प्रतिशत एवं नाड़ी केन्द्र 0 प्रतिशत।

पूर्ण या पूर्व स्वास्थ्य की प्राप्ति के लिए उपवास की भी आवश्यकता होती है। चाहे आप दिन में 1 बार, 2 बार, 3 बार खाना खाते हो, वह आपकी मनोवृति बन जाती है। भोजन का निर्धारित समय होने पर शरीर को खाद्य पदार्थ न मिलने पर उसका ध्यान भोजन की और आकर्षित हो जाता है। यदि अपना ध्यान भोजन की जगह पानी पर या किसी अन्य प्रवृत्ति या कार्य में लगा दिया जाये तो शरीर अपने पहले के स्टॉक किया हुआ अतिरिक्त पोषण को पचाने में लग जाता है।

6.7 उपवास के लाभ

भारतीय संस्कृति में उपवास कि परम्परा बहुत ही प्राचीन है। व्यक्ति धार्मिक अनुष्ठानों के द्वारा उपवास किया करते है। जिसका एक उद्देश्य आध्यात्मिक और दूसरा उद्देश्य शरीर को आरोग्य बनाना है अर्थात् उपवास से दो कार्य सम्पन्न होते है:

1. ठोस एवं अप्राकृतिक आहार से उत्पन्न रूकावटें दूर हो जाती है।

2. यांत्रिक प्रक्रिया द्वारा तंतुओं का लगातार संकुचित होने से घर्षण बल उत्पन्न होगा , जिससे कई समय से जमे , फँसे हुए मल को रक्त प्रवाह के द्वारा निष्कासित होता है। प्राकृतिक चिकित्सा मूलभूत तथ्य पर आधारित है कि प्रकृति के कार्यों में कोई भी बाधा न पहुंचाई जाये, बल्कि उसे सहायता करें, जैसे. एक मशीन की हालत बिगड़ती हुई पायी जाये तो उसे बंद कर उसके कल पुर्जों को दुरूस्त करते है। ठीक इसी प्रकार हमारा शरीर भी एक मशीन है। अस्वस्थ होने पर भोजन बंद कर पाचन क्रिया को स्थगित कर देना चाहिए। जिससे शरीर के अंगों को आहार पचाने, शरीर के लिए उसका उपयोगी रस बनाने, 30 फीट लम्बी आंतों में आहार को ढक़ेलने में और समीकृत रसों को शरीर के प्रत्येक रक्तकोषों तक पहुचाने में शरीर को बहुत शक्ति (ऊर्जा या ताकत) खर्च करनी पड़ती है। यदि शरीर की इस शक्ति को रोगों से लडऩे के अतिरिक्त अन्य किसी काम में न लिया जाये तो शरीर की समस्त विकृति रोगों को जल्दी ही दूर कर दी जाती है। वह समस्त शक्ति शरीर के समस्त विजातीय पदार्थो , विषों एवं अनुपयोगी आहार को शरीर से बाहर निकाल फेंकती है। यदि शरीर का कोई भी अंग रोग.ग्रस्त हो गया है तो शरीर के समस्त अंगों की कार्य क्षमता कमजोर एवं सुस्त हो जाती है।

यदि उपवास की जगह स्वस्थ या अस्वस्थ अवस्था में आप भोजनाधिक्य कर लेते है तो उसका असर समस्त शरीर के तंतुओं और नाड़ी कोशों को अशक्त बना देता है , जिससे आलस्य, क्लांति और मंदता का स्वाभाविक जन्म हो जाता है।

डॉ. डिवी. बीमार आदमी के पेट से भोजन अलग कर दो तो फिर तुमने बीमार आदमी को नहीं बल्कि बीमारी को भूखा मारना शुरू कर दिया है।

हिप्पोक्रेट्स. बीमार शरीर को जितना खिलाया.पिलाया जायेगा। उसकी हालत उतनी ही खराब होती जायेगी।

इस प्रकार दो तथ्य महत्वपूर्ण बनते है:

1. उपवास काल में जिस शक्ति का उपयोग भोजन सामग्री को पचाने में करते थे। अब उसका स्वच्छंद उपयोग शरीर शोधन के लिए करें।

2. उपवास के दौरान शरीर सबसे पहले उसी सामग्री को बाहर करता है , जो बिल्कुल उपयोगहीन एवं मृत.निर्जीव हो गई है। जिससे शेष समस्त स्वस्थ.शरीर के कोषाणु सामान्यतया अपना कार्य करने के लिए मुक्त है।

वर्तमान समय में कई चिकित्सा प्रणालियां विकास की ओर अग्रसर है। उपवास चिकित्सा के अलावा अन्य चिकित्सा प्रणालियां बीमार को नियमित भोजन करने की बात करती है। ठीक यही बात आम लोगों में भ्रमात्मक है कि बीमार व्यक्ति को भोजन न देकर उसे कमजोर बना दिया जायेगा। लेकिन वास्तविक वस्तुस्थिति आपके समक्ष है। रोग.ग्रस्त अवस्था में भोजन देकर कमजोरी को अधिक बढ़ाना होता है। अत: शरीर के समस्त रोगों में सम्पूर्ण उपवास कर लेना ही रोगी के लिए अत्यन्त लाभकारी है।

6.8 शरीर पर उपवास का प्रभाव

रोगग्रस्त स्थिति और उपवास के दौरान शरीर के भीतर ठीक.ठीक क्या और कैसे घटित होता है वह बड़ा रोचक है, क्योंकि आज तक इस सम्बन्ध में हुई गंवेषणाओं के निष्कर्ष क्रमबद्ध निम्नानुसार है:

1. प्रो. फ्रांसिस गेनो बेनेडिक्ट ने लिखा कि उपवास करने पर प्रथम सप्ताह तक शरीर का ताप लगभग सामान्य रहा। उसके उपरान्त ताप में कुछ कमी आयी जो शेष अवधि तक लगभग स्थायी रही। सांस की गति की अपेक्षा नाड़ी की गति में घट.बढ़ की ज्यादा सम्भावना है। रक्त संबंधी परीक्षण के निष्कर्ष बड़े रोचक मिलें।
2. सीनेटर और म्यूलर ने रक्त परीक्षण में बताया कि लाल रक्त कोषाणुओं की वृद्धि होती है।
3. तास्ज्क ने रक्त परीक्षण में बताया कि प्रारम्भ में लाल रक्त कोषाणुओं में कमी लेकिन बाद में वृद्धि पाई गई, ज्यों.ज्यों उपवास बढ़ता गया, श्वेत कोषाणुओं में कमी आई। रक्त की क्षारियता मे कमी तथा लाल रक्त में वृद्धि पाई गई।
4. हियर वर्ड कैरिंगटन ने अपनी पुस्तक में बताया कि उपवास के दौरान शरीर ताप.शामान्य से कम लेकिन स्वाभाविक भूख लौटने पर सामान्य तथा ठोस आहार लेने पर सामान्य से भी कम हो जाता है।
5. डॉ. रेबलिटी ने भी उपवास के दौरान शरीर ताप के बढने की बात कही है।

   उक्त पांचों से यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भोजन के रासायनिक समीकरण से हमारे शरीर ताप का कोई संबंध नहीं है और उपवास के मामले में शरीर के ताप और नाड़ी की गति में भी कोई सम्बन्ध नहीं है। उपवास के दौरान नाड़ी गति40.120 प्रतिमिनट तक हो सकती है।
6. उपवास के दौरान विजातीय पदार्थ या विष शरीर के विभिन्न अंगों द्वारा बाहर किया जाता है। उसमें से जिह्वा भी एक है। जिस पर मैल की तह जम जाती है। जिह्वा का साफ हो जाने से यह निष्कर्ष निकाले की उपवास पूर्ण हो गया , स्वास्थ्य ठीक हो गया। वास्तविक भूख लौट आई , क्योंकि उससे स्वास्थ्य की स्थिति जानना बड़ा चिन्ताजनक है, क्योंकि जिह्वा को साफ किया जा सकता है। जिह्वा पर मैल की तह कितनी मोटी व किस रंग की होनी चाहिए आदि निष्कर्षो का कोई निश्चित पैमाना नहीं हैं अत: इन निष्कर्षो को सही स्थिति में मालूम नहीं कर सकते है।
7. उपवास का समापन सांस की अवस्था को जानकर भी न किया जाना चाहिए। कुछ ने उपवास पूर्ण होने पर सांस से एक मिठास अर्थात् क्लोरोफार्म जैसी गंध को बतलाया है। जिसका अनुभव करना रोगी के स्वास्थ्य के लिए घातक हो सकता है।
8. उपवास के दौरान हर दिन एनिमा लेना चाहिए। अन्यथा रोगी को कभी.कभी दर्द एवं रक्तस्राव की शिकायत हो सकती है, क्योंकि आंतों में विष शुष्क होकर जमा हो जाता है। शरीर की शक्ति उसे किसी भी हालत में बाहर करना चाहती है। उसका परिणाम दर्द और रक्तस्राव ही हैं।

9. पेट एक मांसपेशी है और शरीर की अन्य मांसपेशियों की तरह इसे भी विश्राम की आवश्यकता होती है। आराम और काम यह शरीर का निश्चित नियम है। पेट को आराम पहुंचाने के लिए उसे भोजन से वंचित कर देना अर्थात् उपवास करना। जिससे शरीर की समस्त त्रुटियों , विकारों को ठीक किया जा सकें।

10. उपवास के समय यकृत , मूत्राशय, हृदय एवं आमाशय के रोग दूर तो होते ही है , साथ ही उन्हें विश्राम भी मिल जाता है।

11. आमाशय से पाचक रस नियत समय में उसकी क्षमता के अनुसार निकलता है। ज्यादा भोजन करने पर पाचक रस सारे भोजन को ठीक से पचा नहीं पाता है। उपवास के समय यह पाचक रस का स्राव बन्द हो जाता है। जिससे यह भय नहीं रहता कि उपवास के दौरान आमाशय की दीवारें नष्ट हो जायें। इस समय थूक भी कम बनता और वह कड़ुवा अनुभव होता है।

12. उपवास का सबसे पहले लाभ और प्रभाव हमारे फेफड़ों पर होता है। फेफड़ों का सारा अवरोध समाप्त होकर सांस अधिक स्वच्छंद और निर्बाध गति से काम करने लगती है। रक्त प्रणाली निरन्तर स्वच्छ होती रहती है। इस समय ऑक्सीजन की अधिक आवश्यकता रहती है।

13. उपवास के दौरान मेरे स्वास्थ्यार्थियों का वजन औसतन 1 पौण्ड प्रतिदिन कम होना पाया गया है। उपवास के प्रारम्भिक दिनों में वजन ज्यादा कम हो जाने का यह अर्थ नहीं कि आप स्वस्थ हो गयें। क्योंकि शरीर से पहले दौर में ज्यादा से ज्यादा अपशिष्ट बाहर निकलता है और फिर धीरे.धीरे आंतों में फंसा हुआ विष हटता जाता है, वैसे ही वजन में कमी आती रहती है। उपवास के दौरान कुछ व्यक्तियों का तो वजन घटता ही नहीं और कुछ का वजन बढ़ जाता है , क्योंकि उनकी कोषाएं सघन और ठोस होती है। जिसमें जमा विष बाहर निकल जाने पर वह स्पंज के समान कार्य करने लगती है। वे काषाएं पानी से भर जाती है और वजन बढ़ जाता है। उनके लिए यह स्थिति भी घातक है। शारीरिक श्रम के अनुरूप भोजन करना चाहिए और आरोग्य के नियमों का नियमित पालन होना चाहिए। अन्यथा शरीर में विष जमा हो जायेगा।

14. उपवास के द्वारा समस्त ज्ञानेन्द्रियाँ अत्यन्त सक्रिय बन जाती है। जिससे देखना , सुघंना, सुनना आदि क्रियाएं अच्छी हो जाती हैं।

15. उपवास द्वारा रक्त पतला होकर लाल रक्ताणुओं की संख्या बढ़ जाती है। रक्त में मौजूद समस्त विष व अपशिष्ट शरीर से बाहर कर दिये जाते है।

16. उपवास द्वारा शरीर के सभी अंग.प्रत्यंगों की शरीर में स्फूर्ति बढ़ जाती है और मस्तिष्क की विचार शक्ति तीव्र एवं फुर्तीली हो जाती है।

17. उपवास द्वारा शरीर और मन दोनों प्रभावित होते है। शुद्ध शरीर, स्वच्छ रक्त, संयत मस्तिष्क और उन्मुक्त मन द्वारा रोगी अपने विगत् जीवन की समीक्षा कर सकता है कि शारीरिक और आरोग्य नियमों का उल्लंघन ही रोग का उदय है।

18. आश्चर्य की बात है कि वज़न बढ़ाने का उपवास एक श्रेष्ठ उपाय है, जो लोग बहुत ही दुर्बल होते है, वे साधारणत: बहुत अधिक खाते है, किन्तु उससे भी कोई लाभ नहीं होता। उपवास से शरीर के परिपाक, परिपोषण तथा देहात्मीकरण की क्षमता बढ़ती है। इसी कारण उपवास के बाद मिलने वाले भोजन से सप्त.धातुओं का निर्माण ठीक से होने लगता है और वज़न शरीर की नई प्रकृति के अनुसार धीरे.धीरे बढ़ जाता है। अन्तत: शरीर का एक निश्चित या उचित वज़न प्राप्त होता है।

6.9 उपवास कब और कब नहीं

उचित भोजन और व्यायाम, गहरी सांसे और स्वच्छ एवं नियमित जीवन से ही स्वास्थ्य और शक्ति की प्राप्ति हो सकती है। उपवास से केवल शरीर की रूग्णावस्था दूर होती है और शारीरिक प्रणाली को विषाक्त तत्वों से मुक्ति मिलती है। इस कारण उपवास स्वास्थ्य की भूमिका मात्र है। लघु उपवास किसी भी स्थिति में कर सकते है और उससे लाभ भी पहुंचता है, लेकिन लम्बा उपवास किसी गंभीर और जीर्ण रोग से छुटकारा पाने के लिए ही करना चाहिए। यदि व्यक्ति को ऐसी गंभीर बीमारी न रहे तो समुचित आहार, व्यायाम एवं नियमित जीवन पद्धति से ही पूरा.पूरा लाभ प्राप्त किया जा सकता है। पर यदि हम अनावश्यक एवं अनुचित भोजन न कर समुचित भोजन व समुचित मात्रा में भोजन करें, तो शरीर विकारों से ग्रस्त होने से बच जायेगा और उपवास करने की कोई आवश्यकता ही न रहेगी। उपवास तो केवल आहार.विहार को सुधारने का एक उपाय मात्र है।

रोग मुक्ति के लिए किये जाने वाला उपवास समय पर और विधिवत् किया जाये तो मनुष्य जाति को और दूसरा कोई उपाय नहीं मिलेगा। अर्थात् रोग मुक्ति के लिए किये उपवास अचूक औषधि है। अन्य सभी उपायों की अपेक्षा उपवास का रोग मूलक क्षेत्र अधिक विस्तृत है। उपवास के प्रारम्भिक दिनों में तकलीफ होना स्वाभाविक है। तकलीफ होने पर उसे उपवास अच्छा नहीं लगेगा, परन्तु उसे रोग भी तो अच्छा नहीं लगता है। यदि कोई उपवास को भंग कर दे तो उसका परिणाम बड़ा घातक और गंभीर होता है। इसलिए उपवास में धैर्य एवं साहस रखें, आरोग्य लाभ की अवधि बहुत लम्बी हुआ करती है। उपवास उन रोगों के लिए जादू का काम करता है, जिसमें किसी की अंग प्रणाली ठप हो गई हो। उपवास कब और किन रोगों में करना है तथा किनमें नहीं। जो निम्नवत् है:

1. मुख्य रूप से यकृत या गुर्दा का विनाश हो जाने पर उपवास से पुनरूद्धार नहीं हो सकता है। वे बीमारियां जिनमें शरीर का क्षय होता हो जैसे. राजयक्ष्मा। ऐसे में उन्हें लम्बे उपवास नहीं करने चाहिए, क्योंकि छोटे उपवास करने पर ही उन्हें पुन: अच्छा स्वास्थ्य प्राप्त हो सकेगा।
2. किसी आघात के कारण दिमाग अव्यवस्थित हो जाये तो उपवास करें। लेकिन हृदय रोग, कैंसर, रक्ताल्पता, बुद्धि भ्रंश विक्षिप्ता आदि के लिए उपवास व्यर्थ है।
3. किसी जानवर या कीड़े के काटने या घाव हो तो उपवास से अधिक लाभ उसकी साफ.सफाई पर ध्यान दें।
4. निमोनिया हो जाने पर उपवास जादू का काम करता है।

5. चेचक, लाल बुखार, कुकर खांसी, गले की खराश, बचपन के लकवे, बच्चों के सिरदर्द, अपच, वमन और मरोड़ आदि संक्षिप्त उपवास से ठीक हो जाते है।

6. लोग दुबले.पतले हो या मोटे.ताजे उपवास सभी को लाभ पहुंचाता है। ज्यादा दुबले.पतले लोगों में भोजन के समीकरण की समस्या रहती है। वास्तव में भोजन का कुछ समीकरण भी होना जरूरी है। इस हेतु छोटे उपवास लाभदायक है।

7. उपवास की अवधि में कभी.कभी मृत्यु हो जाने का मतलब यह नहीं कि उपवास के कारण मृत्यु हुई। उपवास तो जीवनदायी है। लोग केवल भुखमरी से मरते है। ऐसी स्थिति में थोड़े समय बाद उपवास करने पर रासायनिक संतुलन हो जायेगा।

8. आज हमारा रहन.सहन , खान.पान का ढ़ंग इतना बिगड़ गया है कि शरीर के भीतर का कूड़ा.करकट युक्त अपशिष्ट विष को बाहर करने में कई हफ्ते लग जाते है। तब शरीर के तन्तुओं के लिए पोषण का अभाव हो जाता है। ऐसी स्थिति में उपवास किये जाने पर अपशिष्ट पदार्थो में लगभग 8.9 प्रतिशत ही कमी हो पाती है।

9. कमजोरी एवं तकलीफ की अनुभूति केवल मात्र रोग के कारण होती है, उपवास से नहीं। उपवास के द्वारा तो इन्हें दूर कर वास्तविक शक्ति प्राप्त होती है। ज्यों.ज्यों उपवास बढ़ता है , त्यों.त्यों स्फूर्ति बढ़ती जाती है।

10. स्त्रियां अपने गर्भकाल में उपवास न करें।

6.10 उपवास कालीन विभिन्न लक्षण, उपद्रव और संकट

उपवास काल में सही मानसिक प्रवृत्ति का होना अति आवश्यक है उस समय मन आस्था और विश्वास से भरा होना चाहिए। उपवास की अवधि में घटने वाले विभिन्न उपद्रव , संकट और लक्षण उस उपचार के संकेत है, जो भीतर ही भीतर घटित होते रहते है , परन्तु ये संकट कोई खतरनाक नहीं है , क्योंकि यह तो शारीरिक विषमता को दूर करने की प्राकृतिक चेष्टाएं मात्र है। जैसे.जैसे शरीर का विष उपवास द्वारा कम होता जाता है वैसे.वैसे ही सारे अप्रीतिकर लक्षण कम होते जाते है। अन्तत: उसे शक्ति और ताजगी का अनुभव होता है। अत: उपवास के दौरान होने वाली समस्त क्रिया.प्रतिक्रिया प्रकृति की एक उपचारात्मक पद्धति है। जब शरीर में विष जलने लगता है तो उसे निष्कासन की गति बढ़ जाने से ज्वर उत्पन्न हो जाता है।

ऐसी स्थिति मे खूब पानी पीना चाहिए। घर्षण स्नान और गीली पट्टियों के प्रयोग कर लाभ लेना चाहिए। जिससे विष निष्कासन की प्रक्रिया अवरूद्ध न हो।

वे समस्त रोग जो विभिन्न दवाओं से दबा दिये गये थे , वे उपवास काल में पुन: प्रकट होते है और वे रसायन जो शरीर में दवा के रूप में पहुंचे है , उनका भी निष्कासन होना अनिवार्य होता है। ऐसी स्थिति में उपवास की प्रक्रिया पूर्ण होने देना चाहिए। यदि उन रोगों का प्रभाव त्वचा पर पड़ रहा है तो धूप स्नान करना चाहिए।

उपवास के दौरान उत्पन्न होने वाले सभी लक्षण, सभी रोगियों में अनुभव हो यह आवश्यक नहीं है। कोई रोगी छोटे उपवासों से ही स्वस्थ हो जाते है और कई को अनेक सप्ताह लग जाते है। उपवास के दौरान प्रकट होने वाले विभिन्न रोग एवं उनके प्राकृतिक उपचार निम्रवत्है:

1. चक्कर आना और मूच्र्छा: उपवास के दिनों में उदर प्रदेशों के आस.पास रक्त के कोषाणु फैले रहते है। जिससे मस्तिष्क में रक्त की अपर्याप्तता हो जाने से , नाड़ी मण्डल की सतर्कता में शिथिलता आ जाने से चक्कर आना और मूच्र्छा हो जाती है।

   प्राकृतिक उपचार: ऐसी अवस्था में रोगी को ज्यादा आराम करने दें , उठते, बैठते, सोते समय सहारा दें। उसके सोने की स्थिति भी बदल कर दें कि उसका सिर, पैरों से 2.3 इंच नीचे रहें। सीने से लेकर माथे तक ठण्डे पानी का कपड़ा रखें। हथेलियां और पैर के तलवों को रगडऩा चाहिए। शुद्ध हवा में रखना चाहिए।

2. मरोड़: मरोड़ उत्पन्न होने का मुख्य कारण आंतों में जमा पुराना मल अपना स्थान छोड़ता है। आंतों में जमे पुराने मल से उत्पन्न वायु भी ठण्ड़ा पानी पी लेने से उत्पन्न होती है। मरोड़ वैसे शौच के साथ अनुभव होती है। उपवास के कारण नाड़ी मण्डल अत्यन्त संवेदनशील हो जाने के कारण मांसपेशियां बहुत त्वरित गति से संकुचित होती रहती है, वहीं मरोड़ होती है।

   प्राकृतिक उपचार: ऐसी स्थिति में मरोड़ को शांत करने के लिए गुनगुने पानी का एनिमा, पेडू पर गर्म सेंक, गर्म पानी चूसकर पीना, हल्के हाथों से पेट की मालिश करने से लाभ प्राप्त होता हैं।

3. सिरदर्द: उपवास के दिनों में शरीर का विष रक्त प्रणाली में मिलकर मस्तिष्क तक पहुंच जाता है। उपवास के दौरान उन लोगों को सिरदर्द होता हैं जो ज्यादा भोजन और चाय कॉफी के आदि है।

   प्राकृतिक उपचार: ऐसी स्थिति में खूब पानी पीये, गुनगुने पानी का एनिमा लें, सिर पर ठंड़ी.गरम पट्टी रखें और जहाँ सिर दर्द हो वहाँ वह हल्का.हल्का सा हाथ घुमाएं , पैर को गर्म स्नान कराये और आराम करें।

4. अपच: अपच का अनुभव होने पर एनिमा लें और कटि स्नान करें।

5. मुंह के स्वाद का खराब होना: निष्कासन क्रिया के कारण मुंह का थूक कडुआ हो जाने से होता है।

   प्राकृतिक उपचार: ऐसी स्थिति में पानी में नमक व नींबू निचोड़ कर मुंह की सफाई रखें व गरारे करें।

6. अनिद्रा: उपवास के समय अनिद्रा स्वाभाविक है। प्राकृतिक उपचार. ऐसी स्थिति में वायुस्नान , मालिश, गहरी सांस संबंधी व्यायाम, गर्म टब नहान करें और शरीर को ज्यादा आराम दें।

7. मूत्रावरोघ: खूब पानी पीने पर 12 घंटे के दौरान पेशाब आने में असमर्थ हो तो कटि स्नान करे व पेडू के निचले प्रदेश में गर्म पानी से भीगी पट्टी बांधे।

8. ह्रदय में पीड़ा एवं धडक़न: पाचन क्रिया में गड़बड़ी से पेट में गैसों के दबाव से ह्रदय की पीड़ा बढ़ जाती है। प्राकृतिक उपचार. ऐसी स्थिति में गर्म पानी पीकर चुपचाप सो जावें।

9. नाड़ी की मंथरता: पुरूष की नाड़ी की धडक़न 72/मिनट एवं स्त्री की 80/मिनट। उपवास के दौरान नाड़ी की गति कम हो जाये तो घबरायें नहीं। उससे हृदय भले ही देर से रक्त फेंक रहा हो लेकिन वह अधिक वेग से और मात्रा में ज्यादा रक्त फेंक रहा है। ऐसी स्थिति उपवास के समय अवश्य पैदा होती है। इससे हृदय की दो धडक़नों के बीच में विश्राम मिल जाता है और उपवास के बाद हृदय अधिक शक्तिशाली बन जाता है।

प्राकृतिक उपचार. यदि नाड़ी की गति 50 से कम हो, हाथ पैर ठण्डे पड़ गये, होंठ नीले हो गये, चक्कर आये तो हल्का व्यायाम, गहरी सांसे एवं गर्म पानी से स्नान करें। स्नान के समय सिर पर ठण्डे पानी का तौलिया रखें। तो नाड़ी की धडक़न सामान्य हो जायेगी। पानी ज्यादा गरम न हो। और यदि नाड़ी की गति 120/मिनट से अधिक हो जाये तो ठण्ड़े पानी का स्नान करें। पानी ज्यादा ठण्ड़ा न हो।

10. वमन: यदि वमन का रंग चमकीला हरा या काला है, तो सतर्क हो जायें। प्राकृतिक उपचार. ऐसी स्थिति में वमन की शिकायत होने पर बार.बार गर्म पानी पिलायें। चाहे पुन: वमन हो जाता हो। पेट और पीठ पर गर्म कपड़े (ऊनी) लपेट दें। रोगी को खूब ताजी हवा और गहरी सांसे लेने दें। शहद मिला गर्म पानी दें। जौ के पानी में थोड़ा नमक डाल कर दें। गर्म पानी में संतरे का रस दें।

11. दुर्बलता और क्लांति: उपवास के प्रारम्भिक दिनों में ही कमजोरी और थकावट प्रकट होती है। उसके बाद तो शक्ति और स्फुर्ति का अनुभव ही मिलता है। उपवास के दौरान कभी.कभी कमजोरी और थकान थोड़े समय के लिए बीच.बीच में और भी प्रकट होती रहती है। यह सब विभिन्न रोगों में ली गई दवाइयों के निष्कासन का असर है।

प्राकृतिक उपचार. ऐसी स्थिति में गर्म या ठण्ड़े पानी का सेवन करें। स्वच्छ वायु स्नान व गहरी लें। हल्की मालिश करे।

12. कानों में आवाज गूजना: कानों में विष का निष्कासन होने पर कर्ण द्वार में मैल की मोटी परत जम जाती है। तब गरम पानी या जैतून का तेल ड़ालकर मैल साफ कर लें। कभी.कभी मस्तिष्क की रक्ताल्पता से भी हो जाता है।

13. आंखों के आगे अंधेरा: आंखों के आगे अंधेरा छा जाने पर घबराना नहीं चाहिए। ऐसा सिरदर्द , यकृत, रक्ताल्पता आदि के कारण हो जाता है। तब ज्यादा आराम करें।

14. शारीरिक दुर्गन्ध: त्वचा से निकलने वाले अपशिष्ट के साथ अप्रिय विशिष्ट गंध उपवास के दौरान आती है। ऐसी स्थिति में खूब पानी , पीयें, घर्षण स्नान करें और त्वचा की अच्छी साफ सफाई करें।

15. दुर्गन्धयुक्त सांस: निष्कासित मलों में उपस्थित खटास के कारण सांस भी दुर्गन्धयुक्त आने लगती है। प्राकृतिक उपचार. ऐसी स्थिति में ईथर के समान गंध आने पर उपवास तोडक़र फलों के रस का सेवन करें।

16. प्रलाप: उपवास करने वाले ये लोग जिन्होने अत्यधिक दवाईयों का सेवन किया है , उन्हें प्रलाप तो होगा ही। शरीर का समस्त विष और ये दवाईयों का रक्त द्वारा पुन: अभिशोषण कर रक्त में मिलाकर निष्कासन मार्गों तक पहुँचाने में निश्चित ही दु:ख , दर्द, पीड़ा और प्रलाप की अनुभूति होना निश्चित है। प्राकृतिक उपचार. इस हेतु निष्कासन जल्दी हो और दर्द की अनुभूति कम होना चाहे तो सारे बदन की गीली पट्टी करनी चाहिए।

17. कुकुर खांसी: उदर प्रदेश की ऐंठन भरी सिकुडऩ से, आमाशय से पित्त के वापिस पहुंचने से तथा आंतों के अवरोध के कारण कुकुर खांसी उत्पन्न होती है। यह ज्यादा समय तक चलने पर हानिकारक है।

प्राकृतिक उपचार. ऐसी स्थिति में ठण्ड़ा पानी पीयें, वमन करायें, मेरूदण्ड़ को गरम पट्टी से कस कर बांधे ताकि उदर प्रदेश में ऐंठन बंद हो जायें।

18. मृत्यु: उपवास के दौरान हुई मृत्यु के मामलों की, कि गई जांच से स्पष्ट हो गया है कि वह व्यक्ति उपवास करता या नहीं उसकी मृत्यु तो होनी ही थी। चिकित्सा के लिए किया गया उपवास चिकित्सक की देख.रेख में उतनी देर तक चलाया जाना है कि वह रोगी के लिए लाभप्रद हो। इसलिए रोगी को आत्मबल रखना चाहिए। तनिक भी भय एवं आशंका का शिकार न बने और प्रसन्नचित रहें। आने वाली मौत को कोई रोक नहीं सकता। उपवास चिकित्सक की देख.रेख में ही होना ज्यादा लाभदायक सिद्ध होगा। उपवास करने वाला व्यक्ति और उसके परिवार.जन एवं परिचित लोग चिकित्सक की सलाह का पूर्ण पालन करें। उपवास के दौरान व्यक्ति की मृत्यु हो जाने का कारण यह नहीं है कि वह उपवास के दौरान भूख से मर गया। बल्कि इसका वास्तविक कारण यह है कि एक मोटर के चलने में उसकी शक्ति से अधिक बाधा उत्पन्न कर दो तो वह रूक जायेगी और गरम होकर जल जायेगी। ठीक इसी प्रकार शरीर में ज्यादा और ठोस मल विष, श्लेष्मा, रसायन भरा पड़ा है तो उसके लिए बहुत लम्बा उपवास करें या न करें। ऐसे व्यक्तियों के उपवास के दौरान यदि मल रक्त में नहीं घुला हो और रक्त प्रवाह में बाधा उत्पन्न कर देता है, जो वायु भार से अधिक हो जाने पर मानव यंत्र की क्रिया ठप हो जाती है।

6.11 उपवास की सर्व सुलभ विधि

1. उपवास से पूर्व की तैयारी

1. उपवास करने से पहले सबसे पहला काम यह है कि उपवास के सम्बन्ध में सारी जानकारी ले लेना चाहिए।

2. उपवास किसी जानकार के मार्गदर्शन में शुरू करना चहिए।

3. ठोस या भारी भोजन करना बंद कर दें।

4. मांसाहारी लोग दो दिन पूर्व शाकाहारी बन जायें।

5. 2.3 दिन पूर्व से ही आवश्यकता से कम मात्रा में खाना ही पंसद करें।

6. यदि वह दिन में 3.4 बार खाना खाते हो तो उसे 2.3 दिन पूर्व ही दो बार भोजन पर आ जाना चाहिए।

7. खाने की बारी व मात्रा नियंत्रित कर लेने पर फलों के रस एवं फल, दूध, हरी पत्तीदार सब्जियाँ, सलाद, तरकारियाँ आदि का सेवन उपवास से सप्ताह भर पहले ही कर देना चाहिए। जिससे शरीर में खनिज.लवण और विटामिन का पर्याप्त भण्डार हो जाये।

8. उपवास से 10.12 दिनों पूर्व ही खूब पानी पीने की आदत.सी बना लें। उपवास के दौरान केवल जल ही ग्रहण करें। इस समय जितना अधिक जल ग्रहण कर निष्कासित किया जायेगा उतना ही जल्दी शरीर से अपशिष्ट जैसे लसदार श्लेष्मा, पूय या पस या मवाद, रसायन, मल आदि जमे हुए एवं फंसे हुए पानी में जल्दी घुलेंगे और घुलकर वे इतने ढ़ीले हो जायेंगे की वृक्क जैसे बारीक छलनी से गुजर जायें।

2. उपवास के समय की तैयारी

1. उपवास के प्रारम्भिक दिनों में दिमाग क्षुब्ध रहता है जो शरीर अपनी लम्बी आदत के कारण भोजन की याद दिलाता है। उस समय यह समझा जा सकता है कि भोजन हमारे लिए शारीरिक ही नहीं मानसिक रूप से भी कितना महत्वपूर्ण हैं।

2. उपवास के दौरान वास्तविक भूख लगने पर ही भोजन करने का संकल्प रखना चाहिए।

3. आमाशय की मांसपेशियों की लयात्मक गतिविधियां मस्तिष्क को भोजन का विचार पहुंचा देती है। तब पानी पीयें और ध्यान अन्यत्र स्थापित कर दें। भूख समाप्त हो जायेगी।

4. उपवास से पूर्व शारीरिक क्षमता के अनुसार सामान्य व्यायाम और प्रात: टहलना चाहिए तथा उपवास के प्रारम्भिक दिनों में इन्हें बंदकर पुन: शुरू कर सकते है।

5. उपवास के दौरान शैयाग्रस्त न हो तो टहलना अच्छा होगा।

6. उपवास के दौरान नियमित 8.10 घंटे सोना चाहिए।

7. अनुकूल मौसम होने पर उपवास का ज्यादा समय खुली हवा में ही बिताना चाहिए।

8. उपवास के समय थोड़ा.सा काम कर लेने के बाद आराम करना चाहिए। आराम करते समय शरीर पूर्वत: शिथिल रखना चाहिए। शरीर की सभी मांसपेशियों को आराम मिलें। किसी भी प्रकार का तनाव न होना चाहिए।

9. लम्बा उपवास खुले स्थान पर होना चाहिए , जिससे ताजी हवा और सूर्य की सजीव एवं प्राणदायिनी किरणें मिल सकें। लम्बे उपवास से देखना, सुनना, सुंघना, स्वाद लेना, महसूस करना एवं बुद्धि आदि का बोध अत्यन्त तीव्र हो जाता है।

10. आंतरिक अंगों जैसे. यकृत , गुर्दा, आंत आदि पर कम कार्य भार रहें। इस हेतु उपवास में गर्म और ठण्ड़े पानी का स्नान करना चाहिए। घर्षण स्नान करें एवं गीले व सूखे तौलिए से अच्छी त्वचा की सफाई कर दें। पहले गरम पानी से नहाने से त्वचा के सभी रन्ध्र खुल जाते है, फिर तुरन्त गरम पानी का त्वचा पर कोई दुष्प्रभाव न पड़े। इस हेतु ठण्ड़े पानी से स्नान कर लें।

11. त्वचा की अच्छी सफाई रखने हेतु स्नान से पूर्व पुरे शरीर पर लेई या पीटी करनी चाहिए।

12. उपवास में शरीर की त्वचा गरम रहनी चाहिए, विशेषकर पैर अवश्य गरम रहें।

13. उपवास के दौरान बर्फ जैसा ठण्ड़ा पानी न पीयें। रोगी जितना गर्म पानी पीने में समर्थ है उसे उससे ज्यादा गरम पानी पीने न दें। ठीक ऐसा ही नहाने के लिए गरम पानी भी लें।

14. उपवास के दिनों में पीये जाने वाले पानी का स्वाद और गंध अप्रिय लगे तो पानी उबालकर ठण्ड़ा कर घड़े में भर दें। वह पानी पिलाएं। फिर भी अप्रिय लगे तो एक गिलास पानी में 4.5 बूंद तक नीम्बू का रस मिलाकर दें सकते है। इससे ज्यादा नीम्बू का रस न दें , अन्यथा शरीर की सक्रियता प्रारम्भ होने से असमय भोजन की मांग होने लगेगी। पानी के बर्तनों को साफ रखें।

15. उपवास के दिनों एनिमा द्वारा प्रत्येक दिन आंतों की सफाई करनी चाहिए। जिससे आंतों में मलका न रहे तथा शरीर में स्फूर्ति बनी रहें।

16. उपवास के दिनों में उचित मानसिक प्रवृत्ति बनाये रखें तभी तो उपवास चिकित्सा से लाभ प्राप्त कर तमाम संकटों एवं उपद्रवों से छुटकारा पा सकते हैं।

17. उपवास में हो रही पीड़ा तो अतीत में शरीर को पहुंचाए गए नुकसानों का मुआवजा मात्र है।

18. उपवास के दिनों में भय, चिन्ता, आंशका आदि उद्वेगों से दूर रहना चाहिए। क्योंकि ये उद्वेग शरीर की शक्तियों का अत्यन्त तीव्र गति से विघटक कर देते है। अत: आशा , विश्वास, साहस आदि मनोवेगों को अपनाना चाहिए। जिससे शरीर की सक्रियता बढ़ कर शक्ति प्राप्त होती है।

19. उपवास के दिनों में विश्राम के छोटे.छोटे कालखण्ड अत्यन्त लाभदायक सिद्ध होते है , क्योंकि उपवास में शरीर रोगों से जूझ रहा होता है। अत: प्रत्येक क्षण दिमाग किसी न किसी काम में लगाये रखना चाहिए।

20. उपवास के दिनों में खाली समय को भरने हेतु दैनिक कार्यक्रम निम्नवत् रख सकते है: सोकर उठने पर शरीर को तानने और फैलने वाला व्यायाम करें और शरीर की हल्की मालिश करें। व्यायाम में लेटे.लेटे अंगड़ाई लेना, हाथ.पैर फैलाना, सिर को चारों ओर घुमाना , सिर की तरह धड़ को भी घुमाना , रीढ़ को बिना झुकाए और घुटनों को बिना मोड़े हाथ की अंगुलियों से पैर की अंगुलियों को छूना , खूली हवा में गहरी सांस लेना, पंजों के बल खड़े रहकर शरीर को तानना, गहरी सांस लेने से पूर्व व बाद में थोड़ा.थोड़ा पानी पीना व्यायाम के बाद स्नान करना, फिर खुली हवा में घुमना, गहरी सांस लेना आदि।

3. उपवास के समापन की तैयारी या उपवास कैसे तोडऩा चाहिए

उपवास के पूर्ण हो चुकने पर प्रकृति अनेक लक्षणों द्वारा उपवास तोडऩे का संकेत करने लगती है , जैसे. जीभ प्राय: साफ हो जाना , सांस मधुर. गंधयुक्त हो जाना , नाड़ी की गति और शरीर का ताप सामान्य हो जाना, शरीर में ताजगी और आह्लाद भरा होना, शरीर की सतह पर रक्त संचार तीव्र हो जाना, स्वाभाविक भूख लौट आना आदि। असमय ही उपवास तोड़ देने से , किये गये उपवास से कोई लाभ नहीं मिल पाता है। रोगी पूरी तरह से स्वस्थ होने से वंचित रह जायेगा। उपवास के समय कभी भी एक कण भी भोजन का नहीं लेना चाहिए अन्यथा आहार तंत्र भोजन की मांग करेगा। उपवास तोडऩे पर ज्यादा पौष्टिक एवं भारी खाना नहीं खाना तथा खाने की मात्रा भी कम रखनी चाहिए अर्थात् उस व्यक्ति को अपने खान.पान पर

बड़ी सावधानी तथा संयम की जरूरत होती है। असमय उपवास तोडऩें पर शरीर पर अनेकों कुपरिणाम घटित होते है। रोगी स्वस्थ न होकर रोगी बना रह जाता , उसकी नाड़ी की गति तीव्र , शरीर के ताप में वृद्धि, विचार एवं तर्क शक्ति का मंद पडऩा एवं विचार एवं तर्क शक्ति पर दुष्प्रभाव पडऩा आदि।

प्रकृति द्वारा उपवास तोडऩे के संकेत पूर्ण हो जाने पर उपवास तोड़ें। उपवास पूर्ण हो जोने पर सर्वाधिक श्रेष्ठ आहार तरल फलों के रस में संतरे का रस है। संतरे के रस लेने के 2.3 घंटे बाद अन्य फल या इसका रस ले सकते है। ध्यान रहे कि किसी भी फल का रस हो पानी जरूर मिला कर पीना चाहिए। तरबूज , टमाटर का रस भी श्रेष्ठ है। रस व पानी घूंट.घूंट पीना ही श्रेष्ठ होगा। एक गिलास पानी पीने में 3.4 मिनट अवश्य लगायें। यदि बड़ा उपवास किया हो तो सिर्फ आधा गिलास रस ही लेना चाहिए।

सर्वप्रथम उपवास तोडऩे के लिए आधा गिलास का 2/3 गिलास फल का रस और 1/3 पानी अच्छी तरह मिला कर उपवास तोडऩे के लिए पर्याप्त है। इसके बाद खाये जाने वाले पदार्थो या उसके रसों में फलों के छिलके न खायें।

एक बार उपवास टूट जाने पर शरीर बराबर खाने की मांग करता है। अत: मनोबल के सहारे ही इस मांग पर नियंत्रण करें। इस अवधि में यदि आवश्यकता से ज्यादा एवं भारी व ज्यादा पौष्टिक खा लिया जाये तो उपवास से मिलने वाले अच्छे परिणाम नहीं मिल पाते है। यदि आप फल खा रहे है तो अच्छा.सा चबा.चबा कर खायें।

ऐसा न हो कि उपवास तोडऩे एवं स्वास्थ्य में सुधार की खूशी में मिठ्ठाइयाँ खा लें। अत: सावधान रहें।

4. उपवास की समाप्ति पर आहार का चुनाव

1. फलाहार: 1 या 2 फलों को ही उपवास में काम में लें। खट्टे फलों का ज्यादा सेवन न करें। दो समय के भोजन के बीच खूब पानी पीयें।

2. दुग्धाहार: उपवास के बाद दुग्धाहार पर रहना अत्यन्त उपयोगी है। इसकी पूरी जानकारी दुग्ध.कल्प में देखें।

3. दलिया: यदि उपवास आमाशय रोग से सम्बन्धित उपचार हेतु किया जावे , तो उपवास के उपरान्त दलिये का सत् बना कर दिन में 3 बार थोड़ा.थोड़ा दिया जाना चाहिए। फिर धीरे.धीरे मात्रा बढ़ाये एवं दलिया के सत् को थोड़ा सा गाढ़ा बना कर खायें। प्रारम्भ में यह दलिया आटे का ही बनायें। फिर मोटे गेहूँ का दलिये का बना सकते है।

4. सामान्य मिश्राहार: पहले दिन खट्टे.मिठे रसीले फलों का रस दें। दूसरे दिन कई तरकारियों व सब्जियों को अच्छा उबाल कर रस दें। फिर 3.4 दिन दलिया दे सकते है। दलिया गेहूँ या बाजरी को अंकुरित कर बनाया हुआ ज्यादा अच्छा है। दलिया खाने का समय दोपहर का रखें। सायं काल दूध आधा गिलास , सारा भोजन खूब चबा.चबा कर करना चाहिए , खूब पानी पीना चाहिए। ध्यान रहे कि ज्यादा न खाये , जल्दी न खायें। करीब दो सप्ताह भूख पर संयम रखें। ऐसा करने पर उपवास का भरपूर लाभ उठाया जाता है। एक बार के आहार में 200 से 400 ग्राम से ज्यादा भोजन ग्रहण न करें। जितना कम खाया जा सके , उतना ही आपके लिए अच्छा होगा। उपवास कबतक और कैसे समाप्त किया जाये इसका निश्चय उपवास

के दौरान होने वाले परिवर्तनों का निरीक्षण करने पर ही किया जा सकता है। चिकित्सक निरीक्षण के दौरान यह ध्यान रखें कि रक्त प्रवाह में रूकावट बढ़ रही है अर्थात् इसका कारण यह कि रक्त में विष घुल नहीं रहे है और वे निष्क्रिय नहीं बन पा रहे है। तो उसी समय उपवास भंग करा कर श्लेष्माहीन आहार की शुरूआत करा दें।

सामान्य आहार.क्रम

1. सुबह: भिगोई गए किशमिश, बादाम और साथ में दूध लें।

दोपहर: तरकारियों का रस, चावल का गीला भात व थोड़ा मट्ठा।

रात: तरकारियों का रस , उबली तरकारियां, भुने हुए आलू , सलाद, भिगी मेवे.किशमिश, अंजीर और खुबानी।

2. सुबह: खट्टे मीठे फल और दूध लें।

दोपहर: भुने आलू, उबली तरकारी, हरी सलाद

रात: तरकारियों का शोरबा, एक हरी उबली तरकारी, कच्ची तरकारी, दही या मट्ठा।

3. सुबह: मेवे, फल और दूध।

दोपहर: कुछ हरी सब्जियों का रस, टमाटर, पालक का सलाद, प्याज, दही या मट्ठा।

रात: तरकारियों का रस या एक या दो उबली तरकारियां, सलाद।

नियमित व्यायाम, टहलना, गहरी सांस लेना, खूब पानी पीना, त्वचा की सफाई, घर्षण स्नान करना, मोटे तौलिये से शरीर को पोंछना, वायु.जल.सूर्य स्नान करना। मौसम के अनुसार कपड़े पहनना, नियमित शौच के लिए जाना , गुटखा, शराब आदि नशा न करें। नियमित विश्राम , शिथिलीकरण और निद्रा। प्रत्येक उपवासक प्राकृतिक जीवन की ओर ही रहें। खान.पान, अचार.विचारों में संयम बरते। हमें ऐसी कोई भूल नहीं करनी चाहिए जो हमने पहले की अन्यथा पुन: शरीर रोगग्रस्त बन जायेगा। ऐसा थोड़ा भी महसूस होने पर उसका पश्चाताप करें अर्थात् उपवास।

उपवास और उपवास के बाद स्वास्थ्य निर्माण हेतु आहार

जब उपवास सफलता पूर्वक पूरा हो जाये और शरीर की स्थिति स्वस्थ हो जायें। तब अपना लक्ष्य यह रखना चाहिए कि शरीर में जल्दी से जल्दी एक निश्चित मात्रा में स्वास्थ्य तंतुओं का निर्माण हो जायें और समस्त शारीरिक क्रियाएं नियमित एवं सामान्य रूप से होने लगें। इस हेतु आपको न ही गरिष्ट भोजन करना है और न ही जल्दी.जल्दी खाना है। बल्कि इस हेतु आपको उपवास पूर्ण होने पर फलाहार या दुग्धाहार से लाभ प्राप्त करना है। जब यह लगे कि दुग्ध.कल्प पूर्ण हो गया तब कोई अन्य आहार ग्रहण करें। ऐसा आहार ले जो ज्यादा लाभप्रद सिद्ध हो। दुग्ध.कल्प को पूर्ण बंद न करें। उसे कुछ मात्रा और खुराक कम करते हुए अल्पाहार लें। उपवास के बाद लिये जाने वाले आहार.क्रम चिकित्सक के परामर्श से ही प्रारम्भ करना श्रेष्टकर होगा। (सुबह से दोपहर तक 250.500 मिली. दूध पीयें और 4.5 घण्टे पानी में भिगोये हुए सुखे फल. किशमिश, मुनक्का, खजूर, अंजीर, खुमानी आदि खायें)

1. एक बजे मीठे फल, दूध या मट्ठा खा.पी लें। शाम 5.6 बजे कुछ ताजे मीठे फल और तरकारियां खा लें। (दूध, फल.तरकारियों का रस और पानी धीरे.धीरे पीयें और अच्छा.सा चबा.चबाकर खायें। आवश्कयता से कम अर्थात् अधिक न खायें।)

2. एक बजे तक प्रत्येक घंटे पर सुबह से 1/4 लीटर दूध या मट्ठा पी लें। 5.6 बजे अल्पाहार में एक खट्टा फल, एक मीठा फल व तरकारियां खा सकते है और कोई एक मेवा भी ले सकते है। इच्छा हो तो दूध भी पी सकते है।

3. सुबह से एक बजे तक प्रत्येक एक घंटे से आधा पाव पी सकते है। 5.6 बजे ऐसा आहार ले जो अनुभव की कसौटी पर आपकी प्रकृति से सम्पूर्ण मेल खाता हो।

4. सुबह से एक बजे तक दूध या मट्ठा और 5.6 बजे बहुत.सी हरी व ताजी तरकारियां लेकिन रोटी नहीं। (दूध की जगह तरकारियां भी ले सकते है, तब दूध सुबह एक बार ले लें।)

5. उठने के कुछ मिनट बाद 300 मिली. गुनगुना दूध या मट्ठा 12 से 3 बजे के बीच अपनी प्रकृति से मेल खाने वाली कुछ चीजों का अल्पाहार। सोने के1.2 घंटे पहले 300 मिली. दूध।

6. कुछ खट्टे.मीठे फलों को खूब महिन काट कर जैतुन का तेल या मलाई को बहुत मिला देने पर कोई एक तरह का मेवा भी महिन कर मिलाकर खायें। एक बजे तक दूध या मट्ठा लेने के बाद 5.6 बजे कुछ मेवा और साथ में एक गिलास दूध भी लें।

7. एक बजे तक दूध.मट्ठा लें , 4.5 बजे अल्पाहार में सब्जी का रस , कच्ची तरकारियों का सलाद, 1.2 उबली तरकारियां लें। साथ में दूध या मट्ठा ले सकते है या फिर आलू या चावल।

(उक्त 7 आहार क्रम दुग्ध कल्प के साथ में बहुत उपयोगी है।)

(नीचे दुग्ध कल्प समाप्त करने पर आहार.क्रम अपनाना चाहिए।)

8. भाप में पकाये गये गेहूँ या जौ साथ में मलाई व किशमिश जो कुल मिलाकर लगभग 100.150 ग्राम सुबह.शाम ग्रहण करें। साथ में इच्छानुसार दूध भी ले सकते है। दोपहर में खट्टे.मीठे फल और दूध लें और धीरे.धीरे 150 से 200 . 250 ग्राम की ओर बढ़ें।

9. दिन में दो बार आटे की रोटी , मीठे फल, दूध मलाई लें। किशमिश , अंजीर, पिंडखजूर व केला का प्रयोग मीठे फलों के रूप में किया जायें। सोने से पहले250 मिली. दूध लें। यह दोपहर में भी ले सकते है।

6.12 उपवास के दौरान सावधानियाँ

1. उपवास काल में रखी जाने वाली सावधानियाँ

1. कम से कम एक दिन के अन्तर पर तो एनिमा लेना आवश्यक है। जिससे बड़ी आंत की सफाई हो जायें।

2. लम्बा उपवास आरम्भ करने से पूर्व उसकी तैयारी में रेचक पदार्थ अवश्य लें।

3. अधिकतर दिन.रात ताजी हवा में रहें।

4. जब ताकत जान पड़े तो टहलिये , व्यायाम करे, गहरी सांस लें, कोई शारीरिक काम करें। पर थकान और कमजोरी मालूम पड़े तो विश्राम करें, और नींद निकालें।

5. बहुत अधिक कमजोरी मालूम होने पर , नींद में खलल पड़ेगा , विश्राम विश्रामदायक न होगा , मन में संदेह पैदा होगा, विश्वास में कमी होगी, पर आप यह न भूले कि आप प्रकृति के ऑपरेशन टेबुल पर लेटे हुए है और आपके शरीर में सबसे विचित्र शल्य क्रिया हो रही है , वह भी बिना नश्तर के। यदि इस समय रासायनिक दृश्यों के रक्त में पहुंच जाने के कारण कोई असाधारण संवेदन हो रहा हो तो शीघ्र ही एनिमा लेना चाहिए और यदि आवश्यक जान पड़े तो उपवास भंग कर सकते है, लेकिन ऐसी अवस्था में उपवास भंग फलाहार से न करके सिर्फ तरल पदार्थ लेवें जैसे. नारियल पानी, मौसमी का रस, नीम्बू पानी आदि के साथ शहद जरूर लेवें।

6. लेटने, उठने, फिरने के समय बहुत सावधानी से धीरे.धीरे सहारे की आवश्यकता समझते हुए उठना , बैठना, लेटना, फिरना, उतरना आदि चाहिए।

7. उपवास के दौरान चिकित्सक की सलाह पर पानी के साथ कम मात्रा में शहद या फल का रस या नीम्बू का रस मिलाकर ले सकते है। जिससे रक्त में भी श्लेष्मा जमा हुआ रहता है वह ढ़ीला पड़ जाता है , उसकी चिपचिपाहट दूर हो जाती है।

2. उपवास के बाद रखी जाने वाली सावधानियाँ

1. उपवास के बाद से कुछ दिनों तक ऐसा भोजन करें जिसका प्रभाव रेचक हो , चाहे वह पौष्टिक न भी हो।

2. वह भोजन जितना जल्दी शरीर से गुजरने वाला हो, उसका यह प्रभाव होगा कि रक्त में शेष ढ़ीला पड़ा श्लेष्मा.विष उसके साथ मिलकर बाहर निष्कासित हो।

3. यदि प्रत्येक 3.4 घंटे के बाद पाखान (शौच) न आये तो मृदु विरेचन और एनिमा की सहायता लें।

4. जैसे इंजन की रिपेयर करते समय उसके पुर्जों की जितनी अच्छी सफाई होगी वह उतनी ही अच्छी कार्य क्षमता से काम करेगा। ठीक ऐसा ही उपवास के दौरान शरीर में जमा मल.विष जितना अधिक रक्त में मिलकर बाहर निकल जाएगा। उतनी ही अधिक कार्यक्षमता आंतों की एवं अन्य शारीरिक क्रिया प्रणाली बढ़ जायेगी।

5. उपवास के बाद सर्वोत्तम विरेचक पदार्थ अंगूर आदि मीठे फल होते है। इसका उपयोग वे व्यक्ति करे , जिन्होंने उपवास से पूर्व श्लेष्माहीन या परिवर्तनकालीन आहार शुरू किया था और वे व्यक्ति जिन्होने उपवास से पूर्व ऐसी उपवास की तैयारी न की है, वे फलाहार न करें। उन व्यक्तियों को अमिषभोजी कहते है।

6. यदि साधारण अवस्था हो तो कच्ची या उबली हुई श्वेतसारहीन तरकारियों का उपयोग करें। धीमी आंच पर उबाला पालक बहुत अच्छा है।

7. उपवास भंग के बाद 2.3 दिन पाखान (शौच) न आने पर आहार की मात्रा थोड़ी.सी बढ़ा दें। अन्यथा ज्यादा मात्रा से खतरा है।

8. ध्यान रहे उपवास काल में एकत्र हुआ मल एवं रक्त में शेष बचे रह गये अपशिष्ट बाहर निकालने के लिए उपवास भंग के 4.5 दिनों तक नियमित ज्यादा पाखान (शौच) की जरूरत है, अत: उतना खाते रहें।

6.13 पेट को आराम देने के लिए उपवास के कई तरीकें

1. आंशिक उपवास: इस उपवास में पानी , फलाहार, छाछ एवं दूध का उपयोग किया जाता है। फलाहार में अंगूर, नाशपाती, संतरा, मौसम्बी आदि प्रमुख है। इनका रस दिन में 3 बार 200 ग्राम लें। 3 बार छाछ लें। सुबह.दोपहर में मलाई रहित दूध लेने पर सामान्य बीमारियां ठीक हो जाती है। जब तक छोटी.छोटी बीमारियां ठीक न हो जायें, आंशिक उपवास सप्ताह भर के लिए कर सकते है।

2. नाश्ते से परहेज : स्वस्थ शरीर का एक नियम है कि आमाशय में खाद्य पदार्थ पच कर आगे निकल जाता है और आमाशय पूर्णतया रिक्त हो जाये तो शरीर की सारी शक्ति मल विसर्जन की क्रिया में लग जाती है।

जिससे आहार तंत्र मल से पूर्णत: साफ हो जाता है। लेकिन आजकल खानपान की सबसे बुरी आदत बन गई है। पुरे दिन तो लोग सुबह से खाना आरम्भ करते है , तब तक खाते रहते है जब तक उन्हें नींद न आ जायें। तब होता यह है कि आमाशय थोड़ा खाली होने लगता है तो मल विसर्जन चालू हो जाता है तभी आमाशय में ओर भोजन आ जाने से मल विसर्जन बन्द होकर पाचन प्रारम्भ हो जाता है।

ऐसी स्थिति में यह होता है कि मल का पूर्ण विसर्जन न होने के कारण शरीर में अपशिष्ट बढ़ते जाते है और शरीर पतली टांगों पर बड़े से मटके की भांति, रबड़ की तरह पेट बढ़ जाता है अर्थात् पूरा शरीर मल के कारण फूल जाता है। वह मल वहीं फँसा रहता है , जब तक उपवास न किया जाये। ऐसे शरीर को हृष्ट.पुष्ट मानते है परन्तु वह स्वस्थ कहलाने के वास्तव में योग्य नहीं है , क्यों न आरोग्य बने रहने के लिए सुबह बिस्तर से उठकर डट कर पानी पीयें शौच के लिए जाये , खुली हवा में व्यायाम करे , नहायें, सूर्य नमस्कार करे और सुबह के भारी नाश्ते की जगह पतला दूध पीयें।

3. चौबीस घंटे का उपवास

आज संसार में बहुत ऐसे व्यक्ति है जो व्रत या उपवास करते है। यह एक समय के भोजन न करने को व्रत कहा गया है लेकिन उनमें से अधिकांश व्यक्ति इसलिए उपवास करते है कि उन्हें उपवास न गलने वाली बहुत.सी चीजें, फल, तरकारियां और आजकल तो उपवास न टूटने वाली नमकीन , मिठाईयां, समोसा, कचौरी, मिर्चीबड़ा आदि कई ऐसे भोज्य पदार्थ बाजार में उपलब्ध है , जो खाने को मिलती है , परन्तु उपवास में इनमें से कुछ न खाना ही उत्तम स्वास्थ्य के लिए अच्छा होगा। लम्बे उपवास के बजाय छोटे उपवास करना ही अधिक श्रेष्ठ है, क्योंकि लम्बे उपवास में रक्त प्रवाह मार्ग संकुचित हो जाने के कारण अपशिष्ट रक्त में कम घुल पाते है और विसर्जन नहीं हो पाता है तथा बचपन से इकठ्ठा मल के प्रभाव से रक्त भी दुषित हो जाता है। उसमें भारी मात्रा में दलाब (श्वेताणु) पैदा हो जाते है।

3. तीन.चार दिन या एक सप्ताह फल के रस पीकर ही रहना। इस हालत में भी एनीमा जरूरी है ऐसे अद्र्घउपवास से भी बहुत लाभ होता है।

4. पन्द्रह.बीस दिन हल्के फल या पकी हरी सब्जी पर ही रह जाना। इसमें जब कभी जरूरत पड़े एनीमा लें।

5. जब किसी को पेट में फलाहार से गड़बड़ी होती है, तो आँतों के अन्दर सड़ते हुए पदार्थ खाये गये फलों को भी विकृत कर देते है। ऐसे व्यक्तियों को दो.तीन दिन के उपवास या रसाहार और एनीमा पर रखना चाहिए।

6. एक बार एक ही चीज खाना जैसे आज सुबह को सिर्फ रोटी , शाम को केवल भाजी, कल सुबह को हरे चने, शाम को आलू गोभी की तरकारी, परसों सुबह को अमरूद, शाम को रोटी........। इस तरह पेट को आराम देना उसके लिए अच्छा है, जिसे कोई सख्त तकलीफ तो नहीं है लेकिन जो कुछ भी है उसे दूर कर स्वास्थ्य को बढ़ाने की आवश्यकता है।

6.14 सारांश

दुनिया के लगभग सभी बुद्धिजीवियों ने उपवास को अपनी जीवन शैली में अपनाया है। व्रत , फलाहार, रसाहार एवं अल्पाहार (सिर्फ जीने के लिए खाना) भी बड़ी महत्व की होने से इनको लघु.उपवास के समतुल्य क्रियाएँ माना गया है। जीवन में ये करते रहने से रोग की भयानक अवस्था कभी.भी नहीं बनती है। एक समय ज्यादा खा लिया या पेट में गड़बड़ समस्या हो गई तो तुरन्त दूसरे समय का उपवास कर लेना बहुत लाभदायक सिद्ध होता है। उपवास से आकाश तत्व की पूर्ति होती है , इसके साथ वायु, अग्नि व जल तत्वों को भी ग्रहण करते रहना चाहिए। ऐसा न हो की उपवास में जल पीना ही बंद कर दें तो प्राणघातक हो सकता है। उपवास में सिर्फ ओर सिर्फ बंद करना है. मिट्टी तत्व से उत्पन्न अनाजों को। उपवास से मुख्यतया वज़न नियंत्रण करने, शरीर की क्षति पूर्ति करने, शरीर व आंतरिक अंगों को विश्राम देने एवं शरीर की सफाई के लिए उपयोगी है। आप भी इसका लाभ लें।

6.15 बोधात्मक प्रश्न

1. उपवास का शाब्दिक अर्थ एवं परिभाषाएँ लिखिए?
2. शरीर में खाली स्थान किस तत्व का द्योतक है?
3. शरीर रोग ग्रस्त हो तो सर्वप्रथम किस तत्व की सर्वाधिक पूर्ति करानी चाहिए?
4. 'हजारों रूपयों की जहरीली दवायें खाने और समय व शरीर बर्बाद करने से अच्छा क्या है , जिससे रोगी स्वास्थ्य एवं दीघार्यु प्राप्त कर सकें।' समझाइये?
5. प्राकृतिक चिकित्सा में किसको ब्रह्मास्त्र की संज्ञा दी गई है?
6. महात्मा गाँधी ने अहिंसात्मक आन्दोलनों में किसका सहारा लिया था?
7. कौन.कौन से व्रत या उपवास धार्मिक महत्व के है?
8. उपवास एक कैसी साधारण प्रक्रिया है?
9. उपवास को किस आधार पर कितने प्रकारों में बाँटा गया है? विस्तार से वर्णन कीजिए।

10. उपवास की उपयोगिता को उदाहरण द्वारा समझाइये?
11. उपवास के दौरान किन.किन बातों पर ध्यान देना अति आवश्यक है?
12. उपवास और भुखमरी में मूल अन्तर समझाइये?
13. उपवास से होने वाले सभी लाभों का वर्णन करो?
14. 'रोगग्रस्त स्थिति और उपवास के दौरान शरीर.विज्ञान के भीतर ठीक.ठीक क्या और कैसे घटित होता है।' इस सम्बन्ध में हुई गंवेषणाओं के निष्कर्षो का वर्णन कीजिए?
15. उपवास कब और कब नहीं करना चाहिए? विस्तार से वर्णन कीजिए।
16. उपवास कालीन विभिन्न लक्षणों, उपद्रवों और संकट को कैसे पहचानेंगे और उसका समाधान कैसे करेंगे? वर्णन कीजिए।
17. उपवास से पूर्व क्या.क्या तैयारियाँ करनी चाहिए?
18. उपवास की सर्व सुलभ विधि का वर्णन कीजिए?
19. उपवास कैसे तोडऩा चाहिए? वर्णन कीजिए।
20. उपवास की समाप्त होने पर आहार.क्रम का वर्णन कीजिए।
21. उपवास के दौरान कौन.कौन सी सावधानियाँ रखनी चाहिए? वर्णन कीजिए।
22. पेट को आराम देने के लिए उपवास के अन्य तरीकों का वर्णन कीजिए।
23. उपवास में सिर्फ ओर सिर्फ क्या बंद करना चाहिए?

6.16 संदर्भ ग्रंथों की सूची

संदर्भ ग्रंथों की सूची में सम्मिलित ग्रन्थों एवं उनकी सहायक सामग्री का उपयोग हमने इस ग्रन्थ के निर्माण में सहायक के रूप में किया है। हम इन संदर्भित ग्रन्थों, उनके लेखकों, प्रकाशकों एवं संस्थाओं के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

संदर्भ साहित्य	**लेखक**	**संदर्भ साहित्य**	**लेखक**
प्राकृतिक आयुर्विज्ञान	डॉ. राकेश जिन्दल	प्राकृतिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य	डॉ. महेन्द्र कुमार जाजपुरा
वृहद प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. ओ. पी. सक्सेना	प्राण शक्ति उपचार; प्राचीन विज्ञान कला	चौ. कोक सुई
स्वस्थवृत विज्ञान	प्रो. रामहर्ष सिंह	जीवनी शक्ति कैसे जगायें	डॉ. चन्द्र दीप सिंह
प्राकृतिक स्वास्थ्य शास्त्र	आचार्य शेषांद्रि स्वामीनाथन	आपका आरोग्य आपके हाथ में	देवेन्द्र वोरा
आदिऊर्जा प्राण	अमश्ता भारती	प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग वैज्ञानिक प्रयोग	डॉ. नागेन्द्र कुमार नीरज
स्वास्थ्य के सोपान	नरूपमल सुराणा	जीवेम् शरद शतम्	पं. श्री राम शर्मा आचार्य वाङ्मय
सरल प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. लक्ष्मी नारायण शर्मा	बिना औषयियों के कायाकल्प	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
पातंजली योगसूत्र	स्वामी विवेकानंद	निरोग जीवन का राज मार्ग	पं. श्री राम शर्मा आचार्य

प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग	श्रीमत्ती राज कुमारी गुप्ता	दीर्घ जीवन की प्राप्ति	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
प्राकृतिक जीवन की ओर	श्री एडोल्फ जस्ट	पंच तत्वों द्वारा सम्पूर्ण रोगों का निवारण	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
100 वर्ष निरोगी रहिए	माणेक लाल म. पटेल	रोगों की सरल चिकित्सा	विट्ठलदास मोदी
रोगों की अचूक चिकित्सा	जानकी शरण वर्मा	जीने की कला	विट्ठलदास मोदी
प्रकृति से मैत्री	प्रकाशन विभाग	आरोग्य प्रकाश	वैद्यराज पं. रामनारायण शर्मा
आरोग्य की कुंजी	राष्ट्रपिता महात्मा गाी	मौलिक चिकित्सा कौन सी?	डॉ. चंचलमल चोरडिया
कुदरती चिकित्सा	राष्ट्रपिता महात्मा गाी	प्राकृतिक चिकित्सा दर्शन	हेनरी लिंडलार
उपवास चिकित्सा	बर्नर मैकफेडन	Fasting can sour your life	H.N. Shelton
प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. सतीश गोयल	Fasting can save your life	Dr. Herbert m. Shelton
The true healing art	R. T. Trall	A complete handbook of nature Cure – edition 4	Dr. H. K. Bakhru
100 वर्ष कैसे जीयें	आचार्य श्याम सुन्दर सुमन	अखिल भारतीय प्राकृतिक जीवन संघ द्वारा प्रकाशित एन.डी. कोर्स के लेख (भूज, गुजरात)	

****

इकाई 7

वायु (हवा) तत्व एवं उसकी चिकित्सा. यौगिक क्रिया एवं अग्निहोत्र

इकाई की रूपरेखा

7.1. उद्देश्य

7.2. प्रस्तावना

7.3. वायु का चिकित्सकीय महत्व एवं इतिहास

7.4. यौगिक क्रिया

वायु स्नान टहलना

7.5. अग्निहोत्र (औषधि.हवन)

7.6. सारांश

7.7. बोधात्मक प्रश्न

7.8. संदर्भ ग्रंथ

7.1 उद्देश्य

- वायु प्राणियों का प्राण तत्व कैसे कहा है
- वायु का चिकित्सकीय महत्व एवं इतिहास क्या है
- फेफड़ों की कितनी कार्य क्षमता है
- यौगिक क्रियाओं के दौरान कौन.सी बातों का ध्यान रखना जरूरी है
- वायु स्नान क्या है, कैसे करते है
- टहलने से पूर्व सिर्फ दो मिनट के जलोपचार कौन.से है
- टहलने का स्थान कैसा हो, कितना टहलना चाहिए, टहलते समय श्वास क्रिया कैसी हो, टहलते समय मनोदशा किस तरह की हो
- अग्निहोत्र का महत्व क्या है
- औषधि.हवन के लिए कौन.कौन सी औषधियाँ है
- किन.किन रोगों में किस औषधि.हवन की आवश्यकता होती है

उपरोक्त समस्त जिज्ञासाओं का उत्तर पाना ही इस अध्याय का उद्देश्य है।

7.2 प्रस्तावना

ईशतत्व से प्रकट होने वाले आकाश तत्व के बाद दूसरे स्थान पर वायु तत्व की उत्पत्ति हुई। वायु को प्रत्यक्षत: प्राणियों का प्राण तत्व कहते है। हम भोजन के बिना कई सप्ताह तक जीवित रह सकते है और पानी बिना कई दिन तक, लेकिन वायु के बिना कुछ मिनट ही। हमको वायु न मिले तो हमारा दम घुटने लगता है। सारे शरीर में बैचेनी फैल जाती है और अधिक देर तक वायु न मिले तो शरीर से प्राणों का अन्त हो जाता है। जीवित रहने के लिए सबसे प्राथमिक आवश्यकता वायु की है। अत: यह तत्व प्राणियों के लिए प्राणदायी एवं अतिआवश्यक है।

7.3 वायु का चिकित्सकीय महत्व एवं इतिहास

Agni Deva and Vayu Deva collecting the sparks from Shiva to drop into the Ganges

जीवन के साथ.साथ प्राणियों के कष्टों एवं रोगों को दूर करने में वायु का स्थान भी महत्वपूर्ण माना गया है। 'शब्द एवं स्पर्श ' गुणों के कारण वायु की गत्यात्मकता आकाश की अपेक्षा बढ़ जाती है तथा वायु अन्य तत्वों की अपेक्षा अधिक सूक्ष्म होने के कारण सभी प्राणियों के अन्दर गहराई तक प्रवेश करती है। हमारे देव व ऋषि.मुनियों ने वायु के इस गुण को बनाये रखने के लिए औषधिय हवन की

परम्परा को प्रारम्भ किया। जिससे औषधियाँ हवन या अग्निहोत्र में जल कर नष्ट नहीं होती है बल्कि सूक्ष्म रूप धारण करके वायु के अद्भूत गुणों को बनाए रखती है। इसी कारण यह लोकोक्ति प्रचलन में आयी कि ‘सौ दवा और एक हवा।’

प्रकृति ने वायु में बहुउपयोगी गैसों का समावेश किया है, जैसे. ‘ऑक्सीजन’ नामक गैस जीव.जन्तुओं का प्राण है। यह शरीर की अनन्त गहराई तक प्रवेश कर वहाँ अपने समान प्रकृति प्रदत्त अन्य तत्वों से मिलती है तथा वहाँ उत्पन्न हुई विषैली गैस ‘कार्बन डाइऑक्साइड’ को शरीर से बाहर कर वायुमण्डल में ले आती है। वायुमण्डल की यह ‘कार्बन डाइऑक्साइड’ वनस्पतियों में प्रवेश कर अनन्त गहराई से ‘ऑक्सीजन’ को वायुमण्डल में ले आती है। यह कार्य जीव.जन्तुओं में ‘हिमोग्लाबिन’ तथा वनस्पतियों में ‘क्लोरोफिल’ के माध्यम से सम्पन्न होता है।

हमारे शरीर में 84 स्थानों पर प्राण या वायु अलग.अलग रूपों में पाये जाते है, जिससे शरीर को सजीवता मिलती है। उनमें से प्रमुख 10 प्राणों के नाम इस प्रकार है. प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान, नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त एवं धनंजय।

वास्तव में हम बड़ी मात्रा में वायु का अनवरत भक्षण करते रहते है। एक स्वस्थ व वयस्क आदमी एक मिनट में 16 से 18 बार श्वास लेता है। एक बार श्वास लेने से 25 से 30 घन इंच या एक दिन में 32 से 37 पौंड तक वायु की आवश्यकता होती है। प्रतिदिन हम जितना भोजन करते है और जल पीते है। उसके साथ लगभग सात गुना वायु का भक्षण करते है। हम श्वास द्वारा जो वायु अन्दर खींचते है , वह फेंफड़ों में 15 वर्गफुट से अधिक का चक्कर लगाती है। फेफड़ों में लगभग 60 घन इंच वायु सदैव मौजूद रहती है और 25 से 33 घन इंच वायु प्रश्वास के रूप में बाहर निकल जाती है। प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति अपनी नासिका की सीध से 21 इंच की दूरी तक की वायु ग्रहण करता और फेंकता है। अत: इस बात को खाते , पीते, सोते, उठते, बैठते तथा चलते समय सदैव ध्यान में रखना चाहिए। श्वास लेने की प्रत्येक क्रिया का सम्बन्ध शरीर की लगभग सौ से अधिक मासंपेशियों से होता है।

हमारा वायु.मण्डल पृथ्वी के चारों ओर 300 मील तक फैला हुआ है। यह वायु.मण्डल कई प्रकार की वायु का मिश्रण है। इसमें जल के वाष्प का बहुत बड़ा अंश विद्यमान है। इसके सिवाय इसमें चार भाग नाइट्रोजन और एक भाग ऑक्सीजन है। ये दोनों गैसें हमारे शरीर के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इन दोनों के अलावा कार्बन.डाईऑक्साइड गैस भी दस हजार में चार अंश तक वायु.मण्डल में मौजूद है और इसमें अत्यन्त अल्प मात्राओं में कहीं.कहीं रासायनिक क्रिया से उपजी अन्य प्रकार की गैसें भी पायी जाती है तथा धूल.कण भी वायु.मण्डल में व्याप्त रहता है। जो वायु श्वास द्वारा शरीर के फेफड़ों में आती है , उसमें मौजूद नाइट्रोजन का

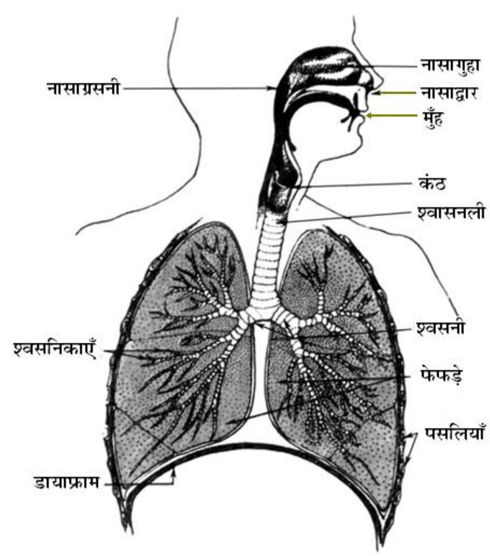

उपयोग शरीर में नहीं होने से वह फेफड़ों में जाकर पुन: लौट आती है। लेकिन ऑक्सीजन लौटकर नहीं आती। वह फेफड़ों में जाकर रक्त से मिलकर गन्दे नीले रक्त का शोधनकर स्वच्छ एवं लाल रक्त में बदल देती है। प्रश्वास के साथ निकली वायु का अवशोषण पृथ्वी और वनस्पति स्वयं करती है। जो इसमें मौजूद कार्बन.डाईऑक्साइड गैस को ग्रहण कर वायु.मण्डल में ऑक्सीजन छोड़ती है। इस प्रकार वायु.मण्डल गैसों का संतुलन बना रहता है।

ऑक्सीजन बड़ा उग्रदाहक है। शुद्ध ऑक्सीजन में तो लोहा आतिशबाजी की तरह जलता है। इसका अन्य वस्तुओं से रासायनिक संयोग इतना प्रचण्ड एवं भंयकर होता है कि जीवन संकट में पड़ जाता है। लोहे , तांबे आदि का जंग , मनुष्य की श्वास , वस्तुओं का सडऩा , आग का जलना , सभी में ऑक्सीजन की संयोजन क्रिया है। सेब काटने पर कटे हुए स्थान का रंग बदल देना ऑक्सीजन का ही काम है। गाय के थनों से दूध निकला नहीं कि उस पर ऑक्सीजन की क्रिया हुई। यह ऑक्सीजन की दहन क्रिया का ही प्रताप है कि नीला, गंदा रक्त क्षण मात्र में शुद्ध होकर लाल हो जाता है। इस सम्बन्ध में एक बात यह मार्के की है कि यदि ऑक्सीजन का सम्पर्क जल या जल वाष्प से न हो तो उसकी दाहिका शक्ति खत्म हो जाती है। यही वजह है जो हमारे श्वास लेने से श्वास में उपस्थित ऑक्सीजन हमें जलाता नहीं , अपितु जीवन प्रदान करता है। कारण यह है कि श्वास के साथ विशुद्ध ऑक्सीजन ही नहीं बल्कि साथ में जलवाष्प एवं नाइट्रोजन भी मिली होती है। जो ऑक्सीजन की प्रबल दाहक शक्ति को शरीर के लिए उपयोगी बनाती है।

ऑक्सीजन से प्रकाश और ताप दोनों की उत्पत्ति होती है। प्राणियों के शरीर में जो ताप होता है , वह ऑक्सीजन की ही देन है। भोजन के अवयवों का ऑक्सीजन के संयोग से मोमबत्ती की भांति धीरे.धीरे जलता हैं। रक्त के लालकण ऑक्सीजन को वायु से ग्रहण करके शरीर के प्रत्येक कोषा तक पहुचंाते है। जहां इसका प्राकृतिक विधि से ऑक्सीडेशन होकर ताप उत्पन्न होता है, जिससे शरीर यथावत् बना रहता है और जीवन नष्ट नहीं होता बल्कि कायम रहता है। शुद्ध वायु में एक प्रकार का और परमोपयोगी वायु मिली है, जिसको ओजोन कहते है, जो केवल जंगल, उपवन, पहाड़ और समुद्र के किनारे की हवा में ही पायी जाती है। ओजोन की गंध बड़ी तीव्र होती है। इसी से वह पहचानी जाती है। क्षय रोगियों की पहाड़ों पर इसी ओजोन से रक्षा होती है। वायु की शुद्धि केवल अग्निहोत्र से होती है। जिसका विधान हमारे पूर्वजों ने कर रखा है।

वात आ वातु भेषजं शंभु मर्याभुवोह्रदे। प्रण आयूषि तारिषत्॥ . ऋग्वेद।

अर्थात् वायु हमारे ह्रदयों में शान्ति पैदा करें। वह सुख देने वाला होकर हमारे पास बहता रहें। वह हमारी आयुष्य को दीर्घ करें।

यददो वात ते गहे मृतस्य निधिर्हित: ततोनो देहि जीवसे। .ऋग्वेद

अर्थात् हे वायो, तेरे घर में जो वह अपूर्ण अमृत का खजाना है , उसमें से हमारे दीर्घ जीवन के लिए थोड़ा.सा भाग दें।

अस्वस्थ से स्वस्थ बनने तथा स्वस्थ जीवन को बनाए रखने के लिए वायु चिकित्सा एवं अग्नि चिकित्सा में यौगिक क्रियाओं एवं अग्निहोत्र (औषधि.हवन) का उपयोग किया जाता है। वायु व अग्नि तत्वों से अधिकाधिक लाभ लेने के लिए हमेशा हल्के, पतले, ढ़ीले और कम वस्त्र पहनने चाहिए। इनके उपयोग से लगभग 80 प्रकार के रोग दूर हो जाते है। इनका वर्णन निम्न प्रकार है.

7.4 यौगिक क्रियाएँ

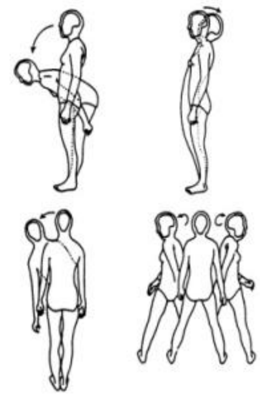

यौगिक क्रियाओं के लिए निम्न दो मुख्य बातों का ध्यान रखना जरूरी है.

1. प्राकृतिक स्थान: प्रदूषण रहित, समतल, सुबह.शाम के समय की हल्की धूप, स्वच्छ, हवादार एवं शांत.एकांत वातावरण वाला स्थान हो।

2. यौगिक क्रियाओं का ज्ञान : ऐसे प्राकृतिक स्थान पर नियमित सुबह.शाम जाकर यौगिक क्रियाओं द्वारा तन , मन एवं आत्मा की शुद्धि का अथक प्रयास करना चाहिए। इस हेतु किसी विशेषज्ञ या योगाचार्य द्वारा परामर्श , प्रशिक्षण लेना ठीक रहता है। जिससे यौगिक क्रियाओं के दौरान शरीर व मन की सही स्थिति बनाये रखने में सहायता मिलती है। वैसे यहाँ इस सम्बन्ध में कुछ महत्वपूर्ण वर्णन इस प्रकार है.

वायु तत्व से स्वस्थ जीवन प्राप्त करने के लिए मादक पदार्थो से दूर रहते हुए रोज सादा.सात्विक भोजन ग्रहण करें और शौच आदि से निवृत होकर आसन पर बैठकर अपना सिर , गर्दन और कमर.पीठ (मेरूदण्ड) सीधा कर लें। मन की स्थिति स्थिर और शांत रखते हुए श्वास.प्रश्वास पर विशेष ध्यान दें, जैसे. श्वास.प्रश्वास की क्रिया, शांत, धीमी, लम्बी, गहरी एवं सरल होनी चाहिए, पूरक करते समय पेट फूलना चाहिए और पेट की नाभि की जगह ठण्ड़ी वायु महसूस होनी चाहिए तथा रेचक करते समय पेट अन्दर दबना चाहिए और नासाछिद्र पर गरम वायु बाहर जाती हुई महसूस होनी चाहिए। श्वास.प्रश्वास सिर्फ नाक द्वारा ही होनी चाहिए, मुँह द्वारा नहीं।

इस अध्याय में आप सिर्फ वायु स्नान एवं टहलने की क्रियाओं का ही अध्ययन करेंगे। शेष यौगिक क्रियाओं एवं उनसे सम्बन्धित श्वास.प्रश्वास के नियमों का अध्ययन योग चिकित्सा में आगे किया जायेगा।

वायु स्नान से अभिप्राय : यह एक ऐसा स्नान है , जिससे शरीर की बाहरी और भीतरी दोनों सफाई साथ.साथ होती है। यह स्नान पतले और कम वस्त्रों को धारण कर शुद्ध और स्वच्छ हवा में टहलने पर ज्यादा उपयोगी सिद्ध होता है। यदि हम इस बात को भलीभांति समझ जाये कि जिस प्रकार हम नाक से प्रतिक्षण श्वास लिया करते है , उसी प्रकार हमारी अपनी त्वचा के असंख्य छिद्रों द्वारा श्वास लेना भी अनिवार्य है तो हम वायु.स्नान की महत्ता एवं आवश्यकता से कभी भी इन्कार नहीं करेंगे। जिस प्रकार घर को शुद्ध और स्वच्छ रखने के लिए घर की खिड़कियां और झरोखे खोल कर अन्दर ताजी हवा का प्रवेश होने देना आवश्यक है , उसी प्रकार इस शरीर रूपी घर में त्वचा के छिद्र रूपी झरोखों से होकर ताजी वायु का प्रवेश नित्य होते रहना परमावश्यक है। कपड़ों से शरीर को सदैव लपेटे रहने से शरीर पीला पड़ जाता है और आये दिन कब्जियत, हृदय रोग तथा मधुमेहादि भयानक रोग सताया करते है।

वायु स्नान की उपयोगिता : उषा:काल में सभी दिशाओं की वायु सब प्रकार के दोषों से मुक्त होती है। इसीलिये प्रात:काल वायु सेवन हितकर होता है। साल के बारहों महीने वायु स्नान सुखपूर्वक एवं आनन्दपूर्वक लिया जा सकता है। सर्दी के दिनों में टहलने या वायु स्नान करने में भी बहुत आनन्द आता है। स्वस्थ जीवन के लिए टहलना आवश्यक है , इसे जीवन का एक कलात्मक अंग मानना चाहिए , क्योंकि यह आनन्द है , पौष्टिक तत्व है , प्रकृति देवी का वरदान है और संसार की सर्वश्रेष्ठ कसरत है। संसार में कसरत की अनगिनत पद्धतियां पायी जाती है , जिनमें से कुछ केवल शरीर की मांसपेशियों को ही सशक्त करने वाली होती है। लेकिन जितना सरल और स्वाभाविक तरीके द्वारा टहलने से शरीर के एक.दो नहीं, बल्कि सभी अंग सशक्त हो जाते है, उसी तरह किसी भी अन्य व्यायाम पद्धति से नहीं होते। टहलने से बालक, जवान एवं वृद्ध तीनों समान रूप से लाभ उठा सकता है। यह इस कसरत की विशेषता है और दूसरी विशेषता यह है कि टहलने की कसरत से किसी का भी जी नहीं ऊबता , जबकि अन्य कसरतों को लोग कुछ दिनों तक करने के बाद अक्सर छोड़ दिया करते है।

आजकल लोग अप्राकृतिक वातारण में रहते , अप्राकृतिक खाते.पीते और पैदल चलने को बुरा और फैशन के खिलाफ समझते है। लेकिन वे लोग नही जानते कि टहलने से बढक़र दूसरी कोई कसरत है ही नहीं और सबसे सुन्दर बात टहलने से जो आराम शरीर और मन को मिलता है। वह और किसी से नहीं। एक स्वस्थ व्यक्ति रात भर गहरी नींद सोने के बाद जब प्रात: काल अमृतमयी वायु ग्रहण करता है , तो उसका मन संसार की तमाम चिन्ता परेशानियों से ऊपर उठकर शान्ति और उत्साह का भागी होता है। जो लोग अन्य प्रकार की कोई कसरत नहीं कर सकते , उनके लिए टहलने की कसरत बहुत जरूरी है। इससे सिर से पांव तक की 200 मांसपेशियों की हल्की.हल्की स्वाभाविक कसरतें हो जाती है। टहलते समय दिल की गति एक मिनट में 72 से बढक़र 82 बार हो जाती है। टहलते समय हमारी श्वास भी तेजी से चलने लगती है और अधिक ऑक्सीजन खून में पहुंच कर खून को साफ करती है। लेकिन टहलने की अपेक्षा कसरत की अन्य पद्धतियों से दिल पर अधिक जोर पड़ता है। इसीलिए टहलना , कसरत की सर्वोत्तम पद्धति मानी गयी है।

टहलने में यह बात महत्व की है कि शुद्ध और स्वच्छ हवा में टहलने पर ही ज्यादा लाभकारी सिद्ध होगा न कि कृत्रिम हवा का इस्तेमाल करने से। क्योंकि पंखे की हवा घूमती हुई तीव्र होती है। ऐसी कृत्रिम हवा उदान वायु को खराब कर देती है तथा व्यान को रोक देता है। जिससे सिर में चक्कर आने लगता हैं और शरीर के जोड़ों को आक्रान्त करने वाला गठिया आदि रोग सताते है। कपड़े के पंखे की हवा पसीना , मूर्च्छा और थकावट को दूर करती है। ताड़ के पंखे की हवा कफ.पित्त.वात त्रिदोषों को हरती है। बांस के पंखे की हवा गरम होती है जो रक्त पित्त को दूर करती है। अम्बर, खस, मोर के पंखों तथा बेंत के पंखों की हवा स्निग्ध तथा हृदय को आनन्द देने वाली होती है। अशुद्ध स्थान के वायु का सेवन करने से पाचन.दोष, खांसी, फुफ्फुस प्रदाह तथा दुर्बलता आदि दोष उत्पन्न हो जाते है।

टहलने जाने से पूर्व के जलोपचार : सिर्फ दो मिनट के निम्न जलोपचार स्वास्थ्य लाभ के लिए बहुत ही उपयोगी है.

1. लेक गश: अपने दोनों पैरों के पंजों से घुटनों तक सिर्फ दो मिनट के लिए पानी की धार डाल कर टहलने निकलना।

2. अतिशीघ्र नहान: सिर्फ दो मिनट में नहा कर , कपड़े पहन कर टहलने निकलना।

3. पेट पौछ: अपने पेट पर सिर्फ दो मिनट के लिए पानी का पोछा लगा कर टहलने निकलना।

4. रीढ़ स्नान: अपनी रीढ़ पर सिर्फ दो मिनट तक पानी की धार डाल कर, कपड़ें पहनकर टहलने निकलना।

टहलने का स्थान : टहलने के लिए बस्ती से दूर कोई ऐसा साफ.सुथरा पथ चुनना चाहिए जो प्रकृति के साम्राज्य से होकर गुजरा हो। अर्थात् जिसके दोनों और पेड़.पौधे अथवा हरे भरे खेत लहलहाते हो, चिडियां चहचहाती हों तथा ब्रह्मबेला में जलाशयों में तरंग.मालायें उमड़.उमड़ कर उषा:देवी के स्वागत में विह्वल हो रही हों, ऐसे ही पथ पर टहल कर टहलने वाला नया उत्साह और उत्तम स्वास्थ्य लेकर घर लौटता है।

कुछ लोग टहलते समय एक.दो साथी रखना पसंद करते है , जिनके साथ वे टहलते समय बात कर सकें। लेकिन यह गलत तरीका है। टहलना तो बस अकेले ही अच्छा लगता है। टहलते समय टहलने वाला हो और उसके चारों तरफ छाई प्रकृति की छटा हो। तीसरी वस्तु की वहां कोई आवश्यकता ही नहीं? क्योंकि स्वच्छंद रूप से प्रकृति के अमृत को खूब ग्रहण करने का मौका तभी मिलना सम्भव।

कितना टहलना चाहिए : इसका निर्धारण करना तो मुश्किल ही है। एक साधारण स्वास्थ्य के मनुष्य को रोज कम से कम 6.7 किलोमीटर जरूर टहलना चाहिए। लेकिन प्रारम्भ में पहले ही दिन दूर तक टहलने न चले जाये तथा उन्हें तेज गति और दूरी दोनों धीरे.धीरे बढ़ानी चाहिए। टहलने की चाल 10 मिनट में एक किलोमीटर काफी है। कमजोर और रोगी व्यक्तियों को आरम्भ में एक किलोमीटर से अधिक कभी नहीं टहलना चाहिए। परन्तु जैसे.जैसे जीवनी.शक्ति बढ़ती जाये और ताकत आती जाये, तब दूरी धीरे.धीरे बढ़ाते जाना चाहिए।

टहलते समय श्वास क्रिया : टहलते समय गहरी श्वास लेने का अभ्यास धीरे.धीरे सावधानीपूर्वक शुरू करना जरूरी है। एक श्वास में सात कदम चलना चाहिए। उसके बाद दो.चार कदम तक श्वास रोके रखना चाहिए फिर सात कदम तक श्वास बाहर निकालना चाहिए। यही टहलते समय गहरी श्वास लेने की विधि है। लेकिन गहरी श्वास लेने का यह अभ्यास थका देने वाला कभी नहीं होना चाहिए। उचित ढंग़ से टहलते हुए जब हम उपर्युक्त प्रकार से गहरी श्वास लेने की क्रिया करते है तो श्वासों के जरिये हम अपने शरीर में उस संजीवनी प्राण शक्ति को ग्रहण करते है। जो शरीर के पुनर्निमाण , विकास एवं जीवन धारण के लिए नितांत आवश्यक है।

टहलते समय मनोदशा : टहलने की क्रिया पर टहलने वाले की मानसिक अवस्था का भी प्रभाव पड़ता है। इसलिए यदि टहलने का पूरा.पूरा लाभ उठाना है तो टहलते समय अपनी मानसिक अवस्था ठीक रखनी चाहिए। टहलना एक ड्यूटी न होकर आनन्द का एक साधन मानना चाहिए। टहलते समय मन और मस्तिष्क में ऐसे सुन्दर और उत्तम विचार उत्पन्न होने चाहिए जिनसे शरीर के स्नायुओं को आराम और आनन्द प्राप्त हो और उनका शिथिलीकरण हो जाये। ऐसा होने से शरीर की रग.रग को नवजीवन प्राप्त होता है और रोग व्याधियों से स्थायी रूप से मुक्ति मिल जाती है। टहलने में पूरा आनन्द आए , इसके लिए मार्ग भी प्राकृतिक सौन्दर्य से पूर्ण होना चाहिए। क्योंकि शुद्ध , शीतल, मंद, सुगन्ध वायु का सीधा शरीर के लिए स्फूर्ति दायक एवं रोगनाशक होता है।

टहलने की लाभदायक जानकारी को ध्यान में रखे : टहलने का लाभ और भी अधिक उस वक्त होता है जब नंगे पैर ओस से भीगी घास पर टहला जायें। यह सुविधा जाड़े के दिनों में विशेष रूप से होती है। ओस के अभाव में वर्षा से भीगी घास पर भी चलकर लाभ उठाया जा सकता है। इससे सिर दर्द, गले की पीड़ा, पुरानी सर्दी और पैर और सिर को ठंड़ा रहना आदि रोग आसानी से दूर हो जाते है।

लौटने पर यदि पसीना निकला हो तो सारे बदन को गीले कपड़े से पोंछ दें, इच्छा हो तो नहा भी सकते है। नहाने से देह की आवश्यक गर्मी दूर होकर शीतलता आती है। लेकिन कमजोर रोगी यदि टहलने के बाद तुरन्त स्नान न करें तो अच्छा।

टहलने वाले को टहलने से उचित लाभ के लिए अपने आंतो की सफाई पर विशेष ध्यान रखना चाहिए। प्रात: काल शौच आदि निपट कर ही टहलने निकलना चाहिए और लौटने पर यदि पुन: आवश्यकता जान पड़े तो शौच जरूर जावें। शौच के बाद यदि जरूरत जान पड़े तो कभी.कभी एनिमा द्वारा भी पेट साफ कर लेना चाहिए।

7.5 अग्निहोत्र (औषधि.हवन)

हमारे देवऋषियों ने वायु की शुद्धिकरण कर प्राणदायी बनाने तथा वायु द्वारा निरोग रहने के लिए अग्रिहोत्र का विधि.विधान जीवन.शैली में जोड़ दिया। यह हमारा एक धार्मिक कृत्य होने के साथ मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य प्रदान करने वाला भी है। साधारणत: हर गृहस्थी को अपने दैनिक कार्यक्रम में हवन को भी एक नित्य कर्म की तरह स्थान देना चाहिए। गायत्री मंत्र के साथ हवन कर विशेष लाभ प्राप्त कर सकते है। हवन.शामग्री. चंदन, इलायची, जायफल, जावित्री, केशर, गिलोय, अगर, तमर, असगंध, वंशलोचन, गूगल, लौंग, ब्राह्मी,पुनर्नवा, जीवंती, कचूर, छार, छबीली, शतावरी, खस, कपूर, कचरी, कमलगट्टा, देशी खाण्ड, तासील.पत्र, वच, नागकेशर, दालचीनी, रास्ना, आँवला, जटामाँसी, इंद्र जौ, मुनक्का, दाख, छुहारा, नारियल गिरी, चिरौंजी, पिस्ता, अखरोट, देशी गाय का घी, तिल, जौ, चावल, उड़द आदि का नित्य प्रतिदिन हवन करने से बलवर्धक, मानसिक शाँतिदायक और रोगनाशक अतिसूक्ष्म तत्वों की प्राप्ति होती है। इस प्रकार औषधियों के हवन से हमारे वातावरण एवं शरीर पर स्वास्थ्यप्रद प्रभाव पड़ता है।

औषधि.हवन से निम्र रोग एवं समस्याएँ दूर होती है.

क्र.	औषधि-हवन	रोग एवं समस्याएँ
1.	देशी खाण्ड	हैजा, तपैदिक, चेचक के विष दूर होता है।
2.	देशी गाय का घी	चर्मरोग, रक्त विकार, शुष्कता, दाह एवं आंत्र रोग के कीटाणु एवं विष दूर होता है।
3.	दाख (किशमिश)	ज्वर, टाइफाइड और निमोनियाँ के विष दूर

		होता है।
4.	तुलसी की लकड़ी-बीज, चिरायता, करंज की गिरी	ज्वर विष दूर होता है।
5.	पाढ़ की जड़, नागरमौथा, लाल चंदन, नीम गुठली, अपामार्ग	विषम ज्वर का विष दूर होता है।
6.	केशर, काकड़ासिंगी, नेत्रबाला, त्रायमाण, खिरेंटी, कूट, पोहकर मूल	जीर्ण ज्वर का विष दूर होता है।
7.	वंशलोचन, धमासा, धनियाँ, श्योनाक, चौलाई की जड़	चेचक का विष दूर होता है।
8.	मुलहठी, अडूसा, काकड़ा सिंगी, इलायची, बहेड़ा, उन्नाव, कुलंजन	खाँसी का विष दूर होता है।
9.	अनार बीज, दूब जड़, गुलाब फूल, पोस्त फूल, बनफसा	जुकाम का विष दूर होता है।
10.	धाय फूल, पोस्त डौड़े, बबूल गोंद, मालकांगनी, बड़ी इलायची	श्वास रोग का विष दूर होता है।
11.	तालमखाना, मूसली, गोखरू, शतावरी, सालममिश्री, लाजवंती बीज	प्रमेह का विष दूर होता है।
12.	सहजन छाल, रास्ना, पुनर्नवा धमासा, असगंध, विशरीकंद, मेंथी	वात व्याधी का विष दूर होता है।
13.	मजीठ, हरड़, बावची, सरफोंका, जबासा, उसवा	रक्त विकार की समस्या दूर होता है।
14.	धनियाँ, कासनी, सौंफ, कपूर, चित्रक	हैजा का विष दूर होता है।
15.	काकजंघा, पीपलामूल, भारंगी	अनिद्रा की समस्या दूर होता है।
16.	चव्य, चित्रक, तासील-पत्र, दालचीनी, जीरा, आलू बुखारा, पीपर	उदर रोग का विष दूर होता है।
17.	अतीस, बेलगिरी, ईसबगोल, मोचरस, मौलश्री की छाल, तालमखाना, छुहारा	दस्त की समस्या दूर होता है।
18.	मरोड़ फली, अनार दाना, पोदीना, आम गुठली, कतीरा	पेचिश का विष दूर होता है।
19.	गोरखमुंड़ी, शंखपुष्पी, ब्राह्मी, बच, शतवरी	मस्तिष्क सम्बन्धी समस्या का दूर होता है।

20.	देशी खाण्ड़, अकरकरा, बबूल छाल, इलायची, चमेली जड़	दाँत की समस्या दूर होता है।
21.	कपूर, लौंग, लालचंदन, रसोत, हल्दी	नेत्र की समस्या दूर होता है।
22.	पद्माख, दूब जड़, बड़ की जटाएँ, तुलसी जड़, तिल, नीम गुठली, आमाहल्दी	घावों का विष दूर होता है।
23.	शिवलिंगी बीज, जटामांसी, कूट, शिलाजीत, नागरमौथा, पीपलवृक्ष–गूलर–बड़ के पके फल, भट कटाई	बंध्यात्व की समस्या दूर होता है।

उक्त औषधिय.हवन के दौरान अग्नि प्रज्ज्वलित रहनी चाहिए। धुँआ नहीं होना चाहिए। धँुआ हानि पहुँचा सकता है। जलती हुई अग्नि में ही औषधियों को स्वाहा करना है। जहाँ तक सम्भव हो सके तो हवन सूर्योदय व सूर्यास्त के समय या दिन में करना चाहिए।

7.6 सारांश

वायु चिकित्सा के बहुत सरल व साधारण तरीकों से पहला सुख निरोगी काया पा सकते है। जैसा कि मेरा व्यक्तिगत अनुभव बताता है कि आधुनिक युग में शारीरिक रोगों के साथ मानसिक रोग भी मानव जीवन का बहुत अधिक हनन कर रहे है। जिन्हें बड़ी ही सरलता से वायु चिकित्सा के द्वारा सुलझाया जा सकता है और जीवन को सुखी , स्वस्थ एवं आनन्दमय बना सकते है। यहीं नहीं इस चिकित्सा द्वारा अनेकानेक जटिलतम असाध्य समझे जाने वाले रोगों एवं आनुवंशिक रोगों पर विजय प्राप्त हो जाती है।

इस अध्याय में आपको सिर्फ वायु स्नान एवं टहलने की क्रियाओं का अध्ययन ही कराया गया है। वायु चिकित्सा पर हजारों वर्ष पूर्व ही हमारे देव व ऋषि.मुनियों ने अधिकतम गहराये से अनुसंधान करके योग.शास्त्र का निर्माण कर पूरे मानव जाति को वसीयत कर दिया। ऐसे योग.शास्त्र का अध्ययन योग.विज्ञान नामक पुस्तक में आगे करेंगे।

7.7 बोधात्मक प्रश्न

1. 'जीवित रहने के लिए सबसे प्राथमिक आवश्यकता वायु की है।' सिद्ध कीजिए?
2. वायु प्राणियों का कौन.सा तत्व कहा गया है?
3. 'सौ दवा और एक हवा।' नामक लोकोक्ति को समझाइये?
4. प्रकृति ने वायु में कौन.सी बहुउपयोगी गैसों का समावेश किया है? वर्णन कीजिए।
5. शरीर में उपस्थित प्रमुख 10 प्राणों के नाम बताइये?
6. एक स्वस्थ व वयस्क आदमी एक मिनट में कितनी बार श्वास लेता है?
7. एक स्वस्थ व वयस्क आदमी एक बार श्वास लेने की क्षमता कितनी है?

8. एक स्वस्थ व वयस्क आदमी अपनी नासिका के सीध में कितनी दूरी तक की वायु ग्रहण करता और फेंकता है?
9. वायु.मण्डल के बारे में विस्तार से बर्णन कीजिए?
10. 'ऑक्सीजन बड़ा उग्रदाहक है।' स्पस्ट कीजिए?
11. ऑक्सीजन से किसकी उत्पत्ति होती है?
12. ओजोन के बारे में बताइये?
13. वायु व अग्नि तत्वों से अधिकाधिक लाभ लेने के लिए हमेशा किस तरह के वस्त्र पहनने चाहिए?
14. वायु व अग्नि तत्वों के उपयोग से कितने प्रकार के रोग दूर हो जाते है?
15. यौगिक क्रियाओं के प्राकृतिक स्थान कैसा होना चाहिए?
16. यौगिक क्रियाओं के दौरान कौन.सी बातों का विशेष ध्यान रखना जरूरी है?
17. वायु स्नान क्या है?
18. वायु स्नान की उपयोगिता का वर्णन कीजिए?
19. टहलना से पूर्व सिर्फ दो मिनट के जलोपचार कौन.से है? वर्णन कीजिए।
20. टहलने का स्थान कैसा होना चाहिए?
21. प्रतिदिन कितना टहलना चाहिए?
22. टहलते समय श्वास क्रिया कैसी होनी चाहिए?
23. टहलते समय मनोदशा किस तरह की हो?
24. अग्निहोत्र का महत्व क्या है?
25. औषधि.हवन के लिए कौन.कौन सी औषधियाँ उपयोग में लेते है?
26. किन.किन रोगों में किस औषधि.हवन की आवश्यकता होती है?
27. औषधिय.हवन के दौरान क्या.क्या सावधानी रखनी चाहिए?
28. वायु एवं अग्नि चिकित्सा से कैसे तरह के रोगों पर भी विजय प्राप्त हो जाती है?
29. वायु चिकित्सा पर हजारों वर्ष पूर्व ही हमारे देव व ऋषि.मुनियों ने अधिकतम गहराये से अनुसंधान करके किसका निर्माण कर पूरे मानव जाति को वसीयत कर दिया?

7.8 संदर्भ ग्रंथों की सूची

संदर्भ ग्रंथों की सूची में सम्मिलित ग्रन्थों एवं उनकी सहायक सामग्री का उपयोग हमने इस ग्रन्थ के निर्माण में सहायक के रूप में किया है। हम इन संदर्भित ग्रन्थों, उनके लेखकों, प्रकाशकों एवं संस्थाओं के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

संदर्भ साहित्य	लेखक	संदर्भ साहित्य	लेखक
प्राकृतिक आयुर्विज्ञान	डॉ. राकेश जिन्दल	प्राकृतिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य	डॉ. महेन्द्र कुमार जाजपुरा
वृहद प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. ओ. पी. सक्सेना	योग एवं स्वास्थ्य	डॉ. महेन्द्र कुमार जाजपुरा
पातंजली योगसूत्र	स्वामी विवेकानंद	प्राण शक्ति उपचार; प्राचीन विज्ञान कला	चौ. कोक सुई
प्राकृतिक स्वास्थ्य शास्त्र	आचार्य शेषांद्रि स्वामीनाथन	जीवनी शक्ति कैसे जगायें	डॉ. चन्द्र दीप सिंह
प्राकृतिक चिकित्सा दर्शन	हेनरी लिंडलार	आपका आरोग्य आपके हाथ में	देवेन्द्र वोरा
प्राकृतिक जीवन की ओर	श्री एडोल्फ जस्ट	प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग वैज्ञानिक प्रयोग	डॉ. नागेन्द्र कुमार नीरज
100 वर्ष निरोगी रहिए	माणेक लाल म. पटेल	जीवेम् शरद शतम्	पं. श्री राम शर्मा आचार्य वाङ्मय
रोगों की अचूक चिकित्सा	जानकी शरण वर्मा	बिना औषयियों के कायाकल्प	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
स्वास्थ्य के सोपान	नरूपमल सुराणा	निरोग जीवन का राज मार्ग	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
आरोग्य की कुंजी	राष्ट्रपिता महात्मा गाी	दीर्घ जीवन की प्राप्ति	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
कुदरती चिकित्सा	राष्ट्रपिता महात्मा गाी	पंच तत्वों द्वारा सम्पर्ण रोगों का निवारण	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
सरल प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. लक्ष्मी नारायण शर्मा	रोगों की सरल चिकित्सा	विट्ठलदास मोदी
प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. सतीश गोयल	जीने की कला	विट्ठलदास मोदी
प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग	श्रीमत्ती राज कुमारी गुप्ता	मौलिक चिकित्सा कौन सी?	डॉ. चंचलमल चोरडिया
आर्गेनन ऑफ दी मेडीसन्स	डालटन हनीमेन	100 वर्ष कैसे जीयें	आचार्य श्याम सुन्दर सुमन
आरोग्य प्रकाश	वैद्यराज पं. रामनारायण शर्मा	स्वस्थवृत विज्ञान	प्रो. रामहर्ष सिंह
		अखिल भारतीय प्राकृतिक जीवन संघ द्वारा प्रकाशित एन.डी. कोर्स के लेख (भूज, गुजरात)	

****

इकाई 8

अग्रि (सूर्य) तत्व एवं उसकी चिकित्सा, रंगीन प्रकाश

इकाई की रूपरेखा

8.1. उद्देश्य

8.2. प्रस्तावना

8.3. अग्नि का चिकित्सकीय महत्व एवं इतिहास

8.4. सूर्य दर्शन, उपासना एवं धूप स्नान (धूप का सेवन)

8.5. रंगीन प्रकाश किरण (रश्मि) चिकित्सा

8.6 रंगीन (काँच का प्रकाश, फल.सब्जियाँ एवं वस्त्र)

8.7 सूर्यतप्त औषधि (तेल, जल एवं शर्बत)

8.8. सारांश

8.9. बोधात्मक प्रश्न

8.10. संदर्भ ग्रंथ

8.1 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में हम जान सकेंगे कि -

- सूर्य के बिना जीवन की कल्पना करना कैसे असम्भव है
- जहाँ सूर्य का प्रकाश नहीं जाता वहाँ डॉक्टर कैसे आता है
- अग्नि का चिकित्सकीय महत्व एवं इतिहास क्या रहा है
- सूर्य दर्शन, उपासना एवं धूप स्नान के पीछे क्या वैज्ञानिक महत्व है
- प्रकाश किरणों के पुँज में कौन.कौन से रंग है
- रंगों का औषधिय महत्व क्या है तथा शरीर में उनका स्थान कहाँ.कहाँ है
- रंगों का उपयोग रंगीन काँच, फल.सब्जियाँ एवं वस्त्र से कैसे कर सकते है

उपरोक्त समस्त जिज्ञासाओं का उत्तर पाना ही इस अध्याय का उद्देश्य है।

8.2 प्रस्तावना

ईशतत्व से प्रकट होने वाले वायु तत्व के बाद तीसरे स्थान पर अग्रि तत्व की उत्पत्ति हुई। अग्रि तत्व जीवन का उत्पादक है। इसके बिना कोई जीव.जन्तु या वनस्पति न तो उत्पन्न हो सकती है और न ही

विकसित हो सकती है। अग्नि तत्व में मुख्यत: गर्मी एवं रंगीन प्रकाश किरणें महत्वपूर्ण है। हमारे सौर मण्डल में सूर्य अग्नि तत्व का मूर्तिमान प्रतीक है। जिसे सूर्य देव कहा गया है। इसमें शब्द + स्पर्श + रूप ये तीन गुणों के कारण सूर्य देव पूरे सौरमण्ड़ल का नेत्र कहा गया है। यह सबसे अधिक प्रकाशवान एवं आकार में सबसे बड़ा है। सूर्य से निश्चित व संतुलित दूरी होने के कारण ही सम्पूर्ण पृथ्वी का वातावरण जीवन के लिए उपयोगी एवं सम्भव हुआ है। इसी कारण सूर्य देव को अपार शक्ति का पुँज माना गया है। इसके बिना जीवन की कल्पना करना असम्भव है।

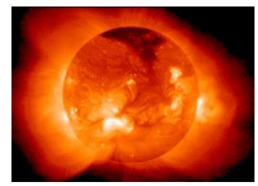

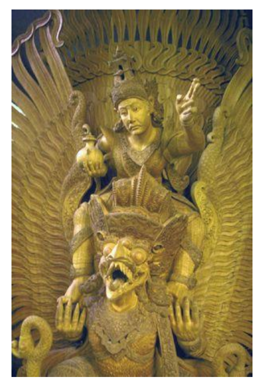

सूर्य से प्राप्त ऊर्जा सूक्ष्म आहार की पूर्ति करती है तथा जीवनी.शक्ति को बढ़ाती है एवं रोगों से मुक्ति दिलाती है। स्नायु.दुर्बलता दूर करती है , माँस.पेशियों को सुदृढ़ करती है , कैल्शियम व फॉस्फोरस के संतुलन को ठीक कर हड्डियों को मजबूत करती है, त्वचा को स्वस्थ रखती है, पाचन व मल निष्कासन क्रियाओं को बल प्रदान करती है। सूर्य का प्रकाश मानसिक व शारीरिक विकास करता है एवं सौन्दर्य बढ़ाता है।

जिस घर में सूर्य का प्रकाश नहीं जाता, वहाँ डॉक्टर जाता है अर्थात् ऐसे घरों में नमी के कारण अनेक हानिकारक गंदगी पैदा होती है तथा उसमें रहने वाले लोगों की जीवनी.शक्ति कमजोर और रक्त अशुद्ध हो जाता है। ऐसे लोगों को जीवनभर रोगग्रस्त रहते हुए डॉक्टरों के चक्कर ही काटने पड़ते है। सूर्य की प्रकाश किरणों में नीलोत्तर किरणें (अल्ट्रावॉयलेट किरणें) किरणें स्वास्थ्य के लिए बड़ी ही उपयोगी साबित हुई है। आज मशीनों द्वारा इन कृत्रिम किरणों को पैदाकर रोगियों पर उपयोग किया जा रहा है , जिसे क्रोमोपैथी के नाम से जानते है। लेकिन उससे उतना लाभ नहीं मिलता जितना सीधे सूर्य किरणों से मिलता है। अत: सूर्य से बढक़र किसी भी औषधि में रोग.निवारण शक्ति नहीं है। सभी रोगी और निरोगी नियमित रूप से इसके निम्न साधारण उपचार पढक़र, समझकर, आजमाकर अपने स्वास्थ्य में आश्चर्यजनक फायदा देख सकते है।

8.3 अग्नि का चिकित्सकीय महत्व एवं इतिहास

सूर्य को अग्निदेव मानकर पूजा.अर्चना का विधान आदिकाल से ही विश्व के सभी धर्मो एवं सम्प्रदायों ने नियमपूर्वक अपनाया है और हमारे प्राचीन शास्त्रों में पंच.तत्वों को साक्षात् देवी.देवता के रूप में स्वीकार किया गया है। विश्व के अन्य भागों के निवासी भले ही सूर्य के महत्व को भली प्रकार न समझते हो , लेकिन भारतवर्ष में तो आदि काल से ही सूर्य को समस्त जड़ , चेतन एवं सुर आदि को उत्पन्न करने वाला माना गया है। भारतीयों की दृष्टि में सूर्य ईश्वर का प्रमुख नेत्र है, क्योंकि वह प्रत्यक्ष रूप से दर्शन देता है और प्रत्येक प्राणी उसको देख सकता है। ऋग्वेद के प्रथम मंत्र अग्नि मीडे पुरोहितम् में ही ईश्वर के प्रत्यक्षरूप अग्नि की ही प्रार्थना की गयी हैं। इस तरह देखते है कि हमारे वेद ग्रन्थों में सूर्य उपासना से

सम्बन्धित अनेक ऋचाएं विद्यमान है। जो इस बात का साक्षात् प्रमाण है कि हम भारतवासी अनादि काल से ही सूर्य अर्थात् अग्नि को देवता के रूप में पूजते आ रहे है, क्योंकि सूर्य के बिना जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। भारतवर्ष ही नहीं विश्व के लगभग सभी राष्ट्रों जैसे. रोम , यूनान, मिश्र, जापान एवं अमेरिका आदि में भी सूर्य को देवता माना गया है और वहां विशाल सूर्य मन्दिर भी बने हुए है। प्लीनी का कथन है कि रोम में छ: सौ वर्षों तक कोई चिकित्सक ही नहीं था और रोम निवासी चिकित्सक का काम केवल सूर्य रश्मियों से लेते थे। भारतवासी तो आदिकाल से सूर्य प्रकाश से स्वास्थ्यवद्र्घक एवं रोगनाशक शक्ति को जानते है, जिसका प्रमाण हमारे आदि ग्रन्थों से प्राप्त होता है, जैसे.

उद्यन्नादित्य रश्मिभि: शीष्र्णे रोगममीनश:। (अथर्व 6/8)

अर्थात् प्रात: काल की सूर्य किरणों (नीलोत्तर किरणों) से अनेक व्याधियों का नाश होता है। सूर्य रश्मियों में विष दूर करने की अपूर्व शक्ति है।

सूर्यातप: स्वेदवलह सर्व रोग विनाशक:। मेदच्छेद करश्चैव बलोत्साह विवर्धन:॥

अर्थात् सूर्य की किरणें शरीर से पसीना प्रवाहित करती है और सभी रोगों का नाश करती है। वे शरीर से चर्बी को छांट कर शक्ति और आनन्द प्रदान करती है।

चक्षो: सूयरिजायत .यजुर्वेद

अर्थात् सूर्य तो भगवान का नेत्र है, परन्तु वास्तव में सूर्य हम सबका ही नेत्र है , क्योंकि सूर्य के ही प्रकाश से हम अपने नेत्रों का प्रयोग कर पाते है और उस प्रकाश के अभाव में हम लगभग अंधे ही रहते है।

दद्रु विस्फोट कुष्ठघ्र: कामला शोथ नाशक:।

ज्वरातिसार शूलानां हार को नात्र संशय:॥

अर्थात् सूर्यरश्मियां दाद, कष्ट पूर्ण दाने, कोढ़, जल शोथ, ज्वर, अतिसार तथा उदर शूल रोगों को नष्ट कर देती है। इसमें किचिंत भी सन्देह नहीं है।

कफ पितोद्भवा रोगावात रोगास्तथैवच। तत्सेवनान्नरोजित्वा जीवेच्च शरदांशतम्॥

अर्थात् सूर्यरश्मियों के दैनिक प्रयोग से मनुष्य कफ , पित्त एवं वायु के दोष से उत्पन्न सभी रोगों से मुक्त होकर सौ वर्ष पर्यन्त जीवित रह सकता है।

सूर्यो नो दिवस्पातु अग्नि: पार्थिवेभ्य:। .ऋग्वेद।

अर्थात्, सूर्य हमें दिन प्रदान करे और अग्नि हमारे धन.जन की रक्षा करें।

नम: सूर्याय शांताय सर्व रोग विनाशिने। आयुरारोग्यमैश्वर्यदेहिदेव नमोअस्तुते। .आ.हृ.

अर्थात् शांतिप्रदान करने वाले , सर्व रोगनाश करने वाले सूर्य भगवान को नमस्कार। हे सूर्यदेव. आयु , आरोग्य और ऐश्वर्य हमें दो। हमारा आपको नमस्कार है।

प्राचीन महापुरूषों के लेखों से और आधुनिक पुरातत्व विभाग द्वारा खुराई से यह बात सिद्ध हो जाती है कि प्राचीन काल में भी धूप, जल एवं वायु स्नान की पूरी व्यवस्थायें प्रत्येक बस्ती एवं सभ्यता में हो रखी थी, जिसका वे लोग पूरा.पूरा लाभ उठाते थे।

सूर्य की निम्र स्वास्थ्यवद्र्घक एवं रोगनाशक शक्तियाँ होती है

1. सूर्य प्रकृति की प्रयोगशाला में विशेष स्वास्थ्यवद्र्घक वस्तु है। हर प्रकार के रोग चाहे वे कितने ही पुराने , जटिल एवं असाध्य हों , सूर्य.किरणों की सहायता से अच्छे किये जा सकते है। शरीर में स्थित विजातीय द्रव्य ही रोग का प्रमुख कारण है , जिसे दूर करने में सूर्य की शक्ति बड़ी कारगर है, सूर्य की किरणें रक्त को शुद्ध करती है तथा उसके प्रवाह और शक्ति को बढ़ाती हैं।

2. सूर्यकिरणों में स्नान करने वाले बच्चे बलवान , पुष्ट और निरोग होते है।

3. जिस मकान में सूर्य प्रकाश का प्रवेश नहीं होता , डॉक्टर का प्रवेश होता योंकि रोग के कीटाणु अन्धकार में ही वृद्धि पाते है और प्रकाश उनके लिए काल है। अत: जिस स्थल पर सूर्य की किरणें बरसती है, वहां रोग टिक ही नहीं सकते। सूर्य की किरणें अधिक प्रभावशाली विषघ्र है। ये किरणें दुर्गन्धित तथा गंदगी को दूर करने में सक्षम और प्रबल रोगाणुनाशक है। सूर्य प्रकाश में निस्सन्देह स्वास्थ्य वद्र्घक शक्ति है।

4. उत्तम स्वास्थ्य के जिज्ञासुओं को कभी.कभी नंगे बदन धूप में टहलना या बैठना चाहिए। इससे न केवल स्वास्थ्य सुधरेगा , अपितु नैसर्गिक सौन्दर्य में वृद्धि भी अवश्यम्भावी है। जब सूर्य.रश्मियां मनुष्य के नंगे शरीर पर सीधी पड़ती है। तो वे शरीर के केवल ऊपरी भाग के कीटाणुओं का ही नाश नहीं करती अपितु शरीर के भीतरी भाग के कीटाणु भी उससे नष्ट हो जाते है। प्रकाश अपनी उष्णता एवं रोगनाशक शक्ति द्वारा केवल त्वचा के छिद्रों को ही नहीं खोलता , प्रत्युत्त मस्तिष्क को भी प्रकाशित करता है। वह केवल रक्त को ही नहीं शुद्ध करता बल्कि शरीर की नस.नस में प्रवेश कर उसे स्वच्छता प्रदान करता है।

5. शरीर की त्वचा के लिए सूर्य रश्मियां टॉनिक का काम करती है। शरीर को तंग कपड़ों से कभी भी नहीं जकडऩा चाहिए। बल्कि इसके बदले स्वच्छ, हवादार एवं ढ़ीला.ढ़ाला वस्त्र पहनना चाहिए , जिसमें सूर्य की किरणें शरीर की त्वचा तक पहुंचकर लाभ पहुंचा सकें।

6. यह सत्य है कि जो व्यक्ति सूर्य.प्रकाश का जितना ही अधिक सेवन करेगा, उसकी दिमागी शक्ति उतनी ही विकसित होगी। सूर्य.प्रकाश के सेवन से मस्तिष्क में एक प्रकार की चुम्बकीय शक्ति आती है। जो मनुष्य को बुद्धिमान बना देती है। हमारे पूर्वज ऋषि.मुनि इसी सूर्योपासना की बदौलत ही बुद्धिमान बनें।

7. शारीरिक विकास एवं सुन्दर स्वास्थ्य बनाये रखने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि हर समय धूप में ही रहा जाये। प्रतिदिन प्रात:काल कम से कम 10.20 मिनट नंगे बदन या कुछ समय तक सूर्य प्रकाश लेना यथेष्ट है। इसे प्रत्येक नर.नारी को अपनी दिनचर्या का एक अंग बनाना चाहिए। सिर और आंखों को धूप से बचाये रखना चाहिए तथा धूप स्नान के बाद जल से स्नान करना जरूरी है।

8. सूर्य प्रकाश से शरीर में प्राणों का संचार होता है , जिसकी आवश्यकता हमें सदैव रहती है , अत: हमें सोने, बैठने तथा भोजन करने के स्थान को खूब हवादार और प्रकाशमय रखना चाहिए। घर इस प्रकार बनाना चाहिए जिसमें सूर्य किरणों का प्रकाश बहुतायत से हो।

9. धूप सभी लोगों के लिए दूध, घी, मक्खन, क्रीम और अंड़ा योंकि यह विटामिन डी का मुख्य स्त्रोत है। जिसके बिना शरीर में हड्डियाँ बन ही नहीं सकती। जो स्त्रियां और बच्चे धूप सेवन के आदी नहीं है , उनकी हड्डियां मजबूत नहीं हो पाती। वे नरम लचीली और विकृत रह जाती है। ऐसी स्त्रियों से जो बच्चे पैदा होते है। वे बहुधा सुखा रोग ग्रस्त होते है। ऐसी स्त्रियों में हड्डियों को बनाने वाला द्रव्य कमजोरी की वजह से श्वेत प्रदर के रूप में शरीर से बाहर निकल जाता है। यही कारण है कि आज सहस्त्रों स्त्रियां इस समस्या से ग्रस्त है।

10. आस्थावान हिन्दू लोग आदि काल से ही रविव्रत को करके लाभ उठाते चले आ रहे है। रविवार का दिन सूर्य का दिन माना गया है। यदि कोई साधक विधि.विधान से रविवार का व्रत बारह वर्षों तक करें तो उसे ब्रह्मरूप प्राप्त हो जायेगा , जिसमें कोई सन्देह नहीं। इस रविव्रत को तेल , स्त्री संसर्ग तथा नमक का त्याग करना होता है।

11. यह बात स्पष्ट है कि जो लोग अंधेरे में रहते या काम करते है , वे शारीरिक और मानसिक रोगों से ग्रस्त होते है।

12. सूर्य केवल प्रकाश और गर्मी ही नहीं देता बल्कि वह विश्व को सुबुद्धि और दीर्घायु भी देता है।

13. सूर्य ही जगत निर्माता योंकि सूर्य रश्मियों के विभिन्न प्रकार के संयोग से ही सृष्टि में नाना प्रकार के पदार्थ उत्पन्न होते है और ग्रंथों में भी उल्लेख है कि सतरंगी किरणों में सूर्य अपना वीर्य और चन्द्रमा अपना रज डालकर संसार को उत्पन्न कर देता है। संसार की सभी वस्तुओं.सोना , चांदी, तांबा, जस्ता, लोहा आदि धातुओं, हीरा, माणिक, नीलम आदि जवाहरात का पैदा होना इन्हीं रंगीन सूर्य रश्मियों के करिश्मे है। प्राणधारियों एवं वनस्पति के जीवन का भी एकमात्र आधार सूर्य रश्मियां ही है। अत: हमें जल जितना जरूरी है, वायु उससे भी जरूरी और गर्मी व प्रकाश उन दोनों से भी जरूरी है।

14. लाल, पीला, नीला, हरा, आसमानी, नारंगी एवं बैंगनी ऐसे सात रंगों का एकीकरण जब होता है तो श्वेत रंग बन जाता है। पुराणों में सूर्य भगवान की सप्तरश्मियों को सप्तमुखी घोड़ा बताया है। सात रंग एकत्र होने से श्वेत रंग होता है , इसी कारण सूर्य की किरणें श्वेत दिखाई देती है। स्वयं सूर्य का रंग पारे के समान श्वेत है।

15. सूर्य रश्मियों के पृथ्वी पर आने में जब किसी प्रकार की अड़चन पड़ती है तो संसार में नाना प्रकार के उथल.पुथल होने की सम्भावना हो जाती है। जैसे. सूर्य प्रकाश की किरणों का हमारी पृथ्वी पर आते समय मार्ग में यदि मंगल ग्रह आ जाये, तो पृथ्वी पर लाल किरणें पड़ेगी, जिसका परिणाम पृथ्वी के उस भाग में रहने वाले प्राणी गर्मी से उत्पन्न होने वाले रोग जैसे. हैजा , चेचक, मुच्छा आदि महामारी से आक्रान्त हो जाते है।

16. जिन वस्तुओं पर सूर्य.रश्मियां पड़ती है उन पर वे हितकर प्रभाव डालती है और जिन पर नहीं पड़ती है, उन पर अहितकर। जो शाक सब्जी धूप में पैदा होती है , वह अन्धकार में पैदा होने वाली सब्जी से अधिक गुणकारी होती है। जो गायें धूप में घूम कर चारागाहों में नहीं चरती उनका दूध गुणकारी नहीं होता।

17. सुख, दु:ख, पाप, पुण्य, काम, क्रोध, लोभ, मोह, प्रीति एवं भक्ति आदि सभी मनोवृत्तियां और संस्कार भी सूर्य रश्मियों के संयोग से ही उत्पन्न होते है।

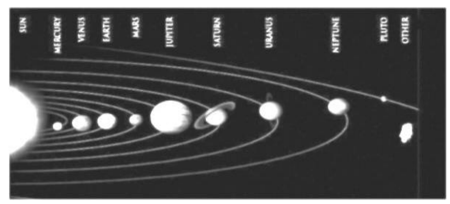

18. सौर मण्डल के ग्रह.उपग्रहों के वर्णन है.

1. सूर्य. पारे के समान श्वेत है , उसमें सात रंग मिश्रित और उष्ण है।

2. चन्द्रमा. चांदी के समान रूपहला और शीतल है।

3. मंगल. तांबे के समान लाल और गर्म है।

4. बुध. हरा और नपुंसक है।

5. बृहस्पति. सोने के समान सुनहला और मेदवान (चर्बीदार) है।

6. शुक्र. नीलवत् और शक्तिवद्र्घक है।

7. शनि. आसमानी अर्थात् गहरा.नीला और लंगड़ा है।

8. राहु. हमारी पृथ्वी और काल राहु है। पृथ्वी में यही कारण है कि दूसरे प्रकाशमान ग्रहों की प्रकाशित किरणों को आकर्षित करने की शक्ति है।

9. केतु. यह हमारी पृथ्वी की छाया है और हल्का आसमानी।

उपर्युक्त सभी ग्रह सूर्य के चारों तरफ घूमते हुये उससे अपने.अपने रंग प्राप्त करते है। जब इन ग्रहों की निजी रंगीन किरणें सीधी या तिरछी होकर सूर्य की किरणों से टकराकर पृथ्वी पर पड़ती है , तब पृथ्वी पर उन ग्रहों का प्रभाव पड़ता है। जिसकी वजह से ही पृथ्वीवासियों को सुख.दु:ख भोगना पड़ता है।

19. अग्नितत्व से ही शेष चारों तत्व. आकाश, वायु, जल एवं पृथ्वी तृप्त होने से ही संसार में सौन्दर्य और जीवन है। अग्नितत्व से ही अन्य सभी तत्वों के चैतन्य का उन्मेष और निमेष होता है। इसी कारण आदि काल से मानव, पशु.पक्षी तथा वनस्पति सभी सूर्य प्रकाश से लाभ उठा रहे है। धूप से ही उनमें सुन्दरता आती है और स्वास्थ्य भी।

20. शरीर में अग्नि तत्व के अभाव के कारण सुस्ती , सिकुडन, सर्दी की सूजन , वायु जनित पीड़ाएं , पक्षाघात गठिया, बुढ़ापे की कमजोरी, मन्दाग्नि, निद्रा की अधिकता, कोष्ठबद्धता एवं ठंड़ आदि के उपद्रव आरम्भ हो जाते है ; आंख, नाखून, जिह्वा, विष्टा एवं पेशाब लाल.पीले हो जाते है ; मुंह का स्वाद खट्टा.कड़ुआ, स्वभाव तेज व क्रोधी, शरीर दुबला.कमजोर, अंग.अंग में खुश्की और प्यास की अधिकता आदि समस्याएं उत्पन्न होती है।

8.4 सूर्य दर्शन, उपासना एवं धूप स्नान (धूप का सेवन)

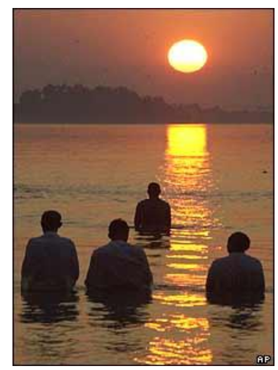

अग्नि तत्व के साक्षात् प्रतिनिधि सूर्य देव की उपासना को भारतवर्ष में धार्मिक महत्व माना है। लेकिन इसमें बड़ा ही स्वास्थ्यप्रद वैज्ञानिक महत्व छिपा हुआ है। सूर्य नमस्कार जो हमारी प्रात:कालिन पूजा का एक अंग है , पूजा के साथ.साथ यह एक उत्तम प्रकार का व्यायाम 'सूर्य नमस्कारासन' नाम से जाना जाता है। 'सूर्य नमस्कारासन ' का विस्तृत अध्ययन योग विज्ञान नामक पुस्तक में आगे करेगें। 'सूर्य नमस्कारासन' के तत्पश्चात् सूर्य देव के सामने नदी या तालाब या जलाशय में खड़े होकर ऊँ चाई से अपने ठीक सामने जल गिराना तथा सूर्य देव के दर्शन करना से नेत्र.ज्योति तो बढ़ती ही है साथ में यह पूर्ण स्वास्थ्यवर्धक भी योंकि सूर्य की किरणें जल कणों द्वारा इन्द्र.धनुष के सात रंगों में विभाजित होकर उनमें से नीलोत्तर किरणें (अल्ट्रावॉयलेट किरणें) हमारे शरीर पर पड़ कर हमें लाभ पहुंचाती है। प्रात: कालीन सूर्य रश्मियों में नीलोत्तर किरणें (अल्ट्रावॉयलेट किरणें) प्रचुर मात्रा में पाई जाती है , जो स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होती है। लेकिन सूर्य की सभी रश्मियां नीलोत्तर नहीं होती। इसलिए अधिकतर नीलोत्तर रश्मियां प्राप्त करने हेतु जल, हीरा.मोती, माणिक, नीलम आदि पदार्थो में से केवल नीलोत्तर किरणें ही छनकर बहिर्गत होती है। यही कारण है कि सर्व साधारण के हित के लिए हमारे पूर्वजों ने इस कृत्य को अनादि काल से धर्म का रूप दे रखा है।

शरीर से निर्वस्त्र या गुप्तांगों को ढक्कर या बहुत महीन कपड़ा पहनकर , एक गिलास पानी पीकर अपने सिर को पानी से गीला करके सिर पर गीला तौलिया रखकर प्रात:काल या सायंकाल की धूप में किसी

कुर्सी पर बैठे या साफ.स्वच्छ जमीन पर लेट जायें। सूर्य स्नान के साथ मालिश भी कर या करवा सकते है। स्नान के बाद घर्षण स्नान के साथ नहाना चाहिए। ग्रीष्म काल में सूर्य स्नान लेते समय अपने सिर को तीक्ष्ण धूप से बचाने का विशेष ध्यान रखना चाहिए। तीक्ष्ण धूप होने पर सिर को छाया में रखें। सूर्य स्नान 15 से 60 मिनट तक लेना पर्याप्त है।

धूप सेवन के लाभ. विधिपूर्वक सूर्य स्नान करने पर हड्डियाँ मजबूत बनती है , मांस.पेशियां सबल व सशक्त बनती है , सम्पूर्ण शरीर में रक्त.संचार बढ़ता है , ज्ञान.तन्तु खुलते है , दन्त रोग दूर होते है , पाचन.क्रिया में सुधार होने लगता है और आलस्य दूर होता है।

जैसाकि वायु तत्व के अध्याय में औषधि.हवन का वर्णन किया। औषधियों को अग्नि तत्व को समर्पित करने से पंचतत्वों का सूक्ष्म प्रभाव हमारा वातावरण शुद्ध कर देता है , शरीर पर स्वास्थ्यप्रद प्रभाव पड़ते से अनेक रोग एवं समस्याएँ दूर होकर हमारे नजदीक नहीं आती है।

स्वस्ति श्रद्धां यश: प्रज्ञान विद्यांबुद्धिश्रियं बलम्।

आयुषं तेज आरोग्य देहिमे हव्य वाहन।। .ह.वि.

अर्थात् हे हव्य वाहन. हवन ग्रहण करने वाले अग्निदेव. हमें कल्याण , यश, श्रद्धा, विद्या, लक्ष्मी, बल, आयुष्य, तेज एवं आरोग्य प्रदान करों।

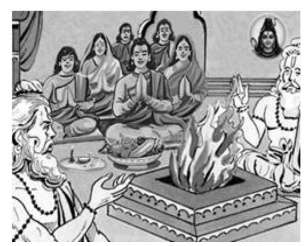

शरीरिक व मानसिक स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए रविवार का व्रत करने का विधान भी है। इस दिन को विशेष लाभदायक बनाने के लिए सूर्य नमस्कार के मंत्रों का जाप ध्यानावस्था में करना , निराहार रहकर नीम्बू.पानी.शहद का सेवन तथा तेल , स्त्री संसर्ग तथा नमक का त्याग करना चाहिए। विशेषकर रोगियों को इस दिन ध्यानावस्था में ऐसी भावना करते रहना चाहिए कि सूर्य देव का सूक्ष्म तेजस्वी प्रभाव मेरे समस्त अंग.प्रत्यंगों में प्रवेश करता हुआ मुझे आरोग्य प्रदान कर रहा है।

इस प्रकार सूर्य दर्शन, उपासना एवं धूप स्नान करने से अनेक प्रकार के रोगों से छुटकारा मिलता है। तेज , बल, वीर्य और आरोग्य की वृद्धि होती है। सूर्य की उपासना करने वाले स्त्री.पुरूषों की संताने सुन्दर , निरोगी एवं तेजस्वी होती है।

8.5 रंगीन प्रकाश किरण (रश्मि) चिकित्सा

प्राणियों का सम्पूर्ण शारीरिक एवं मानसिक विकास सूर्य की शक्ति, किरणों, रोशनी, रंगों और ताप पर ही निर्भर है। यह प्राकृतिक विज्ञान का सर्वोत्तम तथ्य है। जब प्राणी के जीवन और स्वास्थ्य का आधार सूर्य है। तो सूर्य किरणों से उत्पन्न रंगों से ही चिकित्सा होने में संदेह की कोई गुंजाइश नहीं होनी चाहिए।

संसार के सभी प्राणियों का सम्पूर्ण शरीर रंगीन है। बाहर से दिखने वाले सभी अंगों का रंग और भीतर के अवयव का रंग अलग.अलग है। मनुष्य की वाणी एवं विचारों के प्रकम्पन भी रंगीन है। अत: मनुष्य का पूरा का पूरा शरीर रंगों का पिण्ड है।

सूर्य की किरणें आकाश में विद्युत की लहरों द्वारा कंपन को जन्म देती है। जिसका आभास नेत्रों द्वारा हमारे शरीर की सूक्ष्म नाडिय़ों को होता है। प्रकाश बाह्यरूप में भौतिक होते हुए भी सूक्ष्म ही है। प्रकाश को यदि प्रकृति का उत्साह कहा जाये तो अधिक युक्ति.संगत होगा।

'रंग' प्रकाश पुँज की वे किरणें है जो किसी वस्तु विशेष से टकराने के पश्चात् हमें नग्न आँखों से दिखाई देने लगती है। वास्तव में रंग और सूर्य के प्रकाश का सम्बन्ध बहुत ही जटिल है। प्रकाश के अभाव में रंग विलिन अर्थात् गायब हो जाते है और सब कुछ काला रंग दिखाई देता है।

सर्व प्रथम सन् 1666 में न्यूटन ने अँधेरे कमरे में प्रकाश की किरण को एक त्रिपाश्र्व शीशा (प्रिज्म) से गुजारा तो सामने दीवार पर सात रंगों (क्रमश: बैंगनी , गहरा नीला, आसमानी, हरा, पीला, नारंगी एवं लाल) अर्थात् (VIBGYOR) की एक पट्टी दिखी। इस विश्लेषित सप्तरंगी प्रकाश को अंग्रेजी में स्पेक्ट्रम कहते है। स्पेक्ट्रम के एक सिरे पर लाल और दूसरे पर बैंगनी रंग आंखों को दिखेंगे। फिर गहन विश्लेषण से अनेक तथ्य स्पष्ट हुए। वे कहते है कि सफेद व काला तो वास्तव में रंग ही नहीं है। फिर भी ये महत्वपूर्ण है। ये दोनों एक.दूसरे के विपरित या विरोधी है। एक आता है तो दूसरा चला या छूप जाता है। इनमें से सफेद सभी सातों रंगों को भेजता है तो काला उन सातों रंगों को समेट लेता है। अत: प्रकाश या रोशनी सात रंगों का पुँज है , जो सम्मिलित होने पर सफेद दिखता है। इन्हीं सातों रंगों से दुनिया सत्रंगी अर्थात् रंग.बिरंगी दिखाई देती है। जब सप्त रंगों का पुँज किसी वस्तु पर पड़ता है तो उस वस्तु के गुण धर्म अनुसार किरणों में से कुछ किरणें उस वस्तु के द्वारा अपने में समेट लेती है और कुछ किरणें वापस भेज दी जाती है। इस प्रकार प्रकाश की किरणें वस्तु से टकराकर वापस हमारी आँखों से टकराती है तब वह वस्तु रंगीन अवस्था में दिखती है।

सप्त रंगों में मूल रंग लाल , पीला और नीला है। नीला व पीला रंग मिलकर हरे रंग का निर्माण होता है। लाल व नीला रंग मिलकर बैंगनी रंग का निर्माण होता है। लाल , नीला और पीला तीनों रंगों को मिलाने पर नारंगी रंग का निर्माण होता है। नीला व सफेद रंग को मिलाने पर आसमानी रंग का निर्माण होता है।

निम्न सारणी में सप्त रंगों की प्रकृति और आयुर्वेदीक दोषों का वर्णन किया गया है.

क्र.	दोष	रोग निवारक रंग	प्रकृति या औषीय गुण
1.	पीत	बैंगनी (काला-हल्का नीला) (Violet)	ठण्डक, शीतल व शांतिदायक
2.	पीत	गहरा नीला (Indigo/ Deep-Blue)	ठण्डक, शीतल व शांतिदायक
3.	पीत	आसमानी (Blue)	ठण्डक, शीतल व शांतिदायक
4.	वात	हरा (Green)	रक्त शोन व संतुलन
5.	कफ	पीला या सुनहला (Yellow)	गर्मी, उत्तेजना दायक, रेचक

6.	कफ	नारंगी (Orange)	गर्मी, उत्तेजना दायक, रेचक
7.	कफ	लाल (Red)	गर्मी, उत्तेजना दायक, रेचक

सूर्य प्रकाश से प्रकट होने वाले विविध रंग औषधीय गुण रखने के कारण जगत् को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से प्रभावित करते है। जिनसे मानव शरीर , मन एवं आत्मा भी अछूते नहीं रह सकते है। यह सप्त रंगों की प्रकाश पुँज वास्तव में प्राण शक्ति है , इन रंगों का हमारे प्राणधारक चक्रों पर विशेष औषधीय प्रभाव पड़ता है। जिस चक्र से सम्बन्धित व्याधि या रोग हो, उस चक्र के स्थान पर उस रंग का ध्यान करने से वह चक्र जाग्रत होने से रोग दूर हो जाते है। इस कारण इन चक्रों का रंग भी क्रमवत् प्रकाश पुँज के सप्त रंगों की तरह ही है। जिन्हें वे धारण किये हुए है, जैसे.

क्र.	प्राणारक चक्र	औषीय रंग
1.	मूलाार चक्र	लाल (Red)
2.	स्वाष्ठिान चक्र	नारंगी (Orange)
3.	मणिपूर चक्र	पीला या सुनहला (Yellow)
4.	अनाहत चक्र	हरा (Green)
5.	विशुद्ध चक्र	आसमानी (Blue)
6.	आज्ञा चक्र	गहरा नीला (Indigo/ Deep-Blue)
7.	सहस्त्रार चक्र	बैंगनी (काला–हल्का नीला) (Violet)

सप्तरंगों के साथ चक्रों का और विस्तृत वर्णन 'योग विज्ञान' नामक पुस्तक में आगे करेगें।

इसका यह मतलब नहीं कि सूर्य प्रकाश केवल इन्हीं सात रंग की रश्मियों से बना है। बल्कि स्पेक्ट्रम के दोनों सिरों के बाहर भी कुछ किरणें होती है। जिनका रंग देखने में हमारी आंखे असमर्थ है। बैंगनी सिरे की ओर से आने वाली अदृश्य किरणों को नीलोत्तर किरणें (अल्ट्रावॉयलेट) और लाल सिरे की ओर से आने वाली अदृश्य किरणों को तीव्र लाल किरण (इंफ्रारेड) कहते है। हमारे स्वास्थ्य पर अदृश्य गर्मी की तीव्र लाल किरणों का प्रभाव बहुत कम पड़ता है। ये किरणें धरती और पूरे संसार को जीवन के लायक वातावरण प्रदान कराने में सहायक है। हमारे चर्म रोग , रक्त की कमी , अंग की सूजन , संक्रामक रोग, गठिया, वात, रक्त की स्थानीय अधिकता आदि में इन किरणों का प्रभाव लाभकारी है। लेकिन इन किरणों को इनके अदृश्य होने के कारण हम जब चाहें तब प्राप्त नहीं कर सकते। इन दो अदृश्य किरणों के अतिरिक्त भी और कई अदृश्य किरणें होती है, जिनमें से कुछ ज्ञात किरणें. एक्स.रे, एल्फा.रे, बीटा.रे तथा गामा.रे है।

8.6 सूर्य किरणों के प्रकार

(1) लाल किरणें : सूर्य रश्मि पुंज में 80 प्रतिशत केवल लाल किरणें

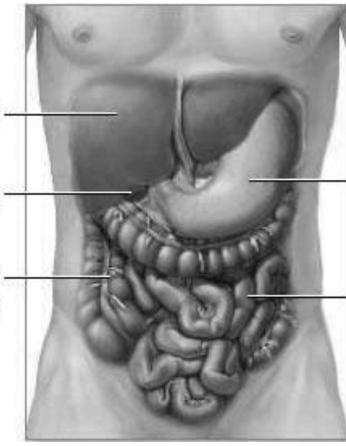

और तीव्र लाल किरणें होती है। इस रंग की किरणें विद्युत गुण वाली होने से शरीर के निर्जीव भाग को चैतन्यता प्रदान करने में अद्वितीय है। इसका स्वभाव उष्ण है। इस रंग की चिकित्सा होने पर भोजन तुरन्त न करें या भोजन करने के एक घण्टे बाद ही इस रंग की चिकित्सा लें।

लाल किरणों के प्रभाव:

1. लाल रंग पेट की गर्मी बढ़ाता पाचन बिगाड़ता है और पेट में कितने ही रोग पैदा करता है।

2. इन किरणों को हमारा चर्म भाग सोखकर स्नायु मण्डल को उत्तेजित करता है। जिससे मन चंचल और स्वभाव में प्रखरता आती है।

3. रक्तहीनता तथा गठिया के रोगी लाल कपड़े पहनें। जिसके पांव सदैव ठण्ड़े रहते हों वह लाल रंग का मोजा पहनें।

4. जिसका हृदय दुर्बल हो वह लाल रंग का वस्त्र न पहनें।

सूर्य किरणों में लाल तप्त औषधि के प्रभाव:

1. इस रंग से तप्त तेल प्राय: कड़े पड़े हुए अंग , भीतरी स्नायु और मांसपेशियों के कमजोर पड़ जाने पर उत्तेजना एवं स्फूर्ति पैदा करने के लिए लाभकारी है। इसे फोड़ों पर, कमर, गर्दन व जोड़ों का दर्द, सर्दी का दर्द, सर्दी में एडिय़ों का फटने पर, सूजन, मोच, लकवा एवं शीतांग आदि स्नायु मण्डल के सभी रोगी के लगाने या मालिश करने से अच्छे हो जाते है। खाँसी, दमा व निमोनिया में छाती पर मालिश करें। इस तेल को जननेन्द्रियों पर मलने पर नपुंसकता दूर होती है। इस रंग से तैयार जल भी मालिश और पट्टी देने के काम आता है।

2. प्राकृतिक चिकित्सक के मार्गदर्शन में ही लाल किरण तप्त जल पीना चाहिए। कुछ रोगों में ही इसे अन्य रंगों के साथ मिलाकर पीने को दिया जाता है। यदि भूल से यह जल पी लिया जाये तो खून के दस्त या उल्टी होने का भय रहता है।

3. पेट में कृमि पडऩा और शूल होने पर लाल 1 + गहरा नीला 4 दिन में चार खुराक 25 ग्राम देवें।

शरीर में लाल रंग की कमी व अधिकता का प्रभाव:

1. शरीर में लाल रंग की कमी से सुस्ती , अधिक निद्रा, भूख घटकर कब्ज होने लगती , नेत्र और नाखून नीले हो जाते तथा दस्त का रंग नीला हो जाता है।

2. शरीर में लाल रंग की वृद्धि से त्वचा में सूजन आ जाती है और गर्मी के विकार उभर आते है। अनिद्रा और पतले दस्त होने लगते है।

(2) नारंगी रंग की किरणें : यह रंग भी गर्मी बढ़ाता है।

नारंगी किरणों के प्रभाव:

1. इसका तप्त जल जीर्ण रोगों में पहले तीन दिन तक देकर पेट को साफ करने के काम आता है। जिससे भूख बढने लगती है।

2. दमा, नसों की बीमारी , जोड़ों का दर्द , लकवा, तिल्ली के बढने , मुत्राशय, आंतों की शिथिलता एवं उपदंश आदि रोगों में इसका तप्त जल काम में आता है।

(3) पीली किरणें : सूर्य चिकित्सा में वात का रंग पीला माना गया है। यह रंग भी थोड़ा गर्मी बढ़ाने वाला है।

पीली किरणों के प्रभाव:

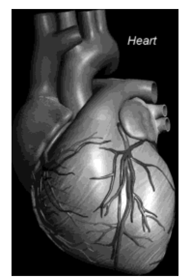

1. पीले रंग का कपड़ा पहनने से ज्ञानतन्तु चैतन्य और नीरोग रहते है। बसन्त ऋतु में पहनना लाभकारी है।

2. यह रंग स्वास्थ्य, बुद्धि एवं विवेक की वृद्धि करने वाला होता है।

3. यह रंग पेट , जिगर, तिल्ली, फेफड़ों, लकवा, हृदय के रोग , पेट की गडग़ड़ाहट , पेट फूलना, पेट में पीड़ा होना , कोष्ठबद्धता, मलावरोध, अजीर्ण, कृमि रोग, गुदभ्रंश, पेटविकार आदि रोग दूर होते है।

सूर्य किरणों में पीला तप्त औषधि के प्रभाव:

इसे थोड़ा.थोड़ा कुछ दिन तक पीने से लाभ पर अधिक मात्रा में पीने से पेट में गर्मी बढ़ती और दस्त लगती है। इस रंग से सिद्ध किया गया घी आँखों की रोशनी व जलन को ठीक करता है।

शरीर में पीलें रंग की कमी व अधिकता का प्रभाव:

1. इस रंग की कमी तथा हल्के नीले रंग की वृद्धि से शरीर में पेट रोग , गुल्मरोग, शूल, पसली का दर्द , मसूढ़ों का दर्द , योनिजन्यशूल, कृमि, दिल का रोग , फेफड़े का रोग , कोष्ठबद्धता तथा शोध उत्पन्न होता है।

2. इस रंग की वृद्धि से शरीर से हचकियां उठना , धडक़न एवं दर्द आदि उत्पन्न हो जाते है। इस रंग को बढ़ाने से लाल व नीला रंग के कुप्रभाव और वात.कफ जनित रोग शीघ्र दूर होते है।

(4) हरी किरणें : इसका स्वभाव मध्यम है अर्थात् न गर्म, न ठण्ड़ा।

हरी किरणों के प्रभाव:

1. शरीर में पकने वाले, सडऩे वाले, बहने वाले, दुर्गन्ध युक्त और किसी भी दवा से न अच्छा होने वाले विकार निस्सन्देह दूर हो जाता है।

2. यह रंग भूख बढ़ाने वाला, आंख और त्वचा के रोग, चेचक रोग में लाभकारी है। इससे हाथ.पांव का फटना, दाद.खाज.खुजली, बहने वाले फोड़ा.फुन्सी , मधुमेह, टाईफाइड, खाँसी.जुकाम, नाक.मुंह.गुदा द्वारा रक्त गिरना, स्त्रियों का रक्त प्रदर, स्वप्नदोष एवं बवासीर अच्छा हो जाता है।

3. यह रंग मस्तिष्क की गर्मी शांत करने वाला, ज्ञानतन्तुओं और स्नायु मण्डल को बल देने वाला है।

4. योनि प्रदाह, आँखों व मस्तिष्क के लिए शीतल एवं शक्तिवर्धक है। कैंसर रोगियों के लिए लाभप्रद है।

सूर्य किरणों में हरा तप्त औषधि के प्रभाव:

1. हरा तप्त तेल सिर के पिछले भाग में लगाने से मोतियाबिन्द , स्वप्नदोष तथा धातु सम्बन्धी रोग मिट जाते है।

2. सिर और पांव में लगाने से नेत्ररोग नहीं होते और नींद अच्छी आती है, कर्ण रोगों में इस तेल को कान में डालते है।

3. इस पानी से आँखें धोयें तथा आँतों में घाव होने या आँतें कमजोर होने पर खाली पेट इसके पानी का सेवन करें।

शरीर में हरे रंग की कमी व अधिकता का प्रभाव:

इस रंग की कमी और लाल रंग की वृद्धि से शरीर में फोड़ा.फुन्सी , दाद.खुजली आदि त्वचा के रोग उत्पन्न हो जाते है। हरा रंग बढ़ाने से लाल रंग के विकार दबते है।

(5) आसमानी किरणें : यह रंग सब रोगों में श्रेष्ठ है क्योंकि इसी रंग पर प्राणिमात्र का नैसर्गिक जीवन निर्भर है। यही कारण है कि समस्त पृथ्वी पर फैले हुए आकाश का रंग आसमानी है। इसी रंग द्वारा जीवों को जीवनी.शक्ति की प्राप्ति होती है। यह रंग भक्ति, अनुराग एवं प्रेम का जनक है और इससे अनायास ही शान्ति मिलती है। यह रंग जितना ही हल्का होगा , उतना ही अधिक ठंडक़ देने वाला होगा और जितना अधिक गहरा होगा , उतनी ही उसमें गर्मी होगी। इस रंग में सडऩ को रोकने की प्रति रोधक (Anti-septic) क्षमता है।

आसमानी किरणों के प्रभाव:

1. शरीर की सूजन में नीला और सफेद मिश्रित कपड़ा पहनना , टोपी या पगड़ी का अस्तर नीले रंग का गुणकारी है। जिसकी प्रकृति गर्म हो उसको सदा नीले रंग का कपड़ा पहनना दवा का काम करेगा।

2. यह रंग ठंडक़ और शान्तिदायक है। जब शरीर का कोई भाग या समस्त शरीर गर्म हो उस समय इस रंग का प्रयोग करना चाहिए।

3. गर्मी की अधिकता से होने वाले रोग जैसे. ज्वर, गर्मी, श्वास रोग, सिर दर्द, पेचिश, हैजा, स्नायु दुर्बल्य, अतिसार, संग्रहणी, मस्तिष्क के रोग, प्रमेह, मासिक स्राव, हिस्टीरिया, पथरी एवं मूत्र.विकार आदि रोग

इस रंग से अच्छे हो जाते है। पर यह पौष्टिक होने के साथ कुछ कब्ज पैदा करने वाला होता है। अत: इसे कब्ज, गठिया, वात रोग और पक्षाघात में उपयोगी नहीं है।

सूर्य किरणों में आसमानी तप्त औषधि के प्रभाव:

1. इस गुणकारी जल का उपयोग सब रोगों किया जाता है , लेकिन यदि मुँह व गले में छाले हो, पीव.रूधिर बहता हो तो इस पानी के प्रयोग से प्रथम छाले बढ़ते मालूम होंगे, परन्तु इससे घबराना नहीं चाहिए , उपचार चलने देना चाहिए , लाभ अवश्य होगा।

2. इस तेल की मालिश कुछ दिनों तक रोज आधा घंटे तक धूप में बैठकर करने से शरीर में बल की वृद्धि होती तथा जिगर व हृदय को शक्ति मिलती है। सिर में मालिश करने पर सिर के रोग दूर होते तथा साथ ही बालों के रोग दूर होकर बाल कोमल, मुलायम और घने.लम्बे हो जाते है।

3. यदि ततैयां, बिच्छू, शहद की मक्खी आदि काट खायें तो इस जल को उस स्थान पर मल देने से या उसकी पट्टी रख देने से आराम मिलता है।

4. यह जल पौष्टिक है और रोग मुक्ति के बाद ताकत लाने के लिए प्राय: व्यवहार में लाया जाता है।

5. जब चुपचाप बैठा नहीं जाता , कभी.कभी शरीर गर्म हो जाता और पतले दस्त आते , आंखे गुलाबी, नाखुन लाल, पेशाब में लालिमा और दस्त पीली.लाल होने पर इस जल को पीने , पट्टी रखने से लाभ होता है।

शरीर में आसमानी रंग की कमी व अधिकता का प्रभाव:

1. नीले रंग की अधिकता से वात जन्य रोग उत्पन्न होते है।

2. नीले रंग की कमी और लाल रंग की वृद्धि से शरीर के जोड़ों व गर्दन में अकडन्न व दर्द , प्रमेह, पथरी, दाद, खट्टी और कड़वी उबकाई, मानसिक रोग, बाल गिरना और आंखों के रोग उत्पन्न होते है।

(6) नीली किरणें : सूर्य चिकित्सा में कफ का रंग नीला माना गया है। यह रंग संकोचक , ज्वरनाशक, स्नायुओं को सशक्त बनाने वाला और प्यास को शांत करने वाला है।

सूर्य किरणों में नीली तप्त औषधि के प्रभाव:

1. सिर पर इस तेल के प्रयोग से कुसमय में बालों का सफेद व कड़ा होना, गिरना और सिर दर्द की समस्याएं नहीं रहती। यह तेल दिमाग को शांति पहुंचाता है।

2. यह जल बुखार में काम लें। कीटाणुनाशक फोड़े.फुन्सी, गले के रोग, टांसिल, मुंह के छाले में कुल्ला करें। प्रदर रोग, आमाशय व योनि की सूजन व दर्द में उपयोगी है।

शरीर में नीली रंग की कमी का प्रभाव:

इस रंग की कमी और लाल रंग की अधिकता से मनुष्य ज्वर, अतिसार एवं पेट के मरोड़ आदि रोग से पीड़ित हो जाता है।

(7) बैंगनी किरणें : इस रंग की ठण्ड़ी प्रकृति भी नीले और हरे रंग की भांति शरीर का ताप कम करती है। इससे नींद अच्छी आती है। फेफड़ों के क्षय की तीव्रावस्था में लाभकारी है। रक्ताभाव दूर करता है तथा लाल रक्त कणों की वृद्धि होती है।

सूर्य किरणों में बैंगनी तप्त औषधि का प्रभाव:

पागल कुत्ते के काटे, मस्तिष्क दौर्बल्य तथा हृदय की धडक़न में यह तप्त जल लाभ करता है।

शरीर में बैंगनी रंग की कमी का प्रभाव:

शरीर में इसकी कमी हो जाने से हैजा, अतिसार एवं प्रलाप आदि रोग उत्पन्न हो जाते है।

(8) सूर्य या सफेद किरणें : यह सात रंगों का मिश्रण है।

सूर्य तप्त पानी का प्रभाव:

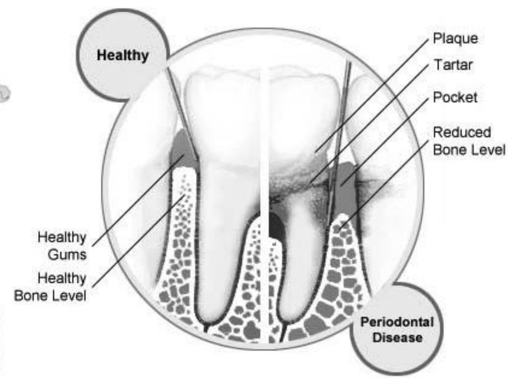

इसका जल साधारण पानी की तरह हर समय लिया जा सकता है। जो कीटाणु विहीन, कैल्शियम और पौष्टिक तत्व से युक्त होने से टूटी हड्डियों को जोडऩे एवं मजबूती प्रदान करता है। बच्चों के दांत निकलने में भी सहायक है।

(9) अल्ट्रावायलेट या नीलोत्तर किरणें :

इन किरणों को अदृश्य, अष्टम व पराकासनी किरणें भी कहते है। इसके प्रभाव से भयंकर रोग तत्काल नष्ट हो जाते योंकि इस किरण में कीटाणुनाशक ,

स्वास्थ्यवद्र्घक एवं जीवनी.शक्ति विद्यमान है। यह किरण विटामिन.डी का स्वाभाविक उत्पादक और विटामिन ए के प्रभाव को अधिक शक्तिशाली बना देती है। ये किरणें नमी और धूल से भरे वातावरण को तो भेद देती है पर सूक्ष्म से सूक्ष्म वस्त्रों को नहीं। इसलिए सूर्योदय के समय कम वस्त्रों से इससे लाभ प्राप्त कर सकते है। इसके सभी लाभ उठाने हेतु हमारी संस्कृति में सूर्योदय से पूर्व उठने का विधान है। नंगे सिर , नंगे बदन, खुले मैदान में टहलने, सूर्य नमस्कार,

यौगिक क्रिया और सूर्य के सामने खड़े होकर जल चढ़ाने से इस अमृत तुल्य नीलोत्तर किरणों से लाभ मिलता है।

सुबह जब नीलोत्तर किरणें फसलों पर पड़ती तो सोख ली जाती है। जिनसे उनकी उपज में विटामिन्स की वृद्धि हो जाती है। उसी प्रकार मनुष्य की त्वचा भी इसे सोखकर खून में मिलाती है और जीवनी.शक्ति बढ़ाती हैं। जिससे शरीर में काफी मात्रा में लाल रक्त उत्पन्न होकर वह अधिकाधिक बलवान हो जाता है। इससे त्वचा के रोग, फोड़े.फुन्सी, नासूर, सूखा तथा जीर्ण ज्वारादि रोग चमत्कारी रूप से नष्ट हो जाते है। इन किरणों को गहरे घावों में प्रवेश कराकर रोग के कीटाणुओं का अंत किया जाता है। बच्चों की हड्डियों के टेढ़ा होने पर नीलोत्तर किरणों के सेवन से ठीक हो जाते है। माता द्वारा इन किरणों के सेवन से दूध पीते बच्चे भी पूर्ण विकास एवं स्वास्थ्य लाभ पाते है। मधुमेह, हिस्टीरिया और स्त्रियों के मासिक धर्म सम्बन्धी रोगों में भी ये किरणें हितकर है। क्षय के सभी रूपों में ये किरणें लाभ करती है।

रेशमी कपड़े, रत्न.मणी एवं चमकीले पदार्थ पर सूर्य की किरणें पड़ते ही वे इन्द्रधनुष के विविध रंगों में विभक्त हो जाती है और मानव शरीर के स्वास्थ्य पर अपना अद्भुत प्रभाव दिखाती है। विश्व के सफल प्राकृतिक चिकित्सक बर्नर मैकफैडन, बेनिडिक्ट लस्ट तथा स्टेनली लीफ आदि ने इन किरणों का अपने स्वास्थ्य गृहों में उपयोग करके यह सिद्ध किया है कि ये किरणें शरीर में रक्त शोधन के लिए महत्वपूर्ण है। इन किरणों के रोगनाशक प्रभाव को वैज्ञानिक जगत्‌ने भी एक स्वर से स्वीकारा है।

सूर्य किरणों से उपचार सारणीबद्ध

रंग	उपचारित रोग	उपचार निषै
1. लाल (Red) .यह स्वभाव में उष्ण, उत्तेजक, विरेचक है।	रक्तहीनता तथा गठिया के रोगी लाल कपड़े पहनें। जिसके पांव सदैव ठण्डे रहते हों वह लाल रंग का मोजा पहनें। इस रंग से तप्त तेल प्रायः कड़े पड़े हुए अंग, भीतरी स्नायु और मांसपेशियों के कमजोर पड़ जाने पर उत्तेजना एवं स्फूर्ति पैदा करने, फोड़ों पर, कमर, गर्दन व जोड़ों का दर्द, सर्दी का दर्द, सर्दी में एड़ियों का फटने पर, सूजन, मोच, लकवा, खाँसी, दमा व निमोनिया, नपुंसकता के लिए लाभकारी है। पेट में कृमि पड़ना और शूल होने पर लाल 1 + गहरा नीला 4 दिन में चार खुराक 25 ग्राम देवें।	चिकित्सक के निर्देशन में ही लाल चार लें। यदि भूल होने पर ख्न के ल्टी हो सकती। जिसका हृदय दुर्बल हो वह लाल रंग का उपयोग न करें। लाल रंग पेट की गर्मी बढ़ाता, पाचन बिगाड़ता और पेट में रोग पैदा करता, स्नायु मण्डल उत्तेजित होकर मन चंचल और स्वभाव में प्रखरता आती है। इस रंग की चिकित्सा होने पर भोजन तुरन्त न करें या भोजन करने के एक घण्टे बाद ही इस रंग की चिकित्सा लें।
2. नारंगी (Orange) .यह स्वभाव में लाल रंग से कम उष्ण, उत्तेजक, विरेचक है।	सभी जीर्ण रोगों में इसका तप्त जल पहले तीन दिन देकर पेट साफ कराने से भूख बढ़ती है तथा दमा, नसों की बीमारी, जोड़ों का दर्द, लकवा, तिल्ली के बढ़ने, मुत्राशय, आंतों की	

	शिथिलता एवं उपदंश आदि रोगों में इसका तप्त जल काम में लें।	
3. पीला या सुनहला (Yellow) .यह स्वभाव में नारगी रंग से कम उष्ण, उत्तेजक, विरेचक है।	पीले कपड़ पहनने से ज्ञानतन्तु चैतन्य और नीरोग रहते है। यह रंग स्वास्थ्य, बुद्धि एवं विवेक की वृद्धि करता तथा पेट, जिगर, तिल्ली, फेफड़ों, लकवा, हृदय के रोग, पेट की गड़गड़ाहट, पेट फूलना, पेट में पीड़ा होना, कोष्ठबद्धता, मलावरो, अजीर्ण, कृमि रोग, गुदभ्रंश, पेटविकार आदि रोग दूर करने हेतु पीला तप्त पानी थोड़ा.थोड़ा कुछ दिन तक पीना चाहिए। इस रंग से सिद्ध किया गया घी आँखों की रोशनी व जलन को ठीक करता है।	पीला तप्त पानी अकि मात्रा में पीने से पेट में गर्मी बढ़ती और दस्त लगती है।
4. हरा (Green) .यह स्वभाव में मध्यम है अर्थात् न गर्म, न ठण्ड़ा। रक्त शोन व संतुलन बनाने में सहायक है।	यह रंग भूख बढ़ाने वाला, मस्तिष्क की गर्मी शांत करने वाला, ज्ञानतन्तुओं और स्नायु मण्डल को बल देने वाला, कैंसर रोग, नेत्र रोग, मुमेह, टाईफाइड, खांसी.जुकाम, नाक.मुंह.गुदा द्वारा रक्त गिरना, योनि प्रदाह, स्त्रियों का रक्त प्रदर, स्वप्नदोष एवं बवासीर में लाभकारी है। शरीर में पकने वाले, सड़ने वाले, बहने वाले, दुर्ग- युक्त और किसी भी दवा से न अच्छा होने वाले त्वचा रोग. हाथ.पांव का फटना, दाद.खाज.खुजली, बहने वाले फोड़ा.फून्सी एवं चेचक रोग आदि विकार निस्सन्देह दूर हो जाता है। हरा तप्त तेल सिर में लगाने से स्वप्नदोष तथा ातु सम्बने रोग मिट जाते है। सिर और पांव में लगाने से नेत्ररोग. मोतियाबिन्द नहीं होता और नींद अच्छी आती है, कर्ण रोगों में यह तेल कान में डालें। इस पानी से आँखें ोयें तथा आँतों में घाव होने या आँतें कमजोर होने पर खाली पेट इसके पानी का सेवन करें।	
5. आसमानी (नीला) (Blue) .यह स्वभाव में ठण्ड़ा, शीतल व शांतिदायक है।	यह रंग सब रोगों को शांत करने वाला है। जिसकी प्रकृति गर्म हो या शरीर की सूजन में नीले कपड़ें पहनना गुणकारी है। गर्मी की अकिता से होने वाले रोग जैसे. ज्वर, गर्मी,	यह रंग पौष्टिक होने के साथ कुछ कब्ज पैदा करने वाला होता है। अतः इसे कब्ज, गठिया, वात रोग और पक्षाघात आदि में उपयोगी

सड़ान को रोकने की प्रति रोक (Anti.septic) क्षमता है।	श्वास रोग, सिर दर्द, पेचिश, हैजा, स्नायु दौर्बल्य, अतिसार, संग्रहणी, मस्तिष्क के रोग, प्रमेह, मासिक स्त्राव, हिस्टीरिया, पथरी एवं मूत्र.विकार आदि रोग इस रंग से अच्छे हो जाते है। आसमानी तप्त पानी का उपयोग मुँह व गले में छाले, पीव.रूरि बहने पर करें। जब चुपचाप बैठा नहीं जाता, कभी.कभी शरीर गर्म हो जाता और पतले दस्त आते, आंखे गुलाबी, नाखुन लाल, पेशाब में लालिमा और दस्त पीली.लाल होने पर इस जल को पीने, पट्टी रखने से लाभ होता है। यह जल पौष्टिक है और रोग मुक्ति के बाद ताकत लाने के लिए प्रायः व्यवहार में लाया जाता है। इस तेल की ूप.मालिश कुछ दिनों तक रोज करने से शरीर में बल की वृद्धि तथा जिगर व हृदय को शक्ति मिलती है। सिर में मालिश करने पर सिर के रोग दूर होते तथा साथ ही बालों के रोग दूर होकर बाल कोमल, मुलायम और घने.लम्बे हो जाते है।	नहीं है।
6. गहरा नीला (Indigo/Deep.Blue) .यह स्वभाव मं आसमानी रंग से कम ठण्ड़ा, शीतल व शांतिदायक है। सड़ान को रोकने की प्रति रोक क्षमता है।	यह रंग संकोचक, ज्वरनाशक, स्नायुओं को सशक्त बनाने वाला और प्यास को शांत करने वाला है। इस तेल की सिर में मालिश करने पर दिमाग.शांत, सिर दर्द दूर, बालों की समस्याएं नहीं रहती। इसका जल बुखार, फोड़े.फुन्सी, गले के रोग, टांसिल, मुंह के छाले, प्रदर रोग, आमाशय व योनि की सूजन व दर्द में उपयोगी है।	
7. बैंगनी (Violet) .यह स्वभाव में नीले रंग से कम ठण्ड़ा, शीतल व शांतिदायक है।	इस रंग से शरीर के ताप में कमी, अच्छी नींद, फेफड़ों के क्षय, रक्ताभाव, लाल रक्त कणों के निर्माण में सहायक है। पागल कुत्ते के काटे, मस्तिष्क दौर्बल्य तथा हृदय की ड़कन में बैंगनी तप्त पानी पीयें।	

8.7 **रंगीन (काँच का प्रकाश, फल.सब्जियाँ एवं वस्त्र)**

किसी विशेष रोग में रंग चिकित्सा के अनुसार सूर्य स्नान करने के लिए विविध रंगों के बक्से या केबिन बनाये जाते है। जिसमें लेटकर , बैठकर रंगों के प्रभाव से शारीरिक एवं मानसिक अंगों की क्रिया को यथावत् संतुलित बनाया जाता है। ध्यान रहे कि शरीर से रंगीन शीशा कम से कम चार इंच की दूरी पर रहें।

फल.सब्जियाँ: प्रकृति ने हमें पूर्ण शाकाहारी प्राणी बनाया है। जिसे आधुनिक विज्ञान ने भी मान लिया है कि मनुष्य की आंतरिक संरचना एवं क्रिया वनस्पति को पचाने के लायक ही है। प्रकृति ने शाकाहारी प्राणियों के लिए अनेक प्रकार की वनस्पतियाँ अलग.अलग रंगों की बनायी है। जिनसे उनके औषधिय गुण भी उसी अनुसार है। रोगी अपनी समस्या के अनुसार उन रंगों के फल.सब्जियाँ ज्यादा मात्रा में उपयोग रोग मुक्त हो सकता है। ध्यान रहे कि ये फल.सब्जियाँ सलाद, रस, जूस एवं सूप के रूप में लेनी ही श्रेष्ठ रहता है।

वस्त्र: जैसाकि सूर्य किरणों में अपनी तेजी के अनुसार ऊष्मा पायी जाती है। सूर्य की किरणों में गर्मी का अनुभव किया जा सकता है। जब हम काले रंग के वस्त्र पहनते है तो वे सूर्य किरणों के सातों रंगों को अपने में सोख लेता है। जिसके कारण जल्दी गर्मी लगने लगती है। जबकि सफेद रंग के वस्त्र पहनते है तो वे सूर्य किरणों के सातों रंगों को वापस भेज देता है। जिसके कारण गर्मी का अहसास भी नहीं होता है। अत: खासतौर पर गर्मियों में सफेद रंग के वस्त्र ही पहनने चाहिए तथा अपनी व्याधि या समस्या या रोग के अनुसार रंगीन वस्त्रों को धारण करना चाहिए।

सूर्यतप्त औषधि (जल , तेल, घी, शहद, शर्बत) : आवश्यकतानुसार विभिन्न रंगीन बोतलों या साधारण बोतलों पर रंगीन सेलोफिन पेपर का उपयोग करके आवश्यक पदार्थ जैसे. जल, तेल, घी, शहद, शर्बत आदि को बोतल में 3। 4 भर कर प्रतिदिन 6.8 घण्टे तक धूप में चार्ज करने हेतु लकड़ी के विशेष स्टेण्ड़ पर इस प्रकार दूर.दूर रखते है कि एक.दूसरे की छाया न पड़े।

पानी एक दिन अर्थात् 6.8 घण्टे तक धूप में चार्ज करने पर 3 दिन तक उपयोग में लिया जा सकता है। लाल रंग से तैयार पानी पीने पर भोजन तुरन्त न करें या भोजन करने के एक घण्टे बाद ही तैयार पानी पीयें। नीले या हरे रंग से तैयार पानी होने पर खाली पेट या भोजन करने के आधे घण्टे बाद ही लें। आयु के अनुसार सूर्यतप्त जल की खुराक की मात्रा निम्नवत् हैं.

आयु	खुराक	खुराक की मात्रा
1 दिन से 1 माह	दिन में 3 बार	1.1 चमच
1 माह से 1 वर्ष	दिन में 3 बार	2.2 चमच
1 वर्ष से 10 वर्ष	दिन में 3 बार	4.4 चमच
10 वर्ष से ऊपर	दिन में 4 बार	8.8 चमच

यदि रोग की तीव्रता हो तो आधे.आधे घण्टे के अन्तराल खुराक लें। जैसे. हैजा , तीव्र बुखार, तीव्र दर्द, छालें और मासिक रोग आदि।

शहद को प्रतिदिन 6.8 घण्टे तक धूप में चार्ज करने पर 15 दिन में तैयार होता है। जिसे 120 दिन तक उपयोग में लिया जा सकता है।

शर्बत को प्रतिदिन 6.8 घण्टे तक धूप में चार्ज करने पर 30 दिन में तैयार होता है। जिसे 150 दिन तक उपयोग में लिया जा सकता है।

तेल व घी को प्रतिदिन 6.8 घण्टे तक धूप में चार्ज करने पर 45 दिन में तैयार होता है। जिसे एक वर्ष तक उपयोग में लिया जा सकता है। तेल व घी का उपयोग मालिश में किया जाता है। घी आँखों के अंजन के साथ ही खाने के उपयोग में लिया जाता है।

8.8 सारांश

अग्नि तत्व का सूक्ष्म अंकुर हमारे शरीर में सतत् कम.ज्यादा प्रवेश करता रहता है। प्रकृति से दूरी बनाने पर शरीर में अग्नि तत्व की कमी हो जाती है। कमी के कारण वह रोगी बन जाता है। तो ऐसे रोगियों को रोगमुक्त होने के लिए स्वस्थ व्यक्तियों की भाँति ही प्रकृति की उक्त सरल विधियों को अपने दैनिक जीवन में स्थान देकर सदैव रोगों से मुक्त रहना चाहिए। इसके लिए प्रकृति को जानने का प्रयास, उसे अपने जीवन में ढ़ालने का अभ्यास तो करना ही होगा।

अप्राकृतिक जीवन.शैली के जनमानस को समझाने के लिए प्राकृतिक चिकित्सा में एक सरल.सा प्राकृतिक नियम बताता है , कि ‘जो चिकित्सा जितनी स्वाभाविक होगी , उतनी ही प्रभावशाली होगी। ’ लेकिन बड़ी विड़म्बना है कि आज का आधुनिक बुद्धिमान मनुष्य प्रकृति की सरल , सटीक एवं

स्वाभाविक चिकित्सा से दूर होता जा रहा है और सुदूर रह कर वह दुखियारा कृत्रिम गोलियाँ खा.खाकर संसार में टाईम.पास कर रहा है। हे भगवान्! प्रकृति उनको भी तत्काल सत् बुद्धि प्रदान करें, जिससे वे भी प्रकृति के संग आकर एक बार तो स्वस्थ हो जायें।

8.9 बोधात्मक प्रश्न

1. अग्नि तत्व में क्या.क्या महत्वपूर्ण है?
2. सूर्य के बिना जीवन की कल्पना करना कैसे असम्भव है?
3. जहाँ सूर्य का प्रकाश नहीं जाता वहाँ डॉक्टर कैसे आता है?
4. अग्नि का चिकित्सकीय महत्व एवं इतिहास का विस्तृत वर्णन करो?
5. सूर्य.प्रकाश के सेवन मनुष्य बुद्धिमान कैसे बन जाता है?
6. धूप सभी लोगों के लिए कौन.से विटामिन का मुख्य स्रोत है?
7. सूर्य दर्शन, उपासना एवं धूप स्नान का विस्तार से वर्णन करो?
8. रंग क्या है तथा सप्तरंगों के नाम बताइयें?
9. रंगों का औषधिय महत्व क्या है तथा शरीर में उनका स्थान कहाँ.कहाँ है?
10. सप्त रंगों की प्रकृति और आयुर्वेदीक दोषों का वर्णन कीजिए?
11. नीलोत्तर किरणों (अल्ट्रावॉयलेट) के बारे में विस्तार से समझाइये?
12. विभिन्न सूर्य किरणों का विस्तार से वर्णन करो?
13. रंगीन काँच द्वारा उपचार लेने की विधि बताओ?
14. रंगीन फल.सब्जियाँ एवं वस्त्र कैसे स्वास्थ्य प्रदान कर सकते है?
15. सूर्यतप्त कौन.कौन सी औषधियाँ कैसे तैयार की जाती है?

8.10 संदर्भ ग्रंथों की सूची

संदर्भ ग्रंथों की सूची में सम्मिलित ग्रन्थों एवं उनकी सहायक सामग्री का उपयोग हमने इस ग्रन्थ के निर्माण में सहायक के रूप में किया है। हम इन संदर्भित ग्रन्थों, उनके लेखकों, प्रकाशकों एवं संस्थाओं के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

संदर्भ साहित्य	लेखक	संदर्भ साहित्य	लेखक
प्राकृतिक आयुर्विज्ञान	डॉ. राकेश जिन्दल	प्राकृतिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य	डॉ. महेन्द्र कुमार जाजपुरा
वृहद प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. ओ. पी. सक्सेना	योग एवं स्वास्थ्य	डॉ. महेन्द्र कुमार जाजपुरा
पातंजली योगसूत्र	स्वामी विवेकानंद	प्राण शक्ति उपचार; प्राचीन विज्ञान कला	चौ. कोक सुई
प्राकृतिक स्वास्थ्य शास्त्र	आचार्य शेषाद्रि स्वामीनाथन	जीवनी शक्ति कैसे जगायें	डॉ. चन्द्र दीप सिंह

प्राकृतिक चिकित्सा दर्शन	हेनरी लिंडलार	आपका आरोग्य आपके हाथ में	देवेन्द्र वोरा
प्राकृतिक जीवन की ओर	श्री एडोल्फ जस्ट	प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग वैज्ञानिक प्रयोग	डॉ. नागेन्द्र कुमार नीरज
100 वर्ष निरोगी रहिए	माणेक लाल म. पटेल	जीवेम् शरद शतम्	पं. श्री राम शर्मा आचार्य वाङ्मय
रोगों की अचूक चिकित्सा	जानकी शरण वर्मा	बिना आषयिों के कायाकल्प	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
स्वास्थ्य के सोपान	नरूपमल सुराणा	निरोग जीवन का राज मार्ग	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
आरोग्य की कुंजी	राष्ट्रपिता महात्मा गाी	दीर्घ जीवन की प्राप्ति	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
कुदरती चिकित्सा	राष्ट्रपिता महात्मा गाी	पंच तत्वों द्वारा सम्पूर्ण रोगों का निवारण	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
सरल प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. लक्ष्मी नारायण शर्मा	रोगों की सरल चिकित्सा	विट्ठलदास मोदी
प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. सतीश गोयल	जीने की कला	विट्ठलदास मोदी
प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग	श्रीमत्ती राज कुमारी गुप्ता	मौलिक चिकित्सा कौन सी?	डॉ. चंचलमल चोरडिया
आर्गेनन ऑफ दी मेडीसन्स	डालटन हनीमेन	100 वर्ष कैसे जीयें	आचार्य श्याम सुन्दर सुमन
आरोग्य प्रकाश	वैद्यराज पं. रामनारायण शर्मा	स्वस्थवृत विज्ञान	पो. रामहर्ष सिंह
		अखिल भारतीय प्राकृतिक जीवन संघ द्वारा प्रकाशित एन.डी. कोर्स के लेख (भूज, गुजरात)	

****

इकाई – 9

मालिश चिकित्सा (धूप में तेल मालिश या उबटन)

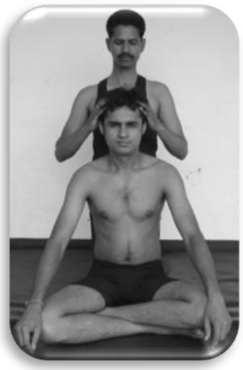

9.1 उद्देश्य

9.2 प्रस्तावना

9.3 मालिश का इतिहास

9.4 मालिश की उपयोगिता

9.5 स्त्री-पुरूष.बच्चों की मालिश सम्बन्धी महत्वपूर्ण नियम

9.6 मालिश का सिद्धान्त

9.7 गरम सेंक

9.8 सारांश

9.9 बोध प्रश्न

9.10 संदर्भ ग्रंथ

9.1 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में हम जान सकेंगे कि

- मालिश चिकित्सा (धूप में तेल मालिश या उबटन)
- मालिश का इतिहास
- मालिश की उपयोगिता
- मालिश के लाभ
- स्त्री-पुरूष-बच्चों की मालिश सम्बन्धी महत्वपूर्ण नियम
- मालिश का सिद्धान्त

- मालिश की विधियाँ

9.2 प्रस्तावना

मालिश का स्वास्थ्य कि दृष्टि से बढे हुए वायु दोष का नाश करने में महत्वपूर्ण योगदान है । आयुर्वेद की भाषा में मालिश को अभ्यंग कहा जाता है । "अभ्यांगो वातहा" के सिद्धांतानुसार मालिश से शरीर में थकान दूर होकर स्फूर्ति आती हैं साथ ही मालिश द्वारा संधियों का सूक्ष्म व्यायाम होता है त्वचा में निकार आता है एवं व्यानवायु सम स्थिति में होती है रक्त संचार सुव्यवस्थित संचरित होता है । आकर्षक व्यक्तित्व बनाता है सदियों से मालिश की विधि का प्राकृतिक चिकित्सा में दुबले व्यक्तियों को मोटा करने में एवं मोटे व्यक्तियों को पतला करने में प्रयोग होता आ रहा है।

9.3 मालिश का इतिहास

मालिश से अभिप्राय वैज्ञानिक हस्तकौशलोपचार से है। यह शरीर के अपक्षत अंगों में जीवन और शक्ति बढ़ाने का सर्वाधिक प्रभावी तरीका है। मालिश की क्रिया.विधि का प्रचलन अति प्राचीन काल से होता चला आ रहा है। इसका कोई जन्मदाता नहीं है। इसका प्रचलन जीवों की उत्पति से ही हुआ माना जाता है। संसार में उद्धव सभी सभ्यताओं में हर काल में , हर प्रान्त में मालिश का प्रचलन रहा है। इस क्षेत्र में कई मालिश विशेषज्ञों ने अपने समय एवं क्षेत्र में धन के साथ.साथ नाम भी कमाया तथा उनके ही प्रयास के कारण यह विद्या आज भी जीवित होते हुए स्वास्थ्य वर्धक बनी हुई है।

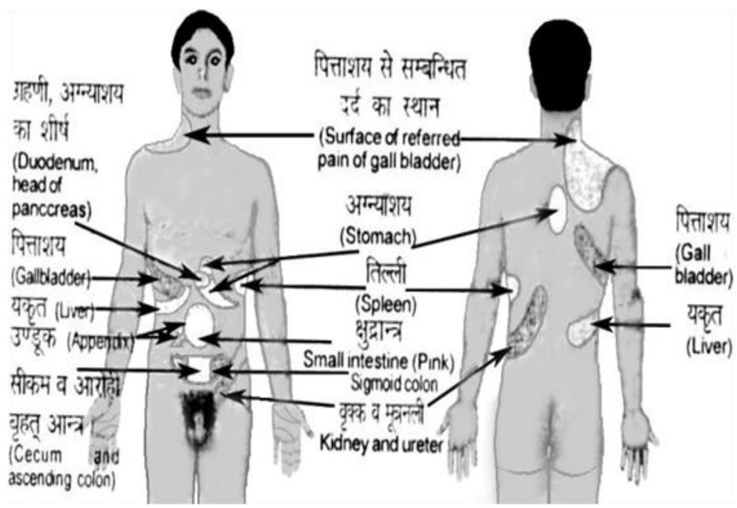

हमारी भारतीय संस्कृति में मालिश सदियों से घर.घर में प्रचलन प्रचलित रही है। यहां के पौराणिक साहित्यों में मालिश अर्थात् मर्दन क्रियाओं का विस्तार से वर्णन मिलता है। जैसा कि आयुर्वेद में मालिश को बहुत महत्व देते हुए इसके गुणों और साप्ताहिक विधान निश्चित किया गया है। आयुर्वेद एवं प्राचीन साहित्यों में मालिश से स्वास्थ्य लाभ की प्राप्ति हेतु अलग.अलग रोगों के निवारण हेतु अलग.अलग औषधियों से युक्त तेलों की मालिशों के प्रभाव का विस्तार से वर्णन मिलता है। जो आज भी साधारणत: घर.घर तक प्रचलित है।

पूरे विश्व में हर सभ्यता में दास प्रथा का प्रचलन हुआ है। इस प्रथा से मालिश की कला की लोकप्रियता में बहुत बड़ा सहयोग मिला। भारत की भूमि पर कई सदियों से कई राजवंशों का उदय हुआ और उन्होंने

मालिश की कला का बहुत लाभ और आनन्द प्राप्त करते हुए इसे लोकप्रिय बनाया। आज भी पुराने ऐतिहासिक भवनों में मालिश के बाद किये जाने वाले स्नान के ठण्ड़े व गर्म पानी के कुण्ड़ देखने को मिलते है। बादशाहों के जमाने में मालिश की कला शम्पी (चम्पी) के नाम से बहुत लोकप्रिय हुई। जिसे एक बार पुन: पुरे विश्व में इस कला का नये सिरे से स्वास्थ्य वर्धक प्रचलन प्रारम्भ हुआ। जो आज भी वैज्ञानिक रूप में अपनायी जा रही है। भारत समेत विश्व की समस्त राजवंशों की सैन्य टुकडिय़ों ने मालिश को बहुत जोर.शोर से अपनाया है। आज भी कई राष्ट्रों की सेना में यह लोकप्रिय है। अक्सर लोग युद्ध के बाद अपनी थकान मिटाने हेतु मालिश का आनन्द लिया करते थे।

भारतीय संस्कृति में आज भी एक प्रथा बहुत प्रचलित है जो विवाह से पूर्व युवक.युवतियों दोनों की हल्दी, तेल, जौ आटा, बेसन आदि को उचित मात्रा में मिलाकर मालिश की जाती है। जिसे हिन्दू लोग हल्दी की रस्म कहते है। इस रस्म से युवक.युवतियों में यौवन फूट पड़ता है।

9.4 **मालिश की उपयोगिता**

शरीर को स्वस्थ सुन्दर एवं सुड़ौल बनाने हेतु मालिश एवं व्यायाम का उपयोग बड़ा ही लाभदायक है। लोगों ने इसे बड़े चाव से अपनाया है। इसका शौक सिर्फ पुरूषों में ही नहीं बल्कि बच्चों व स्त्रियों में भी बहुत प्रचलित है। अच्छे स्वास्थ्य के लिए व्यायाम के साथ मालिश बहुत लाभकारी होती है। मालिश को स्वास्थ्यवर्धक बनाने हेतु प्रात:कालीन सूर्य के प्रकाश में मालिश करवायी जाती है और मालिश के बाद ठण्ड़े पानी से स्नान कर लिया जाता है। इस प्रकार से मालिश एक कला है। इससे शरीर सुन्दर, सुड़ौल एवं स्वस्थ रहता है , रोग मिटते तथा शरीर की रोग.प्रतिरोधक शक्ति बढ़ती है। शरीर के अंग.प्रत्यंग लचीले और कर्मशील बनते है। इससे आलस्य दूर होकर मन प्रफुल्लित होता है।

मालिश शरीर की मांसपेशियों पर की जाने वाली एक ऐसी महत्वपूर्ण उपचार पद्धति है। जो सारे शरीर के विकार को रक्त के द्वारा उत्सर्जित अंगों.त्वचा, गुर्दा, फेफड़ा व आंतों तक पहुंचाकर शरीर से बाहर करता है। जिससे शरीर के स्वास्थ्य एवं सौन्दर्य में असाधारण वृद्धि होती है।

जब से मनुष्य ने मालिश से मन और स्वास्थ्य पर पडऩे वाले प्रभाव को समझा। तभी से मालिश की उपयोगिता बढऩे लगी। वह शिशु के जन्म से ही मालिश प्रारम्भ कर देता है। जो उसके शारीरिक एवं मानसिक विकास में बहुत ही अच्छी सहायक सिद्ध होती है। जिससे वह संसार के योग्य बन कर जीवन यापन करता है। मालिश एक ऐसी कला है जिसे प्रत्येक प्राणी जाने.अनजाने में अपनाते और लाभान्वित होते है।

कोई भी प्राणी हो उसके लिए माँ द्वारा सबसे पहले मालिश का अध्याय ही कार्यान्वित होता है। जैसे ही बच्चे का जन्म हुआ , वैसे ही मालिश के अध्याय की शुरूआत होती है। सर्वप्रथम उस पर मालिश की

थपथपाने वाली प्रक्रिया अपनायी जाती है। जिससे उसे नींद आ जाये तथा मांसपेशियों की मालिश हो जायें।

मालिश अर्थात् शरीर में गर्मी पैदा करना। जैसा कि पक्षी अपने अण्ड़े को अपने शरीर की गर्मी देकर सहलाता रहता है और जब वह पक जाने पर उससे बच्चा बाहर निकलता है तो उसकी अपने पंखों एवं चोंच द्वारा मालिश करता है। जिससे दोनों के जीवन में जीवन का संचार तेजी से होने लगता है। पक्षी ही नहीं पशुओं द्वारा भी अपने बच्चों की मालिश अपनी जिह्वा द्वारा चाट.चाट कर की जाती है। जैसे. गाय , भैंस, ऊंट, भेड़, बकरी, बिल्ली, कुत्ता, शेर एवं बन्दर आदि।

मालिश अर्थात् थकान को दूर करना। गधा , घोड़ा आदि पशु जमीन पर मिट्टी में लोट.पोट का आनन्द उठाकर अपने शरीर की मालिश स्वयं कर लिया करते है। हाथी अपनी सूंड से पानी का फव्वारा शरीर पर डालकर तथा गाय, भैंस, हिरण एवं सुअर आदि पशु कीचड़ भरे पानी में बैठकर अपने शरीर की मालिश स्वयं कर लेते है। इसी प्रकार पक्षी भी पानी या मिट्टी में ं कल्लोल करके अपने पंखों से शरीर की मालिश का लाभ उठाते है।

मालिश अर्थात् प्यार जताना या क्रोध शांत करना एवं दु:ख दूर करना। मालिश ऐसी कला है कि किसी के शरीर पर प्यार से हाथ घुमाने या सहलाने मात्र से ही क्रोध शांत हो जाता है तथा दु:खी व्यक्ति अपना दु:ख भूल जाता है।

मालिश अर्थात् हौंसला बढ़ाना। प्यार से किसी की पीठ थपथपाने मात्र से ही उसका हौसला बढ़ जाता है।

मालिश अर्थात् वश में करना। मालिश ऐसी कला है जिसके द्वारा किसी प्राणी को वश में बड़ी आसानी से किया जा सकता है और मनचाहा लाभ प्राप्त कर लेते है। माँ का स्नेह एवं स्पर्श ही ऐसी मालिश है कि बच्चा अपने दु:ख दर्द एवं थकान भूलकर अपार आनन्द का अनुभव करता है।

मालिश की अनेकों उपयोगिताएं होने की वजह से मालिश को चिकित्सा के क्षेत्र में एक विशेष स्थान प्रदान है।

सुश्रुत, मदनपाल, निघंटु, चक्रपाणि, दत्तकृत संग्रह , वाग्भट्ट आदि के आयुर्वेदिक ग्रन्थों में इसकी उपयोगिता इस प्रकार बतायी गयी है कि घोड़े के चर्म को तेल लगाने से और गाड़ी के पहियों में तेल डालने के बाद चाहे कितना भी भार क्यों न हो वे मजबूत बनकर उसे बहुत आसानी से वहन कर लेते है , इसी प्रकार तेल की मालिश से व्यक्ति भी पुष्ट बनता है। उनका शरीर गठीला हो जाता है और वात सम्बन्धी कोई भी बीमारी उसे घेर नहीं सकती। जब शरीर इस तरह स्वस्थ रहता है तब उसे कितना भी श्रम क्यों न करना पड़े , उसे थकान मालूम नहीं पड़ती। उसमें सहन.शक्ति आ जाती है। उसके अतिरिक्त त्वचा में एक प्रकार का तेज, चमक और लचीलापन भी आ जाता है। त्वचा के स्पर्श.ज्ञान की शक्ति बढ़ जाती है। अत: प्रतिदिन मनुष्य को श्रद्धा से मालिश करानी चाहिए। तभी वह सुन्दर , सुडौल, सुदृढ़, सहनशील और निरोग व्यक्ति बन पायेगा।

संवाहनश्रमहरं वृस्यं निद्रासुखप्रदम्। मांसासृक्त्वक्प्रसन्नत्वं कुर्याद्वातकफापहमु।।

अर्थात् शरीर को मर्दन करना , श्रमनाशक धातुओं को पुष्ट करने वाला, निद्रा और सुख को देने वाला , सांस, त्वचा तथा रूधिर को निर्मल करने वाला और वात कफ नाशक है।

वातव्याधि हरति कुरूते सर्वगात्रेषु पुष्टिं दृष्टिं मन्दामपि वितनुतेवैनतेयोपमां च।

निद्रां सौख्यं जनयति जरां हंति शक्तिं विधत्ते धत्ते कान्तिं कनकसदृशीं नित्यमभ्यंगयोगात्।।

अर्थात् सदैव शरीर में तेल मलने से वात रोग दूर होते है , सभी अंग पुष्ट होते है, गरूड़ के समान दृष्टि हो जाती है, निद्रा और सुख मिलता है , बुढ़ापा दूर होता है , शरीर में शक्ति उत्पन्न होती है और स्वर्ण के समान वर्ण हो जाता है।

पादाभ्यंगोअथ निद्राकृच्चक्षुष्य: पादरोगहा। चक्षुषि प्रतिरंध्रे द्वे शिरे पादगते नृणाम्।।

अतश्चक्षु प्रसादर्थी पादाभ्यंगं समाचरेत्।

अर्थात् पांवों में तेल मलना, निद्राजनक नेत्रों के लिए हितकारी, और पांवों के रोग दूर करने वाला है। नेत्रों के दोनों छिद्रों में जो दो शिराएं है , वे दोनों शिराएं पांवों में लगी हुई है। इसलिए पांवों में तेल को मलना नेत्रों के लिए हितकारी है। अत: नेत्रों का सुख चाहने वाले मनुष्य सदैव तेल की मालिश करें।

शिखामुखै रोमकूपैर्धमनीभिश्च तर्पयेत्।

अर्थात् शरीर पर इस प्रकार का तेल मर्दन करें, जिससे बालों की जड़ों में, रोमकूपों में और शिराओं में तेल प्रविष्ट हो जाये।

अत: स्पष्ट है कि मालिश संजीवनी का काम करती है। इससे हम अपनी मांसपेशियों को शिथिल व स्वस्थ कर रक्त के दौरे को बढ़ाते है , जिससे शरीर में एकत्र विकार दूर होकर शरीर का यौवन , सुडौलता और सुन्दरता अधिक आयु तक बनी रहती है।

मालिश के लाभ

1. नाड़ी संस्थान को उत्तेजना मिलने से शरीर की समस्त क्रियाएं ठीक तरह से चलती है।

2. रक्त संचालन समान रूप से होने लगता है, जिससे शरीर के विकार शरीर में इकठ्ठे न होकर श्वास, शौच, पसीने और मूत्र के द्वारा शरीर से बाहर निकल जाता है।

3. शरीर का विकार निकालने वाले अंगों जैसे. फेफड़ा, आंत, गुर्दे व त्वचा को मालिश से बल या शक्ति मिलती है। जिससे ये अंग अपना काम सुचारू रूप से करते रहते है।

4. मालिश से शरीर की ग्रंथियों को उत्तेजना मिलती है, जिससे वे अपना काम सुचारू रूप से करने लगती है।

5. मालिश से चर्बी को गलाने या घटाने में बड़ी सहायता मिलती है।

6. विशेषकर गठिया, अधरंग, सिरदर्द, बच्चों का लकवा , मोच, तपेदिक, पागलपन, मांसपेशियां तथा स्नायु रोगों में मालिश अति लाभदायक है।

7. मालिश से त्वचा साफ , स्वच्छ एवं सुन्दर बनती है। उसके रोम कूप विकसित होते है तथा रोम छिद्र खुल जाते है।

8. इससे मांसपेशियों में शिथिलता आ जाने के कारण शरीर में ताजगी आ जाती है।

9. रोग जब पुराना हो जाता है तो त्वचा अपना काम करना बंद कर देती है। तब मालिश द्वारा त्वचा को सक्रिय बनाया जाता है।

10. मालिश से शरीर के सभी अंगों का विकास एवं कार्य का संचालन होता है। जिससे शरीर के अंग सबल, मजबूत तथा तेलयुक्त बनते है।

11. मालिश द्वारा खुराक सीधी शरीर में पहुंचती है जिससे उसका पोषण होता है।

12. जो लोग व्यायाम, योगासन नहीं कर सकते है या जिनका स्वास्थ्य अच्छा नहीं है। वे मालिश से लाभ प्राप्त कर सकते है।

शरीर पर प्रभाव

शरीर का स्वस्थ रहना बहुत आवश्यक है। शरीर के स्वास्थ्य के बिना हम किसी भी कार्य के योग्य नहीं रह सकते है और अपने जीवन में आनन्द प्राप्त नहीं कर पाते है। स्वास्थ्य को बनाये रखने में मालिश बड़ी महत्वपूर्ण है। यह शरीर में शक्ति का संचार कर जीवन को आनन्दमय बनाती है। मालिश बहुत से रोगों को ठीक करती है , नस.नाडिय़ों को स्वस्थ बनाती है। रक्त के दौरे को सुचारू रूप से चलाती है, मांसपेशियों को लचीला बनाती है। इस प्रकार मालिश शरीर को सीधी खुराक पहुंचाती है।

हृदय तथा रक्त संस्थान : शरीर पर मालिश का जो प्रभाव होता है वह रक्त परिभ्रमण प्रणाली द्वारा ही होता है और विशेषत: छोटी.छोटी रक्त नलिकाएं और स्नायु मंडल को नियंत्रित करती है। धमनियों में उत्तेजना, रक्ताधिक्य, शारीरिक अंगों के कार्य में अधिक क्रियाशीलता, अधिक सक्रिय पोषण, शरीर से रस नि:सरण, सफाई, पचे हुए रस का शरीर में शोषण आदि तेजी से होता है। इस प्रकार मालिश शारीरिक क्रिया में परिवर्तन ला देती है। मालिश से शिराओं एवं लसीका नलिकाओं में उत्तेजना होने के फलस्वरूप धमनियों में दबाव बढ़ जाता है। फेफड़ें, चमड़ी, आंतों एवं गुर्दो आदि द्वारा मालिश के कारण सफाई तेजी से होने लगती है और शरीर विषयक परिवर्तन में प्रगति होती

है। धमनियों में रक्त की कमी से हाथ पैर ठण्ड़े हो जाते है। सिर की रक्त नलिकाओं में रक्ताल्पता से रोगी बेहोश हो जाता है। मालिश से रक्त संचार मे वृद्धि होती है। रक्त में गुणात्मक परिवर्तन भी आता है, क्योंकि श्वेत रक्त कण भी बढ़ते है, जो कीटाणुओं द्वारा आक्रमण होने पर शरीर की रक्षा करते है।

स्नायुओं

मालिश की क्रिया स्नायविक संस्थान पर बहुत गहरी होती है। इसका प्रभाव मालिश की विभिन्न पद्धतियों पर निर्भर करता है। इसमें स्नायु संस्थान में उत्तेजना एवं आराम लाया जाता है। स्नायुओं में उत्तेजना आने से मांसपेशियों , रक्त नलिकाओं एवं ग्रंथियों की कार्यशीलता बढ़ जाती है। इसका कारण यह है कि शरीर के विभिन्न तंतु स्नायुओं से नियंत्रित होते है। मालिश की आरामदायक हरकतों से स्नायुओं को सुख अनुभव होता है और शरीर हल्का हो जाता है। एक स्वस्थ स्नायु पर मालिश देने से उनमें उत्तेजना तथा दर्द पैदा होता है, परन्तु जिस स्नायु में दर्द हो, स्नायु.शूल हो, उस पर मालिश करने से दर्द में कमी होती है। स्नायु में हल्के दबाव में उत्तेजना आती है, किन्तु अधिक दबाव देने पर वह कम होती है। सिर के पीछे वाली स्नायुओं पर बार.बार दबाव देने से उसका दर्द आश्चर्यजनक रूप में चला जाता है। पाचन संस्थान और रक्त संस्थान पर मालिश का गुणकारी प्रभाव होने से स्नायुओं में पोषक तत्वों की वृद्धि होती है।

मांसपेशियों

मांसपेशियों की मालिश करने से उनमें काम करने की शक्ति बढ़ती है और थकान कम होती है , क्योंकि मालिश से थकान लाने वाले दूषित पदार्थ मांसपेशियों में इकठ्ठे नहीं हो पाते है। मांसपेशियों में लचक आ जाती है तथा उनकी वृद्धि और विकास होता है।

मालिश वास्तव में मांसपेशियों की कसरत है। मांसपेशियों के लिए मालिश उतनी ही आवश्यक है जितना रक्त को सूक्ष्मातिसूक्ष्म नाडिय़ों में प्रवाहित होने के लिए उसमें जल का यथेष्ट मिश्रण। मालिश का मंतव्य होता है पेशियों में गति उत्पन्न करना, इन्हें सजग रखना। हमारे शरीर का मांसल भाग अनगिनत मांसपेशियों से मिलकर बनता है।

मांसपेशियों के फूलने पर उनमें गति का अनुभव होता है और उनके नर्म व कोमल पड़ जाने से उनमें एक प्रकार की सख्ती और शिथिलता आ जाती है। मांसपेशियां हरकत चाहती है , जिससे उनको जीवनी शक्ति प्राप्त होती रहे। मालिश से उन्हें स्वतन्त्र एवं अबाध गति से अपना कार्य सुचारू रूप से पालन करने के लिए क्षमता और शक्ति प्राप्त होती है। मानव शरीर में पेशियों और रक्त प्रवाह का चोली और दामन का साथ है। दूसरे शब्दों में रक्त धारा को रक्तवाहिनी नलिकाओं में बिना रूकावट के प्रवाहित होना , शारीरिक मांसपेशियों को स्वस्थावस्था पर ही निर्भर करता है। ये ही दो महान् कार्य.मांसपेशियों की गतिशीलता तथा नाडिय़ों में उन्मुक्त रक्त प्रवाह हमारे स्वस्थ और सुखमय जीवन की आधार.शिलाएं है , क्योंकि पहली दशा में शरीर का अंग.प्रत्यंग लचीला होकर शक्तिशाली बन जाता है और दूसरी दशा में शरीर के अन्दर स्वाभाविक रूप से रक्त प्रवाह होते रहने से शरीर की पाचन क्रिया को सहायता मिलती है और जो खाया जाता है वह शरीर में पचता है। इस तरह शरीर का सारा कार्य स्वाभाविक रूप से और ठीक.ठीक होने लगता है।

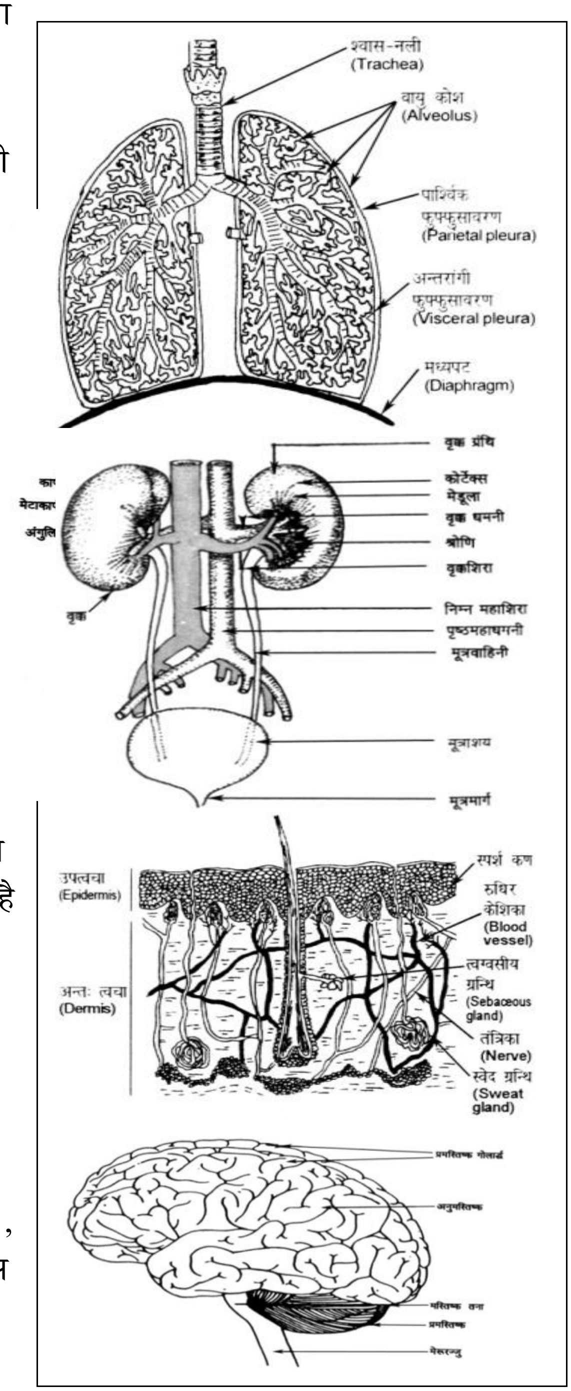

हड्डी संस्थान

मांसपेशियों में रक्त संचालन एवं लसीका की वृद्धि होने से हड्डियों को पोषक तत्व अधिक मिलते है , जिससे अस्थि का विकास होता है। बच्चों में रिकेट्स रोग नहीं होता।

पाचन संस्थान

पेट की मालिश में बड़ी आंत को शक्ति मिलती है। मल आगे को सरकता है , जिससे कब्ज नहीं होता। छोटी आंते भोजन का पूरा रस चूसने योग्य रहती है। यकृत (जिगर) पुष्ट होकर शरीर को गर्मी देने का कार्य भली प्रकार करता है। पेट के अवयवों में स्नायविक उत्तेजना होने से रक्त संचालन एवं पेट की विभिन्न ग्रंथियों की क्रिया में वृद्धि होती है तथा आंत , लिवर, क्लोम, आमाशय, प्लीहा आदि के पाचक रस पर्याप्त बनते है।

लसीका ग्रन्थि संस्थान

मालिश में दबाव क्रिया से लसीका ग्रंथि की नलिकाओं की कार्य क्षमता बढ़ जाती है। तंतुओं में दबाव तथा उत्तेजना आने से शरीर के पोषक तत्व ग्रहण करने की क्रिया में वृद्धि होती है तथा शरीर का विकार रक्त के मार्ग से बाहर निकल जाता है।

श्वसन संस्थान

मालिश के स्थानीय दबाव पडऩे से रक्त संचालन तथा तन्तुओं में उत्तेजना होने से कार्बन डाई ऑक्साइड गैस अधिक बनती है , फेफड़ों की मांसपेशियों के शिथिल हो जाने से श्वास के फेफड़े खूब फैलते है , जिससे ऑक्सीजन गैस अधिक ग्रहण करते है तथा कार्बन गैस प्रश्वास क्रिया से नासिका द्वारा अधिक बाहर निकलती है। मालिश से दोनों फेफड़ें मजबूत होते है।

वृक्क (गुर्दे)

वृक्क पेट के बीच में पीठ की तरफ रीढ़ की हड्र्डी के दोनों तरफ दो होते है। मालिश होने से उसकी कार्यशक्ति बढ़ती है जिससे रक्त साफ होकर यूरिक एसिड शरीर से बाहर निकलता है।

त्वचा

चर्म पर मालिश होने से उसकी टूटी हुई कोषाएँ रक्त में मिलकर शिराओं द्वारा उत्सर्जी अंगों में चली जाती है तथा त्वचा में लचीलापन आता है। गले पर मालिश होने से गले की ग्रंथियों तथा टॉन्सिल को लाभ होता है, अत: इनकी मालिश स्वास्थ्य के लिए बहुत आवश्यक है। चेहरे की मालिश करने से सुन्दरता बढ़ती है, मुहांसे दूर होते है, चेहरे पर चमक पैदा होती है, आंखों की रोशनी बढ़ती है।

सिर

सिर की मालिश से बुद्धि प्रखर होती है , बाल जल्दी सफेद नहीं होते , बाल झड़ते नहीं , बालों की जड़ें मजबूत होती है, मानसिक थकावट दूर होती है। नाड़ी संस्थान शिथिल होता है, जिससे उनके कार्य करने की क्षमता बढ़ती है। नींद अच्छी आती है। स्मरण शक्ति बढ़ती है। मस्तिष्क में ज्ञानेन्द्रियों (त्वचा , नाक, जिह्वा, कान और आंख) के अलग.अलग केन्द्र होते है। त्वचा को लगने वाली सर्दी.गर्मी का ज्ञान नाडिय़ों द्वारा ज्ञान केन्द्र को होता है। जिससे शरीर की रक्षा की आज्ञा आती है कि यह पानी गर्म है , हाथ मत लगाओ। सर्दी बहुत है, इसलिए गर्म कपड़ा ओढ़ लो। आंखों को रंगों का ज्ञान, अलग.अलग वस्तुओं का ज्ञान होता है कि वह आदमी आ रहा है, वह जानवर है, वह घोड़ा या गधा है, मोटर गाड़ी आ रही है, एक तरफ होकर चलो। कानों को भी गाने , अच्छे भाषणों का रस देना तथा कई ऐसी आवाजें या राग कानों को रूचते नहीं तो मन वहां बैठकर सुनने को नहीं करता , इत्यादि बातों का ज्ञान मस्तिष्क के अलग.अलग ज्ञान केन्द्रों द्वारा होता है। मालिश से इन ज्ञान केन्द्रों में रक्त का संचार अधिक होता है तथा इनके कार्य सुचारू रूप से करने की अधिक शक्ति बढ़ती है।

कंधे की मोटी नसों , गर्दन तथा पीठ की मालिश से भी नाड़ी संस्थान पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है , क्योंकि सुषुम्रा नाड़ी तथा अन्य नाड़ी जाल मेरूदण्ड से ही होकर सारे शरीर में फैलता है।

सारांश यह है कि सूर्य की धूप जैसे त्वचा के लिए है, उसी भांति मालिश मांसपेशी, स्नायु तथा इसके नीचे अवयवों के लिए है। जीवनरूपी दीप मालिश के उत्तेजित प्रभाव से अच्छी तरह जलता है। मालिश की शक्ति ऊपरी सतह से अन्दर जाती है , फिर भी सीधे तौर से समस्त शरीर के ढंचे एवं उसकी प्रक्रिया पर जीवनदायी प्रभाव डालती है , जिससे स्वास्थ्य की कांति लक्षित होती है। शारीरिक एवं मानसिक शक्ति बढ़ती है तथा बाहरी सुन्दरता बनती है। यदि आप अपनी शारीरिक और मानसिक कार्य क्षमता में वृद्धि करने के इच्छुक है और इस दक्षता को दीर्घायु तक सुरक्षित रखना चाहते है , यदि आप बुढ़ापे की दु:खद अवस्था को अधिक से अधिक समय तक दूर रखने के अभिलाषी है और यदि आपको प्राण संचारी कार्यों को ऊंचे स्तर पर उठा रखने की आंकाक्षा है तो आपको इस उपचार का सहारा लेना चाहिए , जो प्राकृतिक भी है।

इसके लिए हमें किसी पर निर्भर रहने की तथा पैसा खर्च करने की आवश्यकता नहीं है। मालिश तो हम स्वयं अपने शरीर पर कर सकते है। जिसकी विधि आगे समझाई गई है और जो बिना अधिक शक्ति खर्च किये वैज्ञानिक ढ़ंग से हो जाती है।

9.5 **स्त्री.पुरूष.बच्चों की मालिश सम्बन्धी महत्वपूर्ण नियम**

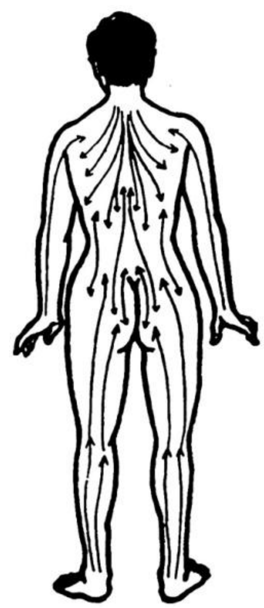

शरीर पर तेल रगड़ देना मालिश नहीं है। मालिश उस व्यक्ति को कैसे स्वस्थ बनाये अर्थात् उसे कैसे अधिकाधिक शक्ति प्राप्त हो , इस उद्देश्य की पूर्ण पूर्ति कराने के लिए मालिश के महत्वपूर्ण नियमों का पालन करना जरूरी है।

पुरूषों की मालिश के महत्वपूर्ण नियम:

1. मालिश करने वाले की मनोवृत्ति शांत और एकाग्र होने के साथ ही शुद्ध विचार मन में होने चाहिए। तभी वह रोगी को अधिक लाभ प्रदान कर सकता है। वह शरीर के अपंग अंगों में भी जीवन का संचार कर सकता है।

2. मालिश का स्थान स्वच्छ और शांत होना चाहिए। स्थान खुला , सहन करने योग्य धूप हो, हवा का सीधा झौंका न लगे। मालिश के समय रोगी से बातें न करें।

3. शरीर के जिस भाग की मालिश की जायें उसी भाग पर मालिश करने वाले का ध्यान होना चाहिए।

4. मालिश रोगी को लिटाकर ही देनी चाहिए। उसे भूमि पर चटाई या गद्दा बिछाकर दे या तख्ते पर दें। चारपाई पर किसी को भी मालिश न दें। चिकित्सालयों में मालिश के लिए टेबल या मेज की की साईज पौने तीन फीट ऊँची, तीन फीट चौड़ी एवं सात फीट लम्बी होती है।

5. स्वयं की मालिश सदैव बैठी हुई अवस्था में ही करें।

6. मालिश करने वाले के हाथ और मालिश लेने वाले का पूरा शरीर शिथिल होना चाहिए।

7. मालिश अधिकांशत: नीचे से ऊपर हृदय की ओर की जाती है। तब शिराओं को बल मिलता है। शिराओं में रक्त बड़ी तेजी से चलने लगता है, जिससे वे दूषित रक्त हृदय को लेकर जायें और वहां से शुद्ध रक्त धमनियों द्वारा शरीर को पहुँचाये, जिससे शरीर में नई ताजगी आये।

8. उच्च रक्त चाप वाले रोगियों को ठण्ड़ी मालिश दी जाती है। सिर से पैरों की ओर या ऊपर से नीचे की ओर मालिश करते है। इस मालिश में धमनियों को बल मिलता है। जिससे वे शुद्ध रक्त तेजी से शरीर के सभी भागों तक पहुंचता है।

9. मालिश धीमे और दबाव डालकर करनी चाहिए और दबाव भी रोगी की स्थिति को देखते हुए डालना चाहिए।

10. मालिश करते समय रोगी की स्थिर और अनुकूलता को ध्यान में रखना चाहिए। उसी अनुकूलता के अनुसार मालिश का समय 15 से 60 मिनट तक निश्चित कर सकते है।

11. अलग.अलग उद्देश्यों की पूर्ति हेतु अलग.अलग तेलों , पाउडरों, उबटन एवं तौलिये से मालिश की जाती है। तेल से की जाने वाली मालिश अधिकाधिक उद्देश्य पूर्ति में सहायक है।

12. मालिश का तेल कूपी में होना चाहिए।

13. खासकर सरसों , तिल एवं नारियल के तेलों को धूप में पका कर काम में लिया जाना अधिक प्रभावकारी होता है।

14. दुर्बल रोगियों के लिए मछली का तेल, जैतुन का तेल, बादाम का तेल, कद्दू का तेल, सरसों का तेल अधिक लाभकारी है।

15. मालिश करने वाले का स्वास्थ्य अच्छा होना चाहिए। उसका स्वभाव शांत , संतोषी, संयमी और आस्तिक होना चाहिए। क्योंकि उसके स्वास्थ्य एवं स्वभाव का रोगी पर सीधा प्रभाव पड़ता है।

16. रोगी कमजोर हो तो उसके नीचे गद्दा अवश्य बिछायें अन्यथा दरी, चटाई एवं तख्त को काम में लेना चाहिए।

17. मालिश करने वाले के हाथ गर्म होने चाहिए। यदि उसके हाथ गर्म न हो तो रगडक़र गर्म कर लें। गर्म हाथों से ही सारे शरीर की मालिश करने से रोगी को अधिक शक्ति प्राप्त होकर लाभान्वित होगा। अपने हाथ ठण्ड़े पानी से धो लेने के बाद सिर व मुख की मालिश करें।

18. मालिश साधारणतया नीचे से ऊपर की ओर करते समय क्रम का ध्यान रखें. दोनों पैरों , दोनों हाथों, पेट, छाती, कमर, पीठ, गर्दन, मुख, सिर।

19. उच्च रक्त चाप के रोगियों को ऊपर से नीचे की ओर मालिश करते समय क्रम का ध्यान रखें। मुख , सिर, दोनों हाथ, दोनों पैरों, छाती, पेट, पीठ, कमर।

20. ऋतु के अनुसार मालिश का स्थान चुनना चाहिए। जहां धूप हवा और रोगी को आराम मिल सकें।

21. मालिश के बाद ठण्ड़े या साधारण पानी से स्नान या कमजोर रोगी के लिए स्पंज स्नान लाभदायक है।

22. उपवास के समय सिर्फ तेल की मालिश ही करें तथा मालिश बड़ी सावधानी से की जाये। ताकी रोगी को पोषण मिले तथा कमजोरी न आये।

23. मालिश से पूर्व एक गिलास मौसम के अनुसार पानी पीयें। तथा मालिश के समय लम्बी , गहरी श्वास.प्रश्वास लें। जिससे रक्त अधिक शुद्ध होकर अधिक ऑक्सीजन के साथ शरीर को प्राप्त होगा।

24. मालिश किसी भी समय ले सकते है। सिर्फ ध्यान रहे ज्वर , सूजन, दर्द न हो, दस्त न लग रही हो , रोगी आराम से 30.40 मिनट लेट सकता हो तथा शौच से निवृत हुए हो , भोजन के दो घण्टे बाद ही मालिश करें।

25. मालिश का दबाव बच्चों, युवा, दुर्बल, पुरूष, स्त्रियों आदि की स्थिति व शक्ति को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए।

26. मालिश करने के बाद अपने हाथों को साबुन से अच्छी तरह धो लेना चाहिए तथा स्नान करके अपनी उत्तेजित गर्मी को भी शांत करना चाहिए।

27. एक रोगी के मालिश करने के बाद हाथ धो कर तथा तख्ता साफ करके ही दूसरे रोगी की मालिश शुरू करें। अर्थात् स्वच्छता पर विशेष ध्यान रखना चाहिए।

स्त्रियों की मालिश के महत्वपूर्ण नियम :

1. स्त्री की मालिश स्त्री के द्वारा ही होनी चाहिए। जिससे वह बिना संकोच के शरीर को ढ़ीला रखकर मालिश करवा सकें।

2. गर्भावस्था के समय तथा मासिक धर्म के दिनों में पेट तथा गर्भाशय को छोड़ मालिश करें।

3. पति.पत्नी मालिश सीखकर लाभ उठा सकते है।

4. स्त्रियों की छाती की मालिश विशेष ढ़ंग से करनी चाहिए। उनके स्तनों को चारों ओर से धीरे.धीरे हाथ से घर्षण देना होता है।

5. स्त्री को बच्चा जनने के बाद अवश्य मालिश करवानी चाहिए। क्योंकि गर्भावस्था के समय त्वचा फैल जाती है। विशेषकर पेट , कमर व जांघों की। प्रसव के बाद प्रसूता का सारा शरीर ढ़ीला पड़ जाता है और कमजोरी भी आ जाती है। मालिश के द्वारा त्वचा को उत्तेजना मिलने से वह अपनी स्वाभाविक अवस्था में आ जाती है और शारीरिक अंगों में भी मजबूती आती है। तथा कमजोरी जल्दी ही दूर हो जाती है।

6. स्त्रियों के हिस्टीरिया व बांध्यपन आदि रोगों में मालिश बहुत लाभदायक है।

बच्चों की मालिश के महत्वपूर्ण नियम :

1. बच्चों की मालिश घी , मक्खन, जैतुन, नारियल, सरसों तथा तिल के तेल से करनी चाहिए।

2. बच्चों की मालिश कभी.कभी बेसन या आटे की उबटन करके भी करनी चाहिए।

3. धूप में मालिश करने से शरीर के अंगों व हड्डियों को बल मिलने से मजबूत बनते है। जिससे वे स्वस्थ रहते है।

4. दुर्बल बच्चे, अस्वस्थ बच्चे तथा अविकसित बच्चों के लिए मालिश बहुत लाभप्रद होती है।

5. अच्छे स्वास्थ्य बच्चे को देने के लिए माताएं ही मालिश करें। क्योंकि माँ की अच्छी भावनाओं का प्रभाव बच्चे पर पड़ेगा।

6. बच्चे की मालिश करते समय मांस पेशियों को हाथों की अंगुलियों में कोमलता से पकडक़र मसलना चाहिए। जिससे मांसपेशियों का विकास तेजी से हो।

7. बच्चे की मालिश करते हुए उनके एक.एक जोड़ तथा मोड़ को गुलाई से मले और 4.5 बार ऊपर नीचे कसरते दें। जिससे जोड़ों में रूका हुआ विकार शिराओं द्वारा उत्सर्जी अंगों तक चला जाता है। जहाँ से वे शरीर से बाहर उत्सर्जित हो जाता है।

मालिश के समय उक्त नियमों का पालन करने से तथा निश्चित ढ़ंग से मालिश करने पर स्वास्थ्य में निश्चित ही उन्नति प्राप्त होती है।

9.6 मालिश का सिद्धान्त

मालिश का एक प्रमुख सिद्धान्त है कि मालिश करने वाला जितना एकाग्रचित होकर रोगी के स्वास्थ्य के प्रति विचार रखकर शांत वातावरण में मालिश करे तो उतनी ही जल्दी रोगी को आरोग्य प्राप्त होगा अर्थात् मालिश करने वाले की भावना एवं विचारों का प्रभाव रोगी के शरीर व मन पर पड़ता है। इसलिए मालिश करने वाले के विचार एवं भावनाएं सम्यक् (सात्विक उच्च) होनी चाहिए। ऐसे सात्विक विचारों वाले व्यक्ति में पैदा होने वाला आत्मबल किसी भी रोग के रोग को दूर कर सकता है।

सम्मोहन क्रिया भी मालिश का ही एक रूप है। इस क्रिया द्वारा सिर्फ दुर्बल मन वाले , भ्रम में पड़े हुए , डरपोक रोगियों को ही ठीक किया जाता है। इसका साहसी , आत्मविश्वासी एवं बलशाली रोगियों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। लेकिन मालिश तो अच्छी भावनाओं के साथ किसी भी रोगी पर किया जाये उसका रोग दूर होना ही है।

मालिश की विधियाँ

1. तेल मलना

विधि: तेल को अंग विशेष की त्वचा पर लगाकर धीरे.से नीचे से ऊपर की ओर दबाव डालकर मलना होता है। पूरे अंग पर तेल लगा देने पर सिर्फ मांस.पेशियों को ही दबाव के साथ मसलना चाहिए, हड्डियों पर दबाव न डालें।

प्रभाव एवं लाभ: तेल मलने से त्वचा नर्म , रक्त संचार बढ़ता, मांस.पेशियाँ शिथिल एवं शरीर की सुन्दरता बढ़ती है।

2. ताल से हाथ चलाना (एफ्फलॉरेंग)

विधि: आराम दायक स्थिति में बैठकर या खड़े रहकर अंग की बनावट के अनुसार अपने हाथ को ढ़ीला रखते हुए ताल से हाथ की हल्की परन्तु दबाव वाली ठोक देकर नीचे से ऊपर हृदय की तरफ एक ताल से हाथ चलाना।

प्रभाव एवं लाभ: इस विधि के प्रभाव से शिराएँ उत्तेजित होकर हृदय की ओर रक्त संचार को तेज करती है। जिससे अंगों का अपशिष्ट रक्त में मिलकर तेजी से हृदय की ओर चला जाता है और वहाँ शुद्ध रक्त आ जाता है। इस विधि का प्रयोग सभी रोगियों पर करना चाहिए। क्योंकि यह रक्त संचार की गड़बड़ी को ठीक करता है। इस विधि का प्रयोग मांस.पेशियों के खिंचाव , नाडिय़ों की उत्तेजना , तनाव, अनिद्रा, हर्निया, चोट लगना, सूजन आदि में बड़ा ही लाभप्रद है।

3. घर्षण (फ्रिक्शन)

विधि: मालिश की इस विधि में फैली हुई अंगुलियों व हथेलियों को दबाव के साथ जल्दी.जल्दी से नीचे से ऊपर हृदय की ओर रगड़ देते है। उचित दबाव के साथ मन चाही स्थान पर डालना। मालिश कर प्रत्येक विधि के बाद घर्षण देना चाहिए। यह क्रिया एक जोड़ से दूसरे जोड़ तक करते हुए आगे बढ़ते है।

प्रभाव एवं लाभ: इस विधि का प्रभाव ग्रन्थियों पर पड़ता है। जिससे उनकी कार्य क्षमता में वृद्धि होती है। जोड़ों के आस.पास की सूजन दूर होती है। मांस.पेशियों का तनाव व अपशिष्टदूर होकर शुद्ध रक्त की पूर्ति होती है। घावों से हुई गाठों और निशान घर्षण से दूर हो जाते है। घर्षण से जोड़ों का दर्द , कमर दर्द, पीठ दर्द, गर्दन दर्द, साइटिका का दर्द, चेहरे का लकवा आदि रोगों में लाभप्रद है।

4. मसलना (पेट्रीसेज)

विधि: मालिश की इस विधि में मास.पेशियों को अपनी अंगुलियों और अंगूठे में पकडक़र मसलते है। मांस.पेशी को हड्डी से ऊपर उठाकर मसलते हुये नीचे से ऊपर हृदय की ओर बढ़ते है। हाथ को मांस.पेशियों के सम्पर्क में रखते हुए ही पेशी को पकड़ते और मसलते जाते है। पहले मांस.पेशियों को अंगुलियों और अंगूठे में लीजिए , मसलिए और हाथ को ढ़ीला छोडक़र आगे बढक़र अगले भाग को पकडक़र मसलिए। इस विधि का प्रयोग जहाँ से मांस.पेशी शुरू होती है और जिधर जाती है, उसी के अनुसार समानान्तर चला जायें।

प्रभाव एवं लाभ: इस विधि का प्रभाव मांस.पेशियों पर अधिक पड़ता है। मसलने से मांस.पेशियों का अपशिष्ट रक्त में मिलकर वहाँ से हट जाते है और वहाँ नये रक्त के आने से मांस.पेशियों की थकावट दूर होती, नस.नाडिय़ों के विकार दूर होते और उसे नई शक्ति प्राप्त होती है। नाड़ी.दौर्बल्य के रोगियों पर इस विधि का प्रयोग करना लाभप्रद है।

5. थपथपाना (स्ट्रोकिन्ग)

विधि: मालिश की यह विधि पूरे हाथ को ढ़ीला रख कर करनी चाहिए। इस विधि का उपयोग पीठ से शुरू कर नीचे की ओर थपथपाते चलते है तथा अन्य अंगों पर नाडिय़ों के समानान्तर , पेट पर गोलाई से और बड़ी आंत पर दायें से बायें की ओर थपथपाते है।

प्रभाव एवं लाभ: इस विधि का प्रभाव नाड़ी संस्थान पर अधिक और रक्त संस्थान पर कम पड़ता है। नाड़ी संस्थान पर इस विधि का प्रयोग होने पर शरीर को बहुत आनन्द प्राप्त होता योंकि मांस.पेशियों में शिथिलता आती है, थकावट दूर होती है। आमाशय, यकृत, फेफड़े और आंतें सबल व सक्षम बनती है। इस विधि का प्रयोग स्नायु.दुर्बलता , उच्च रक्तचाप, अनिद्रा, तनाव, मानसिक उद्वेग, खाँसी, दमा, मिर्गी एवं हिस्टीरिया के रोगियों को अवश्य देनी चाहिए।

6. दलन (नीडिन्ग)

विधि: मालिश की यह विधि पीठ , कमर और चूतड़ों पर हथेलियों के गद्दे वाले भाग से की जाती है। रोगी को पेट के बल लिटाकर उस पर सवारी करने की तरह बैठते है , पर अपना भार रोगी पर न डालकर अपने घुटनों पर उठाते है। सवारी न करके रोगी के बायीं ओर बैठकर या खड़े रहकर भी दलन क्रिया की जा सकती है। अपने दोनों हाथ रीढ़ के दोनों तरफ रखते हुए रोगी की शारीरिक क्षमतानुसार दबाव देकर नीचे से ऊपर हृदय की ओर दलते हुए बढ़ाते है। कमर और चूतड़ों का दलन भी घुमावदार दबाव के साथ करते है। ध्यान रहें कि हाथ त्वचा सतह से फिसलें नहीं।

प्रभाव एवं लाभ: इस विधि के प्रयोग से मांस.पेशियों में खिंचाव पड़ता है, शिराएँ एकदम खाली हो जाती हैं और शिराओं में अंगों का अशुद्ध रक्त तेजी से आता है। जिससे स्थानभ्रष्ट नस.नाडिय़ाँ अपने स्थान पर

पुन: यथास्थित हो जाती है। नस.नाड़ियों में जमा विकार दूर होता है। इस विधि के प्रयोग से मांस.पेशियाँ नर्म तथा शिथिल हो जाने से सुस्ती दूर हो जाती है। त्वचा का सौन्दर्य निखर आता है। इस विधि के प्रयोग अक्सर मोटापा, वात रोग, लकवा एवं नाड़ी.दौर्बल्य आदि में लाभप्रद है। परन्तु इस विधि के प्रयोग सूजन वाले स्थान पर नहीं करना चाहिए।

7. दबाना (ट्वीस्टिन्ग)

विधि: मालिश की इस विधि में अंगों को अपने हाथों में लेकर अपने दबाव से आवश्यकतानुसार दबाव डालकर दबाना या घुमाना चाहिए।

प्रभाव एवं लाभ: इस विधि का प्रयोग बूढ़ें व्यक्तियों की मालिश में विशेष लाभदायक है इससे रक्त संचार होता है। शिराएं खाली होती तथा भरती है। अंगों का दर्द दूर होता है। अचेतन अवस्था को दूर करने के लिए भी इसका उपयोग किया जा सकता है।

8. मोडऩा (रिन्गिन्ग)

विधि: मालिश की यह विधि टांगों , गर्दन और बाजुओं पर की जाती है। अपने दोनों हाथों को अंगुलियों को मिलाकर चूड़ी की शक्ल बना लेते है। टांग के टखनों से शुरू करके मांस.पेशियों पर दबाव डालकर पूरी गोलाई के साथ घुमाते हुए ऊपर को ले जाना है। इसमें यह ध्यान रखना है कि हाथों का दबाव केवल मांस.पेशियों पर ही पड़े , हड्डी पर नहीं। यह एक जोड़ से दूसरे जोड़ तक की जायेगी। जैसे. पैर में टखनों से घुटनों तक , फिर घुटनों के चारों तरफ, घुटनों से जांघों तक तथा हाथ में कलाई से कुहनी तक फिर कुहनी से कंधों तक।

प्रभाव एवं लाभ: इस विधि का प्रभाव रक्त संचार पर पड़ता है। जिससे रक्त संचार बढ़ जाता है। मांस.पेशियाँ शिथिल हो जाती है। उनका खिंचाव दूर होता है , नस.नाडिय़ां जागती है, चेतनता आती है, रक्त संचार बढ़ता है। इस क्रिया से स्वस्थ व्यक्ति को मालिश में थकावट दूर करने में काफी लाभ मिलता है। साथ ही अधरंग, वात रोग तथा बच्चों के लकवे में इसका प्रयोग किया जाता है।

9. सहलाना

विधि: यह भी मालिश का एक ढ़ंग है। अपने ढ़ीले हाथों को अंगों पर , हड्डियों पर तथा आंखों पर फेरना है। अक्सर यह किसी.किसी का क्रोध शांत करने के लिए काम में लाई जाती है। मां बच्चे को सुलाने के लिए भी इस क्रिया का सहारा लेती है।

प्रभाव एवं लाभ: नस.नाडिय़ों को शांत करने, क्रोध का शमन करने के लिए ये दोनों क्रियाएं बहुत महत्व रखती है। रक्त चाप, पागलपन तथा दुर्बल रोगी को (जिसकी नस.नाडिय़ां बहुत दुर्बल हो गई हो) अच्छा लाभ प्रदान करती है। पुराने बुखार से पीड़ित रोगी के लिए यह रामबाण का काम करती है। फिर स्नेह का आकांक्षी इस संसार में भला कौन नहीं है।

10. बेलना (रोलिन्ग)

विधि: मालिश की इस विधि से पीठ तथा पेट की मालिश की जाती है। मांस को दोनों हाथों से पकडक़र बेलते हुए , आगे को चलाना पड़ता है, जिससे हाथों में मांस वैसा ही रहता है , परन्तु पिछला मांस आगे बढऩे से छूटता जाता है और आगे वाला मांस हाथ में आ जाता है। पेट पर यह क्रिया दायें से बायें गोलाई देकर करनी चाहिए। पीठ पर अधिक दबाव डालकर और पेट पर हल्का दबाव देकर यह क्रिया की जाती है। इसका प्रभाव वसा पर तथा मांस पेशियों पर पड़ता है, वसा ढ़लती है।

प्रभाव एवं लाभ: इस विधि का प्रभाव मोटापा दूर करने के लिए विशेषकर लाभदायक है।

11. झकझोरना (शेकिन्ग)

विधि: दोनों हाथों से अंग को निचोड़ते हुए दबाना और तेज गति से हिलाते या झकझोरते हुए ऊपर की ओर करना चाहिए। सारे शरीर पर यह क्रिया की जा सकती है। इस क्रिया के बाद मालिश किये जा रहे अंग को झकझोर देना चाहिए।

प्रभाव एवं लाभ: इस विधि के प्रयोग से अंग ढ़ीला हो जाता है तथा अपना हाथ ढ़ीला करने में सहायता मिलती है। शरीर में रूका हुआ विकार शिराओं में चला जाता है। रक्त नलिकाएं धुल जाती है। नस.नाडिय़ों के लिए यह आरामदेह क्रिया है। इससे शरीर में चेतना आती है।

12. खड़ी थपकी की ठोंक (हेकिन्ग)

विधि: अपने दोनों हाथों की सभी अंगुलियों को आपस में दूर रख छोटी अंगुली व हथेलियों के किनारे के हिस्सों से त्वचा पर हल्के और तेज खड़े हाथों की ठोंक देते हुए चलाना होता है। हाथ बिल्कुल ढ़ीला रहना चाहिए। तब सभी अंगुलियाँ एक.दूसरे से टकराने पर आवाज निकलती है।

प्रभाव एवं लाभ: इस विधि से की गई मालिश स्वस्थ व्यक्ति तथा वात रोग और अधरंग आदि में लाभप्रद होती है।

13. अंगुलियों से ठोंकना (टेपिन्ग)

विधि: खुले हाथों से अंगुलियां ढ़ीली रखकर अपने बाजुओं को शिथिल करके बारी.बारी से अंगुलियों के सिरे (नाखून बढ़े न हों) इच्छित स्थान (मांसपेशियों) पर अच्छी तरह चलाना चाहिए।

प्रभाव एवं लाभ: यह विधि मांस पेशियों को शिथिल करने में विशेष लाभदायक है।

14. कटोरी थपकी (क्लैपिन्ग)

विधि: हाथों को लंबे आकार में थोड़ा मोडक़र कटोरीनुमा आकार देकर हाथ को ढ़ीला रखकर हथेलियों को इच्छित स्थान पर ठोंक के साथ चलाना चाहिए। इससे आवाज निकलती है।

प्रभाव एवं लाभ: इस विधि का प्रभाव पीठ , छाती तथा जांघों के लिए विशेष लाभदायक है। यह पसलियों को मजबूत बनाती है , फेफड़ों को शक्ति देती है और उनका विकार दूर करता है। बच्चों को मालिश करते समय इसका प्रयोग अवश्य करना चाहिए।

15. मुक्की मारना (बीटिन्ग)

विधि: हाथ की आधी मुट्ठी बंद करके, कुहनी से मुड़े हाथ को कंधे तक उठाकर, अपने पूरे जोर के साथ इसे मारना चाहिए। मुट्ठी नीचे को रखनी चाहिए, ताकि जिस अंग पर आप यह क्रिया कर रहे है , उस पर बंद अंगुलियां ही पड़ें और हाथ अपने आप शरीर पर गिरें।

प्रभाव एवं लाभ: इस विधि का प्रभाव स्वस्थ व्यक्ति की मालिश में , मोटापे में, जिगर के रोगों में लाभ देती है। पतले व्यक्ति तथा नाड़ी दौर्बल्य से पीड़ित रोगी पर यह क्रिया नहीं करनी चाहिए।

16. खड़ी और तेज मुक्की (बीटिन्ग)

विधि: मुट्ठी बंद करके हाथ को ढ़ीला रखकर अपनी शक्ति से रोगी की स्थिति के अनुसार तेज चलाना चाहिए। मुट्ठी खड़ी रखनी चाहिए, ताकि सबसे छोटी अंगुली तथा हथेली का भाग ही अंग को लगें।

प्रभाव एवं लाभ: मोटापे को दूर करने के लिए विशेष लाभकारी है। जहां.जहां अधिक वसा जमा हो सकती है। वहां.वहां पर विशेषकर यह क्रिया देनी चाहिए। दूसरे रोगों में इसका व्यवहार कदापि नहीं करना चाहिए।

ठोंक देने वाले विधियों जैसे. कटोरी थपकी , खड़ी थपकी , अंगुलियों से ठोंकने की क्रियाएं जिगर को शक्तिशाली बनाने के लिए, नाड़ी संस्थान को जागृत करने के लिए , शरीर में उत्तेजना लाने के लिए , छाती पर जमे कफ को निकालने में विशेष लाभ पहुंचाती है। खांसी, ब्रोन्काई एवं दमा आदि रोगों में लाभप्रद है। जिसकी नस.नाड़िय़ां बहुत कमजोर हो गई हों , कमजोर तथा पतले शरीर वाले , ताजी हड्डी टूटी होने पर तथा अधिक दर्द के स्थान पर ठोंक देने वाल इन सब क्रियाओं का प्रयोग नहीं करना चाहिए। ये इनके लिए हानिकारक है।

17. गांठ घुमाना (जोइंट मूवमेन्ट)

विधि: मालिश करते हुए जोड़ों को घुमाना भी बड़ा महत्व रखता है। इसके कई ढंग़ है। साधारणत: गांठ घुमाने में जोड़ को चक्राकार घुमाया जाता है। संधि प्रसारण करने के साथ गांठ.मरोड़ की क्रिया देनी चाहिए। अंगुलियों और अंगूठे की मदद से हाथ , बाजू, पांव, कंधा, घुटने इत्यादि की गंठों को चक्राकार कई बार घुमावें। इसके बाद इन अंगों को पकडक़र जोड़ों से झटके दिये जायें। झटके हल्के तथा कुछ गहरे दिये जाने चाहिए। ऐसे झटके ऊपर नीचे करके कई बार दें।

प्रभाव एवं लाभ: अक्सर रोगों में या स्वस्थ व्यक्ति में भी शरीर का विकार जोड़ों में इकठ्ठा हो जाता है। इस प्रकार गांठ घुमाने तथा झटके देने से जोड़ खुलता है। वहां रक्त का संचार तेजी से होता है , जिससे विकार वहां ठहर नहीं सकता। यह एक प्रकार का व्यायाम भी माना जाता है। इसका प्रभाव अस्थियों तथा जोड़ों पर की मांस.पेशियों पर विशेष रूप में पड़ता है। मांस पेशियों के प्रसार व संकोच.क्रिया से उसमें चेतना आती है। यह मालिश वात रोगों तथा अधरंग आदि में दी जा सकती है। स्वस्थ व्यक्ति की मालिश में गांठों को घुमाना चाहिए।

गांठ घुमाते हुए यह ध्यान रखना चाहिए कि रोगी कष्ट अनुभव न करें। रोगी के जोड़ों में या शरीर में यदि दर्द अधिक है और जोड़ अधिक सख्त हो रहे है , तो बहुत धीरे.धीरे गांठ घुमाना चाहिए तथा जोड़ों को चलाना चाहिए।

18. कम्पन (वाइब्रेटिंग)

विधि: हथेली को सतह पर आगे पीछे तेज गति से चलाना कम्पन है। मालिश में कंपन का विशेष स्थान है और इस क्रिया से रोगी को बहुत अधिक लाभ दिया जा सकता है। कंपन कई प्रकार से दिया जाता है। तेज और हल्का। बहुत हल्के स्पर्श से भी कंपन होता है। दोनों हाथों से एक साथ भी तथा एक हाथ से भी दिया जाता है।

इस क्रिया के करने वाले की बहुत अधिक शक्ति खर्च होती है और रोगी को शक्ति मिलती है। कंपन देने वाले बिजली के यंत्र भी आजकल बाजार में मिलते है , जिनसे इसका काम लिया जाता है। परन्तु जो प्रभाव हाथ के कंपन में मिलता है, वह बिजली के यंत्र से नहीं। कंपन का प्रभाव शरीर में बहुत गहरा होता है।

पहले पूरे हाथ के संपर्क से हाथ को ढ़ीला रखकर तथा अपने पूरे शरीर का संतुलन करके एक साथ तेज कंपन दिया जायें। फिर धीरे.धीरे अपने हाथ का प्रभाव हल्का करके केवल अंगुलियों से कंपन दें और अंत में केवल शरीर को छूकर अपनी अंगुलियों को चलावें।

अपने को एकाग्र करके एक लय से अपने हाथ को पूरा नियंत्रण रखकर ही कंपन क्रिया दी जा सकती है। यदि आपका हाथ एक स्तर से नहीं चलता , बीच.बीच में उसकी तरंगे टूट जाती है , तो रोगी को अधिक लाभ नहीं पहुंचाया जा सकता। यह सबसे कठिन क्रिया है और इसके लिए काफी अभ्यास की आवश्यकता है। पहले अपने हाथ को हवा में रखकर कंपन दें और उसमें लय पैदा करें और उसका अच्छा अभ्यास पैदा करें , फिर रोगी पर यह क्रिया करें। हर अंग पर मालिश की अन्य सब क्रियाएं देने के बाद अंत में इसे दें।

प्रभाव एवं लाभ: इस क्रिया से आप बेजान अंग में जान डाल सकते है। इतना अधिक प्रभाव इस क्रिया का है। यह क्रिया आनंद देने वाली है। नस.नाडिय़ों पर इसका विशेष प्रभाव पड़ता है। उन पर गहरा प्रभाव डालने के लिए यह बहुत उपयोगी क्रिया है।

स्नायु रोगों में जैसे. अधरंग , पोलिया एवं साइटिका में लाभ देती है , अनिद्रा को दूर करती है। शोषण.संस्थान को स्वस्थ करती है। जुड़े हुए जोड़ों को खोलने में सहायक है। छाती में जमे हुए कफ को निकालती है। शरीर में शक्ति का संचार करती है, थकावट दूर करती है।

19. (स्टेपिन्ग) विधि: हथेलियों या सीधी उंगलियों के सतह को फूर्ती से पर्कसन विधि की तरह चलाना।

20. (चकिन्ग) विधि: किसी एक हिस्से को दबाव के साथ पकड़ कर पहले ऊपर तथा नीचे के और एक हाथ से खींचना व दूसरे से वहां पकड़ रखना।

9.7 गरम सेंक

(गरम पानी, भाप, स्टोन, गीली बज़री या मिट्टी, ऊनी.सूती पट्टी एवं औषधियों की पुल्टिस या लेप)

अग्रि तत्व का एक गुण ताप (गर्मी) पैदा करना है। वैसे तो हमारे शरीर का तापमान 98.60 स्न या 370 ष्ट है। जो अग्रि तत्व के कारण ही है और मनुष्य का तापमान सदैव इतना ही बना रहना चाहिए। इसके लिए हम सतत् प्रयत्नशील रहते है। स्वस्थ व्यक्ति सुबह नहाने से पहले शरीर को घर्षण मालिश करके नहाता है, नहाते ही तौलिए से शरीर को रगड़ कर सुखाता है , फिर शरीर में पैदा की गई गर्मी निकल न जायें , इसके तेल.मालिश और व्यायाम करता है। इसी प्रकार वे व्यक्ति सदैव स्वस्थ एवं ऊर्जावान बने रहते है।

मनुष्य की कुछ व्याधियों, सूजनों, चोटों, फोड़ों एवं रोगों में गरम सेंक रामबाण औषधि है। पानी एवं भाप की गरम सेंक , भाप.स्नान, ऊनी.सूती पट्टी के बारे में आगे के अध्याय 'जल चिकित्सा' में विस्तार से समझेंगे। गीली मिट्टी से गरम सेंक के बारे में आगे के अध्याय 'मिट्टी चिकित्सा' में विस्तार से समझेंगे।

गरम सेंक नदियों के गोल.चपटे पत्थरों , गीली बज़री या मिट्टी को हल्का गरम करके रोगग्रस्त अंग पर गरम सेंक आवश्यकतानुसार की जाती है। जिससे वहाँ शुभ क्रिया.प्रतिक्रिया होती है और रोग जड़ से ही चला जाता है। कुछ फोड़ों व व्याधियों पर औषधियों की पुल्टिस या लेप का उपयोग किया जाता है। जिनसे आश्चर्य जनक परिणाम प्राप्त होते है।

छोटे बच्चे की उँगली में चोट लगने पर वह सीधा उसे मुँह से फूँकता है। जिससे मुँह में पानी और गर्मी के कारण फूँकने पर भाप निकलती है। जिससे उसे आराम मिलने के साथ समस्या बढ़ती नहीं बल्कि वहीं ठीक होने का क्रम शुरू हो जाता है और वह कुछ ही समय या दिनों में पूर्णत: ठीक हो जाता है। ठीक ऐसा ही जानवर भी अपनी जीभ को बार.बार लगाकर चाटते है , उस स्थान पर गर्मी पैदा करते है और स्वस्थ रहते है।

9.8 सारांश

अग्नि तत्व का सूक्ष्म अंकुर हमारे शरीर में सतत् कम.ज्यादा प्रवेश करता रहता है। प्रकृति से दूरी बनाने पर शरीर में अग्नि तत्व की कमी हो जाती है। कमी के कारण वह रोगी बन जाता है। तो ऐसे रोगियों को रोगमुक्त होने के लिए स्वस्थ व्यक्तियों की भाँति ही प्रकृति की उक्त सरल विधियों को अपने दैनिक जीवन में स्थान देकर सदैव रोगों से मुक्त रहना चाहिए। इसके लिए प्रकृति को जानने का प्रयास, उसे अपने जीवन में ढ़ालने का अभ्यास तो करना ही होगा।

अप्राकृतिक जीवन.शैली के जनमानस को समझाने के लिए प्राकृतिक चिकित्सा में एक सरल.सा प्राकृतिक नियम बताता है , कि 'जो चिकित्सा जितनी स्वाभाविक होगी , उतनी ही प्रभावशाली होगी। ' लेकिन बड़ी विड़म्बना है कि आज का आधुनिक बुद्धिमान मनुष्य प्रकृति की सरल , सटीक एवं स्वाभाविक चिकित्सा से दूर होता जा रहा है और सुदूर रह कर वह दुखियारा कृत्रिम गोलियाँ खा.खाकर संसार में टाईम.पास कर रहा है। हे भगवान्! प्रकृति उनको भी तत्काल सत् बुद्धि प्रदान करें, जिससे वे भी प्रकृति के संग आकर एक बार तो स्वस्थ हो जायें।

9.9 बोधात्मक प्रश्न

1. मालिश का इतिहास क्या है?
2. शरीर एवं मन पर मालिश की क्या उपयोगिता है?
3. मालिश से कौन.कौन से लाभ मिलते है?
4. मालिश का शरीर के प्रत्येक अंग पर क्या.क्या प्रभाव पड़ता है?
5. स्त्री.पुरूष.बच्चों की मालिश के नियम क्या.क्या है?
6. मालिश के सिद्धान्त का मूल आधार क्या.क्या है?

7. मालिश की स्वास्थ्यप्रद विधियाँ कौन.कौन है तथा उनका शरीर पर क्या प्रभाव पड़ता है?
8. शरीर का तापमान बनाये रखने के लिए क्या.क्या प्रयत्न करने होते है?
9. गरम सेंक किन.किन से कैसे की जाती है?

9.10 संदर्भ ग्रंथों की सूची

संदर्भ ग्रंथों की सूची में सम्मिलित ग्रन्थों एवं उनकी सहायक सामग्री का उपयोग हमने इस ग्रन्थ के निर्माण में सहायक के रूप में किया है। हम इन संदर्भित ग्रन्थों, उनके लेखकों, प्रकाशकों एवं संस्थाओं के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

संदर्भ साहित्य	लेखक	संदर्भ साहित्य	लेखक
प्राकृतिक जीवन की ओर	श्री एडोल्फ जस्ट	प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग वैज्ञानिक प्रयोग	डॉ. नागेन्द्र कुमार नीरज
100 वर्ष निरोगी रहिए	माणेक लाल म. पटेल	जीवेम् शरद शतम्	पं. श्री राम शर्मा आचार्य वाङ्मय
रोगों की अचूक चिकित्सा	जानकी शरण वर्मा	बिना औषधियों के कायाकल्प	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
पातंजली योगसूत्र	स्वामी विवेकानंद	प्राण शक्ति उपचार; प्राचीन विज्ञान कला	चौ. कोक सुई
प्राकृतिक स्वास्थ्य शास्त्र	आचार्य शेषांद्रि स्वामीनाथन	जीवनी शक्ति कैसे जगायें	डॉ. चन्द्र दीप सिंह
प्राकृतिक चिकित्सा दर्शन	हेनरी लिंडलार	आपका आरोग्य आपके हाथ में	देवेन्द्र वोरा
स्वास्थ्य के सोपान	नरूपमल सुराणा	निरोग जीवन का राज मार्ग	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
आरोग्य की कुंजी	राष्ट्रपिता महात्मा गाी	दीर्घ जीवन की प्राप्ति	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
कुदरती चिकित्सा	राष्ट्रपिता महात्मा गाी	पंच तत्वों द्वारा सम्पर्ण रोगों का निवारण	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
सरल प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. लक्ष्मी नारायण शर्मा	रोगों की सरल चिकित्सा	विट्ठलदास मोदी
प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. सतीश गायल	जीने की कला	विट्ठलदास मोदी
प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग	श्रीमत्ती राज कुमारी गुप्ता	मौलिक चिकित्सा कौन सी?	डॉ. चंचलमल चोरडिया
आर्गेनन ऑफ दी मेडीसन्स	डालटन हनीमेन	100 वर्ष कैसे जीयें	आचार्य श्याम सुन्दर सुमन
आरोग्य प्रकाश	वैद्यराज पं. रामनारायण शर्मा	स्वस्थवृत विज्ञान	प्रो. रामहर्ष सिंह

****

इकाई 10

जल (पानी) तत्व एवं उसकी चिकित्सा. उषा:पान, स्नान, ठण्ड़ा.गरम उपचार की पट्टियाँ, सेंक यंत्र

इकाई की रूपरेखा

10.1. उद्देश्य

10.2. प्रस्तावना

10.3. जल तत्व एवं जीवन के निर्माण की प्रक्रिया

10.4. शरीर में जल का अनुपात

10.5. जल का चिकित्सकीय महत्व एवं इतिहास

10.6. जलोपचार का सिद्धान्त

10.7. जलोपचार सम्बन्धित महत्वपूर्ण प्रश्न

10.8. जलोपचार की उपयोगी विधियां

10.9. सारांश

10.10. बोधात्मक प्रश्न

10.11. संदर्भ ग्रंथ

10.1 उद्देश्य

- जल तत्व एवं जीवन के निर्माण की प्रक्रिया क्या है
- शरीर में जल का अनुपात क्या है
- जल का चिकित्सकीय महत्व एवं इतिहास क्या रहा है
- जलोपचार के सिद्धान्त कौन.कौन से है
- जलोपचार सम्बन्धित महत्वपूर्ण प्रश्न से इसे गहराई से समझेगें
- जलोपचार की अनेक उपयोगी विधियों से रोगों को कैसे ठीक किया जाता है

उपरोक्त समस्त जिज्ञासाओं का उत्तर पाना ही इस अध्याय का उद्देश्य है।

10.2 प्रस्तावना

जीवित रहने के लिए सबसे अधिक प्राथमिक आवश्यकता वायु की होती है। दूसरे स्थान पर जल की आवश्यकता है। ईशतत्व से प्रकट होने वाले अग्नि तत्व के बाद चौथें नम्बर पर जल तत्व की उत्पत्ति हुई। धरती पर सबसे अधिक हिस्से अर्थात् 3/4 भाग में जल ही है तो जो शरीर को स्वस्थ रखने में सक्षम है। जल को उच्च व निम्न तापमान में बदलकर उपयोग में लाकर जल चिकित्सा की जाती है। दिखने में साधारण उपचार व चिकित्सा है , लेकिन यह रोगों को चमत्कारिक रूप से दूर या नष्ट करने की शक्ति रखती है। इसके तापमान से शरीर के रक्त को गति मिलती है, विजातिय द्रव्यों को बाढ़ की तरह शरीर से बाहर बहाकर ले जाती है। यह सभी प्राणियों के लिए जन्म से लेकर आखिरी तक शरीर में होने वाली समस्त जैव.रासायनिक क्रियाओं के लिए अति आवश्यक खज़ाना है। जिसका उपयोग भलीभाँति करते हुए अर्थात् प्रदूषण से मुक्त रखते हुए कल के लिए बचाना या संरक्षित करना आवश्यक है। जल है तो कल का जीवन है।

10.3 जल तत्व एवं जीवन के निर्माण की प्रक्रिया

मिट्टी तत्व का कच्चा पदार्थ जल गैसीय रूप (जैसे. कार्बन , हाइड्रोजन, नाइट्रोजन एवं अन्य जलीय गैसें) में प्रकट हुआ। तब जल का विभिन्न गैसों के साथ मिश्रण होने से जीवन तत्व अमीनों अम्ल का निर्माण हुआ। यह अमीनों अम्ल ही प्रोटीन की इकाई है एवं प्रोटीन के सं श्लेषण से ही डीऑक्सी.राइबोन्यूक्लियोटाइड (DNA) का निर्माण हुआ।

जल तत्व पर हुए शोध से पता चला है कि हाइड्रोजन के दो अणु व ऑक्सीजन का एक अणु मिलकर जल के दो अणु का निर्माण करते है।

$$2H_2 + O_2 = 2H_2O$$

पृथ्वी पर जल की निम्न तीन अवस्थाएँ है.

1. ठोस (बर्फ) 2. द्रव (जल) 3. गैस (वाष्प या भाप या बादल)

1. ठोस (बर्फ) : जल की यह अवस्था पृथ्वी पर पर्वतों की चोटियों एवं ध्रूवों को घेरे रहती है।

2. द्रव (जल) : पर्वतों की चोटियों एवं ध्रूवों पर बर्फ थोड़ा उच्च तापक्रम पाकर पीघने लगती है। जिससे पृथ्वी पर नदियाँ, नाले, पौखर, तालाब एवं समुद्र में इस अवस्था के रूप में प्रकट होती है।

3. गैस (वाष्प या भाप या बादल) : पृथ्वी के वे क्षेत्र जहाँ पर सर्वाधिक उच्चताप पाया जाता है। वहाँ पर द्रवीय अवस्था का जल वाष्पीकृत होकर वायुमण्डल में इसी अवस्था के रूप में बादल बन कर प्रकट होता है।

जल की तीनों अवस्थाओं में एक प्रमुख विशेषता पायी जाती है कि जल हर अवस्था में अपना अस्तित्व नहीं खोता है। यह सदैव H_2O का ही बना रहता है।

जल की दूसरी प्रमुख विशेषता है कि जल का मापदण्ड उदासीनता से निर्धारित किया गया है। जो हाइड्रोजन प्रबलता (pH) के रूप में 7 अंक मानी गयी है। यदि किसी पदार्थ की अम्लीयता एवं क्षारीयता का मापदण्ड देखना है तो pH= 7 से कम होने पर वह पदार्थ अम्लीय होगा तथा pH= 7से अधिक होने पर वह पदार्थ क्षारीय होगा। एक स्वस्थ मनुष्य के रक्त की हाइड्रोजन प्रबलता (pH) का माप 7.4 है, जो अल्पमात्रा में क्षारीय गुण रखता है। शरीर की उपापचय क्रिया (metabolism)एवं अन्य क्रिया.प्रतिक्रिया के लिए हाइड्रोजन प्रबलता (pH) का विशेष महत्व है। अत: शरीर में पाचन के बाद रक्त की हाइड्रोजन प्रबलता (pH) का माप 7.35 से 7.45 तक होने पर मनुष्य की समस्त क्रियाएँ पूर्णत: व्यवस्थित चलती रहती है।

जल की तीसरी प्रमुख विशेषता तापमान सम्बन्धी निम्न है.

जल की स्थिति	सबसे ठण्ड़ा (अतिशीत) (Very cold)	बहुत ठण्ड़ा (शीत) (Cold)	ठण्ड़ा (ठण्ड़ा) (Cool)	सामान्य ठण्ड़ा (सह्यशीत) (Tepid)	सामान्य (Natural or Normal)	सामान्य गर्म (गुनगुना) (Warm)	गर्म (उष्ण) (Hot)	बहुत गर्म (अतिउष्ण) (Very hot)
तापमान (^{0}F)	32.55^0	55.65^0	65.80^0	80.92^0	92.95^0	95.98^0	98.104^0	104.114^0
तापमान (^{0}C)	0.12.77^0	12.7.18.3^0	18.3.26.6^0	26.6.33.3^0	33.3.35^0	35.36.6^0	36.6.40^0	40.45.5^0
उपचार	कभी नहीं	परामर्शानुसार	परामर्शानुसार	कभी.भी		कभी.भी	परामर्शानुसार	कभी नहीं

क्र.	तापमान	सेन्टिग्रेड	फॉरेनहाइट	क्र.	तापमान	^{0}C	^{0}F
1.	पानी का उबलना	100^0	212^0	3.	पानी का जमना	0^0	32^0
2.	शरीर का तापमान	37^0	98.6^0	4.	रोगाणु पनपने का (एंजाइमेटिक क्रिया)	25.37^0	77.98.6^0

उपचार के लिए विशेषज्ञ के परामर्श के अनुसार पानी का तापमान रखना चाहिए। उक्त सारणी के अलावा अधिक ठण्ड़ा या अधिक गरम पानी का उपयोग करना घातक, हानिकारक और गंभीर परिणाम देने वाला होता है।

104. शरीर में जल का अनुपात

हमारे स्वस्थ शरीर के वज़न का 70 प्रतिशत भाग केवल जल है अर्थात् जो हमारी आंखों में 98.7 प्रतिशत, फेफड़ों में 79 प्रतिशत, हृदय में 79.9 प्रतिशत, रक्त में 80 प्रतिशत, हड्डियों में 25 प्रतिशत और मस्तिष्क में 90 प्रतिशत जल विद्यमान होता है। शरीर में यह अनुपात असंतुलित होने पर विकृति , दर्द, सूजन, समस्या एवं रोग पैदा होते है।

प्रत्येक जीव को मौसमानुसार भरपूर जल पीना चाहिए। शरीर पर किये गये शोधों के अनुमान दर्शाते है कि पीये गये जल का 40' मूत्र, 35' पसीना, 20' श्वास, 3' शौच.आँसू.बलगम.थूक आदि के साथ पुन: शरीर से निकलना चाहिए।

10.5 जल का चिकित्सकीय महत्व एवं इतिहास

यह जीवन के लिए उतना ही आवश्यक है जितना श्वास लेने के लिए वायु। जल सार्वत्रिक विलायक (universal solvant) है। जल शरीर की अनेकानेक जैव.रासायनिक क्रियाओं (metabolism में परोक्ष रूप में उन सभी कार्यो का संचालन करती है। जल अणु के साथ में समस्त शरीर की कोशाओं का अपशिष्ट रक्त के द्वारा विभिन्न अंगों को पहुँचाया जाता है। वहाँ पर अपशिष्ट पदार्थ जल से अलग होकर या दूषित जल के साथ शरीर से बाहर निकलता है, जैसे. मल.मूत्र, पसीना, एवं अपान.अशुद्ध वायु आदि।

जल में औषधिय गुण होने के कारण भारत में वैदिक काल से ही जल को जलदेव की संज्ञा दी गयी है। जिसका विवरण एवं कुछ साक्ष्य पौराणिक ग्रंथों से निम्रवत् है.

यह तत्व प्राणियों को तृप्त करता, प्राणियों को जीवित रखता, प्यास बुझाता, पदार्थो को मृदु कर देता, ताप की निवृति करता, सब प्रकार की स्वच्छता प्रदान करता है।

इसलिए कहा गया कि 'जलं सर्वदा अमृत तुल्य' प्राणियों के लिए शीतलता, सरलता, हल्कापन, स्वच्छता, व्यापकता, अस्थिरता तथा निर्गुणता आदि प्राकृत गुणों वाला है। जल को अमृत इसलिए कहा गया है कि प्राणियों द्वारा जीवन धारण करना जल पर ही अवलम्बित है अथवा जल प्राणियों का प्राण व प्राण.रक्षक है। अत: जल को विष्णु भगवान कहा गया है।

जल में आग ग्रहण करने और बुझाने की विशेष शक्ति होती है। इसलिए जल का प्रयोग ज्वर में सफल होता है। यदि लोहा लाल करके जल में छौंक दिया जाय तो जल में औषधि का विशेष गुण आ जाता है। इस सम्बन्ध में महर्षि सायणचार्य जी की एक सूक्त है कि लोहे के कुठार को अग्नि में गरम करके जल में बुझाये और उससे शीत ज्वर के रोगी का सींचन करें। मिट्टी भी आग को बुझा देती है यही कारण है , जो जल और मिट्टी का संयुक्त प्रयोग , गीली मिट्टी की पट्टी के रूप में शरीर की बढ़ी हुई गर्मी को शांत करने में जादू का काम करती है। इसी प्रकार

हमारे वेदों में जल के गुणों की प्रशंसा और जल द्वारा प्राकृतिक रूप से रोग निवृति की अनेकों ऋचायें है। जिनमें से मुख्य निम्नवत् है.

जलाषणाभिषिंचत जलाषेणोपसिंचत। जलाषमुग्रं भेषजं तेननोमृड़ जीवसे।। .ज़ृ.म.6अ.ड़ा.नं. 2

अर्थात् भगवान आदेश देते है कि जल से अभिसिंचन करो , जल से उपसिंचन करो। जल सर्व प्रधान औषधि है। इसके सेवन से जीवन सुखमय बनता है और शरीर की अग्नि भी आरोग्यवद्र्घक होती है।

दीपनं वृष्यमायुष्यं स्नानमोजो बलप्रदम्। कडूमल श्रमस्वेद तन्द्रातृड्दाह पुत्।।

रक्त प्रसादनं चापि सर्वेन्द्रिय विशोधनम्। .वाग्भट

अर्थात् स्नान भूख, बल, आयु और जीवनी शक्ति को बढ़ाता है। चर्मरोग , मल, थकावट, पसीना और उसकी दुर्गन्ध, तन्द्रा, आलस्य, प्यास, जलन तथा पाप को नाश करता है, साथ ही रक्त को विशुद्ध करता है एवं सम्पूर्ण इन्द्रियों को स्वच्छ और निर्मल बना देता है।

अत्यन्त मलिन: काय: नवछिद्र समन्वित:। स्रवत्येव दिवारात्रौ प्रात: स्नाने शुध्यति।। .वशिष्ठस्मृति

अर्थात् मलपूर्ण शरीर के नवछिद्रों से रात.दिन मल निकलता है और पसीना भी रोमकूपों से निकल कर चमड़े के अन्दर का मैल बाहर लाता है, इसलिए नित्य प्रात: स्नान से शरीर की शुद्धि होती है।

आप इद्धा उ भेषजोरापो अभीव चातनी:। आपस सर्वस्य भेषजोस्तास्तु कृणवन्तु भेषजम्।। .ऋ 90/136/6

अर्थात् जल ही औषधि है, जल रोगों का दुश्मन है, यह सभी रोगों का नाश करता है, इसलिए यह तुम्हारा भी रोग दूर करें।

अमृतं वै आप: .तै.आ.1/16 अर्थात् अमृत देने वाला जल ही है।

आप इद्धा उ भेषजोरापो अभीव चातनीं। आपस सर्वस्य भेषजो स्तास्ते सुञ्चन्तु क्षेत्रियात्।। .अथर्व 3/7/5

अर्थात् जल ही औषधि है, जल रोग को दूर करता है, जल सब रोगों का संहार करता है। अतएव यह जल तुम्हें भी कठिन रोग के पंजे से छुड़ाले।

नाअविंगतक्लम: उपस्पृशेत।

अर्थात् कड़ी मेहनत करने के बाद जब तक थकावट मिट न जाये, स्नान नहीं करना चाहिए।

शन्नो देवी रभिष्टये आपो भवन्तु। पीतये शंयोरभिस्रवन्तुन:। .ऋ.10/9/4

अर्थात् हे ईश्वर! दिव्य गुणों वाला जल हमारे लिये सुखकारी हो , अभीष्ट पदार्थ की प्राप्ति कराये , हमारे पीने के लिए हो, सम्पूर्ण रोगों का नाश करे तथा रोगों से पैदा होने वाले भय को न पैदा होने दे और हमारे सामने बहें।

शीतेन शिरश: स्नानं चक्षुष्यमिति निर्दिशेत्।

अर्थात् ठंड़ा जल सिर पर लेने से नेत्रों की शक्ति खूब बढ़ती है।

इदमाप: प्रवहत यत् किंच दुरितं मयि। यद्वा अहम्अभिदुद्रोह, यद्वा शेपे उतानृतम्।।

अर्थात् हे परमात्मा, मुझ में जो पाप (भीतर.बाहर का अशौच)है मैंने जो द्रोह , विश्वासघात किया या मैंने जो अपशब्द कहे है या मैं जो झूठ बोला हूँ उन सबको जल बहा ले जाये।

स्नानं ज्वरातिसारे च नेत्र कर्णानिलार्तिषु। आध्मान पीनसाजीर्ण भुक्त वत्सु च गर्हितम।।

अर्थात् जो नेत्र के रोगी हों, कान के दर्द वाले, वात रोगी, पेट में अफारा, जुकाम रोग वाले को अथवा जो तुरन्त भोजन करके उठा हो उसको साधारण स्नान नहीं करना चाहिए।

अद्भिर्गात्राणि शुध्यानी, मन: सत्येन शुध्यति। वद्यातपोभ्यां भूतात्मा, बुद्धिज्ञानेन शुध्यति।। .मनु

अर्थात् जल से शरीर शुद्ध होता है, सत्य से मन, विद्या से तप और आत्मा तथा बुद्धि से ज्ञान शुद्ध होता है।

यदग्निरापो अदहत् प्रविश्ययत्राकृरावन धर्मधृतो नमांसि।

तत्र त आहु: परमं जनित्रे समसविद्वान्परिवृड्ग्धि तक्मन्।। .(1/5/25/1)

अर्थात् जो अग्नि जल में प्रवेश करके उसे जलाता है धर्मात्मा जिसमें हवन करता हुआ नमस्कार करता है। हे ज्वर! उस अग्नि को तेरा उत्पन्न करने वाला कहते है, इसे जान कर तू हमारे शरीर से दूर हो जा।

प्यास के समय सादा जल ही सर्वोत्तम पेय औषधि है। उसके बिना उस समय शरीर को अन्य पदार्थो की आवश्यकता ही नहीं होती है। भोजन के बाद शरीर को जल की जब आवश्यकता होती है , तभी पानी पीना श्रेष्ठ होता है। अन्यथा पाचन तंत्र की अनेकानेक समस्याएँ पैदा हो जाती है।

कम पानी पीने से और समय पर प्यास न बुझाने पर उत्सर्जी अंगों पर दुष्प्रभाव पड़ता है और अनेकानेक समस्याएँ पैदा होती है। रोगियों , गर्भवती स्त्रियों, दूध पिलाने वाली माता को और गर्मी की ऋतु में सभी जीवों को विशेषकर ज्यादा मात्रा में जल पीना चाहिए। लेकिन स्वस्थ व्यक्तियों के लिए जल की अति हानिकारक हो सकती है।

भारतवर्ष के अलावा संसार के प्रत्येक प्रदेश में लोग जल के महत्व से भलीभाँति परिचित थे ही। ठण्ड़े प्रदेशों में शीतोष्ण जलवायु के होने के कारण वहाँ के लोगों के शरीर में गर्मी का नितान्त अभाव ही रहता है। जिससे उनके शरीर में बनने वाला विजातीय द्रव्य पसीने के रूप में नहीं निकल पाता। जबकि उष्णकटि प्रदेशीय जलवायु के भारत में छ: ऋतुएँ पायी जाने के कारण समय.समय पर शरीर से पसीना निकल जाता है। जैसा कि आवश्यकता आविष्कार की जननी है। इसी कारण ठण्ड़े प्रदेशों के लोगों को शरीर से पसीना निकालने के लिए भाप स्नान की जरूरत पड़ी। जो आगे चलकर अलग.अलग देशों में अलग.अलग नामों से जानी गई जैसे. सावना बाथ , रोमन बाथ, टर्कीश बाथ एवं रशिया बाथ आदि। आधुनिक प्राकृतिक चिकित्सा का पितामह हिप्पोक्रट्स भी जल चिकित्सा पर बहुत बल दिया करता था। प्रिस्टनिज को जल चिकित्सा का प्रवर्तक माना जाता है। लुई कूने ने जल चिकित्सा भलीभाँति समझकर

अनेकों उपचार साधनों और उनकी विधियों को विकसित किया तथा 'न्यू साइनस ऑफ हिलिंग' नामक पुस्तक में जल चिकित्सा का पूरा वर्णन कर दिया।

इस प्रकार शरीर की बाहरी एवं आंतरिक शुद्धि , स्वच्छता एवं अच्छे स्वास्थ्य को पाने के लिए जल की अनेक विधियाँ जैसे. उषा:पान , स्नान, ठण्ड़ा.गरम उपचार की पट्टियाँ.सेंक.यंत्रों के द्वारा उपयोग में सम्मिलित की गयी है।

10.6 जलोपचार के सिद्धान्त

जलोपचार के लिए निम्न पाँच सिद्धान्त है.

1. शरीर में जल की आवश्यकता प्यास बनकर प्रकट होती है। जिससे शरीर में 2/3 भाग जल की उपस्थिति का बना रहना बड़े ही महत्व की है।

2. शरीर में रक्त द्वारा जल को अवशोषित करने पूरी क्षमता होती है। जल और रक्त दोनों शरीर के अंगों, ऊतकों एवं कोशिकाओं में स्वांगीकृत होकर शीघ्रता से अन्य अणुओं को प्रतिस्थापित कर विजातीय द्रव्यों को शरीर से बाहर निकाल देती है।

3. ठंड़े स्थान पर संक्रमण का खतरा सबसे कम होता है।

4. अक्सर ठंड़े जल द्वारा रोग निवारण की क्रिया.प्रतिक्रिया के लक्षण अधिक टिकाऊ और स्थायी होते है। जब त्वचा ठंड़े जल के सम्पर्क में आती है। तो रक्त के द्वारा क्रिया.प्रतिक्रिया होती है। जल तथा शरीर के तापमान में जितना अधिक अन्तर होगा, उतनी ही अधिक प्रतिक्रिया भी होगी, जिससे लाभ अधिक मिलेगा। ठंडक्र पाकर रक्त त्वचा से दूर आंतरिक अंगों की ओर चला जाता है। वह जितनी तेजी से जाता है, उससे भी अधिक तेजी से त्वचा की ओर आता है। यह क्रिया.प्रतिक्रिया तब तक चलती रहती है , जब तक त्वचा का तापमान सामान्य न हो जाये। इस दौरान रक्त के तेज प्रवाह के कारण अपशिष्ट अपना स्थान छोडक्रर रक्त के साथ बहते हुए उत्सर्जी अंगों तक पहुँच जाते है। क्रिया.प्रतिक्रिया के दौरान एवं उत्सर्जी अंगों में जल अपने मूल तत्वों हाइड्रोजन एवं ऑक्सीजन गैसों में विभक्त हो जाता है। जिससे जल व रक्त द्वारा लाया गया अपशिष्ट उत्सर्जी अंगों द्वारा बाहर निकाल दिया जाता है।

5. कभी.कभी अपशिष्ट उत्सर्जी अंगों तब पहुँचने पर भी रक्त से अलग नहीं होते और रक्त में घुमते ही रहते है तो ऐसी अवस्था में जल के मूल अणुओं द्वारा रक्त में मौजूद अपशिष्ट को जलाकर भस्म करने की भी प्रक्रिया अनुकूल परिस्थितियों के पैदा होने पर होती रहती है।

10.7 जलोपचार सम्बन्धित महत्वपूर्ण प्रश्न

जल के उपचारीय गुण कौन.कौन से है?

जल अपने उपचारीय गुणों के कारण ही अमृत के समान है। जल में प्रमुख उपचारीय गुण पाये जाते हैं.

जल में प्रमुख उपचारीय गुण

1. उपापचयी क्रियाओं (Metabolism)
2. सफाई कारक (Eliminative)
3. बलोत्पादक (Tonic)
4. वेदनारोक (Sedative)
5. वेदना हारक (Anodyne)
6. वमन कारक (Enatic)
7. विरेचक (Purgative)
8. स्वेदक (Diaphoretic)
9. जर्महीन (Aseptic)
10. वाहक (Carrier)
11. कफ निस्सारक (Expectorant)
12. स्फूर्ति दायक (Stimulant)
13. निद्रा कारक (Hypnotic)
14. तापहर या ताप नियंत्रण (Refragerant)
15. रक्त स्तंभक (Haemostat)
16. उद्वेष्टरोी (Antiispasmodic)
17. मूत्रवर्द्धक (Duretic)
18. ज्वरहर (Antipyretic)
19. स्थानीय अचैतन्य कारक (Local Anaesthetic)

स्नान क्यों आवश्यक है?

स्नान से शरीर की जीवनी.शक्ति को बल मिलता है। अर्थात् शरीर के विषैले एवं दूषित पदार्थो को निरन्तर बाहर निकालते रहना त्वचा का प्रमुख कार्य है। हमारी त्वचा की बनावट ही ऐसी है कि यदि उसे स्नान द्वारा नित्य प्रति साफ न किया जाये तो स्वास्थ्य एवं सौन्दर्य की बात तो दूर, हमारा जीवन ही खतरे में पड़ जायेगा। क्योंकि हम केवल नाक से ही श्वास नहीं लेते बल्कि त्वचा के असंख्य छिद्रों द्वारा भी लेते है। अत: जिस प्रकार हम अपनी नाक के छिद्रों को बन्द करते ही दम घुटकर मरने जैसी अवस्था हो जाती है, उसी प्रकार यदि हम स्नान न करें तो त्वचा के वे असंख्य छिद्र बंद हो जायेंगे। तब क्या हम जीवित रह सकते है? त्वचा के छिद्र अवरूद्ध हो जाने से शरीर की गंदगी भीतर ही पड़ी.पड़ी सड़ा करेगी और आये दिन रोग सताते रहेंगे।

रोगोपचार में जल प्रमुख क्यों है?

क्योंकि जल में स्वास्थ्यवर्धक गुण एवं विशेषताएं विद्यमान है , जो चिकित्सा के क्षेत्र में अत्यन्त महत्वपूर्ण मानी जाती है। जो निम्रवत् है.

1. जल किसी वस्तु के सम्पर्क में आने पर अपनी गर्मी या ठंडक़ उसे बड़ी शीघ्रता से दे सकता है और उसकी गर्मी या ठंडक़ ले सकता है।

2. जल किसी भी अन्य वस्तु की अपेक्षा अधिक गर्मी या ठंडक़ रोके रख सकता है।

3. जल तरल होने के कारण चिकित्सा विधियों में सरलता से काम लिया जा सकता है।

4. जल अन्य चीजों को घुलाकर बहा सकता है , जिसकी वजह से ही वह स्नान , एनिमा एवं गीली पट्टी आदि के लिए प्रयुक्त होता है।

5. शरीर में ताप सम्बन्धी तीन यन्त्र है। पहले को उष्ण उत्पादक , दूसरे को उष्ण प्रसारक और तीसरे को उष्ण वाहक कहते है, इन्हीं के द्वारा शरीर में गर्मी का उत्पादन, प्रसारण और बहिष्करण होता है। जल इन तीनों को प्रभावित करता है।

जल के प्रयोग से रोग कैसे दूर होते है?

ठंड़े जल के प्रयोग के फलस्वरूप शरीर में उत्पन्न बलवती विद्युत शक्ति द्वारा जल को अपने मूल तत्वों ऑक्सीजन एवं हाइड्रोजन गैसों में विभक्त कर देती है। ऑक्सीजन और ओजोन से शरीर के विजातीय द्रव्य (विष) जल जाते है और शरीर निरोग और निर्मल हो जाता है। शरीर में इस विद्युत शक्ति के प्रवाह होने से जीवनी.शक्ति बलवती होकर कठिन से कठिन रोगों को भी जड़ से उखाड़ फेंकती है। ठंड़े जल का शरीर पर प्रयोग करने से रोग निवारण के निमित्त विद्युत शक्ति उचित मात्रा में तभी उत्पन्न होगी जब.

1. ठंड़े जल का प्रयोग शरीर की त्वचा के एक छोटे हिस्से पर हो, जैसे. अंग विशेष के स्नान।

2. ठंड़े जल के प्रयोग के लिए शरीर का ऐसा भाग चुना जाये, जहां अत्यधिक ताप संग्रहित हो, जैसे. पेडू।

3. प्रयोग में आने वाला जल अधिक ठंडा न हो जिसको कि रोगी बर्दाश्त न कर सकें।

4. प्रयोग में आने वाले ठंड़े जल की मात्रा इतनी ही काम में लें, जितनी की जरूरत है।

5. ठंड़े जल का दबाव शरीर की त्वचा पर हो।

ठंड़े जल का हमारे शरीर पर क्या प्रभाव होता है?

किसी व्यक्ति के शरीर पर यदि एक बाल्टी ठंडा जल डाल दिया जाये तो सर्वप्रथम उसको अपने भीतर एक धक्का.सा लगना प्रतीत होने के साथ ही ठंडक़ महसूस होगी। क्योंकि यह स्थिति शरीर के रक्त को अन्दर की तरफ भेजने वाले रक्तकोषों में संकुचन के कारण उत्पन्न होती है।

अर्थात् त्वचा पर जल के प्रयोग के कारण पहले ऊपरी भाग के ठंड़ा होते ही ठंडक़ रक्त के द्वारा भीतर दूर तक चले जाने की वजह से वहां की गर्मी घट जाने से शारीरिक विद्युत की क्रिया मंद पड़ जाती है और ठंड़ लगने लगती है, लेकिन ये सब लक्षण क्षणिक, तात्कालिक एवं अस्थाई ही होते है। ये लक्षण शरीर में प्रकट होते ही तत्काल दूसरे ही क्षण इस क्रिया की प्रतिक्रिया प्रारम्भ हो जाती है अर्थात् नीचे गया हुआ

रक्त पुन: तेजी से त्वचा की ओर वापस आता है। जिससे ऊपरी ठंड़ी त्वचा को गरम करने हेतु संकुचित शिराएं और कोष फैल जाते है , विद्युत स्फूर्ति बढ़ जाती है , नीले रक्तहीन चमड़े पर लालीमा छा जाती है तथा पसीना बहने लगता है। जिसके जरिये शरीर का विष उखड़ कर बाहर निकलने लगता है।

शरीर पर ठंड़े जल का प्रयोग प्रथम कुछ क्षणों में ठंडक्र लगने के साथ बुरा एवं असुविधाजनक प्रतीत हो सकता है, परन्तु बाद में वह सदा ही शरीर को गर्म करने वाला , सुख देने वाला एवं अत्यन्त लाभदायक होता है। प्राकृतिक उपचार में ठंड़े जल के अल्पकालीन प्रयोग शरीर को अत्यधिक लाभ पहुँचाते है जैसे:

1. शारीरिक तापमान को बढ़ाता है।
2. शरीर की नाडिय़ों को उत्तेजित करता है।
3. त्वचा की कार्यशीलता में वृद्धि करता है।
4. हृदय की क्रियाशीलता को तीव्र एवं दृढ़ करता है।
5. रक्त चाप को बढ़ाता है।
6. पोषण शक्ति को बढ़ाता है।
7. मांसपेशियों को संकुचित करता है।
8. श्वास क्रिया को थोड़ा.सा मंद करता है।
9. त्वचा की सतह के पास के रक्त कोषों को अल्प समय के लिए संकुचित करता है।

इस तरह हम देखते है कि ठंड़े जल के बाह्य प्रयोग से न केवल शरीर की ऊपरी त्वचा भी प्रभावित होती है। अपितु उनका सीधा असर शरीर के भीतरी अवयव.आंत , आमाशय, यकृत, गुर्दा, मस्तिष्क, स्नायु मंड़ल, हृदय तथा मांसपेशियों, नाडिय़ों एवं रक्त शिराओं आदि पर भी पड़ता है। जिसकी वजह से उनके रोग उखडक़र सदा के लिए दूर हो जाते है। ठंड़े जल के प्रयोगों से पाकस्थली मजबूत होती है , आंते अपना काम सुचारू रूप से करने लगती है , गुर्दे और यकृत अपना.अपना स्वाभाविक कार्य करने लगते है, हृदय ताकतवर बनता है , खून में खारापन आकर वह शुद्ध हो जाता है , मानसिक शक्तियां बलवती होती है तथा शरीर का विजातीय द्रव्य, जो रोगों का एक मात्र कारण है, दूर हो जाते है।

ठंड़े जल का प्रयोग कब और कितनी देर तक करना चाहिए?

प्राकृतिक सिद्धान्त यह है कि जब शरीर गर्म हो तभी स्नान करना उत्तम और लाभदायक है। यदि इतनी कसरत कर ली जाये कि शरीर गर्म हो जाये तो उसके तुरन्त बाद किये गये जल के प्रयोग लाभकारी सिद्ध होंगे। कारण यह कि तब ठंड़े जल प्रयोग की प्रतिक्रिया शरीर के गर्म होने के कारण शीघ्रता से होगी। पर यदि शरीर थका हो तो उस पर जल प्रयोग की प्रतिक्रिया धीमी होती है। फलस्वरूप लाभ के बदले हानि होती है। इसीलिए बहुत थकान की हालत में ठंड़े जल का कोई प्रयोग नहीं करना चाहिए। बहुत परिश्रम करने के बाद अगर थकावट मालूम हो तो पूरा विश्राम करके थकावट मिटा लेने के बाद ही स्नान करना ठीक है, पहले नहीं और अगर किसी वजह से स्नान करना ही पड़े तो पहले गर्म जल से स्नान करके तब ठंड़े जल से स्नान करें तो हानि न होकर लाभ ही होगा। थकावट की दशा में ही नहीं, अन्य दशाओं में भी यदि शरीर की त्वचा गर्म नहीं है और ठंड़े जल का प्रयोग करना है तो उसके पहले गर्म जल का प्रयोग करना अत्यावश्यक है। ताकि रक्त त्वचा के निकट आ जाये। जल चिकित्सा में शीघ्र और अच्छे लाभ के लिए ठंड़े जल का प्रयोग करने के पहले पैरों को भी इसीलिए गर्म कर लेते है।

ठंड़े जल का प्रयोग कितनी देर तक करना चाहिए? यह तो रोगी की उम्र, जीवनी.शक्ति, रोग कितना पुराना है, मौसम कैसा है? आदि बातों पर विचार करने के बाद ही निश्चिय किया जा सकता है, पर साधारणतया ठंड़े जल का प्रयोग उतनी ही देर तक करना चाहिए , जितनी देर तक उससे आराम मालूम हो। बहुत अधिक देर तक ठंड़े जल के प्रयोग से स्फूर्ति की प्राप्ति तो होती है , पर उसके बाद आलस्य, अवसाद एवं ग्लानि का अनुभव होने लगता है , जो बुरा है। इसीलिए सिद्धान्तत: ठंड़े जल का प्रयोग बहुत अधिक देर तक नहीं करना चाहिए। जल चिकित्सा में इसी कारण सभी स्नानों की अवधि निश्चित की गयी है। इसी सिद्धान्तानुसार निर्बल रोगियों, बूढ़ों एवं छोटे बच्चों जिनकी प्रतिक्रियात्मक शक्ति क्षीण होती है , उन पर ठंड़े जल का प्रयोग अधिक देर तक करना खतरे से खाली नहीं है।

अत्यन्त ठंड़ा जल या बर्फ का प्रयोग क्यों निषेध है?

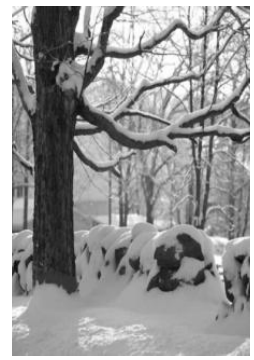

अधिक ठंड़े जल या बर्फ का शरीर की त्वचा पर प्रयोग बड़ा अनिष्टकारी होता है। अत: रोगी के शरीर पर बर्फ की थैली या बर्फ के जल का प्रयोग खतरे से खाली नहीं होता। अत्यन्त ठंडक्र शरीर के लिए उतनी ही हानिकारक है जितनी विषैली दवाइयां। इसका मुख्य कारण अत्यन्त ठंड़ा जल या बर्फ का प्रयोग रोग के उभार को दबा देता है। उससे रोग बजाय अच्छा होने के और जीर्ण हो जाता है। बूढ़े, कमजोर रोगी तथा छोटे बच्चों को तो भूल से भी कभी बहुत अधिक ठंड़े जल से स्नान करना ही नही चाहिए। ऐसा करने से उनका जीवन खतरे में पड़ सकता है।

स्नान के समय मनोभाव कैसा हो?

स्नान करते समय यह दृढ़ भावना रखनी चाहिए कि जल मलिन शरीर और मन को शुद्ध व निर्मल बना रहा है। इस प्रकार की भावना के साथ.साथ यदि हो सके तो ईश्वर.प्रार्थना सम्बन्धी किसी मन्त्र या श्लोक का उच्चारण भी करते रहना चाहिए।

मेहन स्नान के लिए जननेन्द्रिय को ही क्यों चुना?

क्योंकि शरीर की अधिकांश स्नायुओं का सम्बन्ध मेरूदण्ड़ और मस्तिष्क से है, जो अंत में जननेन्द्रिय के अग्र भाग पर ही समाप्त होती है। फलत: इस स्थान को ही स्नान देकर स्नायुओं द्वारा शरीर के कोने.कोने में प्रभाव ड़ाला जा सकता है और मनुष्य की शक्ति भी इसी अग्रभाग से संचालित होती है। अत: मेहन स्नान के लिए यही स्थल उपयुक्त समझा गया और चुना गया।

स्नान सम्बन्धी सावधानियां क्या.क्या रखनी चाहिए?

1. नाश्ते व भोजन करने के तुरन्त बाद या पहले कोई भी स्नान नहीं करना चाहिए तथा नाश्ते के एक घंटा और भोजन के तीन घंटा बाद स्नान करना चाहिए।

2. निर्धारित अवधि तक ही स्नान करना चाहिए।

3. लू और तेज हवा में बैठकर स्नान नहीं करना चाहिए।

4. बुढ़ों, अत्यन्त दुर्बल व्यक्ति अधिक ठंड़े जल से स्नान न करें।

5. शरीर जब अत्यधिक गर्म या थका हो, उस वक्त ठंड़े जल से कभी न नहायें।

6. स्नान के लिए साधारण तापमान का जल ही लेना चाहिए। जल न अधिक ठंड़ा हो और न कम ठंड़ा हो। 32 से 55 डिग्री फॉरेंहाइट तक तापमान वाला जल बहुत ठंड़ा जल कहलाता है , 55 से 70 डिग्री फॉरेंहाइट तक वाला ठंड़ा तथा 70 से 80 डिग्री फॉरेंहाइट तक वाला जल सामान्य ताप का जल कहलाता है। प्रयुक्त जल , यदि वर्षा का हो तो सर्वोत्तम या फिर नदी या तालाब या कूएं का ताजा जल लाभ के साथ काम में लाया जा सकता है।

10.8 जलोपचार की उपयोगी विधियां

1. उषा:पान

विधि: रात्री को तांब्र या मिट्टी के पात्र में जल भर कर ढक्कर रख देते है। इस जल में 5.7 तुलसी के पत्ते डाल दे , तो उपयोगी रहेगा। प्रात:काल इस जल का बासी मुंह सेवन करना उषा:पान कहलाता है।

सावधानी: 1. उषा:पान के समय मुंह बासी रहें।

2. पानी धीमी गति से पीयें।

3. एक साथ ज्यादा पानी न पीयें।

उपयोगिता: उषा:पान के बाद टहलना स्वास्थ्य , आयु एवं शारीरिक व मानसिक शक्ति वर्धक है। इससे कब्ज टूटती है। आँत व नाडिय़ों की सफाई होती है। रक्त की शुद्धि होती है। उषा:पान से कई रोग दूर भागते है जैसे. उदर रोग , यकृत.प्लीहा.गुर्दा रोग, मूत्र व वीर्य रोग , नेत्र रोग, सिर दर्द, त्वचा रोग, मोटापा, हृदय रोग एवं कफ.वात.पीत का शमन होता है।

2. साधारण स्नान

स्वस्थ जीवन के लिए प्रतिदिन भोजन और व्यायाम जितने जरूरी है , दैनिक स्नान उनसे कम जरूरी नहीं। वेदों में कहा गया कि मनुष्य प्रात:काल उषा:पान कर शौचादि क्रिया के बाद नित्य.नियम से प्रात: काल की हल्की धूप में स्नान करें। स्नान करते समय 'हर.हर गंगा' का उच्चारण जरूर करें। इसके साथ और कुछ जोडऩा हो तो अन्य नदियों के नाम और अपने छोटे.छोटे बच्चों के नाम का भी साथ में उच्चारण कर सकते है। स्नान का जल ताजा निर्मल और विशेषकर बताना चाहता हूँ कि वह ठंड़ा होना चाहिए। साधारणत: ऐसे जल का तापमान शरीर के तापमान से थोड़ा कम होना चाहिए। शीत ऋतु में स्नान की शुरूआत पैरों से करनी चाहिए और ग्रीष्म ऋतु में स्नान की शुरूआत सिर से करनी चाहिए। ऐसा इसलिए कि शरीर की ऊर्जा शक्ति शरीर में बनी रहें। शीत ऋतु में

शरीर की गर्मी मस्तिष्क तक पहुँचाने अर्थात्   मस्तिष्क को क्रियाशील बनाये रखने के लिए स्नान की शुरूआत पैरों से करते है। जबकि ग्रीष्म ऋतु में मस्तिष्क को क्रियाशील बनाये रखने तथा मस्तिष्क व शरीर का ताप कम करने या संतुलित करने के लिए स्नान की शुरूआत सिर से करते है।

3. शुष्क घर्षण स्नान

घर्षण स्नान का बड़ा महत्व है। इससे रक्त अधिकाधिक त्वचा की ओर पहुँचता है   , जिससे रक्त शिराएं फैलती एवं रोमकूप खुल जाते है। अपशिष्ट ढ़ीला होकर पसीने के रूप में बाहर निकल जाता है। जिससे त्वचा निरोग और निर्मल हो जाती है। इस स्नान से सारे शरीर की गर्मी शांत हो जाती है , मन में प्रसन्नता और शरीर में स्फूर्ति जान पड़ती है। इसे यदि प्रात: काल की धूप में किया जाय तो वह निश्चय ही अधिक स्वास्थ्यप्रद होगा। यह स्नान साबुन और शैम्पू का काम करती है। साबुन और शैम्पू के रसायन शरीर की त्वचा को शत्प्रतिशत हानि पहुंचाते है। वह रक्तवाहिनी नलिकाओं को कमजोर, त्वचा पर एक्जिमा और बालों की जड़ों को कमजोर करते है। अत: सौन्दर्य की अभिलाषा में साबुन और शैम्पू की जगह पर आंवला, बेसन, दही, नींबू, काली मिट्टी, हथेलियों से शुष्क घर्षण, खुरदरे तौलिया का प्रयोग शौक से कर सकते है।

4. पूर्ण टब गरम स्नान (Hot full immersion bath)

अंग विशेष पर प्रयोग :	सम्पूर्ण शरीर।		
सामग्री :	घड़ी, थर्मामीटर, टब, 40 लिटर पानी, 1 किलोग्राम एप्सम साल्ट (नमक या मैग्रीशियम सल्फेट)।		
अवधि :	20 से 40 मिनट।		
पानी का तापक्रम :	98.6.104^{0} F	37.40^{0} C	शरीर के तापमान से थोड़ा अधिक गर्म।

विधि : रोगी को एक गिलास पानी पिलाकर वस्त्र उतरवाकर उपचार के लिए तैयार करें। उपचार के लिए टब में 40 लिटर (आवश्यकतानुसार) उक्त तापक्रम के ताजा पानी में 1 किलोग्राम एप्सम साल्ट (नमक या मैग्रीशियम सल्फेट) मिलाकर तैयार करें। रोगी को अपना सिर ठण्ड़े पानी से गीला करके सिर पर गीला कपड़ा रखकर पानी से भरे पूर्ण टब में लेट जाना चाहिए। रोगी अपने पेट   , छाती, हाथों तथा उदर को धीरे.धीरे कपड़े से रगड़े। निर्धारित समय के पश्चात् टब से बाहर आकर ठण्ड़े पानी से स्नानकर शरीर को पोछ लें तथा कपड़े पहन लें।

सावधानी : 1. टब में निर्धारित समय तक ही लेटना चाहिए।

2. कान, नाक, आँख एवं मुँह में पानी न जायें।

उपयोगिता : अनिद्रा, उलझन, माइग्रेन, उच्च रक्तचाप, संधिवात, गठिया, अर्थराईटिस, दर्द, थकान, स्नायु दौर्बल्य, अवसाद तथा शरीर में पीड़ा , मस्कुलर डिस्ट्रॉफी, लकवा, पारकिंसन रोग तथा अस्थि वक्रता , रिकेट्स आदि में उपयोगी है।

निषेध : हृदय रोगी, कमजोर रोगी, उच्च रक्तचाप के रोगी सिर्फ विशेषज्ञ की देखरेख में ही उपचार लें।

5. समशीतोष्ण (सामान्य) पूर्ण टब स्नान (Normal full immersion bath)

अंग विशेष पर प्रयोग :	सम्पूर्ण शरीर।		
सामग्रो :	घड़ी, थर्मामीटर, टब, पानी।		
अवधि :	20 से 40 मिनट तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार।		
पानी का तापक्रम :	86.98.6^0 F	30.37^0 C	शरीर के तापमान से थोड़ा कम।

विधि : रोगी को एक गिलास पानी पिलाकर वस्त्र उतरवाकर उपचार के लिए तैयार करें। तत्पश्चात् रोगी को उक्त तापक्रम के ताजे पानी से भरे पूर्ण टब में लेट जाना चाहिए। रोगी अपने पेट , छाती, हाथों तथा उदर को धीरे.धीरे कपड़े से रगड़े। निर्धारित समय के पश्चात् टब से बाहर आकर शरीर को पोछ लें तथा कपड़े पहन लें।

सावधानी : 1. टब में निर्धारित समय तक ही लेटना चाहिए।

2. कान, नाक, आँख एवं मुँह में पानी न जायें।

उपयोगिता : संधिवात, सूजन, खुजली, स्पेटाइसिस, जलोदर, यकृत, गुर्दे, एवं फेफड़ों की समस्या आदि में उपयोगी है।

6. ठण्ड़ा पूर्ण टब स्नान (Cold full immersion bath)

अंग विशेष पर प्रयोग :	सम्पूर्ण शरीर।		
सामग्री :	घड़ी, थर्मामीटर, टब, पानी।		
अवधि :	3 से 7 मिनट तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार।		
पानी का तापक्रम :	50.68^0 F	10.20^0 C	रोगी की क्षमतानुसार इससे ठण्ड़ा पानी भी ले सकते है।

विधि : रोगी को एक गिलास पानी पिलाकर वस्त्र उतरवाकर उपचार के लिए तैयार करें। तत्पश्चात् रोगी को उक्त तापक्रम के ताजे पानी से भरे पूर्ण टब में लेट जाना चाहिए। रोगी अपने पेट , छाती, हाथों तथा उदर को धीरे.धीरे कपड़े से रगड़े या अच्छी मालिश करावें। निर्धारित समय के पश्चात् टब से बाहर आकर शरीर को रगडक़र गरम करें तथा कपड़े पहन लें या 5.10 मिनट बिस्तर ओंढक़र सो जाये।

सावधानी : 1. टब में निर्धारित समय तक ही लेटना चाहिए। 2. कान, नाक, आँख एवं मुँह में पानी न जायें।

उपयोगिता : बुखार, गर्मी के रोग, पित्त दोष, जलन, उच्च रक्तचाप, सोराइसिस, सूर्य जलन एवं चोट के दर्द की समस्या आदि में उपयोगी है।

7. गरम कटि स्नान (Hot hip bath)

अंग विशेष पर प्रयोग :	पेट, पेटू व कटि प्रदेश।		
सामग्री :	घड़ी, थर्मामीटर, कटि टब, छोटे स्टूल या पाटा, गरम पानी की भरी 2 बाल्टी एवं मग आदि।		
अवधि :	10 से 20 मिनट तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार।		
पानी का तापक्रम :	98.6.104^0 F	37.40^0 C	शरीर के तापमान से थोड़ा अधिक गर्म।

विधि : रोगी को एक गिलास पानी पिलाकर वस्त्र उतरवाकर उपचार के लिए तैयार करें। तत्पश्चात् रोगी को अपना सिर ठण्डे पानी से गीला करके सिर पर गीला कपड़ा रखकर उक्त तापक्रम के ताजे पानी से आधा कटि टब भर कर निर्वस्त्र होकर पैरों को बाहर पाटे पर रखते हुए बैठना चाहिए। रोगी को अपनी नाभि के चारो ओर घड़ी की दिशा में पेट पर कपड़ा घुमाना चाहिए। निर्धारित समय के पश्चात् कटि टब से बाहर आकर पोंछ कर कपड़े पहन लें।

सावधानी : 1. कटि टब में निर्धारित समय तक ही बैठना चाहिए।

2. कटि टब में बैठने पर पानी का लेवल नाभि तक आना चाहिए।

3. पैरों को कटिटब से बाहर पाटे पर रखना चाहिए, जिससे वे गीले न हो।

उपयोगिता : पाचन संस्थान के सभी रोगों , मासिक.धर्म एवं स्त्री रोगों , कब्ज, मोटापा, एपेन्डोसाइटिस, अनिद्रा, माइग्रेन, कमर दर्द, सायटिका, प्रोस्टेट की सूजन व प्रदाह, बहुमूत्र, एवं मूत्र संस्थान के रोगों आदि में उपयोगी है।

8. ठंड़ा कटि स्नान (Cold hip bath)

अंग विशेष पर प्रयोग :	पेट, पेटू व कटि प्रदेश।

सामग्री :	घड़ी, थर्मामीटर, कटि टब, छोटे स्टूल या पाटा, ठंड़ा पानी की भरी 2 बाल्टी एवं मग आदि।			
अवधि :	20 से 30 मिनट तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार।			
पानी का तापक्रम :		50.68^0 F	10.20^0 C	रोगी की क्षमतानुसार इससे ठण्ड़ा पानी भी ले सकते है।

विधि : रोगी को एक गिलास पानी पिलाकर वस्त्र उतरवाकर उपचार के लिए तैयार करें। तत्पश्चात् रोगी को अपने कटि प्रदेश व पेट की सुखी मालिश या गरम सेंक या गरम पानी की बोतल से गरम कर दें। फिर रोगी को उक्त तापक्रम के ताजे पानी से आधा कटि टब भर कर निर्वस्त्र होकर पैरों को बाहर पाटे पर रखते हुए बैठना चाहिए। रोगी को अपनी नाभि के चारो ओर घड़ी की दिशा में पेट पर कपड़ा घुमाना चाहिए। निर्धारित समय के पश्चात् कटि टब से बाहर आकर पुन: अपने कटि प्रदेश व पेट की सुखी मालिश करके गरम कर कपड़े पहन लें।

सावधानी : 1. कटि टब में निर्धारित समय तक ही बैठना चाहिए।

2. कटि टब में बैठने पर पानी का लेवल नाभि तक आना चाहिए।

3. पैरों को कटिटब से बाहर पाटे पर रखना चाहिए, जिससे वे गीले न हो।

उपयोगिता : पाचन संस्थान के सभी रोगों, पेट की गर्मी, कब्ज, एसिडिटी, वायु विकार, अल्सर एवं मुँह में छाले आदि समस्याओं में उपयोगी है।

निषेध : श्वास रोग , दमा, खांसी, श्वास नली में संक्रमण , सायटिका, तेज कमर दर्द , एपेन्डोसाइटिस एवं तीव्र दर्द की समस्याओं वाले रोगी सिर्फ विशेषज्ञ की देखरेख में ही उपचार लें।

9. गरम.ठंड़ा कटि स्नान (Hot & cold hip bath)

अंग विशेष पर प्रयोग :	पेट, पेटू व कटि प्रदेश।			
सामग्री :	घड़ी, थर्मामीटर, दो कटि टब, छोटे स्टूल या पाटा, छोटी.बड़ी तौलिया, ठंड़ा व गरम पानी की भरी 2.2 बाल्टी एवं मग आदि।			
परिवर्तित समय अवधि :	2 मिनट गरम 1 मि. ठण्ड़े का क्रम 5.7 बार दोहरायें, अंत में 2 मि. ठण्ड़ा उपचार (16.22 मि. तक) या 3 मिनट गरम 1 मि. ठण्ड़े का क्रम 4.5 बार दोहरायें, अंत में 3 मि. ठण्ड़ा उपचार (18.22 मि. तक) या 5 मिनट गरम 3 मि. ठण्ड़े का क्रम 3.4 बार दोहरायें, अंत में 5 मि. ठण्ड़ा उपचार (26.34 मि. तक) लें।			
ठण्ड़े पानी का तापक्रम :		50.68^0 F	10.20^0 C	रोगी की क्षमतानुसार इससे ठण्ड़ा पानी भी ले सकते है।
गरम पानी का तापक्रम:		$98.6.104^0$ F	37.40^0 C	शरीर के तापमान से थोड़ा अधिक गर्म।

विधि: इस स्नान के लिए दो कटिटब में अलग.अलग उक्त तापमान का ठंड़ा व गरम पानी से लगभग आधा भर देवें , जिससे कि उसमें बैठने पर पानी नाभि तक पहुँच जाये। रोगी को एक गिलास पानी पिलाकर वस्त्र उतरवाकर उपचार के लिए तैयार करें। रोगी को अपना सिर ठण्ड़े पानी से गीला करके सिर पर गीला कपड़ा रखकर गरम पानी के टब में 3 मिनट बिठाये। पैर छोटे स्टूल पर रख दें। इसके बाद रोगी को 1 मिनट ठंड़े पानी के टब में बिठायें। यह प्रतिक्रिया क्रमश: 4.5 बार एक से दूसरे टब में रोगी को बिठाते रहें। अंत में चौथी या पाँचवीं बार 3 मिनट गरम और 3 मिनट ठंड़े पानी के टब में बिठाकर चिकित्सा समाप्त कर रोगी को सिर्फ दो मिनट का स्नान करके कपड़े पहन लेने चाहिए।

सावधानी : 1. कटि टब में निर्धारित समय तक ही बैठना चाहिए।

2. कटि टब में बैठने पर पानी का लेवल नाभि तक आना चाहिए।

3. पैरों को कटिटब से बाहर पाटे पर रखना चाहिए जिससे वे गीले न हो।

उपयोगिता : सर्वाधिक रोगों में कटि स्नान की विधि का उपयोग किया जाता है। जीर्ण कब्ज़ अजीर्ण रोग, मधुमेह, कमर दर्द, बवासीर, मोटापा, मूत्र विकार, लीवर व आँतों की सूजन, तिल्ली का बढऩा, उच्च रक्त चाप, साइटिका एवं स्त्री रोग आदि में लाभ होता है।

निषेध : श्वास रोग , दमा, खांसी, श्वास नली में संक्रमण , सायटिका, तेज कमर दर्द , एपेन्डोसाइटिस एवं तीव्र दर्द की समस्याओं वाले रोगी सिर्फ विशेषज्ञ की देखरेख में ही उपचार लें।

10. मेहन स्नान (लुई कुने द्वारा आविष्कृत) (Sitz Baths)

इसको लिंग, शिश्न या इन्द्रिय स्नान भी कहते है। यह स्नान स्त्री.पुरूष दोनों के लिए विशेष लाभदायक है।

अंग विशेष पर प्रयोग :	जननांग प्रदेश।			
सामग्री :	घड़ी, थर्मामीटर, कटि टब, छोटे स्टूल या तिपाई, दो पाटें, बहुत मुलायम मोटा कपड़ा, ठंड़ा पानी की भरी बाल्टी एवं मग आदि।			
अवधि :	5 से 20 मिनट तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार।			
पानी का तापक्रम :	50.68^0 F	10.20^0 C	रोगी की क्षमतानुसार इससे ठण्ड़ा पानी भी ले सकते है।	

विधि: स्नान के लिए कटिटब में एक पाटा या तिपाई , स्टूल जो 6.8 इंच ऊंचा हो रखकर उसकी सतह तक उक्त तापक्रम का ठंड़ा पानी भर देते है। रोगी कपड़े उतारकर तिपाई पर बैठें। पैरों को सामने एक.दूसरे स्टूल पर रखें। बहुत मुलायम मोटे कपड़े से पानी उठाकर स्त्रियाँ अपनी सिर्फ योनि के मुँह के ऊपर बार.बार और धीरे.धीरे बिना रूके 5 से 20 मिनट तक धोयें।

पुरूष अपनी जननेन्द्रिय के मुंह की ऊपरी चमड़ी को बायें हाथ की दो अंगुलियों (तर्जनी व मध्यमा) से पकड़ कर थोड़ा आगे खींचे रहना चाहिए और कपड़े से पानी उठा.उठा कर उसे धोना चाहिए।

मुसलमानों की जननेन्द्रियों में खतना हो जाने से चमड़ी नहीं होती। तब टब में एक इंच जल भर कर बैठें। अपने अण्डक़ोष को न भीगने देते हुए सीवन को कपड़े से धोयें।

स्नान के बाद कपड़ा पहन कर रोगी को 20.30 मिनट तक खुले मैदान में टहलने हुए दोनों हथ्ेलियों को रगडऩा चाहिए ताकि शरीर में थोड़ी गर्मी आ जाये।

सावधानी : 1. कटि टब में निर्धारित समय तक ही बैठना चाहिए।

2. शेष शरीर और टांगे सूखी रहेंगी।

3. पैरों को कटिटब से बाहर पाटे पर रखना चाहिए जिससे वे गीले न हो।

4. कभी.कभी विकार जननांगों पर उभर आते है तो घबराना नहीं चाहिए। बिना रगड़े ही ठण्ड़े पानी का यह उपचार लेते रहना चाहिए।

उपयोगिता : मेहन स्नान से शरीर स्थित दुद्र्रव्यों की गरमी शान्त हो जाती है , स्नायु सशक्त हो जाते है तथा जीवनी.शक्ति में वृद्धि हो जाती है , जिससे वीर्य स्खलन, प्रदर, स्नायु दौर्बल्य, सायटिका एवं स्त्रियों के हिस्टीरिया रोग दूर हो जाते है। मानसिक शांति से स्वभाव निर्मल बनता है।

निषेध : मासिक स्राव के समय मेहन स्नान बंद रखना चाहिए।

11. गुदा स्नान (Anus bath)

ठंड़े जल को हाथ से उठाकर पाखाना करने की जगह पर फेंकते रहते है। तत्पश्चात् उस जगह को 2.5 मिनट तक बार.बार हाथ से खूब रगड़ते है। उसके बाद एक अंगुली को ठंड़े पानी में भिगो.भिगो कर बार.बार पाखाना की जगह भीतर घुसेडक़र निकालते है। इसे गणेश क्रिया कहते है। यह क्रिया लगभग एक मिनट तक करते है। इस प्रयोग से पाखाना खुलासा होने लगता है और कब्ज टुटता है। जो लोग एनिमा लेना पसंद नहीं करते वे इस क्रिया को करके एनिमा का लाभ उठा सकते है।

12. एनिमा (अन्त्र स्नान) **(Enema)**

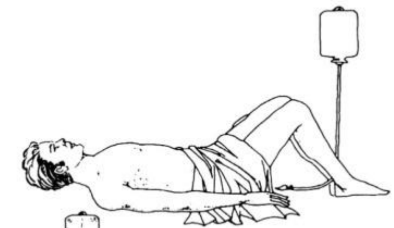

चित लेटकर एनिमा लेने की विधि

उल्टा लेटकर एनिमा लेने की विधि

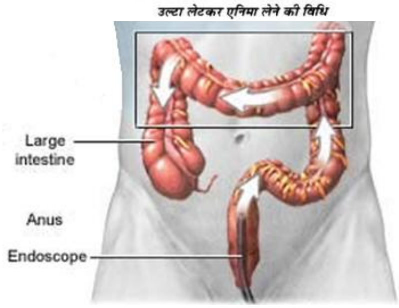

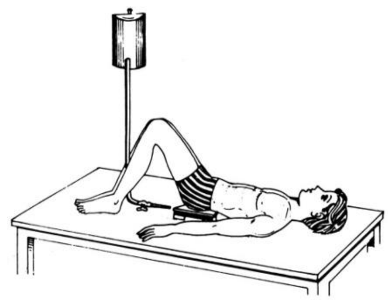

प्राकृतिक चिकित्सा में रोगी का सर्वप्रथम पेट साफ कराने के लिए सबसे पहला उपचार यही दिया जाता है। इसे जल बस्ति या वस्ति या आभ्यनत स्नान या अंत्रस्नान भी कहते है। एनिमा हेतु बाजार में एनिमा यन्त्र मिलता है।

अंग विशेष पर प्रयोग :	मलद्वार।
सामग्री :	घड़ी, थर्मामीटर, एनिमा पोट, कैथटर, तेल, ठंड़ा या गरम पानी, पानी की भरी बाल्टी एवं मग। विभिन्न परिस्थितियों में आवश्यकतानुसार प्राकृतिक औषधि जैसे. ठण्ड़ा पानी, नीम्बू रस, नीम की पत्ती का पानी या काढ़ा, शहद, त्रिफला का पानी, खट्टी छाछ, नमकीन गुनगुना पानी, ज्वारे के रस एवं ऐरण्ड़ तेल आदि का प्रयोग विशेषज्ञ के बताये अनुसार करना चाहिए।
अवधि :	8 से 15 मिनट।
पानी की मात्राः	रोग व रोगी के अनुसार 100 से 1000 मिलीलीटर तक एक बार में।
पानी का तापक्रम :	विशेषज्ञ के बताये अनुसार।

विधि : चित्र से स्पष्ट है कि एनिमा यन्त्र एक डिब्बे की शक्ल का होता है , जिसके साथ चार.पांच फुट लम्बी रबर की नली लगी होती है। डिब्बे के बीचों.बीच बाहर की ओर एक नली सूराखदार सिरा निकला होता है। जिस पर रबर की नली एक तरफ से फिट की जाती है। रबर की नली के दूसरे सिरे पर लगाने के लिए दो सींग की छोटी.छोटी और लम्बी नलियां मिलती है। एक बटनदार होती है , दूसरी सीधी सादी। पहले बटनदार नली को रबर नली के दूसरे सिरे पर फिट करते है उसके बाद सादी नली या कैथेटर को बटनदार नली के ऊपर लगाकर उसके सिरे पर तेल चोपड़ देते है। यंत्र के साथ एक छेद वाली सादी नली जैसी एक फुहारेदार नली भी होती है। यह फुहारे वाली नली स्त्रियों के योनि स्नान में काम आती है। एक एनिमा यन्त्र छ: महीने के बच्चे से लेकर 100 वर्ष तक के बूढ़े तक के काम आ सकता है।

पूरे एनिमा यन्त्र को गर्म पानी से अच्छी तरह साफ कर लीजिए। एनिमा के डिब्बे को 3.4 फीट ऊँचा दीवार पर लटका दें। फिर उसमें विशेषज्ञ के अनुसार पानी और प्राकृतिक औषधि मिलाकर यंत्र के पोट में भर कर नली से वायु का बुलबुला निकाल देते है। तब रोगी एक गिलास पानी पीकर और आवश्यकतानुसार निर्वस्त्र होकर उपचार के लिए तैयार रहना चाहिए। एनिमा नली या कैथेटर गुदा मार्ग में सावधानी से डालते है। एनिमा चित्रानुसार उगडू अवस्था या पीठ के बल या बायीं करवट लेटकर लिया जाता है। बायीं करवट लेट पर रोगी का दायाँ पैर आधा मुड़ा हुआ रहेगा तथा बायाँ पैर सीधा रहेगा। एनिमा लेते समय पेट पर बायें से दायें गोल हल्का हाथ घुमाते रहें। आवश्यकतानुसार एनिमा लेने पर 2 मिनट बायीं करवट और 2 मिनट दायीं करवट लेटने के बाद शौच के लिए जायें। यदि शौच मालुम नहीं हो रही हो तो थोड़ी देर टहले फिर शौच के लिए जायें।

सावधानी : 1. उपयोग से पहले व बाद में यंत्र की अच्छी सफाई करें।

2. कैथेटर पर तेल लगा कर सावधानी से गुदा मार्ग में डालें।

3. शौच के समय अतिरिक्त बल का प्रयोग न करें।

4. एक टाइम में सिर्फ एक बार ही एनिमा देना चाहिए।

5. एनिमा के दौरान दर्द होने पर तुरन्त उपचार बंद करें।

उपयोगिता : इसकी विधि से आँतें बिना किसी प्रकार की उत्तेजना से साफ और शुद्ध की जाती है , जिसका वास्तविक अर्थ है समुचे शरीर का साफ और शुद्ध हो जाना। एनिमा के शीतल स्नान से आँतें पुष्ट और सबल बनती है। एनिमा कब्ज दूर कर सब शारीरिक व मानसिक रोगों का नाशक कहा गया है। विशेषकर पेट की कब्ज , अपच, अम्लता, चर्म रोग, सिरदर्द, बुखार, सर्दी.जुकाम, उल्टी, गर्भवती स्त्री, प्रसव से पूर्व, पेट में कीड़े, रक्त की अशुद्धि, तीव्र प्रदाह एवं अन्य समस्याओं में उपयोगी है।

निषेध : कमजोर रोगी सिर्फ विशेषज्ञ की देखरेख में ही उपचार लें। दस्त , बवासीर, आँतों में फोड़ा, बड़ी आँत का ट्यूमर व अतिसार में एनिमा नहीं देते है।

13. कोलोन हाईड्रोथैरेपी (Colon hydrotharepy)

यह बिजली से चलने वाला आधुनिक यंत्र है। वे असक्त एवं कमजोर रोगी जो एनिमा लेने में असमर्थ होते है। ऐसे रोगी को स्वास्थ्य लाभ देने के लिए इसी यंत्र से आँतों की सफाई अनिवार्य रूप से समय.समय पर

करनी होती है। इस यंत्र की नली रोगी के मल मार्ग से होती हुई बड़ी आँत तक डालकर पानी चढ़ाया जाता है। इसमें एनिमा की तरह सीमित पानी के बजाय कुछ अधिक पानी चढ़ाया व निकाला जाता है , जो उपचार के समय रोगी की अवस्था पर निर्भर करता है। इस यंत्र द्वारा पानी चढ़ता रहता है और साथ ही मल युक्त पानी धीरे.धीरे बाहर निकालते है। इस प्रकार यंत्र में दो नलियाँ होती है। अंत में थोड़ा.सा पानी आँतों में ही छोड़ दिया जाता है। तत्पश्चात् रोगी शौच का अनुभव होने पर शौच कराई जाती है। इस यंत्र का उपयोग सुबह.शाम तब तक किया जाता है जब तक वह साधारण एनिमा यंत्र से एनिमा लेने के सक्षम न हो जाये। इसका उपयोग पूर्णत: विशेषज्ञ की देखरेख में ही किया जाता है। प्रारम्भ में ऐसे रोगियों को यंत्र के द्वारा गुनगुने पानी से पेट साफ कराते है तथा कुछ दिनों के बाद रोगी का पेट थोड़ा साफ होने पर ठण्ड़े पानी प्रयोग करते है। ऐसे रोगियों को खाने में सिर्फ दलिया या खिंचड़ी घी के साथ खिलाते है। ऐसे रोगी को ज्यादा आराम करना चाहिए।

14. पीठ या रीढ़ स्नान (Spinal bath)

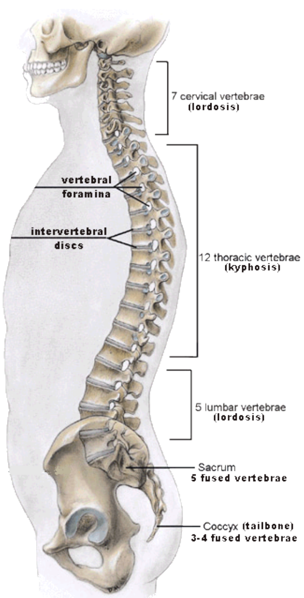

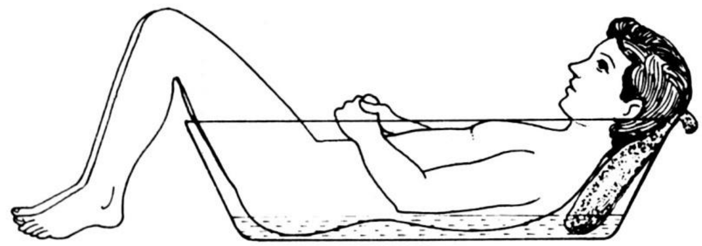

अंग विशेष पर प्रयोग :	रीढ़।
सामग्री :	घड़ी, थर्मामीटर, रीढ़ स्नान टब (नाव की आकार का टब), छोटे स्टूल या पाटा, तौलिया, ठंड़ा पानी की भरी बाल्टी एवं मग आदि।
अवधि :	10 से 20 मिनट तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार।
पानी का तापक्रम :	50.680° c 10.20° c रोगी की क्षमतानुसार इससे ठण्ड़ा पानी भी ले सकते है।

विधि : रोगी को एक गिलास पानी पिलाकर वस्त्र उतरवाकर उपचार के लिए तैयार करें।

पहला विधि: एक लम्बी तौलिया को ठंड़े जल से भिगोकर निचोड़ लीजिए। उसके बार उसके दोनों सिरों को दोनों हाथों से पकड़ कर और पीछे की तरफ ले जाकर अपनी रीढ़ की हड्डी को उससे रगड़िए। हर एक या दो मिनट बाद तौलिए को गीला कर लिया करें। इसकी अवधि5 से 10 मिनट है।

दूसरी विधि: एक चद्दर को एक फुट चौड़ी, दो फुट लम्बी और आध इंच मोटी गद्दी सी बनाकर फर्श या तख्ते पर बिछाकर ठंड़े पानी से खूब तर करें। तत्पश्चात् रोगी को एक गिलास पानी पिलाकर वस्त्र उतरवाकर गद्दी पर पीठ के बल ऐसे लेटे कि भीगी गद्दी पूरे पीठ के नीचे पड़े तथा सिर गद्दी से अलग रहें। फिर सिर के अलावा पूरे शरीर को एक कम्बल से ढक़ लें। इसकी अवधि10 से 30 मिनट है।

तीसरी विधि: अपनी रीढ़ पर सिर्फ दो मिनट तक ठंड़े पानी की धार डाल कर , कपड़ें पहनकर टहलने निकलें।

चौथी विधि: रीढ़ स्नान के विशेष टब में2.3 इंच पानी भर कर रोगी पीठ के बल5 से 20 मिनट तक लेटें। पानी का स्पर्श सिर्फ रीढ़ की हड्डी और उसके आस.पास हो। फिर पीठ को सूखे तौलिये से रगड़ कर गर्म कर देना चाहिए।

पाँचवीं विधि: जेठ रीढ़ स्नान (में जल की धार मोटर पम्प द्वारा रीढ़ पर दबाव के साथ पड़ती है।

सावधानी : 1. उपचार निर्धारित समय तक लेना चाहिए।

उपयोगिता : यह स्नान रक्त संचालन बढ़ाकर स्नायुओं को सशक्त बनाता है। उच्च व निम्र रक्तचाप , अनिद्रा, डिप्रेशन, तनाव, स्मरण शक्ति, नाड़ी दौर्बल्य, बैचेनी, थकावट, चक्कर आना, अपच, अजीर्ण, अम्लपीत्त, बहुमूत्र, चिंता, भय, मानसिक रोग, अचानक सिर दर्द एवं रीढ़ की समस्याओं में उपयोगी है।

निषेध : की समस्याओं वाले रोगी सिर्फ विशेषज्ञ की देखरेख में ही उपचार लें।

15. पैरों का गरम स्नान **(Hot foot bath)**

अंग विशेष पर प्रयोग : पैर।

सामग्री : घड़ी	, थर्मामीटर, दो कम्बल, सूती चादर, रेग्जीन का कवर, कुर्सी, चौड़े मुँह की बड़ी बाल्टी या टब, सूती पट्टी, छोटी.बड़ी तौलिया, गर्म पानी की थैली, ठंड़े व गरम पानी की भरी बाल्टी एवं मग आदि।
अवधि :	20 से 30 मिनट तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार।
पानी का तापक्रम :	98.6.104^{0} F 37.40^{0} C शरीर के तापमान से थोड़ा अधिक गर्म।

विधि : कुर्सी पर कम्बल इस प्रकार बिछाये कि रोगी को कुर्सी पर बैठाकर कम्बल रोगी के चारों तरफ लपेटी जा सकें। इसके बाद सूती चादर भी ठीक ऐसे ही बिछाते है। रोगी को एक गिलास पानी पीकर आवश्यक वस्त्र उतारकर कुर्सी पर बिठाये। उक्त तापक्रम के पानी के टब या बाल्टी में दोनों पैरों को रख देवें। रोगी के शरीर पर सूती चादर तत्पश्चात् कम्बल इस प्रकार लपेटे की टब भी कम्बल के भीतर आ जायें। चादर व कम्बल रोगी की गर्दन तक अच्छी तरह से ढक़ दी जायें। फिर ऊपर से रेग्जीन का कवर ढक़ देते है। रोगी के सिर को ठण्डे पानी से भिगोकर गीला छोटा तौलिया सिर पर रखते है। टब में पानी सहने लायक गरम होना चाहिए। पानी का तापमान कम होने पर ओर गरम पानी थोड़ी.थोड़ी देर में सावधानी से टब में मिलाते रहते है। यह स्नान 20 से 30 मिनट लेने के बाद रोगी को स्नान कर कपड़े पहन लेने चाहिए।

सावधानी : 1. उपचार निर्धारित समय तक ही लेना चाहिए।

2. पानी अधिक गरम न हो।

3. उपचार के दौरान गरम पानी सावधानी से डालें।

उपयोगिता : दमा , अनिद्रा, जोड़ों का दर्द , गठिया, संधिवात, सायटिका, सर्दी.जुकाम, उच्च रक्त चाप , अनिद्रा, सुन्नपन्न, बेहोशी, अस्थमा, टॉन्सिल, गठिया, घुटना दर्द, सिर दर्द, गर्दन दर्द, दाँत.मसूड़ा दर्द, कान दर्द, अंगों का प्रदाह एवं संक्रमण, चर्म रोग, तनाव, थकान, मोच, सर्वाइकल्स एवं स्त्री रोग आदि में उपयोगी है।

निषेध : हृदय रोगी उपचार न लेवें।

16. पैरों का ठण्ड़ा स्नान (Cold foot bath)

अंग विशेष पर प्रयोग :	पैर।		
सामग्री :	घड़ी, थर्मामीटर, दो कम्बल, सूती चादर, रेग्जीन का कवर, कुर्सी, चौड़े मुँह की बड़ी बाल्टी या टब, सूती पट्टी, छोटी.बड़ी तौलिया, ठंड़े पानी की भरी बाल्टी एवं मग आदि।		
अवधि :	5 से 12 मिनट तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार।		
पानी का तापक्रम :	50.68^0 F	10.20^0 C	रोगी की क्षमतानुसार इससे ठण्ड़ा पानी भी ले सकते है।

विधि : कुर्सी पर कम्बल इस प्रकार बिछाये कि रोगी को कुर्सी पर बैठाकर कम्बल रोगी के चारों तरफ लपेटी जा सकें। इसके बाद सूती चादर भी ठीक ऐसे ही बिछाते है। रोगी एक गिलास पानी पीकर आवश्यक वस्त्र उतारकर कुर्सी पर बैठें। उक्त तापक्रम के पानी के टब या बाल्टी में दोनों पैरों को रख देवें।

रोगी के शरीर पर सूती चादर तत्पश्चात् कम्बल इस प्रकार लपेटे की टब भी कम्बल के भीतर आ जायें। चादर व कम्बल रोगी की गर्दन तक अच्छी तरह से ढक़ दी जायें। फिर ऊपर से रेग्जीन का कवर ढक़ देते है। रोगी के सिर को ठण्ड़े पानी से भिगोकर गीला छोटा तौलिया सिर पर रखते है। यह स्नान 5 से 12 मिनट लेने के बाद रोगी को स्नान कर कपड़े पहन लेने चाहिए। फिर टहलना चाहिए। जिससे शरीर में गर्मी आ जायें।

सावधानी : 1. उपचार निर्धारित समय तक ही लेना चाहिए।

उपयोगिता : पैरों की माँसपेशियों की चोट, मोच, सूजन, थकान एवं सिर दर्द आदि में उपयोगी है।

निषेध : हृदय रोगी उपचार न लेवें।

17. बाहु (हस्त) स्नान (Arm bath)

अंग विशेष पर प्रयोग :	दोनों हाथ।		
सामग्री :	घड़ी, थर्मामीटर, दो कम्बल, सूती चादर, रेग्जीन का कवर, कुर्सी, चौड़े मुँह की बड़ी बाल्टी या टब, सूती पट्टी, छोटी.बड़ी तौलिया, गर्म पानी की थैली, ठंड़े व गरम पानी की भरी बाल्टी एवं मग आदि।		
अवधि :	10 से 15 मिनट तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार।		
पानी का तापक्रम :	98.6.104^0 F	37.40^0 C	शरीर के तापमान से थोड़ा अधिक गर्म।

विधि : रोगी एक गिलास पानी पीकर आवश्यक वस्त्र उतारकर कुर्सी पर बिठाये। उक्त तापक्रम के पानी के टब या बाल्टी में दोनों हाथों को डूबोयें रखें। यह स्नान 10 से 15 मिनट लेने के बाद रोगी को अपने हाथ एक मिनट के लिए ठण्ड़े पानी में डुबोना चाहिए। फिर दो मिनट का स्नान या स्पंज स्नान करके कपड़े पहन लेने चाहिए।

सावधानी : 1. उपचार निर्धारित समय तक ही लेना चाहिए।

2. पानी अधिक गरम न हो।

उपयोगिता : सर्वाइकल स्पोण्डिलोसिस , रिस्ट ड्राप , कलाई के जोड़ों में दर्द , कार्पल टनल सिंड्रोम , संधिवात, फ्रोज़न शोल्डर एवं दमा आदि में उपयोगी है।

18. बाहु (हस्त) एवं पाद स्नान (Arm & foot bath)

अंग विशेष पर प्रयोग :	दोनों हाथ व दोनों पैर।
सामग्री :	घड़ी, थर्मामीटर, दो कम्बल, सूती चादर, रेग्जीन का कवर, कुर्सी, चौड़े मुँह की बड़ी बाल्टी या

	टब, सूती पट्टी, छोटी.बड़ी तौलिया, गर्म पानी की थैली, ठंड़े व गरम पानी की भरी बाल्टी एवं मग आदि।			
अवधि :	10 से 15 मिनट तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार।			
पानी का तापक्रम :		$98.6.104^0$ F	37.40^0 C	शरीर के तापमान से थोड़ा अधिक गर्म।

विधि : रोगी एक गिलास पानी पीकर आवश्यक वस्त्र उतारकर कुर्सी पर बैठें। उक्त तापक्रम के पानी के टब या बाल्टी में दोनों हाथों को डुबोयें रखें। यह स्नान 10 से 15 मिनट लेने के बाद रोगी को अपने हाथ एक मिनट के लिए ठण्ड़े पानी में डुबोना चाहिए। फिर दो मिनट का स्नान या स्पंज स्नान करके कपड़े पहन लेने चाहिए।

सावधानी : 1. उपचार निर्धारित समय तक ही लेना चाहिए।

2. पानी अधिक गरम न हो।

उपयोगिता : दमा, छाती की रूकावट, खाँसी, जुकाम, साइनोसाइटिस, हाथ.पैरों की पीड़ा, संधिशोथ एवं कम रक्त संचार आदि में उपयोगी है।

निषेध : हृदय रोगी व रक्त चाप के रोगी उपचार न लेवें।

19. सिर्फ दो मिनट के जलोपचार

टहलने जाने से पूर्व के सिर्फ दो मिनट के ये उपचार. लेक गश / पेट पौछ / अतिशीघ्र नहान / रीढ़ स्नान में से किसी एक को योगाचार्य से परामर्श से लें।

पैरों का धारापात : अपने दोनों पैरों के पंजों से घुटनों तक सिर्फ दो मिनट के लिए पानी की धार डाल कर टहलने निकलना।

पेट पोछ : अपने पेट पर सिर्फ दो मिनट के लिए पानी का पोछा लगा कर टहलने निकलना।

पेट.कमर की गीली लपेट : पानी से गीला तौलिया हल्का.सा निचोडक़र अपने पेट व कमर पर लपेट कर 5.15 मिनट टहलने निकले।

अतिशीघ्र नहान : सिर्फ दो मिनट में नहा कर , कपड़े पहन कर टहलने निकलना।

रीढ़ स्नान : अपनी रीढ़ पर सिर्फ दो मिनट तक पानी की धार डाल कर, कपड़ें पहनकर टहलने निकलना।

20. ठंडा तोलिया स्नान या स्पंज (Sponge)

अंग विशेष पर प्रयोग :	बारी.बारी से शरीर के सभी अंग।		
सामग्री :	घड़ी, थर्मामीटर, कम्बल या सूती चादर, छोटा सूती तौलिया, ठंड़े पानी की भरी बाल्टी एवं मग आदि।		
अवधि :	10 से 12 मिनट तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार।		
पानी का तापक्रम :	50.68^{0} F	10.20^{0} C	रोगी की क्षमतानुसार इससे ठण्ड़ा पानी भी ले सकते है

विधि : सारे बदन से कपड़े उतार कर चादर या कम्बल से ढक़ दें। ठंड़े जल से निचोड़ी तौलिया को पहले चेहरे से शुरू कर सारे शरीर के एक.एक भाग गर्दन , पीठ, छाती, पेट, कमर, हाथ, पैर को बारी.बारी से रगड़ें और सुखाएं। स्नान समाप्त कर चुकने के बाद शुष्क घर्षण स्नान अथवा हल्की कसरत आदि द्वारा शरीर को पुन: गर्म कर लेना आवश्यक है। आधे घण्टे के बाद गीली चादर 15 मिनट के लिए ओंढ़े और घर्षण स्नान करें।

सावधानी : 1. उपचार निर्धारित समय तक ही लेना चाहिए।

उपयोगिता : दुर्बल व कमजोर रोगी , ज्वर, ज्वर के बाद ऐठन , हृदय रोग, अनियमित रक्तपरिभ्रमण, निम्न रक्त चाप एवं रक्ताल्पता आदि में लाभ होता है।

विशेष : यह स्नान रोगी की क्षमतानुसार ठण्ड़ा या गरम या गरम.ठण्ड़ा स्पंज के रूप में दे सकते है।

21. नेत्र.स्नान (Eye bath)

अंग विशेष पर प्रयोग :	आँखें।	
सामग्री :	कप, ठंड़े पानी एवं मग आदि।	
अवधि :	5 से 7 मिनट तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार।	
पानी का तापक्रम :	50.68^{0} F	10.20^{0} C

विधि: एक साफ शीशे के तसले में साफ पानी भरकर मेज या किसी ऊंचे स्थान पर रखिये और उसमें दोनों आंखों को डुबोइये। जल के भीतर उन्हें बराबर खोलते और बंद करते रहना चाहिए। यह क्रिया 5 से 7 मिनट तक करते रहना चाहिए। नेत्र स्नान के बाद आधा घंटा तक कड़ी धूप और हवा के झोंके आदि से नेत्रों को बचाये रखना और उन्हें आराम देना आवश्यक है। गुलाबजल, त्रिफला जल और फिटकरी का घोल भी नेत्र स्नान के काम में लाया जाता है।

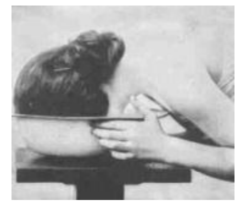

सावधानी : 1. नेत्र स्नान का जल साफ, साधारण ठंड़ा एवं ताजा होना चाहिए।

2. नेत्र स्नान के बाद आराम करना चाहिए।

उपयोगिता : इससे आंखों के रोग दूर होकर ज्योति बढ़ती और सिर की गर्मी शान्त होती है।

निषेध : आँख के ऑपरेशन वाले रोगी उपचार न लेवें।

22. सिर स्नान (Head bath)

अंग विशेष पर प्रयोग :	सिर।		
सामग्री :	घड़ी, थर्मामीटर, दो कम्बल, सूती चादर, रेग्जीन का कवर, कुर्सी, चौड़े मुँह की बड़ी बाल्टी या टब, सूती पट्टी, छोटी.बड़ी तौलिया, ठंड़े पानी की भरी बाल्टी एवं मग आदि।		
अवधि :	5 से 12 मिनट तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार।		
पानी का तापक्रम :	50.68^0 F	10.20^0 C	रोगी की क्षमतानुसार इससे ठण्ड़ा पानी भी ले सकते है।

विधि : रोगी एक गिलास पानी पीकर आवश्यक वस्त्र उतारकर सिर को बारी.बारी से पानी में डुबोयें और सिर पर मालिश करता रहें या सिर पर 5.7 मिनट तक ठंड़ा जल छोड़ते हुए अपने हाथों की उंगलियों को सिर की खोल या चमड़ी के साथ घिसते हुए सिर स्नान करना चाहिए। फिर स्नान करने के बाद रोगी कपड़े पहन लेने चाहिए।

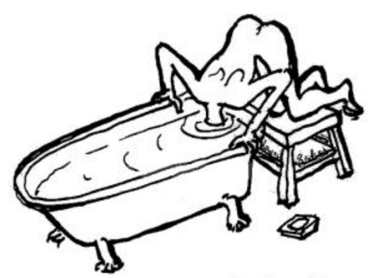

Taking a Head Bath...

सावधानी : 1. उपचार निर्धारित समय तक ही लेना चाहिए।

2. शारीरिक संतुलन व क्षमता का पूरा ध्यान रखें।

उपयोगिता : इस स्नान से सिर सम्बन्धी समस्त शारीरिक एवं मानसिक रोगों जैसे बालों का झड़ना , सिर दर्द, बालों का असमय में पकना, बहरापन, पागलपन तथा नेत्रों की कमजोरी आदि में लाभ होता है।

निषेध : हृदय रोगी उपचार न लेवें।

23. कुंजल या आमाशय प्रक्षालन

यह क्रिया खाली पेट की सफाई या शंख प्रक्षालन के पश्चात् की जाने वाली वमन क्रिया है।

अंग विशेष पर प्रयोग :	मुँह से आमाशय तक।		
सामग्री :	5.10 गिलास गुनगुना नमकीन पानी, बाल्टी या टब, छोटी तौलिया आदि।		
अवधि :	5 से 7 मिनट तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार।		
पानी का तापक्रम :	98.6.104^0 F	37.40^0 C	शरीर के तापमान से थोड़ा गर्म।

विधि: एक स्थान पर सीधे खड़े रह कर एक साथ 5.10 गिलास गुनगुना नमकीन पानी पीया जाता है। अपनी क्षमता पूर्ण हो जाने पर कुछ आगे की ओर झुककर दायें हाथ की तर्जन व मध्यमा अंगुलियां या कोई घास मुंह में वमन करने हेतु डालते है। पीया हुआ सम्पूर्ण जल तेजी से बाहर निकाला जाता है। इसके साथ अन्दर का अपशिष्ट अर्थात् बलगम भी साथ में निकलता है। इस विधि का एक सप्ताह तक लगातार उपयोग करने पर पेट की अच्छी सफाई हो जाती है।

सावधानी : 1. हाथ के नाखून कटे हुए हो।

2. पानी ज्यादा नमकीन व गरम न हो।

3. इस क्रिया के 40.50 मिनट बाद ही कुछ खायें।

4. दमा, हृदय रोगी, हर्निया, पेट के नासूर के रोगी योग विशेषज्ञ से सलाह के बिना यह क्रिया न करें।

उपयोगिता : 1. इस क्रिया से अन्ननाली का एकत्रित बलगम निकल जाने से कफ एवं श्वसन रोग दूर होते है।

2. यह क्रिया पेट की वायु तथा अम्लीयता को दूर करता है।

निषेध : हृदय रोगी उपचार न लेवें।

24. **जल नेति**

अंग विशेष पर प्रयोग :	नाक, नासागुहा तक।		
सामग्री :	जल नेति लोटा, 2.4 गिलास गुनगुना नमकीन पानी, बाल्टी या टब, छोटी तौलिया एवं कुर्सी आदि।		
अवधि :	5 से 7 मिनट तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार।		
पानी का तापक्रम :	98.6.104^0 F	37.40^0 C	शरोर के तापमान से थोड़ा गर्म।

विधि: जल नेति लोटे में गुनगुना नमकीन.सा पानी भर कर घुटने मोडक़र या कुर्सी पर बैठकर आगे की ओर झुकाते हुए साथ ही सिर को दायें या बायें झुकाते हुए ऊपरी नासाछिद्र में जल नेति लोटे की नली लगाकर पानी प्रवाहित करते है। तब मुंह 1 इंच खुला रखते हुए मुंह से ही श्वास.प्रश्वास करते रहने से पानी दूसरे नीचे वाले नासारंध्र से निकलना शुरू हो जाता है। जिसके साथ काफी मात्रा में बलगम व अपशिष्ट निकलता है।

उपयोगिता: 1. इस क्रिया को नियमित करने से कंठ से ऊपर के सारे रोग दूर हो जाते हैं. चाहे वे दृष्टि , श्रवण, कर्ण, स्वादी, नासा या मानसिक दोष हो। सभी का निवारण हो जाता है।

2. इस क्रिया से काफी मात्रा में बलगम व अपशिष्ट बाहर निकलता है।

अंग विशेष पर प्रयोग :	नाक, नासागुहा तक।		
सामग्री :	जल नेति लोटा, 2.4 गिलास गुनगुना नमकीन पानी, बाल्टी या टब, छोटी तौलिया एवं कुर्सी आदि।		
अवधि :	5 से 7 मिनट तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार।		
पानी का तापक्रम :	98.6.104^0 F	37.40^0 C	शरीर के तापमान से थोड़ा गर्म।

विधि : रोगी एक गिलास पानी पीकर आवश्यक वस्त्र उतारकर इस विशेष टब में बैठकर लेट जायें। उपचार सहायक के निर्देशन में तीव्र जल धारा एवं पानी के दबाव से मालिश की क्रिया होती रहेगी। एक अतिरिक्त पानी की पाईप से सहायक रोगी के शरीर पर जल धारा प्रवाहित करता रहता है। निर्धारित समय

के बाद रोगी को स्नान कर कपड़े पहन लेने चाहिए। यदि रोगी ने ठण्ड़े पानी का यह उपचार लिया हो तो फिर टहलना चाहिए। जिससे शरीर में गर्मी आ जायें। यदि रोगी ने गर्म पानी का यह उपचार लिया हो तो उपचार के दौरान सिर को पानी से गीला कर सिर पर गीला तौलिया रखा जाता है।

सावधानी : 1. उपचार निर्धारित समय तक ही लेना चाहिए।

2. उपचार सहायक द्वारा मालिश में सहायता लेवें।

उपयोगिता : कब्ज, गैस, अजीर्ण, अपच, मोटापा, लकवा, पोलियो, रिकेट्स, त्वचा रोग, जोड़ों के दर्द, शरीर दर्द, माँसपेशियों की दुर्बलता या अकर्मण्यता , अवसाद, शिथिलीकरण आदि में उपयोगी है। मल निष्कासन क्रिया तेज हो जाती है। रोग.प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए।

निषेध : हृदय रोगी उपचार न लेवें।

26. भँवर कूप स्नान (Whirlpool bath)

अंग विशेष पर प्रयोग :	सिर के अलावा सम्पूर्ण शरीर।		
सामग्री :	घड़ी, थर्मामीटर, ठंड़े व गरम पानी से भरी टंकी, विशेष प्रकार का विद्युत टब आदि।		
अवधि :	10 से 12 मिनट तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार।		
ठण्ड़े पानी का तापक्रम :	50.68^0 F	10.20^0 C	रोगी के सहने लायक ठण्ड़ा।
गरम पानी का तापक्रम :	98.6.104^0 F	37.40^0 C	रोगी के सहने लायक गर्म।

विधि : रोगी एक गिलास पानी पीकर आवश्यक वस्त्र उतारकर इस विशेष टब में बैठकर लेट जायें। उपचार सहायक के निर्देशन में जल धारा पूरे टब में तेज गति से एवं दबाव के साथ घुमती हुई शरीर की मालिश करती रहेगी। निर्धारित समय के बाद रोगी को स्नान कर कपड़े पहन लेने चाहिए। यदि रोगी ने ठण्ड़े पानी का यह उपचार लिया हो तो फिर टहलना चाहिए। जिससे शरीर में गर्मी आ जायें। यदि रोगी ने गर्म पानी का यह उपचार लिया हो तो उपचार के दौरान सिर को पानी से गीला कर सिर पर गीला तौलिया रखा जाता है।

सावधानी : 1. उपचार निर्धारित समय तक ही लेना चाहिए।

2. उपचार सहायक द्वारा पूरी सहायता लेवें।

उपयोगिता : सिर को छोडक़र समस्त संस्थान जैसे. पाचन, श्वसन, जनन, मूत्र, त्वचा, रक्त संस्थान के सभी अंगों को लाभ मिलने के साथ.साथ आलस्य, शिथिलता, शारीरिक दर्द आदि में उपयोगी है।

निषेध : हृदय रोगी उपचार न लेवें।

27. भाप स्नान (Steem bath)

अंग विशेष पर प्रयोग :	सिर के अलावा सम्पूर्ण शरीर।
सामग्री :	घड़ी, भाप स्नान का कम्पलिट बॉक्स, छोटी.बड़ी तौलिया, पानी की भरी बाल्टी एवं मग आदि।
अवधि :	20 से 45 मिनट तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार एवं मौसमानुसार।

विधि: भाप स्नान के बॉक्स को भाप से तैयार रखें। तत्पश्चात् रोगी को एक गिलास पानी पिलाकर वस्त्र उतरवाकर उसमें बिठा दें। एक बड़ी तौलिया से रोगी की गर्दन पर लपेट दें। रोगी का सिर गीलाकर एक छोटी गीली तौलिया सिर पर रख दें। हर 5 मिनट बाद उपचार सहायक द्वारा सिर के तौलिये पर पानी डालते रहें। रोगी अपने सारे बदन को हथेली या गीले तौलिये से रगड़ता रहें। यह स्नान 20 से 45 मिनट लेने के बाद रोगी को स्नान कर कपड़े पहन लेने चाहिए। यदि रोगी जवान हो तो ठण्ड़ा कटि स्नान 2 से 5 मिनट का लेकर नहा लेवें। फिर कपड़े पहनें। विशेषज्ञ द्वारा रोग के अनुसार भाप बनने वाले पानी में प्राकृतिक औषधि का उपयोग भी सावधानी के साथ किया जा सकता है। जैसे. नीम , पुदीना, तुलसी, अजवायन एवं यूकेलिप्टस तेल आदि।

सावधानी : 1. उपचार निर्धारित समय तक ही लेना चाहिए।

2. उपचार द्वारा रोगी का पूरा ध्यान रखना चाहिए।

3. उपचार के दौरान रोगी को प्यास लगे तो पानी पिलाए।

4. रोगी को समस्या हो रही हो तो तुरन्त उपचार बंद करें।

5. रोगी के सिर पर थोड़ी.थोड़ी देर के बाद पानी डालते रहें।

उपयोगिता : सर्वाधिक रोगों में भाप स्नान की विधि का उपयोग किया जाता है। मोटापा , अजीर्ण कब्ज, अस्थमा, टी.बी., श्वास प्रदाह, टॉन्सिल, डिफ्थीरिया, साइनोसाइटिस, सर्दी.जुकाम, कफ, अकडऩ, जोड़ों का दर्द , वात, हल्का या पुराना बुखार , अपेन्डीसाइटिस, गठिया, गाउट, संधिशोथ, सायटिका,

तंत्रिकाशोथ, निम्र रक्त चाप, त्वचा रोग एवं स्त्री रोग आदि में लाभ होता है। विशेषकर गुर्दे के रोगियों के लिए लाभदायक है।

निषेध : कमजोर रोगी, हृदय व रक्तचाप के रोगी उपचार न लेवें।

28. स्थानीय भाप (वाष्प) (Local steem)

अंग विशेष पर प्रयोग :	सिर एवं हृदय क्षेत्र के अलावा सम्पूर्ण शरीर का कोई भी भाग या अंग विशेषकर घुटने, कमर, पीठ, छाती, पेट, उदर, चेहरा, श्वास, गर्दन आदि अंगों पर।
सामग्री :	घड़ी, भाप यंत्र, छोटी तौलिया, सूती कपड़ा, पानी की भरी बाल्टी एवं मग आदि।
अवधि :	लगभग 1.1 मिनट की भाप बार.बार तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार एवं मौसमानुसार।

विधि: रोगी को एक गिलास पानी पिलाकर आवश्यक वस्त्र उतरवाकर कुर्सी पर बिठा दें। भाप यंत्र द्वारा रोगी के अभिष्ट भाग या अंग पर गीला सूती कपड़ा रखकर लगभग 1.1 मिनट की भाप 5.10 बार.बार तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार एवं मौसमानुसार देनी चाहिए। फिर उस भाग को ठण्ड़े पानी से धोकर कपड़े पहनें। विशेषज्ञ द्वारा रोग के अनुसार भाप बनने वाले पानी में प्राकृतिक औषधि का उपयोग भी सावधानी के साथ किया जा सकता है। जैसे. नीम, पुदीना, तुलसी, अजवायन एवं यूकेलिप्टस तेल आदि।

सावधानी : 1. उपचार निर्धारित समय तक ही लेना चाहिए।

2. रोगी के शरीर पर वाष्प नली से गरम पानी की बूँद न गिरे इसका उपचार को पूरा ध्यान रखना चाहिए।

3. उपचार के दौरान रोगी को प्यास लगे तो पानी पिलाए।

4. रोगी को समस्या हो रही हो तो तुरन्त उपचार बंद करें।

5. शरीर पर कहीं घाव का चीरा लगा हो और उसके आसपास उपचार देना आवश्यक हो तो पहले गीली सूती कपड़े की तह बनाकर पट्टी बाँध देनी चाहिए।

उपयोगिता : विशेषकर घुटने, कमर, पीठ, छाती, पेट, उदर, चेहरा, श्वास, गर्दन आदि अंगों पर व्याधि होने पर उपचार द्वारा समस्या को ठीक किया जाता है।

निषेध : शरीर पर कहीं घाव का चीरा लगा हो तो वहाँ उपचार न देवें।

29. वाष्प पान या वाष्प श्वसन (Steem inhalation)

अंग विशेष पर प्रयोग : नासिका एवं चेहरा।

सामग्री : घड़ी, विशेष भाप यंत्र, बड़ा तौलिया या मोटा सूती कपड़ा, स्टूल व चेयर आदि।

अवधि : लगभग 1.1 मिनट की भाप बार.बार 5.10 मिनट तक तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार एवं मौसमानुसार।

विधि: रोगी एक गिलास पानी पीकर यंत्र के पास कुर्सी पर बैठ जाए। अपने सिर को बड़े तौलिये या मोटा सूती कपड़े से ढक़ते हुए यंत्र में उबलते पानी की वाष्प को चेहरे पर लेते हुए आराम से नासिका द्वारा ग्रहण करते रहें। बीच.बीच में थोड़ा.सा रूक कर यह क्रिया पुन: दोहराए। 5.10 मिनट या क्षमतानुसार उपचार लेकर चेहरे को ठण्ड़े पानी से धो लेवें। विशेषज्ञ द्वारा रोग के अनुसार भाप बनने वाले पानी में प्राकृतिक औषधि का उपयोग भी सावधानी के साथ किया जा सकता है। जैसे. नीम , पुदीना, तुलसी, अजवायन एवं यूकेलिप्टस तेल आदि।

सावधानी : 1. उपचार निर्धारित समय तक ही लेना चाहिए।

2. रोगी को समस्या हो रही हो तो तुरन्त उपचार बंद करें।

3. चेहरे पर कहीं घाव का चीरा लगा हो और उसके आसपास उपचार देना आवश्यक हो तो पहले गीली सूती कपड़े की तह बनाकर पट्टी बाँध देनी चाहिए।

उपयोगिता : विशेषकर नाक.कान.गले की समस्या, श्वास की व्याधि, जुकाम, खाँसी, नजला, न्यूमोनिया, टाँसिल, ब्राँकाइटिस, दमा, कील.मुहाँसे और साइनोसाइटिस की समस्या में उपयोगी है।

निषेध : शरीर पर कहीं घाव का चीरा लगा हो तो वहाँ उपचार न देवें।

30. सावना बाथ (Savna bath)

अंग विशेष पर प्रयोग : सम्पूर्ण शरीर।

सामग्री : घड़ी, भाप स्नान केबिन या कमरा, बड़ी तौलिया या पतले.ढ़ीले.छोटे वस्त्र, स्टूल, पानी की भरी बाल्टी एवं मग आदि।

अवधि : 20 से 60 मिनट तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार एवं मौसमानुसार।

विधि: भाप केबिन में भाप तैयार होने से पहले रोगी एक गिलास पानी पीकर ठण्ड़े पानी से नहा लें। तत्पश्चात् ओर एक गिलास पानी पीकर निर्वस्त्र या उक्त अनुसार वस्त्र पहन कर केबिन में बिठा दें। रोगी अपने सारे बदन को हथेली या गीले तौलिये से रगड़ता रहें। यह स्नान 20 से 60 मिनट लेने के बाद रोगी को स्नान कर कपड़े पहन लेने चाहिए। विशेषज्ञ द्वारा रोग के अनुसार भाप बनने वाले पानी में प्राकृतिक औषधि का उपयोग भी सावधानी के साथ किया जा सकता है। जैसे. नीम् पुदीना, तुलसी, अजवायन एवं यूकेलिप्टस तेल आदि। कमजोर रोगी उपचार से पूर्व नीम्बू+पानी+शहद या फल.तरकारियों का रस पी सकता है।

सावधानी : 1. उपचार निर्धारित समय तक ही लेना चाहिए।

2. केबिन के बाहर उपचाक द्वारा रोगी को पूरा देते रहना चाहिए।

3. उपचार के दौरान रोगी को प्यास लगे तो पानी पिलाए।

4. रोगी को समस्या हो रही हो तो तुरन्त उपचार बंद करें।

उपयोगिता : मोटापा, मधुमेह, शिथिलता, आलस्य, सायटिका, सरवाइकल, पीठ दर्द, बदन दर्द, जोड़ों का दर्द, गठिया, संधिशोथ, स्लिपडिस्क, श्वास रोग, दमा एक्जीमा, संक्रमण दूर करने में उपयोगी है। चयापचयी तंत्र व तंत्रिका तंत्र में संतुलन स्थापित होता है।

निषेध : कमजोर रोगी, चर्म रोगी, हृदय व रक्तचाप के रोगी विशेषज्ञ की देखरेख में ही उपचार लेवें।

सावना बाथ और स्टीम बाथ में निम्न अन्तर है.

क्र.	सावना बाथ	स्टीम बाथ
1.	सिर की गर्मी पर ध्यान नहीं दिया जाता है।	सिर की गर्मी पर विशेष ध्यान दिया जाता है।
2.	सम्पूर्ण शरीर पर शुष्क भाप दी जाती है।	मुँह को छोडक़र सम्पूर्ण शरीर पर आद्र.शुष्क भाप दी जाती है।
3.	केबिन में ऑक्सीजन कम मिल पाती है।	मुँह बाहर रहने से भरपूर ऑक्सीजन मिल पाती है।

31. सारे बदन की गीली चादर स्नान (Whole body wet sheet pack)

अंग विशेष पर प्रयोग : पैर।

सामग्री : मेज, तीन कम्बल, सूती चादर, सूती पट्टी, छोटी.बड़ी तौलिया, रेग्जीन का तकिया, गर्म पानी की थैली, घड़ी, पानी की भरी बाल्टी एवं मग आदि।

अवधि : 45 मिनट तथा रोगी की कम से कम क्षमतानुसार।

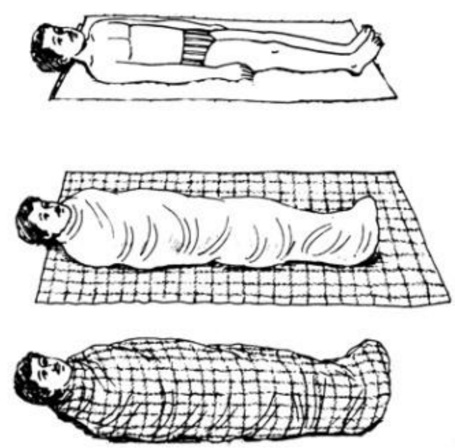

विधि: तख्त पर कम्बल और कम्बल पर ठंड़े पानी से तर करके निचोड़ी गई एक बड़ी व उस पर एक छोटी चादर को बिछा दें। रोगी को एक गिलास पानी पिलाकर निर्वस्त्र उस पर लेटा दें। छोटी चादर रोगी के छाती पर और बड़ी चादर को रोगी का सिर छोडक़र पूरा शरीर अच्छी तरह लपेट लें। फिर वैसे ही कम्बल को लपेट कर एक अन्य कम्बल और ओढ़ा दें। रोगी का सिर भी गीलाकर गीले तौलिये से ढक़ दें। हर 5 मिनट बाद तौलिये पर पानी डालते रहें। यह स्नान 45 मिनट लेने के बाद रोगी को ठण्ड़े पानी नहाना या स्पंज स्नान कर कपड़े पहन लेने चाहिए।

सावधानी : 1. उपचार निर्धारित समय तक ही लेना चाहिए।

2. उपचारक को रोगी का बराबर ध्यान रखना चाहिए।

3. रोगी के सिर पर थोड़ी.थोड़ी देर से पानी डालना चाहिए।

उपयोगिता : तीव्र व जीर्ण ज्वर, उच्च व निम्न रक्त चाप, अनिद्रा, तनाव, मोटापा, संधिशोथ, शरीर में दर्द, स्नायु सम्बन्धी रोग , त्वचा रोग, अम्लपीत्त, अस्थमा एवं हृदय रोग आदि में लाभ होता है। विशेषकर यकृत, गुर्दा एवं अग्राशय को लाभ मिलता है।

निषेध : कमजोर व हृदय रोगी विशेषज्ञ की देखरेख में ही उपचार लेवें।

32. गीली पट्टी लपेट (Wet sheet pack or compress)

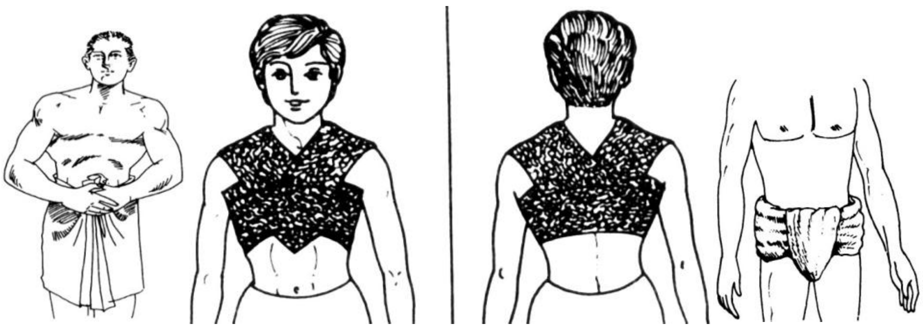

अंग विशेष पर प्रयोग : शरीर के विभिन्न अंग जैसे. पेट या पेडू , छाती, घुटना, पैर, गर्दन, सिर, आँख की लपेट, गीली बनियान, गीली चड्डी या लंगोट आदि।

सामग्री : घड़ी, मेज, ऊनी.सूती पट्टी, बड़ी तौलिया, पानी की भरी बाल्टी एवं मग आदि।

विधि : ठंडे जल से भीगी सूती पट्टी को अंग विशेष पर लपेट कर ऊपर ऊनी पट्टी को लपेटा जाता है। 30 से 45 मिनट के बाद उस अंग को ठण्ड़े पानी से धोकर कपड़े पहन लेने चाहिए। इसका कितने ही रोगों पर जादू सा असर होता है।

सावधानी : 1. उपचार निर्धारित समय तक ही लेना चाहिए।

शरीर के विभिन्न अंगों की लपेट का अवधि एवं उपयोगिता को दर्शाती निम्न सारणी.

क्र.	**विभिन्न अंगों की लपेट**	**अवधि**	**उपयोगिता**
1.	पेट या पेडू या कटि प्रदेश की लपेट	30 से 45 मिनट	कब्ज, अपच, उदर वायु, अम्लता, कोलोइटिस, आँतों की सूजन, मोटापा, मुमेह, गुर्दा एवं यकृत रोग आदि।
2.	छाती की लपेट	30 से 45 मिनट	जुकाम, खाँसी, ब्रान्काइटिस, यकृत रोग, बुखार, उच्च रक्तचाप, दमा एवं हृदय रोग।
3.	घुटना की लपेट	30 से 45 मिनट	गठिया, संधिशोथ, जोड़ों का दर्द एवं सूजन आदि।
4.	पैर की लपेट	30 से 45 मिनट	पैरों में दर्द, पैरों में बांयटा, पैरों की सूजन, सायटिका, स्फीत या उभरी शिराएँ, कब्ज एवं गैस आदि।

5.	गर्दन की लपेट	30 से 45 मिनट	सरवाईकल स्पोन्डियोलाइटिय, थाइराइड व पैराथाइराइड ग्रन्थि रोग, टॉन्सिल, आदि।
6.	सिर की लपेट	10 से 15 मिनट	सिर दर्द, माइग्रेन एवं सायनोसाइटिस आदि।
7.	आँख पर पट्टी	10 से 15 मिनट	विशेषकर आँखों से पानी आना, जलन आदि।
8.	गीली बनियान	30 से 45 मिनट	फेफड़ों का बलगम, अम्लता, गैस एवं हृदय रोग आदि।
9.	गीली चड्डी या लंगोट	30 से 45 मिनट	जननागों से सम्बन्धित समस्याएँ।
10.	जुर्राब लपेट	30 से 45 मिनट	एड़ी दर्द, पंजों का दर्द, पैरों की अंगुलियों में दर्द एवं एड़ी का फटना आदि।

33. गरम.ठंड़ी सेंक**(Hot & cold compress)**

अंग विशेष पर प्रयोग :	शरीर के विभिन्न अंग जैसे. पेट या पेड़ू, छाती, घुटना, पैर, गर्दन, सिर, आँख की लपेट, गीली बनियान, गीली चड्डी या लंगोट आदि पेट, पेटू व कटि प्रदेश।		
सामग्री :	घड़ी, गरम पानी की रबड़ थैली, छोटी तौलिया एवं छोटा टब आदि।		
परिवर्तित समय अवधि :	2 मिनट गरम 1 मि. ठण्ड़े का क्रम 4.5 बार दोहरायें, अंत में 2 मि. ठण्ड़ा उपचार (13.16 मि. तक) या 3 मिनट गरम 1 मि. ठण्ड़े का क्रम 3.4 बार दोहरायें, अंत में 3 मि. ठण्ड़ा उपचार (14.18 मि. तक) लें।		
ठण्ड़े पानी का तापक्रम :	50.68^0 F	10.20^0 C	रोगी की क्षमतानुसार इससे ठण्ड़ा पानी भी ले सकते है।
गरम पानी का तापक्रम :	$98.6.104^0$ F	37.40^0 C	गरम पानी की रबड़ थैली उपयोग में ले सकते है।

विधि: रोगी को एक गिलास पानी पिलाकर आवश्यक वस्त्र उतरवाकर गरम पानी की रबड़ थैली अभिष्ट अंग पर 3 मिनट तक रखें। इसके बाद 1 मिनट ठंड़े पानी का निचोड़ा हुआ तौलिया रखें। यह प्रतिक्रिया क्रमश: 3.4 बार करते रहें। अंत में चौथी बार 3 मिनट गरम और 3 मिनट ठंड़े पानी से निचोड़ा हुआ तौलिया को रखकर चिकित्सा समाप्त कर कपड़े पहन लेने चाहिए।

सावधानी : 1. उपचार निर्धारित समय तक ही लेना चाहिए।

उपयोगिता: किसी अंग विशेष की सूजन, दर्द एवं मरम्मत करने हेतु उस अंग विशेष की गरम.ठण्ड़ी सेंक की जाती है।

क्र.	गरम.ठण्ड़ा सेंक	उपयोगिता
1.	पेट की सेंक (नाभि से ऊपर)	जीर्ण कब्ज, वायु विकार, आँतों की सूजन, मोटापा, मुमेह, तिल्ली का बढ़ना, गुर्दा एवं यकृत रोग।
2.	पेडू की सेंक (नाभि के नीचे)	कब्ज, उदर वायु, बवासीर, मोटापा, आँतों की सूजन, स्त्री रोग, जननांगों में दर्द व सूजन।
3.	कटि प्रदेश (कमर) की सेंक (पीछे)	सायटिका, कमर दर्द, गर्भाशय विकार, स्त्री रोग, प्रोस्टेट दर्द, भगंदर, बादी व खूनी बवासीर की गाँठ, खुजली आदि।
4.	यकृत व आमाशय की सेंक (हृदय क्षेत्र छोड़कर) Gestro hepetic (GH)Pack	मुख्यतः मधुमेह रोग, अग्राशय विकार, आमाशय विकार, यकृत विकार, तिल्ली का बढ़ना, मूत्र विकार, लीवर व आँतों की सूजन, जुकाम, खाँसी, ब्रान्काइटिस, बुखार, तीव्र व जीर्ण ज्वर, उच्च रक्तचाप, दमा, रक्त की कमी, भूख न लगना, गैस, अम्लता एवं हृदय रोग।
5.	गर्दन, चेहरा एवं सिर की सेंक	सिर दर्द, अनिद्रा, स्मरण शक्ति, झुरियाँ, थकान एवं बेचैनी आदि।
6.	घुटना की सेंक	गठिया, संधिशोथ, जोड़ों का दर्द एवं सूजन आदि।
7.	पैर की सेंक	पैरों में दर्द, पैरों में बांयटा, पैरों की सूजन, सायटिका, स्फीत या उभरी शिराएँ, कब्ज एवं गैस आदि।
8.	किडनी की सेंक	गुर्दे की सूजन, दर्द, संक्रमण, पथरी का दर्द एवं मूत्र विकार आदि।
9.	फेफड़ों की सेंक	पुरानी खाँसी, पुराना जमा कफ, संक्रमण एवं भारीपन आदि।

10.9 सारांश

जल चिकित्सा के सरल व सटीक रोग नाशक उपचार सीखकर दुनिया करलो मुट्ठी में। वास्तव में यह हमारी हर परेशानी के लिए प्राणदायी , जीवनदायी औषधि है। बड़े भयंकर से भयंकर रोगों के लिए कुछ दिनों के उपचार लेने मात्र से ही रोग जड़ से ही गायब हो जाता है। इससे ज्यादा आपको दुनिया में और क्या चाहिए? जो हमेशा सर्वसुलभ है और हमारी पहुँच में है। क्यों न पूरी दुनिया साधारण व सरल नियमों की ओर पुन: लौट आयें? रोगी अपने घर बैठें स्वयं ही उषा:पान, एनिमा, पट्टी, सेंक एवं स्नानों का भरपूर लाभ लेकर आने वाली पीढि़यों को वसीयत में यह अमूल्य जीवनोपयोगी ज्ञान दे पायें। इसी आशा व विश्वास के साथ आप भी यह साधारण व सरल जलोपचार को सीखें, समझे, आजमाये और अपने लाभों को देखते हुए दूसरों को समझाने व बताने का एक सफल प्रयास करें।

10.10 बोधात्मक प्रश्न

1. जल तत्व की कौन.कौन सी अवस्थाएँ है?
2. स्वस्थ मनुष्य के रक्त की हाइड्रोजन प्रबलता (pH)का माप बताइये?
3. जल से हाइड्रोजन प्रबलता (pH)का निर्धारण कैसे करते है? समझाइये।
4. जल के विविध तापमान को सारणी बनाकर समझाइयें?
5. शरीर में जल के अनुपात का संक्षिप्त वर्णन करो?
6. जल का चिकित्सकीय महत्व एवं इतिहास का वर्णन कीजिए?
7. ज्यादा मात्रा में पानी किन.किन को पीना चाहिए?
8. जल चिकित्सा का प्रवर्तक किसे माना जाता है?
9. जलोपचार का सिद्धान्त कौन.कौन से है?
10. जल के उपचारीय गुण कौन.कौन से है?
11. स्नान क्यों आवश्यक है?
12. रोगोपचार में जल प्रमुख क्यों है?
13. जल के प्रयोग से रोग कैसे दूर होते है?
14. ठंड़े जल का हमारे शरीर पर क्या प्रभाव होता है?
15. ठंड़े जल का प्रयोग कब और कितनी देर तक करना चाहिए?
16. अत्यन्त ठंड़ा जल या बर्फ का प्रयोग क्यों निषैध है?
17. स्नान के समय मनोभाव कैसा हो?
18. मेहन स्नान के लिए जननेन्द्रिय को ही क्यों चुना?

19. स्नान सम्बन्धी सावधानियां क्या.क्या रखनी चाहिए?

20. निम्न उपचारों पर टिप्पणी कीजिए.

1. गरम.ठंड़ा कटि स्नान, 4. एनिमा (अन्त्र स्नान), 7. पीठ या रीढ़ स्नान,

2. मेहन स्नान, 5. सारे बदन की गीली चादर स्नान, 8. भाप स्नान।

3. पैरों का गरम स्नान, 6. सिर्फ दो मिनट के जलोपचार,

21. कोलोन हाईड्रोथैरेपी किस तरह काम में लायी जाती है?

22. निम्न जलापचार की उपयोगिता बताइये.

1. पूर्ण टब गरम स्नान, 2. बाहु (हस्त) एवं पाद स्नान,

3. जल नेति, 4. ठंडा तौलिया स्नान या स्पंज।

23. अन्तर्जल मालिश एवं भँवर कूप स्नान में अंतर बताइये?

24. भाप स्नान एवं सावना बाथ में अंतर बताइये?

25. यकृत व आमाशय की सेंक की उपयोगिता बताइये?

10.11 संदर्भ ग्रंथों की सूची

संदर्भ ग्रंथों की सूची में सम्मिलित ग्रन्थों एवं उनकी सहायक सामग्री का उपयोग हमने इस ग्रन्थ के निर्माण में सहायक के रूप में किया है। हम इन संदर्भित ग्रन्थों, उनके लेखकों, प्रकाशकों एवं संस्थाओं के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

संदर्भ साहित्य	लेखक	संदर्भ साहित्य	लेखक
प्राकृतिक आयुर्विज्ञान	डॉ. राकेश जिन्दल	प्राकृतिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य	डॉ. महेन्द्र कुमार जाजपुरा
वृहद प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. ओ. पी. सक्सेना	Fasting can sour your life	H.N. Shelton
जल चिकित्सा	फादर क्नाइप	जीवनी शक्ति कैसे जगायें	डॉ. चन्द्र दीप सिंह
प्राकृतिक स्वास्थ्य शास्त्र	आचार्य शेषांद्रि स्वामीनाथन	आपका आरोग्य आपके हाथ में	देवेन्द्र वोरा
प्राकृतिक चिकित्सा दर्शन	हेनरी लिंडलार	प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग वैज्ञानिक प्रयोग	डॉ. नागेन्द्र कुमार नीरज
My Water Cure	फादर सेबस्टियन नीप	जीवेम् शरद शतम्	पं. श्री राम शर्मा आचार्य वाङ्मय
'रैशनल हाइड्रो थिरैपी'	जे. एच. केलांग	बिना औषयिों के कायाकल्प	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
न्यू साइनस ऑफ हिलिंग	लुई कूने	निरोग जीवन का राज मार्ग	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
प्राकृतिक जीवन की ओर	श्री एडोल्फ जस्ट	दीर्घ जीवन की प्राप्ति	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
100 वर्ष निरोगी रहिए	माणेक लाल म. पटेल	पंच तत्वों द्वारा सम्पर्ण रोगों का निवारण	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
रोगों की अचूक चिकित्सा	जानकी शरण वर्मा	रोगों की सरल चिकित्सा	विट्ठलदास मोदी

स्वास्थ्य के सोपान	नरूपमल सुराणा	जीने की कला	विट्ठलदास मोदी
आरोग्य की कुंजी	राष्ट्रपिता महात्मा गाी	आरोग्य प्रकाश	वैद्यराज पं. रामनारायण शर्मा
कुदरती चिकित्सा	राष्ट्रपिता महात्मा गाी	मौलिक चिकित्सा कौन सी?	डॉ. चंचलमल चोरडिया
सरल प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. लक्ष्मी नारायण शर्मा	100 वर्ष कैसे जीयें	आचार्य श्याम सुन्दर सुमन
प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. सतीश गोयल	प्राण शक्ति उपचार; प्राचीन विज्ञान कला	चौ. कोक सुई
प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग	श्रीमत्ती राज कुमारी गुप्ता	The new science of healing, The doctrine of unity of diseases	Louis Kuhne and Benedict Lust
स्वस्थवृत विज्ञान	प्रो. रामहर्ष सिंह	अखिल भारतीय प्राकृतिक जीवन संघ द्वारा प्रकाशित एन.डी. कोर्स के लेख (भूज, गुजरात)	

****

इकाई 11

मिट्टी (पृथ्वी) तत्त्व एवं उसकी चिकित्सा

इकाई की रूपरेखा

11.1. उद्देश्य

11.2. प्रस्तावना

11.3 मिट्टी का चिकित्सकीय महत्व एवं इतिहास

11.4 उपचारक मिट्टी के प्रकार

11.5 मिट्टी उपचार के सिद्धान्त

11.6 मिट्टी के उपचार में सावधानी

11.7 मिट्टी उपचार की विधियाँ

11.8 सारांश

11.9 बोधात्मक प्रश्न

11.10 संदर्भ ग्रंथ

11.1 उद्देश्य

- मिट्टी का चिकित्सकीय महत्व एवं इतिहास क्या है
- मिट्टी उपचार के सिद्धान्त क्या है
- मिट्टी उपचार की कौन.कौन सी विधियाँ है

उपरोक्त समस्त जिज्ञासाओं का उत्तर पाना ही इस अध्याय का उद्देश्य है।

11.2 प्रस्तावना

ईशतत्व से प्रकट होने वाले जल तत्व के बाद पाँचवें स्थान पर मिट्टी तत्व की उत्पत्ति हुई। यह पंचमहाभूतों में सबसे स्थूल तत्व है। मिट्टी में शब्द + स्पर्श + रूप + रस + गन्ध ये पाँच गुणों के कारण समस्त प्राणी जगत् के लिए संजीवनी सदृश्य है और पोषक तत्व पैदा करने की आश्चर्य जनक क्षमता से सबका पेट भरने वाली पृथ्वी या धरती माता है। धरती माता पेट भरने के साथ.साथ पूर्ण स्वास्थ्य भी प्रदान करती है।

प्राचीन काल में देव व ऋषि.मुनि जमीन खोदकर गुफाओं में रहते थे। गुफाओं में मिट्टी की गंध (वाष्प) उनके शरीर का विष बाहर खिंचती रहती और वे स्वस्थ रहते तथा वे जब समाधि लगाकर निराहार रहते

तो यहीं गंध उनकी देह का पोषण भी करती। धरती माता से उत्पन्न खाद्य.वनस्पतियों की साफ.सफाई करके प्राकृतिक रूप में खाने का प्रयास ज्यादा करना चाहिए अर्थात् रसाहार , फलाहार। क्योंकि इनसे शरीर को आवश्यक सभी तत्वों की पूर्ति हो जाती है।

मिट्टी सर्वसुलभ होने से अब इसकी उपेक्षा न करें , उसमें अनेकानेक पवित्र गुणों के कारण वह रामबाण संजीवनी है। कुम्हार ने तो इसके पवित्र.पवित्र गुणों को देख अनेक आविष्कार कर दिये और सम्पूर्ण स्वास्थ्य को प्राप्त करने के लिए मिट्टी के सरल.सरल और बड़े ही सटीक उपचार बताये। जिससे मिट्टी चिकित्सा पर एक विशाल ग्रंथ का निर्माण किया जा सकता है। प्राकृतिक चिकित्सा में उन्हीं उपचारों को अपनाया जा रहा है। आशा है कि आप अब मिट्टी को उपेक्षा की दृष्टि से नहीं देखेंगे वरन् इसे आत्मसात् करेंगे, लाभान्वित होकर दूसरों को बताने का सफल प्रयास भी करेंगे।

11.3 मिट्टी का चिकित्सकीय महत्व एवं इतिहास

एषां भूतानां पृथ्वी रस: .छांदोग्य उपनिषद्

अर्थात् जिन पांच तत्वों से हमारा शरीर बना है, मिट्टी तत्व उसमें सबसे अधिक प्रधान है।

त्वं देव्यादि वराहेण रसाया:
स्थानमिच्छता।
उद्धृतासि नमस्तुभ्यं पाप्मानं में प्रणाशय।।

अर्थात् हे देवि मृत्तिके! प्राणियों को स्थान देने की इच्छा से वराह भगवान ने रसातल से तुम्हारा उद्धार किया था। तुम्हें मेरा नमस्कार है। तुम मेरे पापों को नष्टकर दो।

मिट्टी में एक प्रकार का रेडियम होता है। जो शरीर की ग्रंथियों को प्रभावित करके स्वास्थ्य वृद्धि करता है। .प्रो. स्टांकलासा

मिट्टी त्वचा के रोम कूपों को खोलती, रक्त को ऊपरी भाग पर खींचती अन्दर के दर्द एवं रक्त संचय को दूर करती है और विजातीय द्रव्य को बाहर निकालती है। .डॉ. लिण्डल्हार

नंगे पांव चलने से सिरदर्द , गले की सूजन , जुकाम, पैर और सिर का ठंड़ा रहना आदि दूर हो जाते है। .फादर नीप

माटी ओढऩा माटी बिछौना , माटी दाना.पानी रे। .कबीरदास

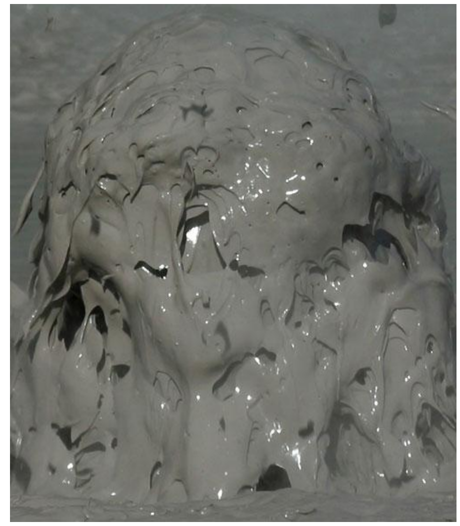

मनुष्य की उत्पत्ति मिट्टी से हुई है और उसे एक दिन मिट्टी में ही मिलना है। वह मिट्टी से ही सम्पर्क बनाये रखकर अधिक सुख.शांति से जीवन यापन कर सकते है। मिट्टी मानव स्वास्थ्य के लिए बड़े लाभ की चीज है। मिट्टी , जितनी सर्व सुलभ एवं नगण्य समझी जाती है, उसकी गुण गरिमा उतनी ही महान् है। कुम्हार ने मिट्टी में निम्न गुणों को पाया, उसने आजमाया और सर्व कल्याण के लिए वैदिक ग्रंथों में लिपिबद्ध किया। जिसे प्राकृतिक चिकित्सा ने अपनाया, जो इस प्रकार है :.

1. सब प्रकार की दुर्गन्ध को मिटाने के लिए मिट्टी से बढ़ कर संसार में और कोई वस्तु नहीं। यही कारण है कि घरों में मिट्टी लीपी जाती है, सड़ी चीजों पर मिट्टी डाली जाती, अपवित्र हाथों को मिट्टी से धोकर और शरीर पर मिट्टी का लेप कर त्वचा को कोमल, स्वच्छ एवं पवित्र करते है।

2. मिट्टी में सर्दी और गर्मी रोकने की शक्ति होती है। इसी कारण योगी लोग अपने शरीर पर मिट्टी या राख लगाते है।

3. जल को निर्मल कर देने की अद्भूत शक्ति मिट्टी में होती है। कूओं , नदियों का जल इसी कारण सदैव निर्मल रहता है।

4. मिट्टी में विलक्षण विद्रावक शक्ति होती है। बड़े.बड़े फोड़े पर मिट्टी की पट्टी चढ़ाने से अपनी विद्रावण शक्ति से ही वह उसे पका देती है, बहा देती है और घाव को भर भी देती है।

5. मिट्टी में विषादि को शोषण करने की विचित्र शक्ति होती है। भयानक फोड़े का विष और जहरीलें साँपों का विष कुछ ही समय में मिट्टी ठीक कर देती है।

6. मिट्टी में जल तथा सब प्रकार की खनिज.पदार्थो को धारण करने की शक्ति है।

7. मिट्टी में ही सभी प्राणियों के जीवन.निर्वाह के लिए विभिन्न खाद्य.पदार्थो को उत्पन्न करने की शक्ति होती है।

8. मिट्टी अग्नि की उष्णता का शोषण करके उसे शान्त कर देने की शक्ति रखती है।

9. मिट्टी में रोगों को दूर करने की अपूर्व शक्ति होती है, क्योंकि इसमें जगत् के सभी पोषक तत्व विद्यमान होते है।

10. ओस में भीगी घास पर नंगे पांव स्वच्छन्द चलने.फिरने से जितनी शान्ति और सुख मिलता है। मिट्टी में एक विलक्षण शक्ति होती है। जो नंगे पैर चलने वालों के शरीर में ताजगी एवं जीवनी.शक्ति का संचार कर आरोग्य, बल एवं दीर्घ जीवन प्रदान करती तथा नेत्र रोगों से बचाती है।

11. पृथ्वी के स्पर्श एवं संयोग से ही प्राणियों में जीवन शक्ति की यथेष्ट उपलब्धि होती है। अत: उत्तम स्वास्थ्य के चाहने वालों को पृथ्वी से सीधा संसर्ग रखने के लिए उस पर बैठना , लेटना और सोना होगा ही।

12. अनिद्रा के रोगी के लिए जमीन पर बैठना, लेटना और सोना एक औषधि है।

13. मिट्टी के बर्तनों में बना भोजन स्वादिष्ट और स्वास्थ्य की दृष्टि से अति उत्तम है।

14. मिट्टी के गुणों के सामने साबुन कुछ भी नहीं है। इससे नहाना स्वास्थ्यवर्धक है।

15. कहीं भी कोई रोग या चोट या समस्या हो जाये गीली मिट्टी बाँध दो, चाहे आँख पर भी क्यों न। ठीक हो जायेगा।

16. मिट्टी एक ऐसी औषधि है जो सर्वत्र सुलभ है और जिसके सडऩे , बिगडऩे या खराब होने का सवाल ही नहीं उठ सकता। मिट्टी के प्रयोग से तो हानि कभी होती ही नहीं, पर लाभ सौ प्रतिशत होता है।

11.4 **उपचारक मिट्टी के प्रकार**

1. काली मिट्टी: अधिकतर कछार में पायी जाती है। यह मिट्टी बालों की रक्षा करने और उनको साफ और स्वच्छ रखने में अद्धितीय है।

2. पीली और सफेद मिट्टी: खेतों, तालाबों और दरियाओं के किनारे पायी जाती है। इस मिट्टी को भी रोगों के उपचार में काम में लिया जाता है।

3. सज्जी मिट्टी: इस मिट्टी से कपड़े खूब अच्छी तरह साफ होता है।

4. मुलतानी मिट्टी: इस मिट्टी को स्त्रियां अपने शरीर पर मलती और उबटन करती है। जिससे उनकी त्वचा सुन्दर एवं कान्तिमय हो जाती है।

5. बालू मिट्टी: बालू मिट्टी प्राकृतिक उपचार के लिए उतनी ही आवश्यक है, जितना शरीर के लिए भोजन और जल। बालू के कण हमारी पाचन शक्ति को ठीक रखने में बड़ा काम करते है। बालू मिश्रित या पहाड़ों का पानी स्वास्थ्यवद्र्घक एवं भूख बढ़ाने वाला होता है। बालू मिट्टी में छूत और ज़हर मारने की शक्ति होती है। बालू मिट्टी से लिया गया प्राकृतिक उपचार औषधि का काम करती है।

वैसे मिट्टी चाहे किसी भी किस्म की हो लेकिन साफ.सुथरे स्थान की हो तथा जमीन से दो या ढ़ाई फुट नीचे से निकालकर धूप में सुखाकर, बारीक छानकर प्रयोग करना चाहिए।

11.5 **मिट्टी उपचार के सिद्धान्त**

मिट्टी शरीर की भीतरी खराबियों को बाहरी सतह पर खींच लाती और रोग की गर्मी को शांत करती है। ठंड़ी मिट्टी का त्वचा के सम्पर्क में आने पर रक्त के द्वारा क्रिया.प्रतिक्रिया होती है। ठंडक़ पाकर रक्त त्वचा से दूर आंतरिक अंगों की ओर चला जाता है। वह जितनी तेजी से जाता है , उससे भी अधिक तेजी से त्वचा की ओर आता है। यह क्रिया.प्रतिक्रिया तब तक चलती रहती है , जब तक त्वचा का तापमान सामान्य न हो जाये। तब रक्त के तेज प्रवाह के कारण अपशिष्ट अपना स्थान छोड़ रक्त के साथ बहकर उत्सर्जी अंगों तक पहुँच जाते है। अधिकाँश अपशिष्ट त्वचा की सतह पर आ जाते है। जिसे घर्षण , व्यायाम और योगासन कर त्वचा से पसीने के रूप में बाहर किया जाता है।

मिट्टी से उपचारित रोग

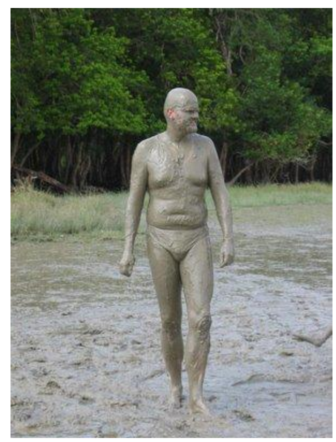

शरीर के किसी भी अंग के रोगी होने पर उस स्थान पर मिट्टी की पट्टी लाभ के साथ लगाई जा सकती है , जैसे. गले की खराबी में गले पर , छाती के रोगों में छाती पर , स्नायुविक रोगों में रीढ़ की हड्ड्डी पर , जोड़ों के दर्द में जोड़ों पर, आंख के रोगों में आंख के चारों किनारों पर, जननेन्द्रिय रोगों में जननेन्द्रिय पर , कब्ज, बवासीर, दस्त व पेट दर्द में पेट पर, हैजा में पेट व छाती पर , फेफड़ों से खून की उल्टी होने पर छाती पर , ज्वर में पेट व माथे पर , मुहाँसे होने पर चेहरे पर तथा एक्जिमा व सारे शरीर में विष व्याप्त हो जाने पर सारे शरीर पर मिट्टी का लेप चढ़ाया जाना चाहिए।

11.6 **मिट्टी के उपचार में सावधानी**

1. शुद्ध सूखी मिट्टी को कूट पीस कर छान कर ही काम में लें।

2. जो मिट्टी एक बार प्रयोग में आ चुकी हो उसे दोबारा काम में भूल से भी नहीं लाना चाहिए। क्योंकि उसमें रोग के जहरीले पदार्थ व्याप्त हो जाते है। यदि पट्टी वाले कपड़े पर पीव आदि न लगा हो तो उसे साफ करके और सुखाकर फिर.फिर काम में लाया जा सकता है।

3. मिट्टी आँख, कान और नाक में न लगें।

11.7 **मिट्टी उपचार की विधियाँ**

1. सारे बदन पर मिट्टी का लेप या मिट्टी स्नान

पहली विधि: शुद्ध साफ मिट्टी को कपड़छान कर सारे बदन पर रगड़े। फिर 10.20 मिनट धूप में बैठने के तत्पश्चात् पानी से स्नान करलें।

दूसरी विधि: कपड़छान मिट्टी को 8.10 घण्टे पानी में भीगो देते है। फिर गीली मिट्टी को सारे बदन पर लगाकर 30.45 मिनट धूप सेवन करते है। तत्पश्चात् पानी से स्नान करलें। इस स्नान से त्वचा नरम, लचीली एवं कोमल होने के साथ त्वचा के छिद्र खुल जाने से शरीर का विजातीय द्रव्य पसीने के रूप में बाहर निकल जाता है। जिससे त्वचा के अनगिनत रोग दूर हो जाते है। यह स्नान फोड़े.फुन्सियों वाले शरीर के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

उपयोगिता: चर्म रोग , एग्जीमा, सोराइसिस, अम्हौरी, दाद.खाज.खुजली, उच्च रक्त चाप , अवसाद, अनिद्रा, मधुमेह, सिर दर्द, माइग्रेन, जलन, सूजन, तनाव एवं सौन्दर्य प्रसाधन के रूप में लाभदायक है।

2. मिट्टी में बैठना या सोना

विधि: किसी बड़े टब या बैठने.सोने के लिए बनाये गये विशेष खड्डे में शुद्ध साफ मिट्टी को कपड़छान कर 8.10 घण्टे पानी में भीगो देते है। फिर 30.45 मिनट उसमें बैठते है। तत्पश्चात् पानी से स्नान करलें।

उपयोगिता: इससे पाचनांग सशक्त बनते है तथा पुरूषों में पुरूषार्थ बढ़ता और स्त्रियों में यौवन निखरता है। इससे भी त्वचा नरम , लचीली एवं कोमल होने के साथ त्वचा के छिद्र खुल जाने से शरीर का विजातीय द्रव्य पसीन के रूप में बाहर निकल जाता है। जिससे त्वचा के अनगिनत रोग दूर हो जाते है। चर्म रोग , एग्जीमा, अम्हौरी, दाद.खाज.खुजली, उच्च रक्त चाप, अवसाद, अनिद्रा, जलन, सूजन, तनाव एवं सौन्दर्य प्रसाधन के रूप में लाभदायक है।

3. मिट्टी की मालिश

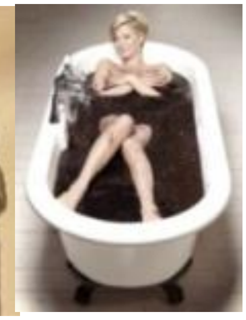

विधि. शुद्ध सूखी चिकनी मिट्टी को कूट पीस कर छान लें। फिर उसमें पानी डालकर 8.10 घण्टे भीगने दें। फिर मिट्टी को मालिश हेतु काम में लें। शरीर के प्रत्येक अंग पर मिट्टी लगाकर बहुत मलते है तत्पश्चात् नहा लेते है।

उपयोगिता: मिट्टी को शरीर पर लगाकर मलने से त्वचा के रंध्र खुल जाते है। जिससे शरीर का अपशिष्ट व विषाक्त मल एवं वायु निकल जाती है।

4. मिट्टी की पट्टी या पुल्टिस

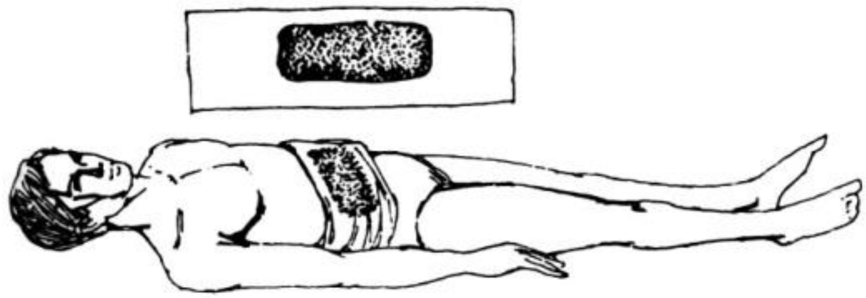

शुद्ध सूखी मिट्टी को कूट पीस कर छान लें। फिर उसमें पानी डालकर 8.10 घण्टे भीगने दें। गुंथे हुए आटे जैसी मिट्टी को उपचार हेतु काम में लें। जिसे आवश्यकतानुसार किसी मोटे कपड़े या ट्रे पर आधा इन्च की मोटाई से फैलावें। तत्पश्चात् उसको रोगग्रस्त अंग (पेडू, पेट, छाती, माथा, आँख, सिर, मेरूदण्ड, गला, पाँव एवं गुदा आदि) पर पट्टी रखे या बांध दें। उसके बाद रोगी को 15 से 30 मिनट आराम से लेटने देना चाहिए। फिर मिट्टी की पट्टी को अलग कर उस जगह को भीगे कपड़े से पौंछ देना चाहिए और उसके बाद उस स्थान को दो.तीन मिनट तक सूखी मालिश कर देनी चाहिए। ताकि उसमें थोड़ी गर्माहट आ जायें।

उपयोगिता: मिट्टी की पट्टी सिर, रीढ़, आँख, कान, चेहरा, छाती, पेट, पेडू, कमर, जननांगों एवं त्वचा पर उपयोग करके उनसे सम्बन्धित समस्त रोगों एवं व्याधियों को ठीक कर देती है। इसके अलावा तीव्र.जीर्ण ज्वर, वायु विकार, अम्लपीत्त, अल्सर, कब्ज, अपच, उल्टी, हैजा, चर्म रोग, जलन, सूजन, प्रदाह, लाली, बवासीर, सिरदर्द, माइग्रेन, घमौरिया.अम्हौरी, नकसीर, लू लगना, कीड़ों का काटना, पेशाब रोग, अनिद्रा, तनाव एवं आँख के रोग में लाभदायक है।

5. गरम मिट्टी की पट्टी

गुंथे हुए आटे जैसी मिट्टी को आग पर गर्म कर गर्म.गर्म घावों तथा मोचादि पर लगाकर ऊनी कपड़ा बांध देते है।

उपयोगिता: स्त्रियों के गर्भाशय सम्बन्धी अनेक रोगों में पेडू पर गरम मिट्टी की पट्टी से बड़ा लाभ होता है। परन्तु गर्भ गिरने की आंशका के समय गर्म पट्टी का इस्तेमाल कभी.भी नहीं करना चाहिए। फोड़े.फुंसी को पकाने , बवासीर के दर्द , वृक्क शोथ, मासिक धर्म न होने , जोड़ों के दर्द , कान दर्द, छाती में जमा बलगम, जकडऩ आदि में विशेष उपयोगी है।

6. मिट्टी पर नंगे पैर टहलना

विधि: जैसे प्रात:काल घास पर नंगे पैर टहलते है। ठीक इसी प्रकार गीली मिट्टी या दलदली मिट्टी में नंगे पैर टहलना चाहिए।

उपयोगिता: नेत्र.ज्योति तीव्र होती है और गुर्दा रोग में लाभ होता है। उच्च रक्त चाप , अनिद्रा एवं तनाव आदि में लाभप्रद है।

7. बालू भक्षण

जिसको पेट की बीमारी हो, कोष्ठबद्धता हो, पाखाना खुलासा न होता हो, वह अगर खाना खाने के बाद ही एक चुटकी महीन बालू या राख दिन में दो.तीन बार निगल लें। तो दूसरे ही दिन पेट की आंते ढ़ीली पड़ जायेंगी और मल आसानी से निकलने लगेगा और अंत में कब्ज दूर हो जायेगी।

11.8 **सारांश**

मिट्टी सर्वसुलभ होने से अब इसकी उपेक्षा न करें , उसमें अनेकानेक पवित्र गुणों के कारण वह रामबाण संजीवनी है। कुम्हार ने तो इसके पवित्र.पवित्र गुणों को देख अनेक आविष्कार कर दिये और सम्पूर्ण स्वास्थ्य को प्राप्त करने के लिए मिट्टी के सरल.सरल और बड़े ही सटीक उपचार बताये। जिससे मिट्टी चिकित्सा पर एक विशाल ग्रंथ का निर्माण किया जा सकता है। प्राकृतिक चिकित्सा में उन्हीं उपचारों को अपनाया जा रहा है। आशा है कि आप अब मिट्टी को उपेक्षा की दृष्टि से नहीं देखेंगे वरन् इसे आत्मसात् करेंगे, लाभान्वित होकर दूसरों को बताने का सफल प्रयास भी करेंगे।

एषां भूतानां पृथ्वी रस: .छांदोग्य उपनिषद्

अर्थात् जिन पांच तत्वों से हमारा शरीर बना है, मिट्टी तत्व उसमें सबसे अधिक प्रधान है।

त्वं देव्यादि वराहेण रसाया: स्थानमिच्छता।

उद्धृतासि नमस्तुभ्यं पाप्मानं में प्रणाशय॥

अर्थात् हे देवि मृत्तिके! प्राणियों को स्थान देने की इच्छा से वराह भगवान ने रसातल से तुम्हारा उद्धार किया था। तुम्हें मेरा नमस्कार है। तुम मेरे पापों को नष्टकर दो।

11.9 बोधात्मक प्रश्न

1. मिट्टी का चिकित्सकीय महत्व एवं इतिहास लिखिए|
2. उपचारक मिट्टी के प्रकार लिखिए|
3. मिट्टी उपचार के सिद्धान्त लिखिए|
4. मिट्टी के उपचार में सावधानी लिखिए|
5. मिट्टी उपचार की विधियाँ बताएँ|

11.11 संदर्भ ग्रंथों की सूची

संदर्भ ग्रंथों की सूची में सम्मिलित ग्रन्थों एवं उनकी सहायक सामग्री का उपयोग हमने इस ग्रन्थ के निर्माण में सहायक के रूप में किया है। हम इन संदर्भित ग्रन्थों, उनके लेखकों, प्रकाशकों एवं संस्थाओं के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

संदर्भ साहित्य	लेखक	संदर्भ साहित्य	लेखक
प्राकृतिक आयुर्विज्ञान	डॉ. राकेश जिन्दल	प्राकृतिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य	डॉ. महेन्द्र कुमार जाजपुरा
वृहद प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. ओ. पी. सक्सेना	Fasting can sour your life	H.N. Shelton
जल चिकित्सा	फादर क्नाइप	जीवनी शक्ति कैसे जगायें	डॉ. चन्द्र दीप सिंह
प्राकृतिक स्वास्थ्य शास्त्र	आचार्य शेषाद्रि स्वामीनाथन	आपका आरोग्य आपके हाथ में	देवेन्द्र वोरा
प्राकृतिक चिकित्सा दर्शन	हेनरी लिंडलार	प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग वैज्ञानिक प्रयोग	डॉ. नागेन्द्र कुमार नीरज
My Water Cure	फादर सेबस्टियन नीप	जीवेम् शरद शतम्	पं. श्री राम शर्मा आचार्य वाङ्मय
'रैशनल हाइड्रो थिरैपी'	जे. एच. केलांग	बिना औषयियों के कायाकल्प	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
न्यू साइनस ऑफ हिलिंग	लुई कूने	निरोग जीवन का राज मार्ग	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
प्राकृतिक जीवन की ओर	श्री एडोल्फ जस्ट	दीर्घ जीवन की प्राप्ति	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
100 वर्ष निरोगी रहिए	माणेक लाल म. पटेल	पंच तत्वों द्वारा सम्पर्ण रोगों का निवारण	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
रोगों की अचूक चिकित्सा	जानकी शरण वर्मा	रोगों की सरल चिकित्सा	विट्ठलदास मोदी
स्वास्थ्य के सोपान	नरूपमल सुराणा	जीने की कला	विट्ठलदास मोदी
आरोग्य की कुंजी	राष्ट्रपिता महात्मा गाी	आरोग्य प्रकाश	वैद्यराज पं. रामनारायण शर्मा
कुदरती चिकित्सा	राष्ट्रपिता महात्मा गाी	मौलिक चिकित्सा कौन सी?	डॉ. चंचलमल चोरडिया
सरल प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. लक्ष्मी नारायण शर्मा	100 वर्ष कैसे जीयें	आचार्य श्याम सुन्दर सुमन

इकाई – 12

चुम्बक चिकित्सा, गंध चिकित्सा एवं कल्प चिकित्सा

इकाई की रूपरेखा

12.1. उद्देश्य

12.2. प्रस्तावना

12.3 चुम्बकीय महत्व एवं इतिहास

12.4 चुम्बक के प्रकार

12.5 चुम्बकीय ध्रुवों के गुण

12.6 चुम्बकीय चिकित्सा के प्रयोग

12.7 चुम्बकीय चिकित्सा से लाभ

12.8 चुम्बक प्रयोग में सावधानी

12.9 गंध या सुगंध चिकित्सा

12.10 कल्प चिकित्सा

12.11 सारांश

12.12 बोधात्मक प्रश्न

12.13 संदर्भ ग्रंथ

12.1 उद्देश्य

- चुम्बकीय महत्व एवं इतिहास क्या है
- चुम्बकीय ध्रुवों के गुण कौन.कौन से है
- चुम्बकीय चिकित्सा के प्रयोग कैसे तथा क्या.क्या लाभ है
- गंध चिकित्सा क्या है
- दुग्ध.कल्प कैसे होता है तथा किन रोगों में उपयोगी है।

उपरोक्त समस्त जिज्ञासाओं का उत्तर पाना ही इस अध्याय का उद्देश्य है।

12.2 प्रस्तावना

परिचय

प्रकृति की शक्ति ब्रह्माण्ड़ की हर कोने.कोने तक फैली हुई है अर्थात् ब्रह्माण्ड़ की हर वस्तु में वह शक्ति मौजूद है। ग्रहों की बात करें तो उनमें भी यह शक्ति है , जिसे गुरूत्वबल या चुम्बकत्व के नाम से जानते है , ब्रह्माण्ड़ के सभी ग्रह इसी शक्ति के कारण एक.दूसरे से जुड़े नियत दूरी पर जुड़े होकर अपने आप में अपनी.अपनी जगह में व्यवस्थित है। इनका व्यवस्थित होने का एक विशेष कारण दो विपरित ध्रुवों का पाया जाना। ये ध्रुव एक.दूसरे के विपरित होते हुए भी अलौकिक गुणों के भण्डार है। मनुष्य का शरीर भी अपने आप में एक चुम्बक के समान है। उसका सिर उत्तरी ध्रुव और पैर दक्षिणी ध्रुव है। चुम्बक का प्रभाव हमारे रक्त, माँसपेशियों, स्नायुओं एवं अंत:स्रावी ग्रंथियों पर पड़ता है।

12.3 चुम्बकीय महत्व एवं इतिहास

हमारे ऋषि.मुनि इसके प्रभावशाली गुणों से भलीभाँति परिचित थे। वैदिक काल में चुम्बक को ‘अश्म या अश्मन या आशमा ’ के नाम से पहचाते थे। इसका उपयोग स्त्रियों में अति रक्तस्राव में करते थे। हमारे ऋषि.मुनियों का ज्ञान सिर्फ अश्मन तक ही सीमित नहीं था। बल्कि वे तो पूरे ब्रह्माण्ड के चुम्बकीय क्षेत्र से भलीभाँति परिचित होकर अपने स्वास्थ्य को सुधार लिया था। उन्होंने इसके लिए पूरे ब्रह्माण्ड का अध्ययन तो किया होगा ही क्योंकि उसके बिना हिन्दी मास व तिथियों की गणितीय सूत्र का निर्माण करना असम्भव है। उन्होंने अमावस्या व पूर्णिमा को व्रत रखने का नियम बनाया। क्योंकि इस दिन क्रमश: सूर्य एवं चन्द्रमा का नकारात्मक प्रभाव सर्वाधिक पड़ता है। हमारे स्वास्थ्य में कोई गड़बड़ न हो इसके लिए पेट में कोई ठोस भोजन नहीं होना चाहिए। अन्यथा उनका सीधा नकारात्मक प्रभाव हमारे शरीर पर पड़ेगा। जिससे मन व मस्तिष्क में तीव्र प्रतिक्रिया होकर नकारात्मक प्रभाव बढ़ेगा। व्रत करने और पेट खाली रखने से उनके चुम्बकीय प्रभाव से हम बच जायेंगे। भारत ही नहीं मिश्र में पिरामिड का निर्माण भी चुम्बकीय प्रभाव को नष्ट करने के लिए ही है। जिनमें रखें शव सडऩे.गलने व नष्ट होने से बचे रहते है। मिश्र में उस समय राजपरिवार व धनवान लोग चुम्बकीय प्रभाव के लिए हाथ में छड़ी और सिर व गले में ताबीज धारण करते थे।

प्राचीन समय में ही एशिया माइनर में मैग्नीशिया के अन्दर कुछ काले पत्थरों को ‘मैग्रेट या चुम्बक’ के नाम से जाना गया। इससे हजारों वर्ष पूर्व लौहे को खोज कर उपयोग में भी लाया जा रहा था। इन पत्थरों में लोहे को अपनी ओर आकर्षित करने की क्षमता होती है। फिर जब इसके सिरों को ध्रुवों के रूप में समझ लिया तो वे लोग इसका उपयोग घने जंगलों में, समुद्रों में दिशा.ज्ञान के लिए करने लगे।

चुम्बक

यह एक ऐसी वस्तु या पदार्थ है जो अदृश्य चुम्बकीय क्षेत्र उत्पन्न करता है और उसके आस.पास मौजूद चुम्बकीय पदार्थ को अपनी ओर खींच लेने या आकर्षित करने की शक्ति होती है तथा अन्य दूसरी चुम्बकों को आकर्षित या प्रतिकर्षित करने का गुण रखती हो। किसी बिन्दु पर चुम्बकीय क्षेत्र की शक्ति या तीव्रता को 'ओरस्टेड या गौस ' में मापा जाता है। उपचार के लिए 200 से 1000 गौस पॉवर की चुम्बक का उपयोग किया जाता है।

12.4 चुम्बक के प्रकार

चुम्बक के निम्न दो प्रकार है.

1. स्थाई चुम्बक : यह एक बार बनने पर कई वर्षो तक शक्ति के रूप में एक सी बनी रहती है। इसके कितने भी टुकड़े कर दो हर टुकड़े में दो ध्रुव होगें और एक स्वतंत्र चुम्बक का काम करेंगे। इस चुम्बक को बीच में से धागे से बाँधकर लटकाने पर उसका एक ध्रुव उत्तर की ओर और दूसरा ध्रुव दक्षिण की ओर होगा। यह चुम्बक लोहे से आकर्षित होकर चिपक जाते है। उनके चिपकने का आकर्षण लोहे के भार व चुम्बक की शक्ति पर निर्भर करता है। दोनों में से जो ज्यादा प्रभावशाली होगी। वह दूसरे को अपनी ओर खिंच लेगी। यह चुम्बक खनिज धातु है जो एल्युमीनियम , निकल, लोहा एवं कोबाल्ट से मिलकर बनी होती है, जिसे संयुक्तरूप से नीको कहते है।

2. अस्थाई या कृत्रिम चुम्बक : इसे विद्युत चुम्बक भी कहते है। बिजली प्रवाहित करने पर चुम्बक का काम करती है। जैसे. गाडिय़ों में चुम्बकीय ब्रेक , ऐम्पलीफायर, आर्मेचर, घंटियों, रेडियों, दूरसंचार, ट्राँसफार्मर आदि।

उक्त दोनों ही प्रकार की चुम्बकों से चुम्बकीय चिकित्सा की जाती है। ये अनेक आकार.प्रकार एवं शक्ति की उपचारित चुम्बकें होती है।

12.5 चुम्बकीय ध्रुवों के गुण

क्र.	गुण	उत्तरी ध्रुव	दक्षिणी ध्रुव
1.	तासीर	ठण्ड़ा, शीतल	गर्म, उष्ण
2.	अणु शक्ति	प्रोटोन	इलेक्ट्रोन
3.	आयन	धनात्मक	ऋणात्मक
4.	परिणाम	प्रतिक्रियात्मक	जीवन–शक्ति वर्धक होकर क्रियात्मक
5.	क्रिया	कीटाणु व जीवाणुओं के विकास को रोकता	रक्त संचार तेज करके निर्जीव कोशिकाओं को पुनर्जीवित करता है।
6.	समस्या मिटाता	घाव भरने, बैक्टीरिया नष्ट	दर्द व सूजन
7.	रोग मिटाता	उच्च रक्तचाप, चर्म रोग, कान व दाँत दर्द,	निम्न रक्तचाप, कमर दर्द, जोड़ो का दर्द,

		कोहनी व कंधों का दर्द, चेहरे पर फोड़े-फूंसी	पेट के रोग, गैस, कमजोरी
8.	शरीर के	ऊपरी भाग पर प्रयोग	निचले भाग पर प्रयोग
9.	शरीर के	दायें हिस्से पर प्रयोग	बायें हिस्से पर प्रयोग
10.	शरीर के	दायें हाथ	बायें पैर
11.	शरीर के	बायें हाथ	बायें पैर
12.	शरीर के	दायें हाथ	दायें पैर
13.	शरीर के	दायें पैर	बायें पैर
14.	नाभि के ऊपर व्याधि	दायें हथेली पर प्रयोग	बायें हथेली पर प्रयोग
15.	नाभि के नीचे व्याधि	दायें तलवें पर प्रयोग	बायें तलवें पर प्रयोग

12.6 **चुम्बकीय चिकित्सा के प्रयोग**

यह औषधि विहीन चिकित्सा है , जो प्रकृति ने हमें उपहार में दी है। चुम्बक रोग निवारण के लिए एक जादू की छड़ी है। जिसका सही विधि से उपयोग करके शरीर को रोगों से छुटकारा दिला सकते है। इसका तुरन्त प्रभाव हमारे शरीर में गतिमान कणों, जीवद्रव्य, ग्रंथियों, रक्त एवं तंत्रिकाओं आदि पर तुरन्त पड़ता है। यदि हम चुम्बकीय क्षेत्र की सही दिशा में रहते है तो हम स्वस्थ बने रहते है। क्योंकि शरीर की जैविक विद्युत.शक्ति संतुलित रहती है। चाहे जाने.अनजाने में जितना भी हमसे चुम्बकीय क्षेत्र का दुरूपयोग होता है तो हमारे शरीर की जैविक विद्युत.शक्ति असंतुलित हो जाती है। जिससे उतना ही हमारा स्वास्थ्य खतरे में पड़ता है। स्वस्थ रहने के लिए निम्न चुम्बकीय नियमों का पालन व उपयोग करना चाहिए.

1. लेटने की दिशा : सदैव निरोगी रहने के लिए चुम्बकीय नियमों का विशेष ध्यान में रखते हुए बिस्तर पर लेना चाहिए। हमारा सिर जो उत्तरी ध्रुव माना जाता है। इसलिए हमें सदैव ही दक्षिण दिशा में सिर रखते हुए लेटना चाहिए या फिर पूर्व दिशा में। अन्यथा आप लेट तो जायेगें , परन्तु समस्त शारीरिक एवं मानसिक तंत्रों की क्रियाएँ अव्यवस्थित हो जायेगी। जिससे आपके स्वास्थ्य में दिनों दिन गिरावट आएगी।

2. खाना खाने की दिशा : खाना हमेशा आसन पर बैठकर ही खाना चाहिए। बैठते समय यह विशेषकर ध्यान रखे कि आपका आपका चेहरा उत्तर या पूर्व दिशा में रहें।

3. खाना पकाने का पात्र : खाना पकाने का पात्र मिट्टी या लोहे का होना चाहिए। इनमें चुम्बकीय गुण विद्यमान होने से शरीर में कभी.भी लौह तत्व की कमी नहीं होती है।

4. चुम्बकीय पानी : रोगग्रस्त व्यक्ति चुम्बकीय पानी तैयार कर पीना चाहिए और रोगग्रस्त अंग पर लगाना चाहिए। चुम्बकीय पानी तैयार करने के लिए लकड़ी के पाटे पर दो चुम्बक दूर.दूर रखें, जिसमें से एक का ऊपरी सिरा उत्तरी ध्रुव एवं दूसरे का ऊपरी सिरा दक्षिणी ध्रुव हो , दोनों चुम्बक पर दो काँच की बोतल में पानी भर कर कम से कम 8 घण्टे तक चार्ज होने के बाद दोनों बोतलों से समान मात्रा में लगभग

15.50 ग्राम तक पानी लेकर दिन में 3.7 बार पीयें। इस पानी का प्रभाव एवं औषधिय गुण ठीक वैसा ही होता है जैसा रंगीन काँच की बोतलों में सूर्यतप्त पानी का।

5. मृत शरीर को लेटाने की दिशा : मृत व्यक्ति के जीवन को सम्मान व आत्मा को शांति मिले और यदि वह पुन: किसी जीव.यौनि में जन्म लेवें तो उसे किसी कष्ट का सामना न करना पड़े। इस धारणा को सिद्ध करने के लिए उस मृत शरीर का सिर उत्तर दिशा में रखना चाहिए।

12.7 **चुम्बकीय चिकित्सा से लाभ**

इसका उपयोग एक्जीमा , एलर्जी, दमा, रक्तचाप, कब्ज, मधुमेह, दस्त, अतिसार, मासिक कष्टार्तव , रूक.रूक कर पेशाब , मिर्गी, आफरा, गलगण्ड़, हर्निया, कोलेस्ट्रोल, जलीय वृषण, छोटे कद, संक्रामण रोग, अनिद्रा, रीढ़ के दर्द, पिताशय व गुर्दे की पथरी , सफेद दाग, प्रदर रोग, सिर दर्द, कान दर्द, कंधों के दर्द, कोहनी दर्द, नितम्ब संधि के दर्द , कमर दर्द, घुटने दर्द, टखने की संधि के दर्द , पाँव के पंजो और एडिय़ों के दर्द, अति रक्तस्त्राव, मोटापा, लकवा, दाँत दर्द, पायरिया, आमवात, पुरूष रोगों, सायनस, गर्दन की अकडऩ, दिल की धडक़न बढऩे एवं टॉन्सिल आदि रोगों को जड़ से ही ठीक कर देता है।

चुम्बक प्रयोग का उचित समय

क्र.	**समस्या**	**चुम्बक प्रयोग का समय**	**क्र.**	**समस्या**	**चुम्बक प्रयोग का समय**
1.	पेट की सफाई के लिए	सुबह	4.	पित्त सम्बन्धित रोग में	दोपहर
2.	दर्द व थकान दूर करने के लिए	शाम या रात्रि	5.	वात सम्बन्धित रोग में	शाम या रात्रि
3.	कफ सम्बन्धित रोग में	सुबह	6.	वायु विकार	शाम या रात्रि

12.8 **चुम्बक प्रयोग में सावधानी**

1. चुम्बकीय प्रयोग के बाद ठण्ड़ी चीजें न खायें।

2. भोजन करने के दो घंटे तक चुम्बकीय प्रयोग न करें।

3. गर्भिणी या बच्चों पर शक्तिशाली चुम्बक का प्रयोग न करें।

4. बच्चों व कमजोर रोगियों को चुम्बकीय जल की चिकित्सा ही देवें।

5. चुम्बकीय प्रयोग के समय रोगी के शरीर पर पहनी हुई कोई धातु की वस्तु न हो।

6. चुम्बक का प्रयोग व रख.रखाव बड़ी ही सावधानी से करना चाहिए।

7. चुम्बक को लकड़ी की पेटी में ही रखना चाहिए।

8. चुम्बकीय चिकित्सा के बाद दो घण्टे तक स्नान नहीं करना चाहिए।

9. चुम्बक को गीला होने से बचाये नहीं तो जंग लग सकता है।

10. उपचार के दौरान चुम्बक स्थिर रहनी चाहिए।

11. रोगी व चुम्बक के बीच में पतला सूती कपड़ा रखें।

12. बड़े व शक्तिशाली चुम्बकों से सिर्फ सुबह.शाम 10.25 मिनट तक उपचार देना चाहिए। छोटी चुम्बक का बेल्ट पूरे दिन बाँधा जा सकता है।

13. चुम्बक का प्रयोग आँख, नाक,कान, हृदय एवं मस्तिष्क के रोगों में नहीं करना चाहिए।

14. चुम्बकीय चिकित्सा लेने वाला रोगी लकड़ी के पाट पर लेटकर या कुर्सी पर बैठकर उपचार लेवें।

12.9 **गंध या सुगंध चिकित्सा**

परिचय :

मिट्टी तत्व (पृथ्वी) में गंध (खुश्बू) का प्रकट रूप पाया जाता है , अन्य सभी तत्वों में गंध अप्रकट (गुप्त) रूप में रहती है। संसार में अनेक वनस्पतियों में गंध पायी जाती है। जो किसी के फूल में , फल में, पत्तियों में, तनों में, शाखाओं में, जड़ों में, गोंद में, काष्ठ में या सम्पूर्ण पौधें में पायी जाती है। उनमें से कुछ मन को प्रिय लगती है और कुछ नहीं। मन को प्रिय लगने वाली वनस्पतियों को गंध चिकित्सा में ज्यादा स्थान दिया गया है, जैसे. गुलाब, मोगरा, तुलसी, गेंदा, नीलगिरी, मरवा, गुग्गल आदि। लेकिन मन को अप्रिय लगने वाली वनस्पतियों का चिकित्सकीय महत्व भी कम नहीं है , उनको भी महत्व की दृष्टि से गंध चिकित्सा में जैसे.तैसे काम में लिया जाता है, जैसे. नीम, अजवायन, मिर्च आदि। ये सभी स्वास्थ्यवर्धक है, इनमें से कोई कृमिनाशक तो कोई बैक्टीरियानाशक, फंगलनाशक आदि.आदि।

यदि ताजा अवस्था में आवश्यक वनस्पति उपलब्ध हो जाये तो गंध चिकित्सा का उपचार ले लिया जाता है। लेकिन मौसमानुसार इनकी उपलब्धता सभी जगह हो या न हो , इस चिकित्सा की कब , किसे आवश्यकता पड़े तो सुविधानुसार विशेषज्ञों ने इनका अर्क या तेल या पाउडर या पेस्ट बनाकर भी उपयोग में लिया जाता है, फिर तो कोई भी जब चाहों तब उपचार ले सकता है। उपचार की बड़ी ही सरल विधि है. कुछ वनस्पतियाँ गुनगुने जल में मिलाकर उपचार लिया जाता है तो कुछ को उबालकर तथा कुछ वनस्पतियों को जलाकर तो कुछ को अंगारों पर धूँनी लगाकर उपचार का मज़ा लिया जाता है। इस प्राकृतिक चिकित्सा को घ्राण शक्ति (सूँघने की शक्ति) द्वारा रोगोपचार कर रोगी को स्वस्थ किया जाता है।

इतिहास :

प्राचीन काल से ही सुगन्धित पदार्थो एवं उनसे बनाये गये इत्र का उपयोग किया जा रहा है। विदेशी एवं वैदिक संस्कृति एवं सभ्यताओं में इसके अनेक प्रमाण मिलते है, जिनका उपयोग आज भी किया जा रहा है। 'अग्निपुराण व श्री वराह पुराण' में सुगंध का बहुत उल्लेख किया गया है। वैदिक संस्कृति ने तो सुगंध को 'प्राण तत्व' की उपाधि दे दी तथा इसे ऊर्ध्वगामी चेतना का प्रतीक माना जाता है। 'सोम' को सुगंध का पर्यायवाची बताया है, जो एक देवी.शक्ति का रूप है। देवी.देवताओं के स्थान को पवित्र बनाने के लिए सुगंध का बहुत बड़ा हिस्सा या महत्व है, जैसे. मन्दिरों में पुष्प, मालाएँ, इत्र, धूप, अगरबत्ती, दीपक, हवन, चन्दन, कुमकुम, सिंदूर, गंगा जल एवं तुलसी आदि का उपयोग किया जाता है। हमारे देव व ऋषियों ने तो गाँव.शहरों को ही ऐसे विकसित किये कि उनके नाम भी सुंगध पर ही रख दिये , जैसे. पुष्पावर्ती, कुसुमपुर आदि। गर्मियों में खस.खस घास का इत्र और वर्षा ऋतु में केवड़ा व मोगरा के इत्र के

प्रयोग का बहुत वर्णन मिलता है। मिश्र के पिरामिड़ों में मिले सुगन्धित इत्र से स्पष्ट हो जाता है कि उस समय सुगंध शास्त्र को विशेष महत्व दिया जाता था।

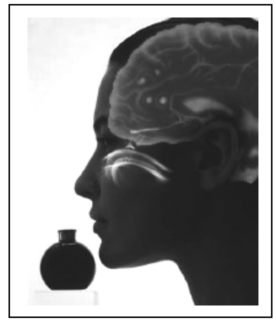

यह भी वास्तविक सत्य है कि खुशियों से भरे जीवन में खुशबू की पहचान होती है। खुशियों से भरी महक के सामने खुशबू भी हल्की लगती है। इसलिए अनुभवियों ने कहा है कि सदा मुस्कुराते रहो, यही जीवन की खुशबू है।

सुगंध का अनुभव :

अच्छी गंध को सुगंध , महक, खुशबू, एरोमा आदि नामों से भी जानते है तथा बुरी गंध को दुर्गंध , बदबू कहा जाता है। दोनों के गुणों में रात.दिन का अन्तर है। एक मन को शांत करती है तो दूसरी अशांत। ब्रह्माण्ड की समस्त वस्तुओं में प्रत्यक्ष.अप्रत्यक्ष रूप से गंध समाहित है। प्रत्येक वस्तु की गंध भी अलग.अलग होती है। यहाँ तक एक ही माँ से जन्में जुड़वा बच्चों की गंध भी अलग.अलग होती है। गंध हवा में तैरने वाले अदृश्य बारीक कण होते है। जो वस्तु विशेष से निकलते रहते है , फिर हमारी नाक में प्रवेश करने पर गंध का अनुभव होता है।

सुगंध हमारी घ्राणेन्द्रिय (नाक) में स्थित ऑल फैक्ट्री एपीथीलियम नामक स्थान पर 'ट्राइजेमिनल' एवं 'ऑल फैक्ट्री' नामक दो संवेदनशील तंत्रिकाओं की मदद से मस्तिष्क में लिम्बिक नामक स्थान पर स्थित घ्राण केन्द्र तक पहुँचती है। लिम्बिक में सुगंध का अनुभव , भावनाओं पर नियंत्रण, भूख लगने का अनुभव आदि कार्य होते है। घ्राण केन्द्र में उपस्थित रिसेप्टर्स न्यूरॉन गंध की पहचान करते है।

यह घ्राण केन्द्र शरीर के मोटर तंत्र से गंध के प्रभाव को पूरे शरीर के अंग.प्रत्यंगों में प्रवाहित करता है। शरीर में चुस्ती.फुर्ती आ जाती है। मस्तिष्क सक्रिय हो जाता है। स्मरण शक्ति बढ़ती है। अल्जाइमर्स डिज़ीज के खतरे कम हो जाते है। सुगंध का ग्रंथियों पर विशेष प्रभाव देखा गया है। शरीर की सभी ग्रंथियाँ तत्काल पूरी क्षमता से कार्य करना शुरू कर देती है। कभी.कभी तो मुख की ग्रंथि में तेजी से लार बन कर निकलने का हमें आभास भी होता है। अलग.अलग सुगंधों का प्रभाव शरीर व मन पर अलग.अलग होता है। सुँघने की क्षमता जिसकी अच्छी है उस पर सुगंध चिकित्सा शीघ्र ही अच्छा परिणाम देती है , जबकि धूम्रपान करने वाले व्यक्तियों के मस्तिष्क में स्थित घ्राण केन्द्र प्रदूषित होने के कारण सुगंध चिकित्सा उन्हें विलम्ब से लाभ प्रदान करती है।

मानव शरीर में गंध स्वेदी ग्रंथियों से रिसने वाला तरल द्रव है , जिसे ग्रहण करने वाले विभिन्न जाती के बैक्टीरिया शरीर पर मौजूद होते है। तरल द्रव एवं बैक्टीरिया से एक विशेष प्रकार की गंध बनती है। यदि एक ही प्रकार के इत्र का प्रयोग दो अलग.अलग शरीर पर किया जाये तो भी उस इत्र की बैक्टीरिया के साथ हुई रासायनिक क्रिया के बाद अलग.अलग गंध महसूस होगी। पैदायशी बच्चों में गंध सूँघने की शक्ति का विकास हो जाता है। जिससे वह अपनी माँ के दूध व कपड़ों की गंध को तत्काल पहचान लेता और रोता हुआ चुप हो जाता है।

सुगंधित वनस्पति एवं अन्य पदार्थ की उपयोगिता:

क्र.	वनस्पति एवं अन्य पदार्थ	उपयोग
1.	गुडहल	शरीर की जलन, मूत्रनली के रोग, वीर्य की कमजोरी, बवासीर, गर्भ व यौनि के रोग, गर्भधारण, रक्त प्रदर, मासिक समस्या, कफ व पित्त विकार, मस्तिष्क दौर्बल्य, दिमाग की गर्मी, स्मरण शक्ति, उन्माद, कामोत्तेजक, प्रमेह, सूजाक, रक्तातिसार, रक्तार्श, रक्तपित्त, ह्रदय रोग, दस्त, बाल की समस्या, गंजापन, छाले
2.	चमेली	खिलाड़ियों के लिए, मुँह के छालों, रक्त बवासीर, मासिक समस्या, नपुंसकता, खुजली, रक्त विकार, स्तनों में दूध की वृद्धि, सिरदर्द, तनाव, नेत्र रोग, त्वचा रोग, त्वचा के कटने व जलने, अनिद्रा, नाक की फुंसियों, दाँत दर्द, पायरिया, घाव,
3.	केसर	कामोत्तेजक, चेचक, छोटी माता, आँत्रज्वर, त्रिदोष नाशक, तनाव
4.	चम्पा	कुष्ठ रोग, घाव को धोने, ज्वर, खुजली
5.	पुदीना, पिपरमिन्ट	खिलाड़ियों के लिए, गर्भावस्था में उल्टी, पाचन सम्बन्धी व्याधी
6.	मौलसिरी (बकुल)	कोमल त्वचा के लिए, दाँतों की मजबूती, बाँझपन
7.	जुही	रक्तविकार, ह्रदय विकार, दँत रोग, पित्तनाशक, अम्लपित्त, पेट के घाव एवं छालें
8.	आक	पीलिया, ज्वर, मलेरिया, खाँसी, दमा, भूख बढ़ाने
9.	मोगरा (मोतिया)	कान दर्द, स्तनों से दूध सूखकर सूजन दूर
10.	खस घास	कामोत्तेजक, लू लगने, अधिक गर्मी, सिरदर्द
11.	गैंदा	बवासीर, श्वेत प्रदर, दाद, झुर्रियाँ, सूखी खाँसी, दमा, संधिवात, मासिक दद, मुँहासों, फोड़े–फूँसियों, त्वचा रोग, चोट एवं मोच के दर्द
12.	चन्दन	छोटे बाल, शुष्क त्वचा, काले दाग, फोड़े–फूँसियों, खुजली, एक्जिमा, घमौरियाँ, सनबर्न, पसीने, दुर्गंध, हाथ–पैरों की जलन, मूत्राशय रोग, पेशाब की जलन, स्त्रियों के रजोनिवृत्ति की समस्या, उल्टी, खाँसी, सुजाक, कमर दर्द, लू लगने
13.	मेहन्दी	घुटना दर्द, बालों को रंगने, व्रणशोधन, दाहप्रशमन, वेदनास्थापन, हाथ–पैरों में पसीना व जलन
14.	गुलाब एवं गुलकंद	कामोत्तेजक, कब्ज, एसीडिटी, दमा, लू लगने, पित्ताशय की पथरी के दर्द, मासिक समस्या, श्वेत प्रदर, त्वचा रोग, सनबर्न, पसीना, घमौरियाँ, दुर्गंध, मुँह के छालों, दाद, लू लगने, स्तन दर्द व सूजन,

		अनिद्रा, थकान, हाथ–पैरों में जलन, पायरिया, पित्ती, दिल की धड़कन बढ़ने, नकसीर, पेट व आँखों की जलन, बवासीर, अधिक प्यास, पेशाब जलन, सिरदर्द, जी मिचलाना, कमजोर हृदय, यकृत रोग, स्मरण शक्ति, नेत्ररोग, शारीरिक दर्द, चेहरे की सफाई
15.	केवड़ा	कामोत्तेजक, गठिया, सिरदर्द, ज्वर
16.	कस्तुरी (नर हिरण की ग्रंथि)	कामोत्तेजक, उन्माद, गर्मी लाने के लिए
17.	हारसिंगार (पारिजात)	गठिया, चेहरे की सुन्दरता
18.	अजवायन	गैस, पेट दर्द, पाचन सम्बन्धी रोग
19.	नीम	रक्तविकार, दाद, फोड़े–फूँसियों, त्वचा रोग
20.	कमल	कामोत्तेजक, कब्ज, स्वप्नदोष
21.	नीम्बू	बालों में रूसी, ताज़गी, दमा, थकान, मस्से
22.	सौंफ	पेट के रोग, शिशुओं के दाँत निकालने,
23.	अंगूर	युवा या जवान बने रहने
24.	सफेद गुलाब	कामोत्तेजक, संतानोत्पति
25.	अनार	दमा, खाँसी, मूत्र जलन, प्रमेह, रक्तविकार, रक्तपित्त, मुँह में छाले
26.	पलाश (ढ़ाक)	पथरी का दद, बंद पेशाब लाने के लिए
27.	बबूल	सिरदर्द, दाँत का गलना
28.	दालचीनी	गठिया
29.	जीरा	अनिद्रा
30.	नागकेसर	गर्भधारण, बवासीर
31.	तुलसी	स्मरण शक्ति, अनिद्रा
32.	लौंग	दँत रोग
33.	लेमनग्रास	शारीरिक दुर्बलता
34.	धनिया	स्मरण शक्ति
35.	कालीमिर्च	स्मरण शक्ति
36.	करी पत्ता	छोटे बाल
37.	जटामासी	छोटे बाल

38.	सदाबहार	कैंसर, मधुमेह
39.	शंखपुष्पी	स्मरण शक्ति,
40.	माधवी	गठिया, चर्म रोग
41.	मौसमी, संतरा	ताज़गी, दमा
42.	भिगी हुई मिट्टी	नकसीर
43.	नारियल	दमा
44.	खजूर	दमा
45.	मुस्कदाना (कस्तुरी)	उन्माद
46.	रात रानी	अनिद्रा
47.	सूरजमुखी	कोलेस्ट्रॉल

उपरोक्त सुगंधित पदार्थो के अलावा शीशम्, आम, इलायची, रतनजोत, सरसों एवं देशी घी आदि।

सुगंधित द्रव (इत्र) बनाना :

सुगंधित द्रव बनाने की निम्न जटील प्रक्रिया है.

1. जलीय उध्र्वपातन **(Hydro distilation)** : तुलसी, पुदिना, गुलाब एवं केवड़ा आदि का आसवन किया जाता है।

2. भाप उध्र्वपातन **(Steam distilation)** : खस, चन्दन एवं नागरमोथा आदि का आसवन किया जाता है।

3. द्रावक निस्सरण **(Salvent extration)** : नाजुक फूल जैसे. बेला, चमेली एवं रजनीगंधा आदि का निस्सरण किया जाता है।

4. पुष्पाच्छादन **(Anfluorese)** : नाजुक फूलों का आच्छादन किया जाता है।

5. निचोडऩ **(Expression)** : नीम्बू, संतरा एवं मौसमी के छिलको से गंध तेल बनाया जाता है।

उध्र्वपातन विधि से तैयार किया गया सुगंधित तेल Essential oil) सूँघने, मालिश करने, रूम.कार फ्रेशनर आदि के काम आता है।

सुगंध का महत्व या लाभ:

1. नकारात्मक भावनाएँ या वातावरण समस्या, व्याधियाँ, रोग पैदा करती है, सुगंध सकारात्मक भावनाएँ या वातावरण पैदा कर आरोग्य प्रदान करती है।
2. मन और मस्तिष्क को संतुलित करती है।
3. तनाव दूर कर मन को प्रसन्नकरती है।

4. मन:स्थिति या मूड को ठीक करती है।

5. सुगंध में रोगनाशक शक्ति होती है।

6. वातावरण स्वच्छ व रोगाणु मुक्त होता है।

7. सुगंधित पुष्पों एवं उसकी माला, गुलदस्ता से मान.सम्मान और स्वागत किया जाता है।

8. मधुमक्खियाँ पुष्पों की गंध व मकरन्द से पौष्टिक, स्वास्थ्यवर्धक एवं स्वादिष्ट शहद बनाती है।

9. सुगंधित पुष्प (फूल) को धारण करने से सौंदर्य, कांति, शोभा और ओज बढ़ता है।

10. नींद की समस्या में काम आता है।

11. दिमाग की नसों को राहत देती है और स्नायुमण्डल भी मजबूत होता है।

12. कटने, जलने और रगड़ से बने घाव की कोशिकाओं का पुनरूत्पादन कर ठीक करने का काम करती है।

13. जोड़ों, हड्डियों एवं माँसपेशियों की सूजन, दर्द को ठीक करने के काम आता है।

14. मोच और दर्द से छुटकारा मिलता है।

15. घर.दफ्तर में सकारात्मक माहौल बनाने में काम आता है।

16. कांति, बलवर्धक एवं पुष्टिकारक कामों में उपयोगी है।

17. स्नान के पानी में चमेली, गुलाब, संतरे के छिलकों का उपयोग किया जाता है।

18. कार्यक्षमता एवं आत्मविश्वास बढ़ता है।

19. युवा एवं जवान बने रहते है।

20. 'गजरा' नामक पुष्पाभूषण विवाहित महिलाओं के लिए सिंदूर व मंगलसूत्र के तुल्य है।

सुगंधित तेल निम्न तीन प्रकार से काम में लिया जाता है.

1. रात के समय (बेस नोट) : दिमाग की नसों को शांत करता है, जिससे व्यक्ति आराम महसूस करता है।

2. सुबह के समय (टॉप नोट) : व्यक्ति दिन भर ऊर्जावान रहता है।

3. किसी भी समय (मिडिल नोट) : आराम देता है।

सुगंधित द्रव (इत्र) का उपयोग कैसे करें.

क्र.	उपयोग करें	उपयोग न करें
1.	नहाने के बाद	हर किसी समय
2.	नाड़ी स्थल जैसे– बगल, कलाइयों, कुहनियों के मोड़, घुटनों के पीछे, कान के पीछे, कमर छाती के मध्य भाग में लगाए।	जीभ, होठों, दाँतों, नाक, कान, आँखों एवं गुप्तांगों पर न लगाए।

3.	शरीर पर उपयोग करें	जले-कटे, घाव, फोड़ा-फुंसी, मुँहासों पर न लगाए।
4.	सर्दियों में तेज खुशबू वाले इत्र का उपयोग करें।	शिशु व बच्चों पर उपयोग न करें।
5.	गर्मीयों में हल्की खुशबू वाले इत्र का उपयोग करें।	गर्भवती महिलाएँ उपयोग न करें।
6.	कस्तुरी का उपयोग सर्दी में करें।	सर्दी, जुकाम, सिरदर्द एवं बुखार में उपयोग न करें।
7.	चन्दन का उपयोग गर्मी में करें।	आभूषणों पर उपयोग न करें, अन्यथा वे काले हो जायेंगे।
8.		कपड़ों पर उपयोग न करें, अन्यथा दाग-धब्बें बन जायेंगे।
9.		कस्तुरी का उपयोग गर्मी में न करें, अन्यथा नकसीर आयेगा।

सुगंध से हानियाँ :

1. सभी विधि द्वारा तैयार किसे गये सुगंधित तेल या द्रव की प्रकृति अम्लीय होती है , इनके प्रयोग में विशेष सावधानी रखने की आवश्यकता होती है। अन्यथा त्वचा जल सकती है।

2. जब सिरदर्द, मानसिक तनाव एवं उलझन महसूस हो रही हो तो सुगंध का उपयोग बंद करना चाहिए।

3. सुगंध के लगातार ज्यादा उपयोग से बचना चाहिए।

12.10 कल्प चिकित्सा

क्र.	कल्प	स्त्रोत	समस्या या रोग
1.	दुग.कल्प	देशी गाय	अम्लपित, गेस्ट्रीक अल्सर, सिरदर्द, माइग्रेन।
2.	मठ्ठा.कल्प	देशी गाय	खूनी आँव, पुरानी आँव, संग्रहणी, पेचिस, डिसेन्ट्री, अल्सर लेटिव कोलाइटिय, बड़ी आँत की सूजन
3.	रसाहार	मौसमानुसार फल.तरकारियाँ	विशेषकर कमजोर रोगी, समस्त रोगों में।

4.	फलाहार	मौसमानुसार फल	समस्त रोगों में।
5.	गाजर कल्प		रक्त शुद्धि, चर्म रोग, कमजोरी, स्त्री व पुरूषों के रोग
6.	खरबूजा कल्प		पेट शोधन, स्त्री व पुरूषों के रोग
7.	आम्र कल्प		शारीरिक व मानसिक कमजोरी, वीर्य वृद्धि
8.	गेहूँ के ज्वारे का कल्प		कैंसर, गठिया, अम्लता, मानसिक रोग

कल्प के अन्तर्गत दुग्ध.कल्प, मठ्ठा.कल्प, रसाहार एवं फलाहार निम्न रोगों में बड़े ही उपयोगी है।

1. दुग्धाहार अर्थात् दुग्ध.कल्प

उपवास के बाद दुग्धाहार पर रहना अत्यन्त उपयोगी है। दूध में आहार के प्राय: सभी तत्व अत्यन्त संतुलित रूप से उपलब्ध हो जाते है अर्थात् उपवास के बाद दुग्ध.कल्प करना चाहिए। दुग्ध.कल्प से वजन और शक्ति बढ़ेगी। दुग्ध.कल्प करने से पहले 1.2 दिनों तक फलाहार पर रहना ही श्रेष्ठ होगा। दूध चुस्की भरकर धीरे.धीरे पीना चाहिए। जिससे मुंह में दूध के साथ लार मिल जायें। जिससे दूध भली.भांति पचाया ला सकें। दूध धीरे.धीरे और कम पीने के पीछे एक कारण यह है कि दूध खाली पेट में पहुंचते ही उसके थक्के जम जाते है। यदि दूध में पानी न मिलाया गया हो और पूरी एक गिलास दूध पी लिया जाये तो एक बड़ा थक्का पेट में जम जायेगा। जिसे पचाने में आंतों को बड़ी मशक्कत करनी पड़ेगी। जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।

दुग्ध.कल्प का समय : सुबह 7.8 बजे से शाम 8.9 बजे तक रखें।

एक बार में दूध की मात्रा : एक गिलास=250 मिली ताजा व पतला दूध।

दुग्ध.कल्प की विधि :

दुग्ध.कल्प में अन्य प्राकृतिक उपचार जैसे. गुनगुने पानी का एनीमा, पेडू पर मिट्टी की पट्टी, सारे बदन की गीली पट्टी, पेट पर नीले रंग का धूप प्रकाश (थर्मोलिन) एवं रीढ़ स्नान आदि लेवें तथा सुबह.शाम क्षमतानुसार टहले, आराम करे, शवासन में ध्यान करें।

क्र.	दिन	दूध + पानी की मात्रा	कुल मात्रा	समयावधि (घण्टा व मिनट)	विशेष सूचना
1.	पहला	250 ग्राम (5बार)	1.25 ली.	प्रत्येक 3.3 घण्टे पर	पेट आवाज़ करे, दस्त आवें, दूध पीने की इच्छा
2.	दूसरे	250 ग्राम (7बार)	1.75 ली.	प्रत्येक 2.2 घण्टे पर	

3.	तीसरे	250 ग्राम (8बार)	2 ली.	प्रत्येक 1 घण्टा 45 मिनट पर	न हो तो समयावधि
4.	4वें	250 ग्राम (9बार)	2.25 ली.	प्रत्येक 1 घण्टा 30 मिनट पर	2.2 घण्टे ही रखें
5.	5वें	250 ग्राम (11बार)	2.75 ली.	प्रत्येक 1 घण्टा 15 मिनट पर	
6.	6वें	250 ग्राम (12बार)	3 ली.	प्रत्येक 1.1 घण्टा पर	शोधन शुरू हो जायेगा तथा अब तक वज़न स्थिर रहेगा
7.	7.8वें	250 ग्राम (13बार)	3.25 ली.	,,	वज़न बढ़ना शुरू होगा
8.	9वें	250 ग्राम (14बार)	3.5 ली.	प्रत्येक 55 मिनट पर	अधिकतम दो किलोग्राम
9.	10वें	250 ग्राम (15बार)	3.75 ली.	प्रत्येक 50 मिनट पर	वज़न बढ़ेगा।
10.	11वें	250 ग्राम (16बार)	4 ली.	प्रत्येक 45 मिनट पर	रोगी अपने भूख, रूची,
11.	12.13वें	250 ग्राम (17बार)	4.25 ली.	प्रत्येक 45 मिनट पर	आर्थिक स्थिति व दूध की
12.	14वें	250 ग्राम (18बार)	4.5 ली.	प्रत्येक 40 मिनट पर	उपलब्धतानुसार दूध की
13.	15वें	235 ग्राम (19बार)	4.5 ली.	प्रत्येक 35 मिनट पर	मात्रा और समयान्तराल
14.	16.40वें	225 ग्राम (20बार)	4.5 ली.	प्रत्येक 30 मिनट पर	को कम कर सकता है।

इससे पूर्व यदि दू से जी भर जायें तो फलाहार कर सकते है और 5.6 घंटे बाद पुनः दुग.कल्प कम से कम 10 दिनों से लेकर कुछ हफ्तों तक चला सकते है। फिर मिला.जुला हल्का भोजन करें तथा पानी भी खूब पीना चाहिए। आवश्यकयता हो तो पानी में शहद, नीम्बू, संतरा आदि डाला जा सकता है।

....

इस तरह विधिवत् दूध.कल्प के दौरान बच्चे की तरह दूध बाहर आ रहा हो या कुछ अपच हो रहा हो तो 10.25 ग्राम तक संतरा या मौसमी या अनार रस को उतने ही पानी के साथ दिन में आवश्यकतानुसार 3 बार ले सकते है।

....

कल्प के दौरान रोगी को चिन्ता मुक्त रह कर आराम करना चाहिए। मन में शांति व एकाग्रता बनाये रखें।

क्र.	**दिन**	**विशेष सूचना**	
1.	41वें	दूध कल्प में दूध व पानी की मात्रा 250 ग्राम एवं समयान्तराल 40 मिनट को ध्यान में रखते हुए सुबह 8 बजे से दोपहर 2 बजे तक, फिर 7 बजे तक पानी के सिवाय कुछ नहीं लेवें।	7 बजे बाद 250 ग्राम दूध + 2 केले (केला बहुत पका हुआ हो)
2.	42वें	दूध कल्प में दूध व पानी की मात्रा 250 ग्राम एवं समयान्तराल प्रत्येक 1.1 घण्टे को ध्यान में रखते हुए सुबह 8 बजे से दोपहर 2 बजे तक, फिर 7 बजे तक पानी के सिवाय कुछ नहीं लेवें।	7 बजे बाद 250 ग्राम दूध + 4 केले
3.	43वें	दूध कल्प में दूध व पानी की मात्रा 250 ग्राम एवं समयान्तराल प्रत्येक 1 घण्टा 30 मिनट को ध्यान में रखते हुए सुबह 8 बजे से दोपहर 2 बजे तक, फिर 7 बजे तक पानी के सिवाय कुछ नहीं लेवें।	7 बजे बाद 250 ग्राम दूध + 1 रोटी + 1 कटोरी हरी सब्जी
4.	44वें	दूध कल्प में दूध व पानी की मात्रा 250 ग्राम एवं समयान्तराल प्रत्येक 2.2 घण्टा को ध्यान में रखते हुए सुबह 8 बजे से दोपहर 2 बजे तक, फिर 7 बजे तक पानी के सिवाय कुछ नहीं लेवें।	7 बजे बाद 250 ग्राम दूध + 2 रोटी + 2 कटोरी हरी सब्जी

क्र.	**दिन**	**सुबह 8 बजे**	**दोपहर 12 बजे**	**3.4 बजे**	**सूर्यास्त के समय तक**
1.	45वें	250 ग्राम दूध + 1 केला	250 ग्राम दूध + 1 रोटी + 1 कटोरी हरी सब्जी	1 रोटी + 2 केले	250 ग्राम दूध + आवश्यक हो तो रोटी.सब्जी लेवें
2.	46वें	250 ग्राम दूध + केले के स्थान पर अन्य फल लेवें	250 ग्राम दूध + 1 रोटी + 1 कटोरी हरी सब्जी	250 ग्राम दूध + केले के स्थान पर अन्य फल लेवें	250 ग्राम दूध + आवश्यकतानुसार रोटी.सब्जी

3.	47वें	250 ग्राम दूध + केले के स्थान पर अन्य फल लेवें	2 रोटी + 2 कटोरी हरी सब्जी	250 ग्राम दूध + केले के स्थान पर अन्य फल लेवें	आवश्यकतानुसार रोटी.सब्जी

2. मट्ठा.कल्प

खूनी आँव, पुरानी आँव, संग्रहणी, पेचिस, डिसेन्ट्री, अल्सर लेटिव कोलाइटिय, बड़ी आँत की सूजन आदि में मट्ठा.कल्प किया जाता है , लेकिन रोगी को दमा , अस्थमा, खाँसी हो तो मट्ठा.कल्प नहीं करें। खूनी आँव में उपवास तक की प्रक्रिया के दौरान खून बंद हो जाये तो ही मट्ठा.कल्प करें।

मट्ठा.कल्प की तैयारी :

मट्ठा.कल्प के लिए एक सप्ताह साधारण भोजन करें।

1.2 दिन फलाहार करें।

3.5 दिन उपवास पर रहे, उपवास में सिर्फ मुनक्का या किशमिश 50 ग्राम की मात्रा में पानी में भिगोकर दिन में 4 बार देवें। पानी आवश्यकतानुसार पीते रहे।

मट्ठा-कल्प की विधि :

उपवास के तत्पश्चात् कल्प के लिए 125 ग्राम पानी की नियत मात्रा रखते हुए ताजा दही मिलाकर मट्ठा बना लेवें। दही की मात्रा निम्नानुसार काम में लेवें। मट्ठा एक.एक घूट चाय की तरह पीयें।

मट्ठा.कल्प का समय सुबह 8 बजे से शाम 8 बजे तक रहेगा।

विशेषज्ञ के अनुसार मट्ठा.कल्प में अन्य प्राकृतिक उपचार जैसे. गुनगुने पानी का एनीमा, पेडू पर मिट्टी की पट्टी, सारे बदन की गीली पट्टी, कमर की सिर्फ ऊनी पट्टी (पट्टी को गुनगुने पानी से भिगोकर बाँधें) आदि लेवें तथा सुबह.शाम क्षमतानुसार टहले, आराम करे, शवासन में ध्यान करें।

क्र.	**दिन**	**दही की मात्रा**	**पानी की मात्रा**	**समयावधि (घण्टा व मिनट)**	**विशेष सूचना**
1.	पहला	125 ग्राम	125 ग्राम	प्रत्येक 2.2 घण्टे पर	
2.	दूसरे	200 ग्राम	125 ग्राम	प्रत्येक 2.2 घण्टे पर	
3.	तीसरे से 5वें	250 ग्राम	125 गाम	प्रत्येक 2.2 घण्टे पर	
4.	6वें	250 ग्राम	125 ग्राम	प्रत्येक 1 घण्टा 45 मिनट पर	
5.	7वें	250 ग्राम	125 ग्राम	प्रत्येक 1 घण्टा 30 मिनट पर	
6.	8वें	250 ग्राम	125 ग्राम	प्रत्येक 1 घण्टा 15 मिनट पर	

7.	9वें.11वें	250 ग्राम	125 ग्राम	प्रत्येक 1.1 घण्टा पर	
8.	12वें	250 ग्राम	125 ग्राम	प्रत्येक 55 मिनट पर	दही की उपलब्धता
9.	13वें	250 ग्राम	125 ग्राम	प्रत्येक 50 मिनट पर	एवं छाछ कल्प में
10.	14वें	250 ग्राम	125 ग्राम	प्रत्येक 45 मिनट पर	रूची होने पर कल्प
11.	15.17वें	250 ग्राम	125 ग्राम	प्रत्येक 45 मिनट पर	आगे जारी रखें।
12.	18वें	250 ग्राम	125 ग्राम	प्रत्येक 40 मिनट पर	अन्यथा रसाहार
13.	19वें	250 ग्राम	125 ग्राम	प्रत्येक 35 मिनट पर	फिर फलाहार पर
14.	20.40वें	250 ग्राम	125 ग्राम	प्रत्येक 30 मिनट पर	आ जायें।

क्र.	**दिन**	**विशेष सूचना**	
1.	41वें	छाछ कल्प में दही व पानी की मात्रा एवं समयान्तराल को ध्यान में रखते हुए सुबह 8 बजे से दोपहर 2 बजे तक, फिर 7 बजे तक पानी के सिवाय कुछ नहीं लेवें।	7 बजे बाद 250 ग्राम दही + 2 केले (केला बहुत पका हुआ हो)
2.	42वें	,,	7 बजे बाद 250 ग्राम दही + 4 केले
3.	43वें	,,	7 बजे बाद 250 ग्राम दही + 1 रोटी + 1 कटोरी हरी सब्जी
4.	44वें	,,	7 बजे बाद 250 ग्राम दही + 2 रोटी + 2 कटोरी हरी सब्जी

रोटी-सब्जी

इस तरह विधिवत् मट्ठा.कल्प पूर्ण करने के बाद प्रतिदिन एक संतरा या मौसमी या अनार जरूर खायें।

12.11 **सारांश**

हमारे ऋषि.मुनि इसके प्रभावशाली गुणों से भलीभाँति परिचित थे। वैदिक काल में चुम्बक को 'अश्म या अश्मन या आशमा ' के नाम से पहचाते थे। इसका उपयोग स्त्रियों में अति रक्तस्त्राव में करते थे। हमारे ऋषि.मुनियों का ज्ञान सिर्फ अश्मन तक ही सीमित नहीं था। बल्कि वे तो पूरे ब्रह्माण्ड के चुम्बकीय क्षेत्र से भलीभाँति परिचित होकर अपने स्वास्थ्य को सुधार लिया था।

प्राचीन समय में ही एशिया माइनर में मैग्रीशिया के अन्दर कुछ काले पत्थरों को 'मैग्रेट या चुम्बक' के नाम से जाना गया। इससे हजारों वर्ष पूर्व लौहे को खोज कर उपयोग में भी लाया जा रहा था। इन पत्थरों में लोहे को अपनी ओर आकर्षित करने की क्षमता होती है। फिर जब इसके सिरों को ध्रुवों के रूप में समझ लिया तो वे लोग इसका उपयोग घने जंगलों में, समुद्रों में दिशा.ज्ञान के लिए करने लगे।

मनुष्य का शरीर भी अपने आप में एक चुम्बक के समान है। उसका सिर उत्तरी ध्रुव और पैर दक्षिणी ध्रुव है। चुम्बक का प्रभाव हमारे रक्त, माँसपेशियों, स्नायुओं एवं अंत:स्त्रावी ग्रंथियों पर पड़ता है।

12.12 **बोधात्मक प्रश्न**

1. चुम्बकीय महत्व एवं इतिहास के बारे में बताइए ?
2. चुम्बक के कितने प्रकार होते है बताइए ?
3. चुम्बकीय ध्रुवों के गुणों के बारे में बताइए ?
4. चुम्बकीय चिकित्सा के प्रयोग लिखिए ?
5. चुम्बकीय चिकित्सा से लाभ के बारे में बताइये?
6. चुम्बक प्रयोग में क्या क्या सावधानीयां रखनी चाहिए ?
7. गंध या सुगंध चिकित्सा के बारे में बताइए ?
8. कल्प चिकित्सा के बारे में बताइए ?

12.13 **संदर्भ ग्रंथ**

संदर्भ साहित्य	**लेखक**	**संदर्भ साहित्य**	**लेखक**
प्राकृतिक आयुर्विज्ञान	डॉ. राकेश जिन्दल	प्राकृतिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य	डॉ. महेन्द्र कुमार जाजपुरा
वृहद प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. ओ. पी. सक्सेना	Fasting can sour your life	H.N. Shelton
जल चिकित्सा	फादर क्नाइप	जीवनी शक्ति कैसे जगायें	डॉ. चन्द्र दीप सिंह
प्राकृतिक स्वास्थ्य शास्त्र	आचार्य शेषांद्रि स्वामीनाथन	आपका आरोग्य आपके हाथ में	देवेन्द्र वोरा
प्राकृतिक चिकित्सा दर्शन	हेनरी लिंडलार	प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग वैज्ञानिक प्रयोग	डॉ. नागेन्द्र कुमार नीरज
My Water Cure	फादर सेबस्टियन नीप	जीवेम् शरद शतम्	पं. श्री राम शर्मा आचार्य वाङ्मय

इकाई – 13

रसाहार, फलाहार, आहार एवं जड़ी बूटी चिकित्सा

इकाई की रूपरेखा

13.1. उद्देश्य

13.2. प्रस्तावना

13.3 फल एवं तरकारियों से रोगोपचार

13.4 आहार चिकित्सा

13.5 आहार के प्रकार

13.6 आहार.विहार सम्बन्धी मुख्य बातें

13.7 भोजन के कार्य एवं अवयव

13.8 विभिन्न पोषक.तत्वों के कार्य एवं उनकी प्राप्ति

12.9 स्वास्थ्य प्रश्न माला

13.10 विभिन्न व्यक्तियों के लिए संतुलित भोजन

13.11 रोगी के भोजन का सिद्धान्त

12.12 घरेलु जड़ी.बूटी चिकित्सा

13.13 सारांश

13.14 बोधात्मक प्रश्न

13.15 संदर्भ ग्रंथ

13.1 उद्देश्य

- रसाहार एवं फलाहार कैसे करते है तथा कौन.कौन से रोगों में उपयोगी है
- आहार के प्रकार कौन.कौन से है
- भोजन के कार्य एवं अवयव कौन.कौन से है
- खाद्य पदार्थो के भेद एवं श्रेष्ठ संयोग क्या है
- खान.पान सम्बन्धी क्या असावधानियाँ प्रचलित है
- भोजन पकाते समय पौष्टिक तत्व ध्यान कैसे रखा जाता है
- सन्तुलित भोजन कैसा होता है

- रोग के साथ कैसा भोजन किया जाता है
- रोगी के भोजन का सिद्धान्त क्या है
- रोगी का भोजन व बनाने की विधि क्या है
- किन रोगों में क्या.क्या भोजन करना चाहिए
- अपूर्ण पोषण क्या है

उपरोक्त समस्त जिज्ञासाओं का उत्तर पाना ही इस अध्याय का उद्देश्य है।

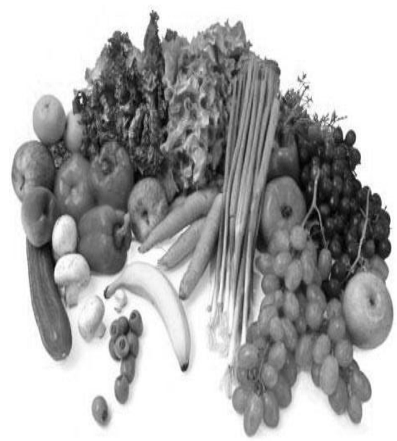

जिस व्यक्ति को कोई भी रोग सता रहा हो तो सर्वप्रथम अनाज का त्याग कर दें। तत्पश्चात् नीम्बू.पानी.शहद पर एक दिन उपवास जरूर करें। दूसरे दिन से कम से कम सप्ताहभर रसाहार पर आ जायें और फिर सप्ताहभर फलाहार करें। इन पन्द्रह दिनों में रोगी को कम से कम 50 से 80 प्रतिशत तो व्याधियाँ जड़ से चली जाती है। फिर पाँच.सात दिनों के अन्तराल से ही एक बार पुन: इसी क्रिया को दौहराएँ। ध्यान रहे कि रोगी उपचार के दौरान एनिमा का उपयोग जरूर करें। रोगी ज्यादा से ज्यादा आराम व सुबह.शाम हल्का व्यायाम, क्षमतानुसार टहलना एवं प्राणयाम जरूर करें। रोगी विशेषकर शारीरिक कार्यो से दूर रहकर उपचार और प्रभू में ध्यान लगायें। रसाहार व फलाहार में काम लिये जाने वाले फल.तरकारियाँ शुद्ध, स्वच्छ एवं ताजी हो।

13.3 **फल एवं तरकारियों से रोगोपचार**

क्र	**रोग**	**फल एवं तरकारियां एवं उनका रस**
1	मोटापा	नींबू वर्गीय फल (नींबू, संतरा, मौसमी), (नींबू+गुनगुना पानी), (नीम्बू+पानी+शहद), तरबूज, खीरा–ककड़ी, टमाटर, मूली, गाजर, प्याज और पत्तागोभी

2	मुमेह	अनार, सन्तरा, करेला, खीरा, टमाटर, गाजर, पालक, मूली, आँवला और करेला
3	बवासीर	अनार, पपीता, बेल, टमाटर, चुकन्दर, मेथी और मूली
4	रक्त की कमी	गाजर, टमाटर, खीरा, मूली और पालक
5	हृदय रोगी	अनार, सेब, अंगूर, नाशपाती, अनानास, पपीता, नारीयल–पानी, गाजर और नींबू+लहसून+शहद
6	टी. बी.	गाजर, (प्याज+शहद) और (लहसून+शहद)
7	मुँहासे	अंगूर, किशमिश, वनस्पति, टमाटर, पपीता, तरबूज, खीरा, ककड़ी, गाजर, मूली और पालक।
8	ज्वर	अनार, संतरा, मौसम्बी और नीम्बू
9	जुकाम	अनार, संतरा, मौसम्बी, नीम्बू, सेब, (नीम्बू+अदरक+शहद)
10	दस्त	अनानास, सेब, बेल, चुकन्दर, अमरूद
11	खाँसी	अनार, सेब, गाजर, मूली, (लहसुन+शहद), (प्याज+शहद), (अदरक+शहद)
12	दमा	अनार, सेब, अंगूर, किशमिश, पपीता, नीम्बू, नारंगी, गाजर, चुकन्दर, करेला, मूली, (आँवला+शहद), (लहसून+शहद), (अदरक+नीम्बू+शहद)
13	निम्न रक्त चाप	(मौसम्बी+शहद), (गाजर+शहद)
14	उच्च रक्त चाप	अनार, संतरा, पपीता, नीम्बू, चुकन्दर, टमाटर, लहसून, गेहूँ जवारे
15	कब्ज	संतरा, मौसम्बी, सेब, अमरूद, पपीता, गन्ना, चुकन्दर, मूली, गाजर, आँवला, खीरा, ककड़ी, लौकी, पालक, (बेल+शहद)
16	गैस विकार	सेब, पपीता, करेला, (अदरक+नीम्बू+शहद), (मूली+अदरक+पत्तागोभी)
17	गठिया	सेब, किशमिश, गाजर, लहसून, मेथी, (अदरक+नीबू+शहद), (मूली+अदरक+पत्तागोभी)
18	अम्ल पित्त	सेब, मौसम्बी, संतरा, तरबूज, अंगूर, मूली, (गाजर+पत्तागोभी)

19	अल्सर	गाजर, खीरा, लौकी, पत्तागोभी, गेहूँ के जवारे, नारियल पानी
20	चर्म रोग	अंगूर, किशमिश, वनस्पति, सेब, गाजर, चुकन्दर, टमाटर, नीम्बू, तरबूज, करेला, खीरा, ककड़ी, मूली, पत्तागोभी, पालक
21	दंत रोग	सेब, नीम्बू, संतरा, अमरूद, ककड़ी, गाजर, म्ली, आँवला, टमाटर, मूंगफली
22	नत्र रोग	पपीता, टमाटर, पालक, हरा निया, चौलाई, मूली, गाजर, आम+दू+शहद, आवंला+शहद।
23	पीलिया	अनार, सेब, मौसम्बी, संतरा, अंगूर, गन्ना, करेला, (मूली+मूली पत्ते)
24	शिशु संर्वन	अनार, अनानास, मोसम्बी, संतरा
25	यौन शक्ति	सेब, गाजर, मूली, टमाटर, (लहसून+शहद), (प्याज+शहद), (केला+दू)
26	बांझपन	सेब, गाजर, टमाटर, पालक, गेहूँ के जवारे
27	शारीरिक सौन्दर्य	अनार, सेब, अंगूर, मौसम्बी, संतरा, पपीता, खीरा, अनानास, गाजर, टमाटर, चुकन्दर, मूली, ककड़ी, पालक, नारियल पानो गन्ना, पत्तागोभी
28	अनिद्रा	अंगूर, सेब, (प्याज+शहद), (पालक+गाजर)
29	कैंसर	अंगूर, सेब, गाजर, चुकन्दर, गेहूँ के जवारे
30	गर्भावस्था	अनार, मौसम्बी, संतरा, टमाटर, गाजर, चुकन्दर, पालक
31	पेशाब न आना	सेब, तरबूज, नीम्बू, गाजर, खीरा, ककडो, लौकी, नारियल–पानी
32	पथरी	सेब, नारियल–पानी, गन्ना, चुकन्दर, खीरा, ककड़ी, करेला, मूली, टिंडा, पत्तागोभी
33	एलर्जी	किशमिश, गाजर, पार्सले
34	रक्ताल्पता	किशमिश, स्ट्रॉबेरी, पार्सले, पालक, गाजर
35	गांठें	किशमिश, स्ट्रॉबेरी, पालक, गाजर, गोबी
36	फ्लू	नारंगी, अन्नानास, गाजर, प्याज, नीम्बू

13.4 **आहार चिकित्सा**

हमने आहार को पंचतत्वों युक्त और भोजन को पृथ्वी तत्व माना है। खाद्य.पदार्थो में पृथ्वी तत्व का बहुत बड़ा अंश है और स्थूल शरीर के निर्माण में यह खाद्य.पदार्थ बहुत उपयोगी है। भोजन ही प्राणदाता और प्राणहरता है। कहते है कि हमें प्राण सूर्य अर्थात् ईश्वर से मिलते है। यह प्राण हमारे शरीर में दिमाग से होता हुआ सुषुमना (नाड़ी.संस्थान की जड़ , जो रीढ़ में रहती है) नाड़ी में आता है। जो हमें जीवनी.शक्ति प्रदान करता है। हमारे शरीर में अपार जीवनी.शक्ति संचित रहे , इस हेतु उचित भोजन के साथ.साथ उपवास , व्यायाम, आराम एवं सफाई इत्यादि आवश्यक है। ऐसा न होने पर शरीर स्वस्थावस्था में न रहेगा , जीवनी.शक्ति का ह्रास होगा और प्राण उसके अन्दर काम न करेंगें। तब जीवन का अन्त या मृत्यु निश्चित है। इसलिए जीवन के लिए प्राण आवश्यक है। भोजन के सम्बन्ध में कई स्वास्थ्यप्रद बातों को हमें अपने जीवन में आत्मसात् करना होगा। जिससे हम अपने शरीर में भोजन को अच्छी तरह पचाकर शुद्ध रक्त से शरीर का सिंचन कर सकें।

हमारे ऋषि.मुनियों ने योग की चरम सीमा तक अनुसंधान एवं गहन अध्ययन.अभ्यास कर योग शास्त्र के क्षेत्र का बहुत विस्तार किया है। यौगिक क्रियाओं द्वारा स्वास्थ्य प्राप्त करने का योग शास्त्र में एक हिस्सा आहार का भी महत्वपूर्ण है। आहार भी स्वास्थ्य का पोषण करने वाला तथा रोगों की रोकथाम करने वाला और रोगों को दूर करने वाला हैं।

मानव शरीर एक सजीव मशीन है। जिसे चलाने के लिए ताप और शक्ति की आवश्यकता होती है। जो भोजन से प्राप्त होती है। इसी से उसमें वृद्धि और विकास की क्रिया पूर्ण होती है। शरीर एक ऐसी मल.मूत्र उत्पादन करने वाली मशीन है। जिसमें कितना ही सात्विक भोजन डाला जाये और गंगा जल पिलाया जाये, अंतत: उसका उत्पाद मल.मूत्र के रूप में ही बाहर निकलता है , परन्तु अच्छे स्वास्थ्य के लिए यह ध्यान रहे कि सात्विक भोजन खायें, उससे जो ऊर्जा.शक्ति प्राप्त होती है, वह अच्छे कार्यो में लगाई जायें।

हरी साग.सब्जियाँ, फल, तरकारियों से वे रोग दूर हो जाते है, जो सैंकड़ों दवाओं से भी ठीक नहीं होते है।

वनस्पतियाँ हमारे आहार की पूर्ति करती है। शरीर में प्राण का संचार करती है। वनस्पतियाँ ही हमारे जीवन का मुख्य आधार है। इसके बिना जीवन सम्भव नहीं है। इससे प्राप्त आहार ही हमारे जीवन की पहली मंजिल है। उसके बिना हमारी उत्पत्ति भी सम्भव नहीं योंकि माता के अण्ड़े और पिता के शुक्राणुओं में भी पर्याप्त मात्रा में भोजन संग्रहित होता है।जो निषेचन.क्रिया होते ही उसे आहार की पूर्ति कर देता हैं तथा उसके जन्म लेते ही स्तनपान शुरू हो जाता है। जिसका मूल आधार ओर कोई नहीं वनस्पतियाँ ही हैं।

प्राणियों के अच्छे व पूर्ण स्वास्थ्य के लिए आहार अनिवार्य है। आहार के अन्रतगत मुख्यत: निम्न चीजें आती है :.

1. भोजन (खाद्य): यह शरीर की क्षति पूर्ति कर शक्ति प्रदान करता है।

2. जल (पेय पदार्थ): यह भोजन के पाचन एवं अवशोषण में सहायक है।

3. वायु: यह भोजन के पाचन एवं अवशोषण को गति प्रदान करता है।

4. धूप: यह विटामिन.डी के रूप में शरीर का अद्वितीय भोजन है।

5. मनोभाव: ज्ञानेन्द्रियों द्वारा किये गये अनुभव के बाद मन में अच्छे मनोभावों को प्रकट करना या रखना भी आहार की श्रेणी में आते है।

आहियन्ते शब्दादि विषयं इति आहार:।

इसके अलावा हमारी सभी इन्द्रियों जैसे. आँख, नाक, कान, त्वचा, स्वाद एवं मन द्वारा ग्रहण किया गया विषय भी आहार की श्रेणी में आता है।

13.5 आहार के प्रकार

शास्त्रों में मुख्य तीन प्रकार के आहार दर्शाये गये है:

1. सात्विक आहार

इन आहारों में सात्विक आहार ही सर्वश्रेष्ठ एवं अधिक लाभप्रद है। जो प्राकृतिक रूप में स्वादिष्ट, कोमल और सुपाच्य होता है। ऐसा आहार ग्रहण करने से जीवशक्ति, बलशक्ति, उत्साह, कुशलता, स्वास्थ्य तथा प्रसन्नता बढ़ती है। सात्विक आहार रोग निवारक है, क्योंकि यह प्राकृतिक रूप से प्राप्त आहार है। इसी आहार को योगियों ने अपने लिए चुना है। अत: इसे प्राकृतिक या यौगिक आहार भी कह सकते है। लेकिन राजसिक एवं तामसिक आहार रोग जनक है।

शरीर को बनाये रखने और साथ ही शरीर के अन्दर विकार पैदा कर बिगाडऩे और इन विकारों को शरीर से निकालने में भोजन का इतना महत्व है कि प्राकृतिक चिकित्सा के अन्तर्गत प्राकृतिक अर्थात् सात्विक भोजन को पहला स्थान प्राप्त है। केवल भोजन.सुधार से ही गठिया , बवासीर, दमा और एक्जिमा. जैसे कठिन और हठी रोग दूर हो जाते है। इसलिए प्राकृतिक चिकित्सा विधि में भोजन पर बहुत जोर दिया गया है।

2. राजसिक आहार

यदि भोजन को अधिक आग के सम्पर्क में लाकर उसके सभी लाभदायक गुणों को नष्ट कर दिया जाता है तो वह राजसिक आहार कहलाता है। इसके अतिरिक्त यदि आहार अधिक अम्ल, लवण, तीक्ष्ण, उग्र, उष्ण, रूक्ष और कटु होने पर भी राजसिक आहार ही माना जायेगा। ऐसा आहार ग्रहण करने पर शरीर में रोग, दु:ख और पीड़ा पैदा होगी।

3. तामसिक आहार

जब आहार बाँसी, दुर्गन्धयुक्त, रसहीन, झूठा और अपवित्र हो जायें तो वह अस्वास्थ्यप्रद तामसिक आहार बन जाता है। ऐसा आहार ग्रहण करने पर शरीर में रोग, दु:ख एवं पीड़ा तो पैदा होगी ही पर साथ में अज्ञानता, पशुवृतियां और अनेकों मन में मनोविकार पैदा होंगे। अन्न का सूक्ष्म अंश मन है। इसलिए हम जैसा अन्न खायेंगे, वैसी ही हम में बुद्धि आयेगी अर्थात् याद्दशं भक्ष्यते अन्नं बुद्धिर्भवतिताद्दशी।

यदि तामसिक आहार खाया जायेगा तो उसका तन, मन, बुद्धि और प्राण तामसिक प्रवृति के समान हो जायेंगे।

सात्विक आहार के गुण

1. यह आहार ताजा, साधारण और सात्विक होने से ही सभी के लिए स्वास्थ्यवर्धक , शक्तिवर्धक और प्राणवर्धक होता है।

2. यह आहार शरीर, मन और आत्मा तीनों को शुद्ध एवं पवित्र बनाता है।

3. यह शरीर की आयु, वर्ण, ओज, सत्व, शोभा और स्मृति बढ़ाता है।

आयु: सत्व बलारोग्य सुख प्रीति विवर्धना:।

रस्या: स्निग्धा स्थिरा हृद्या आहारा: सात्विक प्रिया:॥ 17। 8॥

भ. गीता

4. यह आहार जल्दी पचने वाला, बल प्रदान करने वाला, उत्तेजना को कम करने वाला और शरीर की वृद्धि करने वाला है।

आहार.विहार

यदि आहर सम्बन्धित सभी बातों को ध्यान में रखते हुए यह कहा जाये कि आप द्वारा ग्रहण किया गया सात्विक आहार आपका श्रेष्ठ चिकित्सक है। तो कहना गलत नहीं होगा, क्योंकि यही वास्तविकता है। आहार के साथ विहार का तात्पर्य आपके आहार के साथ.साथ यह देखना जरूरी है कि आप किस

वातावरण में रह रहें, आपके जीवन जीने का ढ़ंग कैसा है ? आप कौन.सा परम्परागत आहार ग्रहण करते है? आप कितना शारीरिक एवं मानसिक श्रम करते है? आदि.आदि कई बातें विहार के साथ उत्तरदायी है।

जो जैसा खाये अन्न, वैसा बने तन और मन।

योग शास्त्र के आहार.विहार में आहार के साथ मन का भी घनिष्ठ सम्बन्ध है। अन्न (आहार) के उत्पादन से लेकर खाने तक कि क्रियाओं में आपके मन की दशा अर्थात् मानसिक स्थिति कैसी रही है। उसका अन्न पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है। इसलिए मनोविकारों से रहित प्रसन्नचित मानसिक स्थिति का होना नितान्त आवश्यक है।

युक्ताहारविहारस्य युक्त चेष्टस्य कर्मसु। युक्त स्वप्नाव बोधस्य योगो भवति दु:खहा॥6। 17॥ भ. गीता

अर्थात् आहार.विहार, निद्रा, जाग्रति एवं चेष्टा को संयमित कर किये गए योग से दु:खों का नाश होता है।

13.6 आहार.विहार सम्बन्धी मुख्य बातें

1. सीमित खायें, संयमित खायें और सात्विक आहार खायें।

2. वास्तविक भूख लगे तब खायें, झूठी भूख को थोड़ा.सा पानी पीकर भूख मिटायें।

3. भोजन हमारे शरीर के लिए आवश्यक है , इसे अनिवार्य न समझें, बल्कि उपवास व प्राकृतिक जीवन अपनाकर अपनी जीवनी.शक्ति में वृद्धि करें।

4. यदि आपको खाकर जल्दी मरना हो तो भर पेट इच्छा से भी ज्यादा और विभिन्न तरह का आहार (व्यंजन) खाये जाओ।

5. खान.पान में जो व्यक्ति समय पर सम्भल जाता है, वह उत्तम स्वास्थ्य पा लेता हैं।

6. रोग केन्द्रों (होटल एवं मिठाई की दुकान) का बना हुआ चटपटा खाओ और अपने पेट पर घोर अन्याय या अपराध करो।

7. यदि आप प्राकृतिक चिकित्सा को बेवजह भूखों मरना समझते हो , तो ज्यादा मात्रा में और अप्राकृतिक व्यंजन खा कर मरो।

8. सोचो और समझों. क्या आपको स्वाद जीभ से नीचे मालुम चलता है?

9. उत्तम स्वास्थ्य स्वाद से हासिल नहीं किया जा सकता है।

10. स्वाद के लिए खाना अर्थात् शरीर में रोगों को निमन्त्रण देना है।

11. बनावटी स्वाद रोग जनक है, प्राकृतिक खाद्यों का स्वाद अनमोल और रोग निवारक है।

12. ईश्वर ने प्राकृतिक खाद्यों में स्वाद इसलिए बनाया है कि मनुष्य चबा.चबा कर निगलें।

13. अन्न का उतना ही प्रभाव शरीर पर पड़ता है , जितना मुंह से निकले शब्द और कमान से निकला तीर। यदि स्वाद से बेमेल, अप्राकृतिक आदि खाना खा लिया तो रोग निश्चित है।

14. प्राकृतिक खाद्यों जैसा श्रेष्ठ खाद्य और स्वाद दुनिया में अन्य किसी भी वस्तु से नहीं मिल सकता है।

15. ऐसा ही खाना चाहिए या उसी को ग्रहण करना चाहिए, जो प्राकृतिक भोजन हो।

16. इतना खायें कि शारीरिक, मानसिक श्रम के अनुसार हजम हो जायें।

17. अन्न आपके लिए प्राणदायी है। वह स्वास्थ्य की कसौटी पर खरा है।

18.अन्न ही प्राण देता और प्राण लेता है। इसलिए हे मनुष्य! अन्न से सावधान।

19. भोजन को चबा.चबा कर निगलों।

20. यदि मुंह में चबाया नहीं गया तो आँतें बेचारी रोएगी।

21. अयुक्त आहार भर पेट खाने के बाद विरेचक खाना तो पेट पर महापाप या महाअपराध करता ही है।

22. पाचन अंगों पर दया करते हुए आवश्यकता से ज्यादा न खाइये, उतना खाइयें कि पेट उसे पचा सकें।

23. आहार का सेवन तब तक न करें, जब तक वास्तविक भूख न लगें।

24. जब आपके मन में मनोविकार हो तब खाना न खायें। सिर्फ प्रसन्नचित में ही खाना खायें।

25. नाश्ता बहुत हल्का शीघ्र पचने वाला करें परन्तु भर पेट नहीं। जैसे. नीम्बू पानी , सूखे फल, अंकुरित अनाज आदि।

रोग.केन्द्रों में आहार.विहार

वर्तमान समय में इतनी उन्नति के बावजूद भी भारी संख्या में मनुष्य रोगी है और बड़ी आसानी से होते जा रहे है। कोई घर रोग से मुक्त नहीं , आखिर मनुष्य ही भारी संख्या में रोगी क्यों होते है? क्या आप भी यही सोचते है कि मनुष्य ने अपने स्वाद को ज्यादा महत्व देते हुए अपनी भोजन.शाला को रोग.केन्द्र बना दिया है। यही नहीं घर का रोग.केन्द्र उनकी पूर्ति नहीं कर पाता इसलिए गली.गली में होटल, भोजनालय, मिष्ठान भण्डार, बेक्रिज स्टोर, डेयरी आदि कई नामों से रोग.केन्द्रों को स्थापित किया और हो रहे है। जहाँ पर मनुष्य आवश्यकता से भी ज्यादा खाते , एक साथ कई व्यंजनों को मिलाकर और फिर वे गरिष्ठ व्यंजन मुंह में जीभ का चंद क्षणों का स्वाद पूरे शरीर की नींव को हिलाकर रख देता है। बेचारा पेट क्या करें , रात.दिन कोल्हू का बैल बना रहकर रोता रहता हैं और ऊपर से विरेचक दवाइयाँ पेट के रोने की आवाज ही दबा देती है।

यदि खाने पीने की लगभग सभी वस्तुएं अकेली खाई जायें, तो वह भोजन अमृत से कम सिद्ध नहीं होगा। लेकिन आज का सभ्य समाज प्रचलित खाद्य परम्परा में कई भोज्य पदार्थो को एक साथ मिलाकर शरीर के लिए जहर का निर्माण अपनी ही रसोईशाला में कर रहा है। उनकी यह गलत फहमी है कि कई खाद्य

एक साथ मिलाकर खाने से लगभग प्रतिदिन सभी तत्वों की और भोजन पदार्थो की पूर्ति हो जायेगी। जो सरासर गलत है , क्योंकि केवल कुछ खाद्य पदार्थ ही आपस में मिलाकर खाने से पच सकते है। जो परम्परागत पद्धति के अनुसार लोक प्रचलित है। लेकिन अधिकांश खाद्य पदार्थ परस्पर गुण.विरूद्ध , संयोग.विरूद्ध, द्रव्य संस्कार विरूद्ध तथा देश , काल और मात्रा आदि से मेल नहीं खाते है। इसी कारण बेमेल संयोग विरूद्ध व्यंजनों को मनुष्य पचा नहीं पाता है। जिसका परिणाम बड़ा गंभीर होता है कि मनुष्य पेट में पैदा हुए रोगों से बच नहीं सकता है। वे मनुष्य अद्र्घ आयु में ही अकाल मृत्यु को प्राप्त होते है।

13.7 **भोजन के कार्य एवं अवयव**

हमारा भोजन शरीर में जीवनी.शक्ति को स्थिर रखने वाला होना चाहिए। हमारा भोजन वनस्पतिजन्य एवं प्राणिजन्य है। कुछ वनस्पतियों को छोडक़र शेष समस्त वनस्पतिजन्य भोजन श्रेष्ट कहा जाता है और प्राणिजन्य भोजन में सिर्फ दूध को ही श्रेष्ट कहा गया है। यहां श्रेष्ट भोजन से अभिप्राय नीचे दिये गये भोजन के कार्यों से स्पष्ट है कि वे स्वास्थ्यवर्धक , शक्तिवर्धक और प्राणवर्धक हो । इस हेतु भोजन में उसके समस्त अवयव प्रोटीन, कार्बोज, वसा, खनिज.लवण, जल और विटामिन संतुलित मात्रा में मौजूद होने चाहिए। ये ही शरीर को ताप, गति और विकास प्रदान करते है, शरीर का निर्माण करते है और प्राणों का संचालन करते है। इस कारण इन अवयवों की भोजन में आवश्यकता सर्वोपरी और महत्वपूर्ण है। हमें प्रतिदिन के भोजन में इन अवयवों की उचित एवं संतुलित मात्रा का सदैव ध्यान रखना चाहिए। तभी हम अपने शरीर को स्वस्थ और निरोग बनाये रखने में सफल होकर आनन्दपूर्ण जीवन जी सकेंगे।

भोजन के कार्य

1. भोजन स्वास्थ्यवर्धक अर्थात् रोगों से रक्षा, शक्तिवर्धक और प्राणवर्धक होता है। पर भोजन रोगजनक, शक्तिह्रास एवं प्राण हरण भी कर सकता है।

2. भोजन का प्रमुख कार्य शरीर को ऊर्जा, ताप, बल, गति और विकास प्रदान कर शरीर में जीवनी.शक्ति को स्थिर करता है।

3. भोजन हमारे शरीर की कोशिका तथा तंतुओं की टूट.फूट की मरम्मत करता है। नष्ट हुई कोशिकाओं की जगह नयी कोशिकाओं का निर्माण करता है।

4. भोजन से रक्त प्रवाह, समस्त मानसिक एवं शारीरिक क्रियाओं तथा शरीर के ताप को संतुलित बनाने के लिए आवश्यक शक्ति प्रदान करती है।

5. भोजन शरीर को पोषण प्रदान कर (रस और रक्त आदि धातुओं को बढ़ाकर) शरीर की शारीरिक एवं मानसिक वृद्धि और विकास करता है।

भोजन के अवयव

रासायनिक निर्माण की दृष्टि से प्राणी शरीर को आवश्यक तत्व प्रकृति में स्वंतत्र रूप से नहीं पाये जाते है। ये यौगिकों के रूप में मौजूद रहते है। जिसे अवयव कहते है। जो निम्न है :

1. प्रोटीन (प्रोभूजिन) 2. कार्बोज (प्रांगोदीय)

3. वसा (स्नेहक) 4. खनिज.लवण

5. जल 6. विटामिन

7. फुजला या रफेज़ (रेशेदार भोजन)

ये भोजन के अवयव शरीर को ताप , गति और विकास के लिए उत्तरदायी है तथा प्राणियों के शरीर का निर्माण कर प्राण को संचालित करते है। ये भोजन के अवयव शरीर को स्वस्थ और निरोग बनाये रखने के लिए आवश्यक है।

1. प्रोटीन

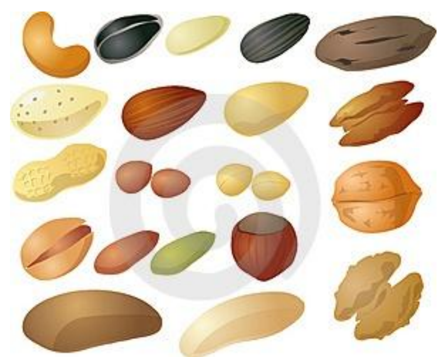

रासायनिक संघठन: प्रोटीन का निर्माण कार्बन , हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन आदि तत्वों से होता है।

लाभ: इसकी भोजन में आवश्यकता सर्वोपरी और महत्वपूर्ण है।

1. रक्त का निर्माण करता है।

2. शरीर को शारीरिक एवं मानसिक शक्ति प्रदान करता है।

3. श्रम से हुई क्षति की पूर्ति करता है।

4. शरीर में वसा और कार्बोज के अभाव में उसका भी काम करता है।

5. शरीर में रोग निवारक शक्ति पैदा होती है।

6. पाचक रसों का निर्माण होता है।

7. शरीर की वृद्धि में सहायक है। यह गर्भवती, शिशु और बच्चे के लिए अतिआवश्यक है।

8. शरीर में इसकी अधिकता होने पर वसा अर्थात् ग्लाइकोजन के रूप में इकठ्ठा हो जाता है।

प्राप्ति: इसकी ज्यादा मात्रा द्विदलिय अनाजों. सोयाबीन , मुंगफली, सेम, चना, उड़द, मूंग, अरहर, लोबिया, तिल, मटर, रंगूनबीन, मसूर, दूध और हरी सब्जी आदि में पायी जाती है।

आवश्यक निर्देश: प्रोटीन का भोजन में अधिक उपयोग और शरीर में इसका अधिक जमाव यकृत और गुर्दे को प्रभावित कर उसकी कार्य प्रणाली में बाधा उत्पन्न करता है। जिससे यकृत और गुर्दा सम्बन्धी रोग पैदा होते है। जोड़ों में दर्द और सूजन का भी यही कारण है।

2. कार्बोज

रासायनिक संघटन: कार्बोज का निर्माण कार्बन्, ऑक्सीजन और हाइड्रोजन के संयोग से होता है।

लाभ: 1. शरीर की पेशियों को ताप , शक्ति और बल प्रदान करने में इसका प्रमुख स्थान है।

2. शारीरिक ताप को स्थिर रखता है।

कार्बोज के प्रकार:

1. स्टार्च देने वाला कार्बोज: गेहू , चावल, अनाज, आलू व दाल आदि।

2. शर्करा देने वाला कार्बोज:

सुक्रोज: गन्ना, चीनी, गुड़ और शहद आदि।

ग्लूकोज: अंगूर, शकरकंद और चुकन्दर आदि।

फ्रक्टोज: मीठे फल व मेवे।

लेक्टोज: दूध।

प्राप्ति: गन्ना, चीनी, गुड़, साबूदाना, अरारोट, शहद, चावल, गेहँ किशमिश, सुखे बेर, अंजीर, खजूर, जौ, ज्वार, बाजरा, मक्का, उड़द, सेम, मूंग, मसूर, अरहर आदि। फलों में माधुर्य गुण रखने वाली शर्करा इसका शुद्ध उदाहरण है। जिसमें खजूर, मुनक्का, गुड़, केला, अमरूद, सीताफल एवं पपीता आदि फलों में कार्बोज पाया जाता है। श्वेतसार भी कार्बोज का उदाहरण है। जिसको पाचक बनाने के लिए थोड़ा.सा उबालना या सेंकना पड़ता है। जिसमें चौकर आटा , कण समेत चावल, जौ, बाजरा, आलू एवं शकरकंद आदि अनाज आते है।

आवश्यक निर्देश: शारीरिक परिश्रम करने वालों को इसकी अधिक आवश्यकता होती है। इसकी कमी से शरीर निर्बल हो जाता है। यह शीघ्रता से न पचने के कारण इसकी मात्रा भोजन में अधिक होने पर अपच व अजीर्ण पैदा होकर रोग का कारण बनता है। इसलिए भोजन में इसकी मात्रा के अनुसार शारीरिक श्रम भी अतिआवश्यक है।

3. वसा

रासायनिक संघटन: वसा का निर्माण कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन के संयोग से होता हैं।

लाभ: 1. इसमें कार्बोज से ढ़ाई गुनी उष्णता अर्थात् शक्ति ज्यादा होती है। यह कार्बाज के अभाव में शरीर को शक्ति प्रदान करता है।

2. इसकी अधिक आवश्यकता शरीर को शरद्‌ऋतु में होती है।

3. इसी ऋतु में इसका अच्छा पाचन शरीर में सम्भव है।

4. शरीर को चिकनाई प्रदान करता है।

5. यह जोड़ों के लिए स्नेहक का काम करता है।

6. यह त्वचा के नीचे अव्यवस्थित शक्ति का भण्ड़ार है। इस कारण सर्दी व गर्मी के प्रभाव से बचाता है। इसे चर्बीदार अम्ल भी कहते है।

प्राप्ति: इसकी ज्यादा मात्रा घी व तेल , तिलहनी फसलों, दूध, तिल, सरसों, सोयाबीन, जैतुन, नारियल, अखरोट, मूंगफली, बादाम, काजू, पिस्ता, चिलगोजा, मक्खन, मछली का तेल, पशुओं की चर्बी और अण्ड़ों की जर्दी आदि में पायी जाती है।

आवश्यक निर्देश:

भोजन में वसा का अधिक उपयोग से मोटापा , जोड़ों में दर्द.सूजन और पाचन क्रिया अव्यवस्थित कर रोग पैदा करता है।

4. खनिज.लवण

लाभ: ये शरीर को शक्ति और बल प्रदान नहीं करते है , लेकिन उनकी प्राप्ति में मदद करते है और शरीर को रोगी तथा निर्बल होने से बचाते है। इसलिए इनका शरीर में मौजूद रहना आवश्यक है। ये शरीर को क्षार प्रदान करते और अम्लता का शमन कर रोग का निवारण करते है।

शरीर में आवश्यक पोषक.तत्व :

स्वस्थ मानव शरीर का रासायनिक विश्लेषण करने पर उसमें ऑक्सीजन , कार्बन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन, कैल्सियम, फोस्फोरस, क्लोरिन, मैग्निशियम, गंधक, फ्लोरिन, सिलिकन, पोटेशियम, लोहा, ताँबा, जस्ता, एल्यूमिनियम, सोडियम, आयोडिन, निकिल, ब्रोमाइड, मेग्नीज, लिथियम एवं कोबाल्ट आदि 24 तत्व पाये जाते है। इन तत्वों की मात्रा एक स्वस्थ मानव शरीर में इस प्रकार होती है. ऑक्सीजन 1/2 से अधिक, कार्बन 1/5, हाइड्रोजन 1/10, नाइट्रोजन 1/50, कैल्शियम 1/30 भाग तथा शेष अल्प तत्व 1/22 भाग इन तत्वों के अनुपात की मात्रा शरीर में बनी रहना स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है। जब इनकी मात्रा में असंतुलन अर्थात् कमी या वृद्धि हो जाये तो स्वास्थ्य में गिरावट आना निश्चित बात है।

उक्त तत्वों का एक ऑर्गेनिक.चक्र सतत् चलता रहता है। ऑर्गेनिक से तात्पर्य प्राकृतिक रूप से है। धरती से इन तत्वों की पूर्ति वनस्पति से होती है। हर वनस्पति में सभी तत्वों का होना जरूरी नहीं। हर वनस्पति की अपनी एक विशेषता होती है , जो उनमें पाये जाने वाले तत्वों की अधिक मात्रा पर निर्भर करता है। ऑर्गेनिक रूप में ग्रहण किया गया तत्व ही जीवों के शरीर में आत्मसात् होता है। ये तत्व कोई स्वतंत्र रूप में नहीं पाये जाते बल्कि यौगिकों के रूप में पाये जाते है। हमें शरीर में सभी तत्वों का संतुलन बनाये रखने के लिए विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों को ग्रहण करना होगा।

13.8 **विभिन्न पोषक.तत्वों के कार्य एवं उनकी प्राप्ति**

1. कैल्शियम: इसकी कमी से हड्डियाँ कमजोर हो जाती है। इसकी ज्यादा मात्रा शजलम व उसकी पत्तियाँ, सहजन व उसकी पत्तियाँ , हरे प्याज पत्तों , अंजीर, पालक, संतरे, नारंगी, मूली, फूलगोभी, दूध, दही, बादाम, लेटीस पत्ती, तिल, गुड़ आदि में पायी जाती है।

2. लोहा: इसकी कमी से खून की कमी , शारीरिक.मानसिक कमजोरी और बिमारी को रोकने से अयोग्यता। इसकी ज्यादा मात्रा चौकरदार आटा , हरे मटर , मूली, प्याज, खजूर, अंजीर, मुनक्का, किशमिश, छुआरा, आलु बुखारा, मसूरदाल, बादाम, पालक, गुड़ और कमलगट्टा आदि में पायी जाती है।

3. सोडियम: इसकी कमी से रक्ताल्पता और बदहजमी। इसकी ज्यादा मात्रा ककड़ी , खीरा, चुकन्दर, मूली, फूलगोभी, बंदगोभी, पालक, गाजर, प्याज की पत्ती, सेब, अंजीर और दूध आदि में पायी जाती है।

4. फास्फोरस: इसकी कमी से दुर्बलता , थकान, हड्डी व नाडिय़ों की कमजोरी। इसकी ज्यादा मात्रा प्याज, अंकुरित अनाज, चौकरदार आटा, जौ, मटर, अखरोट, खीरा, ककड़ी, मूली, पालक, सेब, लॉकी, लेटीस पत्ती, पत्तागोभी, फूलगोभी और बादाम आदि में पायी जाती है।

5. सल्फर: इसकी कमी से शरीर में विकार उत्पन्न और यकृत में खराबी। इसकी ज्यादा मात्रा शलजम , पालक, मूली, नाशपाती, मूंगफली, चौकर आटा, प्याज, संतरे, फूल गोभी, पत्ता गोभी और टमाटर आदि में पायी जाती है।

6. पोटेशियम: इसकी कमी से कब्ज, फोड़ें.फूंसियाँ, जख्म देर से भरना और लीवर की कमजोरी। इसकी ज्यादा मात्रा सेब , खीरा, टमाटर, शलजम, लेटीस, प्याज, बंदगोभी, फूलगोभी, बीन्स, अनानास, नाशपाती, नीम्बू, संतरा और दूध आदि में पायी जाती है।

7. मैग्नेशियम: इसकी कमी से नाडिय़ों की खराबी , बैचेनी और खून में खटास अधिक। इसकी ज्यादा मात्रा चौकर आटा, टमाटर, मूंगफली, लेटीस, पालक, खजूर, अंजीर किशमिश, नीम्बू, संतरा, चुकन्दर, पत्तागोभी और सेब आदि में पायी जाती है।

8. आयोडिन: इसकी कमी से गले में गिल्टियों की खराबी और शरीर में विकृति एवं दुबलापन। इसकी ज्यादा मात्रा सिंगाड़ा, कमलगट्टा, अन्नानास, ककड़ी, गाजर, आलू, केला, नाशपाती और गोभी आदि में पायी जाती है।

9. ताँबा: आरबीसी को पोषण प्रदान कराता है। इसकी ज्यादा मात्रा अंगूर में पायी जाती है।

10. क्लोरिन: इसकी कमी से शरीर में विकार इकट्ठा हो जाते है। इसकी ज्यादा मात्रा नीम्बू , खजूर, टमाटर, पालक, चौकर आटा, नारियल, अन्नानास, केला, पत्तागोभी, दूध, लेटीस पत्ती और मूली आदि में पायी जाती है।

11. मैंग्निज: यह शारीरिक संतुलन और स्नायुओं को पुष्ट करता है। इसकी ज्यादा मात्रा सरसों और उसकी पत्तियों में पायी जाती है।

12. फ्लोरिन: पेशियों को पुष्ठ कराता है। इसकी ज्यादा मात्रा चुकन्दर, बकरी के दूध और पालक आदि में पायी जाती है।

5. विटामिन या जीवन.सत्व

यह भी खनिजों की भांति ही उत्प्रेरक का काम करता है। भोजन में विटामिन की कमी से हमारा शरीर रोगों से ग्रस्त हो जाता योंकि हमारे भोजन में विभिन्न विटामिनों की उपस्थिति से ही भोजन का पाचन , अवशोषण तथा शरीर के विभिन्न भागों में वितरण सम्भव है। विटामिन के कारण ही शरीर में विभिन्न समवर्त क्रियाएँ प्रतिपादित होती है।

विटामिन के प्रकार:

अनुसंधानों द्वारा अब तक ज्ञात प्रमुख विटामिन ए , बी, सी, डी, ई, के और पी है। घुलनशीलता को आधार मानते हुए इन्हें मुख्यत: दो भागों में बाँटा गया है।

1. पानी में घुलनशील विटामिन जैसे. विटामिन बी , सी और पी है। हमारे शरीर को इनकी आवश्यकता प्रतिदिन होती है। अत: ये तीनों विटामिन जिन खाद्यों में होते है। उन्हें प्रतिदिन खाने से शरीर में उनकी पूर्ति संतुलित बनी रहती है।

2. दूसरे वे शेष विटामिन जो पानी में घुलनशील नहीं है अर्थात् वसा में घुलनशील विटामिन जैसे. विटामिन ए, डी, ई, के आदि। इन्हें नित्य प्रतिदिन लेने की आवश्यकता नहीं योंकि इनकी खपत हमारे शरीर में कम ही होती है।

1. विटामिन ए (कैरोटन)

लाभ: आँखों की शक्ति और शरीर को हृष्ट.पुष्ट बनाता है।

प्राप्ति: यह दूध , घी, मक्खन, अण्ड़ें, गाजर, टमाटर, लेटीस, फल, शलजम पत्ती , चौलाई, धनिया और मछली का तेल आदि में पायी जाती है। यह विटामिन 100 डिग्री सेंटिग्रेड से अधिक ताप पर नष्ट हो जाता है अर्थात् इससे कम ताप पर या बर्फ में यह सुरक्षित रहता है।

पाचन: शरीर में इसके अवशोषण के लिए आँत में पित्त और चिकनाई का होना आवश्यक है।

शरीर पर प्रभाव: कमी से

1. आँख की विकृतियाँ जैसे. अन्धता , नेत्र रूक्षता , कार्निया की कोमलता तथा धूप का न सहन कर सकना आदि।

2. त्वचा की विकृतियाँ जैसे. त्वचा की शुष्कता, पसीना कम होना, दाद.खाँज.खुजली का होना, चेहरे पर मुहासों का होना तथा एग्जिमा का होना।

3. कान की विकृतियाँ जैसे. कम सुनाई देना, कर्णवाद आदि।

4. अस्थियों की विकृतियाँ जैसे. यह प्राय: बच्चों में होता है। बच्चों में दाँतों का देर से निकलना, हाथ.पैर व शरीर का टेढ़ा.मेढ़ा होना आदि।

5. भोजन के पाचन में गड़बड़ी का हो जाना।

6. मूत्र.मार्ग में पथरी का निर्माण होने लगता है।

7. श्वसन संस्थान से सम्बन्धित रोग. निमोनिया, श्वसनिका शोध तथा जीर्ण कास आदि।

8. रोग प्रतिरोधक शक्ति में कमी।

शरीर पर प्रभाव: अधिकता से त्वचा पीली पड़ जाती है।

2. विटामिन बी कॉम्पलेक्स

इसके कई उपविभाग जैसे. विटामिन बी1 या एफ, बी2 या जी, बी3, बी4, बी5, बी6, बी7, बी12 है। ये विटामिन अधिक ताप पर और सोड़ा.बाई.कार्ब के सम्पर्क में आने पर नष्टहो जाते है।

प्राप्ति: यह सभी फलों , टमाटर, पालक, गाजर, सेब, मटर, प्याज, चुकन्दर, लेटीस पत्ती, पत्तागोभी, घी, मक्खन, साबूत अनाज, चौकरदार आटा, कण समेत चावल आदि में पायी जाती है।

विटामिन बी 1 या (थाइमिन हाइड्रोक्लोराइड) की कमी के प्रभाव:

1. आँतों में शिथिलता आ जाती है। जिससे आँतों में भोजन सडऩे लगता है और रक्त के दूषित होने से शरीर में अनेक विषमताएँ पैदा होती है।

2. बेरी.बेरी रोग। 3. गर्भावस्था में वमन एवं अन्य समस्या।

4. रक्त परिवहन में बाधा। 5. भूख की कमी, अजीर्ण एवं कोष्ठबद्धता आदि।

विटामिन बी 2 या जी: पीले रंग का पदार्थ जल में कम घुलनशील है।

इसकी कमी से शरीर पर प्रभाव:

1. आँख की विकृतियाँ जैसे. आँख का उडऩा , कार्निया में शोध, आँख में जलन, बार.बार आँसू का आना, पलक में खुजली होना तथा धूप का न सहन कर सकना आदि।

2. चेहरे पर दाने तथ जीभ एवं होठ के रोग। 3. नाडिय़ों की शिथिलता।

विटामिन बी 3 (नियासिन): यह शरीर में धातु निर्माण की क्रिया में सहायक है।

इसकी कमी से शरीर पर प्रभाव:

1. श्वेत कुष्ठ भी हो जाता है। 4. आँत व यकृत से सम्बन्धित रोग हो जाता हैं।

2. हाथ.पैर के तलुओं में जलन होती है। 5. गर्भावस्था में वमन एवं अन्य समस्या।

3. श्वसन संस्थान से सम्बन्धित रोग. जीर्ण खाँसी।

विटामिन बी 6 (पॉइरिडॉक्सिन): यह श्वेत रक्त कणों के निर्माण में सहायक है।

इसकी कमी से शरीर पर प्रभाव:

1. गर्भावस्था में वमन एवं अन्य समस्या तथा होठ के रोग।

2. पैलेग्रा रोग के लक्षण. मानसिक परेशानी , नींद न आना , चीजें अच्छी न लगना , पागलपन आना, त्वचा का शुष्क होना , पतले दस्त आना , रक्त की कमी होना , मुख सम्बन्धी रोग होना और कमजोरी होना।

विटामिन बी 7 की कमी का प्रभाव:

1. पैलेग्रा रोग।

2. मानसिक अशान्ति हो जाती है।

3. त्वचा पर लालिमा और खुजली हो जाती हैं।

विटामिन बी 12 (कोबालमिन): यह लाल व श्वेत रक्त कणों के निर्माण में सहायक है। इसलिए इसे लाल विटामिन भी कहते है।

इसकी कमी से शरीर पर प्रभाव:

1. रक्ताल्पता की समस्या पैदा हो जाती है तथा होठ के रोग। 2. पैलेग्रा रोग ।

3. विटामिन सी (एस्कार्बिक एसिड़)

लाभ: 1. दाँत.मसूड़ों व हड्डियों का निर्माण कर मजबूती प्रदान करना है।

2. टूटी हड्डियों को जोडऩे में सहायक है।

3. संक्रमण जीवाणुओं से रक्षा करता है तथा घावों को भरने में सहायक है।

प्राप्ति: यह नीम्बू वर्गीय फलों में नीम्बू, संतरा, आँवला, मौसमी, सभी हरी पत्तियों वाली सब्जियों, गाजर, प्याज, टमाटर, पालक, सभी फलों, पत्तागोभी, दूध, बेल, सोया एवं हरी मिर्च आदि में पायी जाती है।

इसकी कमी से शरीर पर प्रभाव: स्कर्वी रोग हो जाता है। इस रोग में दातों व मसूड़ों में विकृति पैदा होकर रक्त का रिसाव होने लगता है तथा घाव नहीं भरते है।

4. विटामिन डी

लाभ: 1. यह विटामिन आँत में कैल्सियम एवं फास्फोरस के अवशोषण में सहायता करता है।

2. बच्चों के सुखारोग के निवारण में मदद करती है।

प्राप्ति: यह अंगूर, साबूत अनाज, सभी हरी सब्जियों, सूर्य किरण, दूध, अण्ड़ा, मछली का तेल आदि में पायी जाती है।

शरीर पर प्रभाव:

1. शरीर में विटामिन डी की कमी से कैल्सियम एवं फास्फोरस की मात्रा कम हो जाती है। जिससे निम्र रोग हो जाते हैं. रीकेट्स रोग, संधिवात, दमा, शारीरिक निर्बलता आदि।

2. रीकेट्स रोग: यह शरीर में कैल्सियम एवं फास्फोरस के अवशोषण एवं संचय का न होने से बच्चों में देरी से दाँत का निकलना, रीढ़ का पीछे की ओर झुकना, सिर का चौखटा होना, उदर का बाहर की ओर निकलना, यकृत.प्लीहा की वृद्धि होना, पैरों पर देरी से चलना और सिर पर पसीना आना आदि।

5. विटामिन ई

लाभ: 1. स्त्रियों की संतानोत्पति शक्ति बढ़ती है और बांझपन के निवारण में मदद करती है।

2. बार.बार गर्भपात होने से एकाएक रक्त.स्त्राव होने की प्रवृति को रोकता है।

3. पुरूषों में भी शुक्राणुओं को पुष्ट करता है। स्त्रियों व पुरूषों में प्रजनन सम्बन्धी अवयवों को पुष्ट बनाता है।

4. ऐच्छिक पेशियों को क्रियाशील बनाने में मदद करता है।

प्राप्ति: यह अंकुरित अनाज, मटर, मसूर, पालक, मूंगफली, बादाम एवं सेब आदि में पायी जाती है।

6. विटामिन के

यह रक्त को जमाने में सहायक है। रक्त में पाये जाने वाला प्रोथ्रोम्बीन रक्त को जमाने का काम करता है अर्थात् इसे रक्त स्त्राव विरोधक विटामिन के नाम से जानते है। प्रोथ्रोम्बीन का निर्माण यकृत में विटामिन के की उपस्थिति में होता हैं। इसकी कमी से हेमरेज व पीलिया हो जाता है।

लाभ: 1. घाव पर रक्त को जमाता या उसे बाहर न आने देता।

2. विशेषकर गर्भवती महिलाओं में जीवनी.शक्ति पैदा करता है।

प्राप्ति: यह अनार, संतरा, सेब, पत्तिदार हरी सब्जियों, चौलाई, पालक एवं धनियां आदि में पायी जाती है।

7. विटामिन पी: यह विटामिन सी से मिलता.जुलता हैं। रक्तवाहिनियों की दिवालों को स्थिरता देता है।

6. जल

जल ही जीवन। इसका स्थान प्राणवायु के बाद दूसरा है। इसका अध्ययन आगे किया जा चुका है।

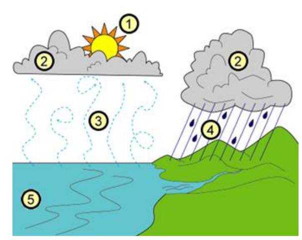

रासायनिक संघठन: जल हाइड्रोजन और ऑक्सीजन के संयोग से बना है। यह अकार्बनिक है। शरीर में 3/4 भाग जल का होने के कारण इसका महत्व बहुत ज्यादा हैं।

लाभ: शरीर की लगभग सभी क्रियाएँ इसी के माध्यम से सम्पन्न होती है। यह प्राकृतिक घोलक होने के कारण शरीर का सारा का सारा मल , अपशिष्ट एवं विष धोकर शरीर से बाहर कर देता है। जिससे शरीर में रक्त एवं नाडि़यों की शुद्धी होती है और शरीर की आद्र्रता बनाये रखकर शरीर के ताप को संतुलित एवं नियंत्रित करता है। यदि जल ग्रहण नहीं किया जाये तो शरीर में प्राण 5.7 दिनों से ज्यादा नहीं रह सकते योंकि इसके बिना शरीर सूख कर विषाक्त हो जाता है।

आहार के साथ जल की आवश्यकता ही नहीं बल्कि जल ग्रहण करना बहुत जरूरी है। जल ही जीवन है। जल रक्त को पतला कर रक्त परिसंचरण में मदद करता , शरीर का ताप नियंत्रित करता है , पाचन शक्ति बढ़ाता है, शरीर में उत्पन्न गैस को मिटाता है, तन.मन को शांत व प्रसन्न कर देता है अत: जल प्राणदाता है। इसलिए जल जीवन के लिए होना आवश्यक है। इसलिए जल पीने के लायक हो तथा वह रोग उत्पन्न करने वाले तत्वों से सुरक्षित और पूर्ण स्वंतत्र हो , रसायनों.अपशिष्टों से मुक्त हो , स्वादिष्ट, ताजा एवं साफ.सुथरा हो। आज के वैज्ञानिक युग में दूषित जल मानव.कार्यों का ही परिणाम है। चाहे जो भी हो जल तो जीवन के लिए अमूल्य है ही। उत्तम स्वास्थ्य पाने के लिए दूषित जल से हमेशा बचना होगा। साथ ही समस्त बाजारी पेय, डिब्बों में बंद खाद्य एवं पेय पदार्थो को खाने.पीने से बचना आवश्यक ही नहीं बहुत जरूरी है।

जल का उपयोग:

1. जब प्यास लगे तब तुरन्त पानी अवश्य पीयें।

2. सुबह उठकर और सोते समय मौसम के अनुसार कम से कम 1.1 गिलास पानी अवश्य पीयें। ऐसा करने से शरीर की आन्तरिक इन्द्रियाँ धुलकर शुद्ध हो जाती है।

3. कभी.भी ज्यादा गर्म व ज्यादा ठण्डा पानी न पीयें।

4. पूरे दिन में मौसम के अनुसार कम से कम 2 लीटर पानी अवश्य पीयें।

5. भोजन के साथ बीच.बीच में थोड़ा.थोड़ा सा पानी पी सकते है, लेकिन ज्यादा मात्रा में नहीं।

6. भोजन करने के आधा घंटे पहले पानी अवश्य पी लें। ताकि अन्ननाली धूलकर साफ हो जायें।

7. भोजन करने के कम से कम डेढ़ या दो घण्टे बाद में पानी पीयें , लेकिन दाँत.मसूड़ें, जीभ अवश्य पानी से साफ करें या कूल्ला करके मुंह धोयें।

8. सुबह उठते ही कम से कम अपने हाथों को, आँखों को नाक को और चेहरे को अवश्य धोयें।

9. नित्य प्रतिदिन स्नान.ध्यान जरूर करें तथा अपनी ज्ञानेन्द्रियों एवं उत्सर्जी अंगों की अच्छी सफाई करें।

10. एक साथ अधिक पानी पीकर गुर्दो को अनावश्यक भार मत पहुंचाऐं।

11. कोई भी पेय पदार्थ बड़ी तेजी से न पीएं। उसे धीरे.धीरे और हो सकें तो चूस कर पीने की आदत डालें।

7. फुजला या रफेज़ (रेशेदार भोजन)

आतों की अच्छी सफाई भोजन में मौजूद रेशों के द्वारा ही सम्भव है। ये रेशें आतों की झाडू की तरह सफाई करते है। जिससे पाचनांगों और उनकी कार्य प्रणाली सशक्त बनती है। भोजन में रेशों का अभाव होने का मतलब कब्ज है। जो रोग का प्रमुख दाता (कारण) है। आधुनिक मशीनों से खाद्य पदार्थो के रेशे निकाल दिये जाते है या मशीनों द्वारा रेशों की बारीक कटिंग कर दी जाती है। जिसका परिणाम बहुत घातक होता है, क्योंकि ये रेशे अन्न नाली की अच्छी सफाई कर कब्ज दूर करते है।

रेशें (फुजला) सभी प्रकार के फल, सब्जी, तरकारी एवं अनाज में पाया जाता है।

भोजन

रोग (कफ) के आधार पर भोजन को दो भागों में बाँटा गया है।

1. रोग कारक भोजन: दाल, तेल, घी, शक्कर, माँस और मछली आदि।

2. रोग निवारक भोजन: केले व कटहल को छोडक़र सभी फल तथा कंद.मूल को छोडक़र सभी हरी सब्जियाँ रोगावस्था में रोग निवारक भोजन का उपयोग धीरे.धीरे शुरू करना चाहिए , अन्यथा शरीर शोधन का कार्य बड़ी तेजी से होने लगेगा, जिससे रोगी को कष्ट हो सकता है।

खाद्य पदार्थो के भेद

खून में खारापन (क्षारता.एल्केलाइन) और खटाई (अम्लता या एसिड़) दो विशेष गुण है। एक स्वस्थ और तन्दुरूस्त शरीर के रक्त में क्षार व अम्ल का अनुपात क्रमश: 80 : 20 होता है। अगर शरीर में कोई भी रोग हो जाये, तो निश्चत ही खून में खटाई की मात्रा बढ़ जाती है। इसलिए अगर भोजन.क्रम को सुधार कर खून के अन्दर के खारेपन और खटाई का अन्दाज ठीक कर दिया जाय तो रोग जाता रहेगा और अगर रोज के भोजन में ऐसी ही चीजें ज्यादा खाई जाये, जिनमें खारेपन का गुण है तो न तो खून खराब होगा और न रोग होगा। याद रहे कि खून में खटाई का होना भी जरूरी है पर उसकी मात्रा 20 प्रतिशत ही उपयुक्त है। आजकल हम लोग जो अप्राकृतिक एवं गरिष्ट भोजन करते है , वे सभी खटाई पैदा करने वाले और अस्वास्थप्रद होते है। इस प्रकार शरीर पर प्रभाव की दृष्टिसे खाद्य पदार्थ को दो भागों में बाँटा है:

अ. क्षारिय पदार्थ

ये वे खाद्यान्न है, जिनसे खून में खारापन आता है। खारापन पैदा करने वाली भी सभी चीजें रोगी को नहीं दी जाती। प्राकृतिक चिकित्सक रोग और रोगी की हालत देखकर उनमें से उपयुक्त चीजें ही खाने को कहता है। इस भाग में खनिज लवण एवं विटामिन आदि है। यह रक्त की शुद्धि और तन्तुओं का निर्माण एवं मानसिक शान्ति प्रदान करता है। क्षार अम्ल का क्षमन करता है, रोगों से बचाता है, रोगों का निवारण करता है और शरीर को स्वस्थ रखता है।

1. फल व मेवे: सभी मीठे एवं पके फल. नीबू , नांरगी, सन्तरा, चकोतरा और अन्नानास थोड़ा या ज्यादा खट्टे होते हुए भी क्षारमय है। लेकिन ऐसे फल जैसे. बैर जो पकने पर भी कुछ खट्टा रह जाता है , क्षारमय नहीं है। ऐसे जीर्ण रोगी जिनकी पचाने की ताकत बहुत कमजोर पड़ गई है , सिर्फ फलों और तरकारी का रस एवं सूप देना चाहिए। कच्चे नारियल का पानी भी बहुत लाभदायक है।

सूखे मेवे जैसे. किशमिश, मुनक्का, अंजीर, खजूर, छुहारा, बादाम, अखरोट, चिलगोजा, काजू, मूंगफली और पिश्ता आदि बहुत गुणकारी एवं क्षारमय है , ये शरीर से विकारों को बाहर निकालने में सहायक है। उपवास इत्यादि से सफाई हो जाने के बाद नियमित भोजन में ताजे फलों के साथ सूखे मेवे खाना बहुत स्वास्थ्यप्रद है।

2. सब्जियां: सभी पत्तीदार और फलदार हरी सब्जियां जो जमीन के ऊपर होती है , जैसे. लौकी, तरोई, नेनुआ, परवल, टिण्डा, सहजन, ताजे सेम और लौमिया इत्यादि क्षारमय है। लौकी, तरोई, नेनुआ इत्यादि के छिलके को न फेंकना चाहिए। इन्हीं छिलकों में प्रकृति ने बहुत.सी चीजें दी है, जो खून साफ करती है। जिन तरकारियों के छिलके कड़े और कड़वे हों उन्हें फेंक सकते है। तरकारियों के छिलके में खनिज.लवण, विटामिन है और उनसे ही पेट की सफाई होती है, लेकिन इस सम्बन्ध में याद रखने लायक एक बात यह है कि जिन्हें अक्सर पेट का दर्द उठता है या पतले दस्त आते है या आँव गिरती है , उनको पहले बिना छिलके की बनी सब्जी चाहिए। इन रोगियों को छिलके से पेट में जलन.सी होगी और दस्तों की मात्रा बढ़ जायेगी। जब उपचारों से बंधे दस्त आने लगें तो फिर छिलकेदार सब्जी शुरू करनी चाहिए।

सभी कन्द सब्जियां जैसे. आलू खटाई वाली नहीं है पर भारी और देर से पचने वाला होने से रोगी को नहीं दें। छिलकेदार आलू क्षारमय है। कई कन्द सब्जियां जैसे. शलजम , गाजर और मूली बहुत अच्छी है लेकिन उन्हें ठीक तरीके से (आंच धीमी और बर्तन का मुंह ढक़ा रहे) बनाना चाहिए। फूल गोभी बहुत अच्छी क्षारमय है पर बादी करती है, इसलिए रोगियों को नहीं देतें।

3. दूध: दूध पुष्टिकारक है न कि विकार निकालने वाला। ताजे फल व सब्जी (ज्यादातर कच्ची ही) विकार निकालने वाले भोजन है। दूध और दूध से बने पदार्थ घी, मक्खन क्षारमय जरूर है पर भारी होने के कारण रोगियों को नहीं दिये जातें। दूध बहुत रोगों में काम में लाया जा सकता है। बहुत से जीर्ण रोगों में खास कर जिनमें रोगी बहुत कमजोर हो गया है, दूध का इस्तेमान जरूरी हो सकता है। पर घी और मक्खन का व्यवहार तन्दुरूस्ती की हालत में ही लाभदायक हो सकता है। दही या मट्ठा जो ख _ा नहीं हुआ , अच्छा क्षारमय पदार्थ है। मट्ठा एक बहुत उत्तम पदार्थ है। उसमें दूध के सभी गुण रह जाते है , पर उसमें मक्खन नहीं रहने से दूध जैसा भारीपन नहीं रहता , इसके अलावा जब दूध का दही जमता है तो उसमें लैक्टिक एसिड आ जाती है, जो पेट के लिए अच्छा है। यह लैक्टिक एसिड मट्ठे में भी रहता है।

सभी जीर्ण रोगों में , पुरानी खांसी और दमें में भी मट्ठे का इस्तेमाल कर सकते है। पर मट्ठा खट्टा न होना चाहिए, मक्खन बिल्कुल न हो और मट्ठा गाय के दूध के दही से बना हों। जिससे वर्षों का इकठ्ठा विकार बाहर निकाला जा सकता है। मट्ठे से अक्सर वायु पैदा होती है और किसी.किसी की मट्ठा बिल्कुल अनुकूल नहीं पड़ता, एक.दो दिन के प्रयोग से जाना जा सकता है कि मट्ठा उसके लिए अनुकूल होगा या नहीं। मट्ठे के साथ संतरा व मौसमी का रस मिलाकर देने से वह अनुकूल होने लगता है। सोयाबीन का दूध

गाय के दूध जैसा पौष्टिक एवं बकरी के दूध जैसा अतिशीघ्र पाचक होने के साथ ही लगभग 80 प्रतिशत क्षारीय प्रकति का होता है। कालेस्ट्रोल को कम करने वाला शरीर की लगभग सभी आन्तरिक बिमारियों को हरने वाला होता है। जैसे. हृदय , गुर्दा, फेफड़ा, यकृत, मस्तिष्क, स्नायु आदि अंगों में जान डालने के साथ ही मधुमेह, हिस्टीरिया, मिर्गी, रक्ताल्पता एवं वात रोगों का अतिशीघ्र शमन करने वाला है।

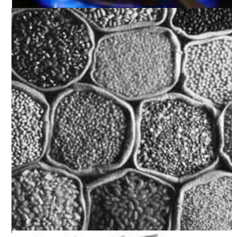

4. अनाज: ऐसा आटा जिसका चोकर नहीं निकाला गया है और ऐसे चावल जिनकी ऊपर की भूसी (कन) नहीं निकाली गई है. आटे के चोकर और चावलों की लाल.पीली ऊपर वाली तह में बहुत तरह के प्राकृतिक खनिज.लवण रहते है, लेकिन इनको हम निकालकर आटे और चावल के मुख्य गुण नष्ट कर देते है। चोकरदार आटे और भूसी वाले चावल क्षारमय पदार्थो की सूची में आते है।

5. छिलके सहित दाल: दाल प्रोटीन अर्थात् मांस बढ़ाने वाला पदार्थ है। इसका इस्तेमाल तभी तक जरूरी है, जब तक शरीर में मांस बनता और बढ़ता है। तीस साल से अधिक उम्र वालों को दाल का इस्तेमाल कम कर देना चाहिए। पचास साल लगते.लगते दाल बिल्कुल छोड़ देनी चाहिए। छिलके सहित अर्थात् साबुत दाल क्षारमय पदार्थो की सूची में आते है। दाल, रोटी या चावल के साथ सिर्फ उतनी ही लें , जितनी से दाल खाने का आनन्द और लाभ मिल जाये पर पेट में कीचड़ न इकठ्ठा हों। क्योंकि पचाने वाले रसों का कीचड़ पर कोई प्रभाव नहीं हो पाता। रोगियों को दाल बिल्कुल नहीं दी जाती। सिर्फ रोटी.भाजी या चावल.भाजी या रोटी या भाजी खिलाते है। तन्दुरूस्ती हासिल करने के लिए अगर पहले कुछ दिनों तक अकेली रोटी अच्छी न लगे तो भी उसे चबा.चबा कर खा जाओं। दो.चार दिनों में ही अकेली रोटी का स्वाद मिलने लगता है।

6. गुड़ और शहद: गुड़ और शहद बहुत अच्छी चीज है , जो क्षारिय होती है। शहद की डोरे वाली मिश्री प्राकृतिक और शरीर में तुरन्त खप जाने वाली होती है, लेकिन शहद शुद्ध हों। कमजोरी की हालत में रसाहार के साथ.साथ एक चम्मच शहद भी दिन में दो.तीन बार देने से ताकत बनी रहती है।

7. अंकुरित अनाज: ये सभी विटामिन , कैल्शियम, मैग्नीशियम, पोटेशियम, फास्फोरस, आयरन आदि खनिजों का अच्छा स्त्रोत है। अंकुरित अनाजों का कार्बोज व प्रोटीन क्रमशः शीघ्र ही सुपाच्य ग्लूकोज व एमिनों एसिड़ में बदल जाता है। जो पूर्व पचित भोजन कहलाता है। यह तुरन्त पचकर ऊर्जा देने वाला, कब्ज दूर करने वाला, भूख बढ़ाने वाला, शरीर से विषैले पदार्थ व गैस निकालने वाला तथा शरीर को सुन्दर, स्वस्थ और रोग मुक्त बनाता है।

मुख्य अंकुरित अनाज: चना , मूँग, मोठ, मूँगफली, सोयाबीन, मटर, गेहूँ, मक्का, बाजरा, ज्वार एवं तिल आदि।

अंकुरित अनाजों के साथ खायें जाने वाले पदार्थ:

1. सलाद: टमाटर, गाजर, खीरा, ककड़ी, शिमला मिर्च।

2. हरे पत्ते: धनिया, पालक, बथुआ, पुदिना।

3. मेवे: खजूर, किशमिश, मुनक्का, शहद।

4. फल: नींबू वर्गीय फल जैसे. नीबू,

नारंगी, सन्तरा।

अंकुरित करने की विधि: अनाज की सफाई कर, धोकर एक बर्तन में पानी में भिगो दें। फिर 10.12 घण्टे के बाद निकालकर गीले सूती कपड़े में लेकर नमी व हवादार स्थान पर रखें। 10.12 घण्टे से यह अनाज अंकुरित हो जायेगा। इस अंकुरित अनाज को एक बार साफ पानी से धोकर स्वास्थ्य लाभ हेतु काम में लें।

ब. अम्लीय पदार्थ

ये वे खाद्यान्न है, जिनसे खून में खटाई आती है। इस भाग में कार्बोज, वसा और प्रोटीन आदि है। यह सारे शरीर की वृद्धि, टूट.फूट की क्षति.पूर्ति और शक्ति तथा उष्णता की प्राप्ति कराता है। इसकी आवश्यकता भी प्रतिदिन रहती है , जिनके वैज्ञानिक नाम इस प्रकार है. मेलिक ऐसिड , साइट्रिक ऐसिड, टार्टरीक ऐसिड, लेक्टिक ऐसिड, ऐसिटिक ऐसिड, ओजोलिक ऐसिड, बुटीरिक ऐसिड एवं यूरिक ऐसिड आदि। ये ऐसिड प्राकृतिक रूप में शरीर के लिए उपयोगी होते है। उत्तम स्वास्थ्य के लिए प्रयोगशालाओं में तैयार किये गये ऐसिड जो दवा के रूप में डॉक्टर दिया करते है, वे शरीर के लिए घातक ही सिद्ध होते है।

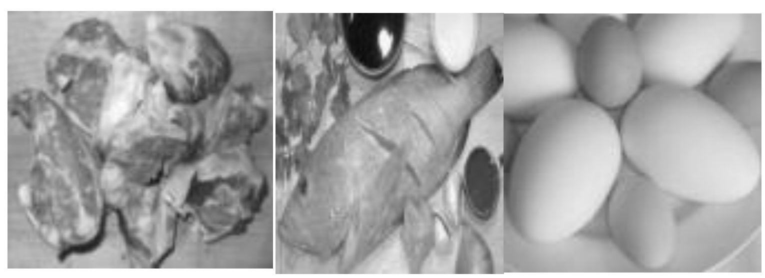

1. मांस, मछली व अंड़ा : अंड़ों की सफेदी में खटाई है और जर्दी में खारापन होता है। मांसाहार के पदार्थो में अंड़ा सबसे कम हानिकारक जरूर है , लेकिन वह स्वास्थ्य के लिए अनिवार्य नहीं है। फिर भी इसमें कोई शक नहीं कि कुछ हालतों में अंड़ा बड़े काम का साबित होता है। कच्चे या आधे उबले अंड़े की जर्दी बहुत जल्दी पचती और ताकत पैदा करती है। इसलिए अगर अंड़ा खाना ही हो तो कच्चा या आधा उबला खाना चाहिए।

अंड़ा खाने का सबसे अच्छा ढंग़ यह है. कच्चे अंड़े की जर्दी को नीबू या नारंगी के रस के साथ अच्छी तरह मिलाइये और फिर उसमें थोड़ा शहद मिलाकर पी जाइए। ऊपर से थोड़ा.सा कच्चा या एक उफान का दूध पी जायें। जिनके शरीर में बहुत गर्मी है उन्हें अंड़े का व्यवहार न करना चाहिए। वीर्यदोष वालों के लिए भी शुरू से ही अंड़ा खाना ठीक नहीं है। फिर अंड़े का व्यवहार अगर किया जाय तो वह सर्दी ऋतु में ही ठीक होता है। जहां तक हो सके, अंड़ा ताजा हो क्योंकि बासी अंड़े के अन्दर का पदार्थ बहुत तेजी से सड़ता है और आंतों में बहुत जल्दी कीड़े पैदा करता है।

मांस हानिकारक इसलिए है कि जानवर के शरीर के बहुत से रेशें , खून के विकार और जहरीले पदार्थ उसमें रह जाते है। जिस समय जानवर मारे जाते है। उस समय मरने के डर से भी उनके खून में जहर पैदा हो

जाता है। इन सब कारणों से मांस खाने वाले को बहुत हानि का सामना करना होता है , क्योंकि उसको खाने से चाहे पहले ताकत मिलती हो, लेकिन शरीर में जहरों के इकट्ठा होने से रोग पैदा होंगे।

2. दाल : बिना छिलके की दालें मटर, सेम, लोबिया सूख जाने पर अम्लीयता बढ़ जाती है।

3. मैदा या बेसन : घी या तेल में इनके बने पकवान. पूड़ी कचौरी , मालपुआ, हलुआ, मिठाई, पकौड़ी इत्यादि पचने में बहुत भारी है। इसलिए रोगियों को नहीं दें। वैसे ये बहुत महीन पीसे जाने के कारण आँतों को भारी नुकसान पहुंचाते है।

4. सफेद चीनी, अचार, मुरब्बा आदि अम्लीय है, इसमें स्वास्थ्यप्रद कोई चीजें नहीं है।

5. शराब, चाय, कहवा (काफी) इत्यादि भी अम्लीय है, इसमें स्वास्थ्यप्रद कोई चीजें नहीं है।

6. श्वेतसार : इससे शरीर में गर्मी और स्फुर्ती आती है. गेहॅ , चावल, गुड़, चीनी, फलों की मिठ्ठास और ऐसी सभी चीजें, जिनको चबाने से सफेद लेई.सी बनती है और स्वाद में कुछ मिठ्ठास आ जाती है। आलू, घुइयाँ (अरवी), जमीकन्द और केले क्षारमय है , पर अनियमित रूप से खाये जाने पर पेट में खटास पैदा करती है।

7. प्रोटीन : इससे मांस बढ़ता है और शरीर में स्फुर्ती व ताकत आती है. दूध , मांस, मछली, अंड़ा, दलहन, सेम, लोबिया और सूखे मेवें आदि प्रोटीनजन्य पदार्थ है। इनमें बिना उबाले दूध और छिलकेदार दालों को छोड़ सभी खटाई पैदा करने वाले है। अधिक समय व अधिक बार उबले हुए दूध से खटाई पैदा होती है।

अन्त में यह समझ लेना जरूरी होगा कि भोजन अवसर के अनुसार होता है। प्राकृतिक उपचार के दिनों में जो भोजन दिया जाता है। वह शरीर से विकार निकलने हेतु और शक्ति प्रदान करने के लिए होता है , जबकि तन्दुरूस्ती के दिनों में दिया जाने वाला भोजन शरीर को हष्टपुष्ट बनाता है।

खाद्य पदार्थो का श्रेष्ठ संयोग

भोजन, जीवन देने वाला और लेने वाला दोनों रूपों में विद्यमान है। चाहे अमृत ही क्यों न हो , मात्रा से अधिक ग्रहण किया जायें तो वह भी विष का ही काम करेगा। ठीक इसी प्रकार शुद्ध मन से उत्पादित किया, पकाया, बनाया और खाया गया भोजन पाचक, बहुत श्रेष्ट, शक्तिवर्धक और प्राण धारक होता है।

भोजन की पाचन.क्रिया में शरीर को सबसे ज्यादा परिश्रम करना होता है। जो लोग खान.पान सम्बन्धी महत्वपूर्ण सूत्रों का पालन नहीं करते, वे लोग महज स्वाद के पीछे सैकड़ों रोगों के धनी होते है। भोजन के पाचन सम्बन्धी यह ध्यान होना चाहिए कि भोजन के पेट में पहुंचते ही शरीर की सारी शक्तियां उसको पचाने में लग जाती है। ऐसा देखा गया है कि अतिभोजन के थोड़ी देर बाद ही सुस्ती मालूम होने लगती है। इसका कारण यही है कि पचाने का काम जारी रखने के लिए शरीर के सभी अंगों का बल खिंच.खिंच कर पेट की ओर चला जाता है। शरीर उतना ही भोजन पचा सकता है, जितनी की उसमें शक्ति है और यह शक्ति सब आदमियों में एक.सी नहीं होती। यदि अपनी शक्ति से अधिक काम शरीर को करना पड़े तो वह जैसे.तैसे निभा लेगा।

आजकल लोगों ने अपना खान.पान बदलकर इतना अप्राकृतिक बना लिया है कि बच्चा माँ के गर्भ में से ही बहुत से रोगों को लेकर पैदा होता है , पैदा होने पर भी उसको अप्राकृतिक जीवन का वातावरण ही मिलता है। जिसके चलते वह अनेक शारीरिक एवं मानसिक रोगों से ग्रस्त हो जाता है और वह दुनिया में लोक प्रसिद्ध अप्राकृतिक चिकित्सा पद्धति का शिकार होकर अपने जीवन को महाकष्टों में धकेल देता है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को जो स्वास्थ्य प्राप्त करना चाहता है, उसे उक्त खान.पान सम्बन्धी महत्वपूर्ण सूत्रों को ध्यान में रखते हुए पालन करना चाहिए। क्योंकि उचित भोजन के साथ.साथ उपवास , व्यायाम, निद्रा.आराम एवं सफाई इत्यादि का पालन करने पर ही उत्तम स्वस्थ्य की प्राप्ति होती है। इस हेतु प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञों से मार्गदर्शन प्राप्त कर सकते है।

वर्तमान जगत् के सभ्य पुरूष बेमेल चीजें एक साथ खाने के आदी हो गये है। वे भोजन के पाचन सम्बन्धी बातों पर तथा अपने स्वास्थ्य पर ध्यान नहीं दे रहे है। इस कारण वे अपने शरीर को क्षति पहुंचाकर स्वास्थ्य में ही गिरावट नहीं कर रहे है, बल्कि स्वयं को शारीरिक, मानसिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक रूप से अवनति की ओर ले जा रहे है। अत: उत्तम स्वास्थ्य प्राप्ति और स्वयं को उन्नत बनाने हेतु खाद्य पदार्थो के पाचन संबंधी जानकारी हमें रखनी होगी। जो निम्नवत्है:

1. कार्बोज का पाचन मुंह की लार के क्षार के माध्यम से आरम्भ होकर आमाशय में पूरा होता है। इसलिए कार्बाज खाद्यों को जितना अधिक मुंह में चबा.चबा कर निगला जाएगा। उतना ही इसका अच्छा पाचन हो सकेगा।

2. प्रोटीन का पाचन मुंह से प्रारम्भ नहीं होता बल्कि आमाशय में ही अम्लरस के माध्यम से पचता है।

3. वसा का पाचन न तो मुंह में और न ही आमाशय में बल्कि उसका पाचन छोटी आँत में पित्ताशय क्षेत्र में होता है। इस कारण यदि कार्बोज के साथ प्रोटीन खाया जायें , तो प्रोटीन के कारण आमाशय में अम्ल का स्राव होगा और कार्बोज के साथ आया हुआ क्षार को निष्क्रिय बना देगा , जिससे न तो प्रोटीन का पाचन होगा और न ही शेष अपचित कार्बोज का। अत: पाचन क्रिया में बाधा उत्पन्न होगी। इसलिए चावल या रोटी , आलू आदि कार्बोज के साथ दाल , दूध और प्रोटीन नहीं खाने चाहिए। यह संयोग विरूद्ध है। बल्कि कार्बोज के साथ क्षारोत्पादक पदार्थ जैसे. हरी साग.सब्जियाँ , तरकारियाँ, गुड़ आदि खाने चाहिए।

4. कार्बोज के साथ में खट्टी चीजें न खायें या कार्बोज के बाद खायें जैसे. हरा निम्बू , खट्टा दही, खट्टी छाछ आदि खट्टी चीजे। यदि ये चीजें कार्बोज के साथ खाई गई तो मुंह से निकलने वाले क्षार को यह नष्ट कर देता है। जिससे कार्बोज का पाचन नहीं हो पाता है। इसके साथ पका हुआ पीला नीम्बू+सलाद खा सकते है।

5. हरा निम्बू, खट्टा दही, खट्टी छाछ आदि खट्टी चीजें सिर्फ प्रोटीन के साथ खाई जा सकती है।

6. आधुनिक मशीनों से खाद्य पदार्थो के रेशे निकाल दिये जाते है या मशीनों द्वारा रेशों की बारीक कटिंग कर दी जाती है। जिसका परिणाम बहुत घातक होता है, क्योंकि ये रेशे अन्न नाली की अच्छी सफाई कर कब्ज दूर करते है।

7. कच्ची चीजों को अपने आहार में ज्यादा व प्रतिदिन स्थान देें , जैसे. फल व तरकारियाँ और कच्ची खाई जाने वाली सब्जियाँ।

8. जो खाद्य पदार्थ आपको पचने में भारी लग रहा है, उससे हमेशा परहेज करें।

9. स्वस्थ रहना है तो मिर्च.मसालों वाले काल्पनिक स्वाद से परहेज करना होगा।

10. भोजन में नमक ज्यादा मात्रा में खाकर गुर्दों पर अतिरिक्त भार न डालें।

11. भोजन प्रतिदिन निश्चित समय भूख लग जाने पर ही करें, अन्यथा उस समय का भोजन त्याग दें।

12. एक बार के भोजन में बहुत.सी चीजों का संयोग करके एक साथ न खायें।

13. खाना बनाते समय अच्छे मनोभावों को प्रकट करने से भोजन स्वास्थ्यवर्धक बनता है।

14. खाना.खाते समय मौन रहें तथा अपना ध्यान खाने को चबाकर निगलने पर लगायें।

15. प्रात: काल हल्का नाश्ता, दोपहर में भोजन, भोजन के 3.4 घण्टे बाद हल्का नाश्ता और शाम को भोजन करें। इन चार बार के सिवाय मुंह में पानी के अलावा कुछ भी न डालें.खायें।

16. भोजन करने के लिए बैठते ही जल पीना और भोजन करते ही जल पीना विष पीने के तुल्य है , लेकिन भोजन करते समय बीच.बीच में सीमित मात्रा में पका निम्बू.पानी , दही, छाछ, फल.सब्जियों का रस या सूप पीना अमृत तुल्य है।

17. प्रात: काल खाली पेट फलों का सेवन करना अधिक लाभदायक हैं।

18. भोजन कर लेने पर वज्रासन में 5.10 मिनट बैठें।

किसके साथ क्या खाये और क्या न खायें

खाद्य	**अनुचित मेल** (न खायें)	**उचित मेल** (खायें)
दू	रोटी, दहो, केला, मूली, खरबूज, तरबूज, खीरा, ककड़ी	खट्टे फल, आम, खजूर
दही	रोटी, दाल, पनीर, केला, मूली, खरबूज, तरबूज, खीरा, ककड़ी, जामुन, गर्म दही, ठण्ड़ा व खटा दही, खीर	चावल, फल, हरी सब्जी, सलाद, बथुआ, आँवला चूर्ण
शहद	अंगूर, मूली तथा गरम जल.दू	रोटी
दाल	चावल, रोटी, दही, आलू, शकरकन्द	घी, मक्खन, खट्टे फल, हरी सब्जी, गुड़
उड़द	मूली	गुड़
खिचड़ी	खीर	हरी सब्जी

रात्री में	दही व मूली	दू
रोटी	इमली, दाल	घी, गुड़, हरी सब्जी, घी, सलाद, मुनक्का, मक्खन, पिण्ड खजूर, शहद, सलाद
चने की रोटी	दाल	दही, हरी सब्जी, टमाटर, खट्टे फल
चावल	दाल	मलाई, हरी सब्जी, शहद, गुड़, नारियल गिरी, आम रस, किशमिश, दही, गर्म दू, अजवायन
आलू	दाल	गुड़, तेल और हरी सब्जी
आम		दू, मक्खन, जामुन, सौठ व गुड़
खरबूज, तरबूज	कोई भी खाद्य	मूली के पत्ते
काँसे के पात्र	में रखा घी	
अमरूद		सौंफ, नमक, काली मिर्च
बथुआ		दही का रायता
गाजर या प्याज		मेथी की साग
केला		छोटी इलायची
मेवे (सुखे फल)		खट्टे फल
अंकुरित अनाज		कच्चा नारियल
सलाद		नींबू रस
गूड़		इमली, शकरकंद, जमिकंद, चना
मक्का		मट्ठा
सेब		गुलकन्द, दाल चीनी
नींबू		नमक
बेर		गन्ने का रस, गरम पानी
मटर		अदरक, सौंढ़
बेसन		मूली के पत्ते

बेंगन		सरसों का साग
अंकुरित अनाज	नमक	टमाटर, गाजर, खीरा, ककड़ी, शिमला मिर्च, नोंबू, निया, पालक, बथुआ, पुदिना, खजूर, किशमिश, मुनक्का, शहद

खान.पान सम्बन्धी असावधानियाँ

खान.पान सम्बन्धी असावधानियाँ हमारे स्वास्थ्य के साथ.साथ विकास को भी प्रभावित करती है। खान.पान सम्बन्धी बहुत.सी छोटी.छोटी गलतियों के बदले में हमें बड़े.बड़े रोग एवं कष्टों का सामना करना पड़ता है। खान.पान सम्बन्धी प्रमुख सूत्रों का वर्णन नीचे दिया गया है। जिनको जीवन में ध्यान पूर्वक अपनाना बहुत आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है।

1. आवश्यकता से अधिक खाना: के बहुत से कारण है जैसे.

लालच से खाना: लालची स्वभाव वाले लोग आवश्यकता से अधिक खा लिया करते है। उनका लालच दूसरों का माल खाने के लिए और कीमती माल खाने के लिए प्रभावी होता है।

बाहर न फेंकने के लिए खाना: खाद्य.पदार्थो को बाहर न फेंकने के लिए दुबारा या अधिक खा लेना। आज महँगाई आसमान को छू रही है। गरीब व मध्यम वर्ग के लोग खाद्य.पदार्थो को बाहर न फेंकने के लिए मजबूर होकर खाते है।

अधिक शक्ति के लिए खाना: अधिक शक्ति के लिए वे लोग आवश्यकता से अधिक खाते है, जिन्हें कड़ी मेहनत करनी है।

मोटापा बढ़ाने के लिए खाना: वे आवश्यकता से अधिक खाते है, जिन्हें मोटापा बढ़ाना हैं।

वजन बढ़ाने के लिए खाना: वे लोग आवश्यकता से अधिक खाते है, जिन्हें वजन बढ़ाना हैं।

बार.बार खाना: वे लोग बार.बार या आवश्यकता से अधिक खाते है , जिन्हें खाने की चीजें उपलब्ध हो या खरीदने के लिए रूपये हो।

आदत एवं पसन्द से खाना: आदत एवं पसन्द के कारण लोग आवश्यकता से अधिक खा लेते है।

भूख न लगने पर खाना: बहुत से लोग भूख न लगने पर भी खा लेते है।

मनुहार से खाना: लोग मनुहार में ज्यादा खाकर अपने स्वास्थ्य को खतरे में डालते है।

2. बहुत.सी चीजों को एक साथ या मिलाकर खाना

भोजन के अलग.अलग अवयवों को पचाने के लिए अलग.अलग पाचक रस अर्थात् एंजाइम की आवश्यकता होती है। ये पाचक रस अर्थात् एंजाइम पाचन संस्थान में अलग.अलग जगहों पर होते है। यदि हम बहुत.सी चीजों को एक साथ या मिलाकर खाये तो ये पाचक रस अर्थात् एंजाइम उस पर ठीक से क्रियाशील न हो पायेगी और भोजन अपच रहेगा।

3. अधिक दिनों तक एक ही तरह का भोजन खाना

अधिक दिनों तक एक ही तरह का भोजन जैसे. केवल कार्बोज या स्टार्च या प्रोटीन या वसा आदि खाने से एक ही तरह के अवयव एवं तत्वों की पूर्ति हो पायेगी। जिससे अन्य आवश्यक तत्वों एवं अवयवों की शरीर में कमी हो जायेगी। शरीर में किसी तत्व की कमी होने से शारीरिक कार्य में बाधा उत्पन्न हो जाती है।

4. बेमेल संयोग (असंयोग) का खाना खाना

कार्बोज के साथ प्रोटीन युक्त भोजन बेमेल संयोग के अन्तर्गत आता है , क्योंकि प्रोटीन के कारण आमाशय में अम्ल का स्राव होगा और कार्बोज के साथ मुंह की लार से आये हुये क्षार को निष्क्रिय बना देगा, जिससे न तो प्रोटीन का पाचन होगा और न ही शेष अपचित कार्बोज का। अत: पाचन क्रिया में बाधा उत्पन्न होगी। इसलिए चावल या रोटी , आलू आदि कार्बोज के साथ दाल , दूध और प्रोटीन नहीं खाने चाहिए। यह संयोग विरूद्ध है। बल्कि कार्बोज के साथ क्षारोत्पादक पदार्थ जैसे. हरी साग.सब्जियाँ , तरकारियाँ, गुड़ आदि खाने चाहिए।

5. नियत समय पर न खाना

लोग खाना नियत समय पर नहीं खाते है। नियत समय से मतलब यह है कि जब भूख लगें तब खाना खा लेना चाहिए। नियत समय का अर्थ यह नहीं है कि नित्य प्रतिदिन अभिष्टसमय पर ही भोजन करना।

6. बिना भूख के खाना

हमें तभी खाना चहिए , जब हमारा पाचन संस्थान खाली हो और वह भोजन की माँग करें। जब पाचन संस्थान स्वयं भोजन की माँग करता है। तब पाचन संस्थान में पाचक रस अर्थात् एंजाइम सक्रिय अवस्था में उपस्थित होते है।

7. आवश्यकता से बहुत कम खाना। कुपोषण

इसका मुख्य कारण आर्थिक मंदी एवं एक ही प्रकार का भोजन अधिक समय तक उपयोग में लेना है। अन्य कारण भी बड़े महत्व के है , जैसे. शर्म के कारण कम खाना , बिमारी के कारण कम खाना और मानसिक अस्थिरता के कारण कम खाना आदि।

8. तला.भूना एवं मिर्च.मसालों का नित्य खाना

तला.भूना एवं मिर्च.मसालों से युक्त भोजन स्वाद में चाहे कितना ही लुभावना हो परन्तु पचने में बहुत ही भारी होता है। कड़ी मेहनत एवं सशक्त पाचन तंत्र वाले ही ऐसे भोजन को पचा पाते है। ज्यादा मात्रा में मिर्च.मसालें पाचन तंत्र को हानि ही पहुँचाते है। अत: इनका सीमित उपयोग ही श्रेष्टहै।

9. रसायनों का उपयोग

रसायनों की मार से जैविक खेती का चलन बहुत कम हो गया है। रसायनों ने जल, वायु और जमीन आदि प्रदूषित कर दिया है। खाद्य पदार्थो के उत्पादन से लेकर उपभोग में लेने तक कई प्रकार के रसायन मिला दिये जाते है। जैसे. उत्पादन के समय उर्वरक एवं कीटनाशक, संरक्षण एवं भण्डारण में कीटनाशक, बिक्री

के लिए आकर्षक बनाने में रसायन और आकर्षक भोजन बनाने के लिए भी रसायनों का ज्यादा उपयोग किया जा रहा है।

उत्तेजक पदार्थो का सेवन: सभी उत्तेजक, मादक पदार्थ और धूम्रपान शरीर के पाचन संस्थान को ही हानि नहीं पहुँचाता है। बल्कि समस्त शारीरिक तंत्र को प्रभावित करता है। चाय में केरोटिन , कॉफी में कैफिन, तम्बाकू.बीड़ी.सिगरेट में निकोटिन, शराब में अल्कोहोल, कोल्ड ड्रिंक्स में कार्बन डाई ऑक्साइड और अफीम में मॉर्फिन आदि रसायन पाये जाते है।

स्वाद व आकर्षण के कारण खाना: आजकल भोजन को बहुत अधिक स्वादिष्टएवं आकर्षक बनाये जाने में पौष्टिक पदार्थो को या तो बाहर निकाल दिया जाता है या उसमें रसायनों को मिलाकर प्राणघातक बना दिया जाता है या उसे तल.भूनकर पोषक पदार्थो को नष्ट ही कर दिया जाता है या मिर्च.मसालें डालकर पचने में भारी बना दिया जाता है।

रेचक पदार्थो एवं दर्द निवारक दवाईयों का सेवन करना: अस्वस्थ व्यक्ति द्वारा रेचक एवं दर्द निवारक दवाईयों का सेवन करने से राहत तो मिलती है पर ये रसायन शरीर को भारी मात्रा में हानि पहुँचाने के लिए उत्तरदायी है।

रसायनों युक्त दूध, फल, साग.सब्जी, तरकारियां और अनाज आदि खाना: यह एक आश्चर्य की बात है कि पशुजन्य उत्पाद घी, दूध, मक्खन आदि की बिक्री हमारे पशुधन की उत्पादन क्षमता से भी अधिक हो रही है। आज वैज्ञानिक कृषि ने हर कृषि उत्पाद. फल , साग.सब्जी, तरकारियां और अनाज आदि में रसायनों का मीठा जहर घोल दिया है।

10. पुरानी, सड़ी.गली, बासी और खराब चीजें खाना

सात्विक भोजन के अन्तर्गत शुद्ध एवं ताजा भोजन खाने का विधान है। सुबह का शाम और शाम का सुबह खाना बासी ही कहलाता है। अचार एवं मुरब्बा भी 2 माह से ज्यादा पुराना बासी और खराब की श्रेणी में ही लिया जाता है।

11. अप्राकृतिक खाद्य पदार्थो का उपयोग करना

प्रकृति जिस रूप में खाद्य पदार्थ पैदा करती है , उसी परिपक्व रूप में उसे खा लेना आवश्यक है। आजकल लोग प्राकृतिक खाद्य पदार्थ को आग के सम्पर्क में लाकर पौष्टिक तत्वों को नष्टकर देते है। ऐसे भोजन से पेट तो भर जाता है , परन्तु उससे अधिक जीवनी.शक्ति नहीं मिल पाती है। इसलिए ताजा एवं शुद्ध फल.सब्जी व तरकारियों को कम से कम आग के सम्पर्क में लाये कच्चा ही खाना चाहिए।

सुखे फल व मेवे: मुनक्का , अंजीर, खजूर, छुहारा, बादाम, अखरोट, चिलगोजा, काजू, मूंगफली, पिश्ता आदि बहुत गुणकारी है, ये शरीर से विकारों को बाहर निकालने में सहायक है। अत: इन्हें नियमित भोजन में ताजे फलों के साथ सूखे मेवे खाना बहुत स्वास्थ्यप्रद है।

अंकुरित अनाज: अंकुरित अनाज ऊर्जा वर्धक ही नहीं बल्कि शरीर के कई विकारों को दूर करने में भी सक्षम है।

12. चबा.चबा कर नहीं निगलना अर्थात् बिना चबाए खाना

ज्यादा खाने की लालसा हो या समय की कमी हो या बिना चबाए खाने की आदत हो। परन्तु चबा.चबा कर निगलने में ही लाभ है। मुंह की लार ग्रंथियां भोजन को चबाने के साथ लार स्त्रावित करती है। जो जितना भोजन को चबायेगा उतना ही भोजन छोटे.छोटे टुकड़ों में टूटकर लेई के रूप में ग्रास नाल से होता हुआ आमाशय में पहुंच जायेगा। तब कार्बोज का पाचन मुंह से प्रारम्भ होकर आमाशय तक पूरा हो जायेगा। आमाशय के बाद कार्बोज का पाचन नहीं होता है। कार्बोज का पाचन न होने के कारण ही वसा, प्रोटीन के पाचन में बाधा पैदा होती है। जिसके परिणाम स्वरूप भोजन का पाचन , अवशोषण एवं निष्कासन समय पर नहीं होने के कारण पाचन संस्थान अव्यवस्थित होकर रोग ग्रस्त हो जाता है।

13. दिखावे के लिए पौष्टिक तत्वों को हटा या जला देना

दुनिया दिखावे के पीछे डूब रही है , उसे अपने स्वास्थ्य की गिरावट का पता तक नहीं चल पा रहा है। दिखावे के लिए फल.सब्जी व तरकारियाँ के मुलायम बीज , छीलके एवं पौष्टिक तत्वों को हटा देना या जला देना बड़ी ही मूर्खता है।

14. बाजार अर्थात् रोग केन्द्रों का खाना

बाजार में धन कमाने की होड़ मची हुई है। बाजार अर्थात् रोग केन्द्रों (होटल व मिष्ठान भण्डार) में ज्यादातर कम से कम मूल्य एवं घटिया से घटिया किस्म की सामग्री काम में लायी जाती है। यही नहीं खाद्य पदार्थो को ऐसी विधि से तैयार किया जाता है कि उसकी सारी पौष्टिकता ही नष्ट होकर बहुत गरिष्ट बना दिया जाता है। बाजार में तैयार खाद्य पदार्थ या डिब्बा बन्द खाद्य पदार्थ शुद्धता एवं स्वच्छता की कसौटी पर खरे नहीं है। इस कारण ऐसे खाद्य पदार्थो को खाने से क्या लाभ? ये खाद्य पदार्थ 100 प्रतिशत रोग जनक है। इन्हें खाने से स्वास्थ्य में भारी गिरावट आती है।

15. मनोदशा का पाचन पर प्रभाव

अप्रसन्न मन से अर्थात् तनाव, क्रोध, शोक, परेशानी, क्लेश आदि मनोविकारों के समय खाद्य पदार्थो का उत्पादन, खाना बनाना और खाना खाना अच्छा नही माना गया है। ऐसी अवस्था में उत्पादित , तैयार किया और खाया गया भोजन सदैव अपच ही रहता है। ऐसे भोजन को करने से कोई विशेष लाभ एवं प्रयोजन नहीं है।

16. सफेद जहर जैसे. शक्कर व नमक ज्यादा खाना

शक्कर व नमक सफेद जहर है। शक्कर कैल्सियम से पचती है। नित्य भोजन में कैल्सियम का होना नितान्त आवश्यक है। कैल्सियम शरीर के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है। यदि प्रतिदिन प्राप्त कैल्सियम शक्कर के पाचन में ही खर्च कर दिया गया तो शरीर में उसकी कमी हो जायेगी। शक्कर का उपयोग अधिक मात्रा में किया गया तो हड्डियों के लिए तैयार कैल्सियम शक्कर को पचाने के काम आ जायेगा। जिसके परिणाम स्वरूप शरीर की कोशाएं और हड्डियां कमजोर पड़ जायेगी। ठीक इसी प्रकार नमक का

ज्यादा उपयोग गुर्दो पर अनावश्यक भार डालता है। शरीर में नमक का जमाव त्वचा रन्ध्रों से पसीना निकलने में बाधा उत्पन्न करता है।

17. पानी के गलत उपयोग

प्यास लगे तब पानी न पीना: जल ही जीवन है। जब भी प्यास लगे , तुरन्त पानी पीना चाहिए। क्योंकि प्यास लगना शरीर द्वारा पानी की मांग करना है।

भोजन से पहले व बाद में पानी पीना: पानी पीने के आधा घण्टे बाद भोजन करना अच्छा है। ठीक इसी प्रकार भोजन करने के बाद जब प्यास लगे तब पानी पीना अच्छा है।

भोजन के साथ बहुत पानी पीना: जिस प्रकार तेज आंच से भोजन शीघ्र पक जाता है , ठीक उसी प्रकार तीव्र पाचक रस भोजन का शीघ्र पाचन करते है। भोजन के बीच यदि ज्यादा पानी पिया जाये तो ये आग में पानी डालने के समान होता है , जिससे पाचक रस की सांद्रता कम हो जाती है और पाचन सही नहीं होता है तथा पचे भोजन का अवशोषण एवं मल का निष्कासन में भी बाधा पैदा होती है। इस प्रकार पाचन संस्थान अव्यवस्थित होकर रोग ग्रस्त हो जाता है। अत: भोजन के साथ बहुत पानी पीकर पेट में कीचड़ न बनायें।

अत्यधिक ठण्ड़ा या गर्म खाना पीना: अत्यधिक ठण्ड़ा या गर्म खाने पीने से अन्ननाली क्षतिग्रस्त हो जाती है। उसमें संकुचन एवं प्रसारण की कमी आ जाती है।

दूषित जल पीना: विकास की तेज रफ्तार ने आज जल , वायु और मिट्टी को प्रदूषित कर दिया है। आज शहर ही नहीं गांवों में भी प्रदूषण की मार है। जहां तक हो सके शुद्ध व स्वच्छ वातावरण में ही रहना चाहिए, जिससे शुद्ध जल और वायु मिल सकें।

उषा:पान न करना: सूर्योदय से पूर्व बिस्तर छोडक़र उषा:पान करना अमृत पान के समान माना जाता है। उषा:पान से आहार नाल की अच्छी सफाई हो जाती है , शरीर की कोशाएं पानी से तृप्त हो जाती है और नाडिय़ों को बल मिलता है।

18. कैलोरी के सिद्धान्त का पालन

अधिकांश शिक्षित वर्ग कैलोरी के सिद्धान्त का पालन करने की कोशिश करते है। कैलोरी के सिद्धान्त का पालन करना अच्छा है। परन्तु यह सिद्धान्त सभी के लिए उपयुक्त नहीं है। जैसे. अस्वस्थ एवं निर्बल पाचन तंत्र वाले व्यक्ति पर यह सिद्धान्त कार्य नहीं करता है।

19. कड़ी मेहनत के तुरन्त बाद खाना

कारण चाहे कुछ भी हो पर हमें ध्यान रखना होगा कि कड़ी मेहनत के तुरन्त बाद नहीं खाना है और खाने के बाद तुरन्त कड़ी मेहनत भी नहीं करनी है। कड़ी मेहनत के तुरन्त बाद और खाने के बाद दोनों ही अवस्थाओं में विश्राम करना चाहिए। कड़ी मेहनत के बाद विश्राम करने से पाचन संस्थान भोजन के पाचन के लिए तैयार हो जाता है और अन्य संस्थान विश्राम अवस्था में आ जाते है। खाना खाने के बाद थोड़ी देर वज्रासन में विश्राम करने से पाचन का कार्य व्यवस्थित हो जाता है।

13.9 **स्वास्थ्य प्रश्न माला**

व्यक्ति के दिमाग में स्वास्थ्य सम्बन्धी कई प्रश्न उभरते है , जिनका सही जवाब उन्हें मालूम होना चाहिए। खान.पान के सम्बन्ध में कुछ महत्वपूर्ण प्रश्नों के उत्तर यहां बतलाए गये है, जो निम्रवत् है.

1. कितनी मात्रा में खायें?

उचित मात्रा में भोजन करें। उतना खायें कि आपके शरीर में आलस्य पैदा न हो , शरीर में भारीपन न हो, पेट तना हुआ न हो जाये, पेट भारी न हो जाये, उल्टी होने जैसा प्रतीत न हो, आसानी से पच जायें। बस, इतना भोजन करना ही ठीक है।

2. कब खायें?

भूख लगे तब खाये, लेकिन झूठी भूख में सिर्फ पानी पीयें। आपको भोजन का निश्चित समय तय कर लेना चाहिए। यह समय दिन के दो भोजनों के बीच का अन्तर कम से कम 5 घंटे का होना ही चाहिए। आपको वास्तव में तभी भोजन करना चाहिए जब भूख लगें। यदि उस निश्चित समय पर भूख न लगे तो उस समय का भोजन छोड़ देना चाहिए और फिर दूसरे निश्चित समय पर भोजन करें। तब तक शरीर शोधन हेतु नीम्बू+पानी+शहद या थोड़ा रसाहार या थोड़ा फलाहार ले सकते है। आपको स्वस्थ रहने के लिए अपनी वास्तविक भूख के बारे में पूरी जानकारी होनी चाहिए। भूख उस समय लगती है , जब पहले का किया हुआ भोजन पच जाता है और आमाशय व छोटी आंत पूरी तरह खाली हो जाती है। ये पाचक अंग अपना पाचक रस छोडऩे को तैयार हो और भोजन की मांग करते हों। तभी भोजन करने का उचित समय होता है, अन्यथा पाचन अंगों की बिना तैयारी के भोजन बहुत कठिनाई एवं देर से पचता है या अपचित रहकर पाचन तंत्र में गड़बड़ी पैदा करता है।

3. कैसे खाना खायें?

चबा.चबाकर निगलें। पेट में दाँत नहीं होते है। भोजन मुंह में ही अच्छी तरह चबा लेना चाहिए। पेट में भोजन का पाचन पाचक रसों के द्वारा होता है। भोजन पचने पर आंतों द्वारा पोषक पदार्थो का अवशोषण होकर रक्त में मिलकर सम्पूर्ण शरीर को पोषण पहुंचाता है। इसलिए चबा.चबा कर नहीं निगलने पर भोजन का पाचन ठीक नहीं होगा, भोजन आगे बढऩे में समय लगेगा और ज्यादा समय से विसर्जन होने पर मल शरीर में विकार पैदा करेगा। भोजन चबाते समय होठों को बन्द रखना चाहिए और चबाने का काम मजबूती के साथ पर धीरे.धीरे करना चाहिए। खाते समय मुँह से आवाज न हों। ठीक ऐसा ही दूध , मठ्ठा और पानी को भी चूसने की तरह धीरे.धीरे (बिना मुँह से आवाज निकाले) पीना चाहिए।

4. कब, कितनी बार और कितनी देर से खायें?

एक बार किया गया भोजन 3 से 5 घंटों में पचता है तो 3 घंटों से पूर्व कुछ भी न खायें न पीयें। लेकिन दूसरे समय किये जाने वाले भोजन से पूर्ण आवश्यकता लगे तो थोड़ा सा फलाहार या रसाहार ले सकते है। इस प्रकार सुबह का भरपेट नाश्ता व भोजन , दोपहर में थोड़ा कम मात्रा में भोजन या 4 बजे तक अल्पाहार, सूर्यास्त से पूर्व हल्का भोजन करना और रात्री को दूध पीकर सो जाना श्रेष्ठहै।

5. स्वाद क्या है?

स्वाद के पीछे दुनिया रोगों की कोठरी में फंसी जा रही है। आप मुझे एक बात का जवाब दो कि जीभ के बाद गले के नीचे तुम्हें कोई स्वाद अनुभव होता है। (नहीं.ना) तुम चटपटा, तला भुना, और विविध मिर्च मसालों को खाते हों। जो क्षणिक स्वाद देता है। परन्तु तुम्हें मालुम है. पेट कितना रोता है ? (पेट में अपच रहता है, गैस बनती है , खट्टी डकारें आती है , उल्टी.दस्त हो जाते है , दिमाग बैचेन हो जाता है आदि) इसलिए क्षणिक स्वाद को भूल जाओं। क्योंकि वास्तविक स्वाद तो भूख में है। भूख के बिना खाना तो केवल शरीर को रोग ग्रस्त बनाना है। भूख के बिना तो ये चटपटे, तले भूने एवं विविध मिर्च मसालों वाले गरिष्ठ व्यंजन भी स्वादहीन और अरूचिकर लगते है। स्वाद लेना ही है तो प्राकृतिक खाद्यान्नों जैसे फल , सब्जियों, तरकारियों, सुखे मेवों, अंकुरित अनाजों के स्वाद को पहचानों।

6. क्या मिर्च मसालों को भोजन में स्थान देना चाहिए?

इसका उपयोग सीमित मात्रा में करें। ये फल तरकारियों, सब्जियों के वास्तविक व प्राकृतिक स्वाद को दबा देते है। इनका ज्यादा उपयोग स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।

7. फल तरकारियां एवं हरी सब्जी खाना क्यों जरूरी है?

प्राकृतिक तरीकों से पैदा हुई ताजा फल.तरकारियां एवं सब्जी प्रतिदिन कच्ची व पक्की खायें और अपनी जीवन शक्ति में वृद्धि करें। तभी हम स्वस्थ एवं प्रसन्न रह पायेंगे।

8. खाद्यान्नों पर रसायनों का प्रयोग क्या उचित है?

आजकल लोगों ने शरीर को प्रयोगशाला बना दिया है। वे प्राकृतिक खाद्यान्नों को आग व रसायनों के सम्पर्क में लाकर उसे अपौष्टिक एवं तामसिक बना देते है। जो स्वास्थ्य के लिए रोग जनित व प्राणघातक ही है।

9. क्या छिलके व बीज खाना स्वास्थ्यप्रद है?

जी हाँ, इनके गुणों को पहचानो आज रसायनों के भरपूर प्रयोग के कारण छिलके कितने ही उपयोगी हो लेकिन स्वास्थ्य के लिए खतरा है। हाँ यदि विश्वसनीय जैविक उत्पादन मिले तो जरूर छिलकों का उपयोग भोजन में करना चाहिए। ये छिलके व बीज पतले व मुलायम होने से अन्ननाली की अच्छी सफाई करते है। कब्ज मिटाते है और पाचन तंत्र मजबूत व सशक्त बनाते है। छिलके व बीजों से खनिज.लवण, प्रोटीन एवं विटामिन की शरीर को अच्छी

पूर्ति हो जाती है। इसके अलावा चौकर आटा व कण समेत चावलों का उपयोग करना चाहिए। अक्सर हम क्षणिक स्वाद और दिखावे के लिए छिलके व बीजों को भोजन में स्थान नहीं देते है तो हमें अमूल्य स्वास्थ्य कैसे प्राप्त हो।

10. क्या स्वास्थ्य के लिए नमक उपयोगी है?

जी हाँ, कई कम्पनियां आयोडिन युक्त नमक के विज्ञापन पर करोड़ों रूपये खर्च कर रही है। लेकिन आपको अच्छे स्वास्थ्य के लिए फलों, हरी सब्जियों व तरकारियों का नियमित सेवन करना होगा। इन्ही से आपको आवश्यक नमक की पूर्ति हो जायेगी। सब्जी व आटे में जो नमक डाला जा रहा है वह पर्याप्त है ऊपर से और नमक डालकर तेज खाना हानिकारक है। ज्यादा नमक खाना गुर्दो पर अतिरिक्त भार डालता है।

11. क्या स्वास्थ्य के लिए शक्कर उपयोगी है?

जी नहीं, यह सफेद जहर है। शक्कत में केवल मिठ्ठास ही है अन्य कोई पौष्टिक तत्व नहीं है। तथा शक्कर को पचाना आप जितना सरल मानते है उतना नहीं है। मुंह में शक्कर डाली घुलकर पेट में गई और पच गई, ऐसा नहीं होता है। शक्कर सिर्फ कैल्शियम तत्व से पचती है। यदि आपके शरीर में नियमित कैल्शियम की पूर्ति होती है तो ठीक है अन्यथा शक्कर को पचाने के लिए हड्डियों के लिए तैयार कैल्शियम काम में आता है तो परिणाम शक्कर तो पच जाती है लेकिन हड्डियाँ कैल्शियम के अभाव में कमजोर हो जाती है।

12. पानी कब, कितना कैसा व कैसे पीयें?

प्यास लगने पर अवश्य पीयें, सोने से पहले और उठने के बाद उषापान जरूर करें (शौच साफ आती है, खून साफ होता है, पेट की गर्मी शांत होती है, शरीर व मन तृप्त होता है।) खाना खाने से आधा घंटा पूर्व पानी अवश्य पीयें, खाना खाने के बाद प्यास लगने पर या 1 1/2 या 2 घंटे बाद ही पानी पीयें, खाना खाते समय बीच.बीच में कम मात्रा में व कम बार पानी पीयें। अन्यथा भोजन कीचड़ बन जायेगा, पाचक रस पतले होने से उनका प्रभाव कम होकर भोजन देर से पचेगा या अपच रहेगा। कभी भी ज्यादा गर्म व ज्यादा ठण्डा पानी न पीयें, प्रतिदिन मौसम के अनुसार 2.4 लीटर पानी अवश्य पीयें। कभी भी एक साथ ज्यादा मात्रा में पानी न पीयें अन्यथा गुर्दो पर अनावश्यक बोझ पड़ेगा और कम पानी पीने से शरीर की सफाई तथा शारीरिक क्रियाओं में बाधा उत्पन्न होती है। प्रतिदिन कम से कम एक बाद नीम्बू+पानी+शहद जरूर पी लें। मुंह लगाकर या चूस कर या हथेली से पानी पीना स्वास्थ्य प्रद है।

13. खाना पकाने में मुख्यतया क्या सावधानियां रखी जायें?

ध्यान रखें कि भोजन कभी भी गरिष्ठ न बनायें। सब्जियां काटने से पहले ही अच्छी तरह धो लें। उबालने के बाद बचा पानी सब्जी में मिलायें या सूप बना लें। ज्यादा न उबालें व धीमी आंच पर पकायें, अन्यथा विटामिन जल जायेंगें। कुकर में तो भोजन कभी भूल कर भी न बनाये, क्योंकि एल्यूमिनियम धातु बहुत ही धीमा ज़हर है। मिट्टी के बर्तनों में भोजन बनाना व उबालना अच्छा है। कम मात्रा में मिर्च मसालों व तेल.घी का उपयोग करें।

14. क्या बाजारी चीजें स्वास्थ्य प्रद है?

जी नहीं बाजार में बनने वाली व बिकने वाली (डिब्बा या बोतल बंद) सभी चीजें अविश्वसनीय है। मिठाई व तली भूनी चीजों का ज्यादा ही मन हो तो घर में ताजा बनाकर खायें। दो माह से ज्यादा पुराना अचार.मुरब्बा भी स्वास्थ्यप्रद नहीं है। बाजारों में तैयार किये व्यंजन रोग केन्द्रों पर बिकते है। जिनमें बचकर रहना है। फल.सब्जियों की दुकानों को रोग निवारक केन्द्र कहा है जिसे अपनाना है।

15. मादक व उत्तेजक पदार्थो, धूम्रपान, रेचक दवाओं से क्या बचकर रहना है?

जी हाँ, ये सारे पदार्थ स्वास्थ्य वर्धक नहीं है। इनका सेवन करना शरीर में कूड़ा कचरा इकट्ठा करना है। जिसे बाहर निकालने में शरीर की श्रम व शक्ति का ह्रास होता है और स्वास्थ्य में गिरावट आती है। यदि पीना ही है तो ताजा शर्बत या काढ़ा पीयों। शर्बत में शक्कर नहीं शहद का उपयोग करो तथा काढ़े में गुड़ का। वही स्वास्थ्य प्रद है।

16. क्या उपवास करना चाहिए?

जी हाँ, जितनी शांति, सुख, आनन्द और विश्राम की जरूरत आपको है ठीक उतनी ही आपके पेट को भी कम से कम एक या दो सप्ताह में एक दिन खाना छोडऩा अर्थात् उपवास करना, स्वास्थ्य के लिए अति आवश्यक है। उपवास के दिन सिर्फ नीम्बू+पानी+शहद ही पीयें , कुछ भी न खायें . पीयें। यदि आप उपवास नहीं कर सकते तो 1.2 दिनों का रसाहार जरूर करें। यह ख्याल गलत है कि उपवास से रोगी कमजोर हो जाता है। सच्ची बात तो यह है कि रोगी की रक्षा के लिए और रोगों को जल्द से जल्द ठीक करने के लिए उपवास सबसे अच्छा साधन है।

17. किस ऋतु में कैसा भोजन ग्रहण करें?

	ऋतु	प्रधानता ग्राह्य	पदार्थ
1.	हेमन्त ऋतु	कफ प्रधान	कफ नाशक पदार्थ
2.	शिशिर ऋतु	वात प्रधान	वात नाशक पदार्थ
3.	वसन्त ऋतु	कफ प्रधान	कफ नाशक पदार्थ
4.	ग्रीष्म ऋतु	पित्त प्रधान	पित्त नाशक पदार्थ
5.	वर्षा ऋतु	पित्त प्रधान	पित्त नाशक पदार्थ
6.	शरद् ऋतु	कफ प्रधान	वात नाशक पदार्थ

जिस ऋतु में जिस तत्व की प्रधानता हो उस तत्व की वस्तुओं को ग्रहण न करने मात्र से ही वात.कफ.पित्त का शरीर में संतुलन बनाया रखा जा सकता है।

18. क्या पकवान और मिठाईयों को कभी न खाया जायें?

सच पूछे तो ये चीजें घर की बनी हो तो खाई जा सकती है। लेकिन सब मिलाकर भोजन की मात्रा से ज्यादा न खायें। अगर कोई बीमारी नहीं है तो। अन्यथा महज जीभ के क्षणिक आनन्द के लिए इनको खाने के क्या लाभ?

19. क्या खायें, क्या न खायें?

भोजन.दर्पण

कभी न खायें

तली भूनी चीजें	डिब्बा बंद खाद्य व पेय पदार्थ, केक, पेस्ट्रीज, आइसक्रीम	माँस
बहुत अकि तेल घी	मादक पेय, शराब, अफीम, चरस गांजा,ूम्रपान	ज्यादा नमक
अकि मिर्च मसाला	नमकीन, पापड़, अचार, मुरब्बा (2 माह से ज्यादा पुराना)	चाय, कॉफी

कम मात्रा में खायें

मिर्च मसाले	आलू, कद्दू, शकरकंद	मिठाई
शक्कर, नमक	केला, ग्वार फली	शीतल पेय

उचित मात्रा में प्रतिदिन खायें

अंकुरित अनाज	दही या मट्ठा	घी व तेल आदि चिकनाई	गुड़, शहद
मौसमी फल एवं तरकारियाँ		सुखे मेवे. खजूर, काजू, बदाम, मुनक्का, किशमिश, खुमानी, अंजीर	

अधिक मात्रा में प्रतिदिन खायें

ऋतु के अनुसार फलः

पपीता, चीकू, अनार, शहतूत, जामुन, अमरूद, खरबूजा, तरबूज, खीरा, बेल, सिंघाड़ा, आड़ू, आलुबुखारा, आम।

ऋतु के अनुसार सब्जी व तरकारियांः

लौकी, टिण्डा, परवल, तौरी, कुंदरू, पत्तागोभी, खीरा, पालक, चौलाई, बथुआ, निया, पोदिना, सरसों, मेथी।

ऋतु के अनुसार सलादः

खीरा, ककड़ी, टमाटर, गाजर, मूली, पत्तागोभी।

अंकुरित अनाजः चना, मूँग, मोठ, मूँगफली, मेथी।

साबूत अनाजः मक्का, बाजरा, ज्वार, गेंहू में चना मिले आटे की रोटी।

भोजन पकाते समय पौष्टिक तत्व

भोजन जिस विधि से भी पकाया जाय परन्तु उसे पकाते समय निम्रांकित बातों को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए:

1. जिस पदार्थ को पकाना हो उसके अनुकूल विधि चुनना चाहिए। जिससे खाद्य पदार्थ का प्राकृतिक स्वाद नष्टन हो जायें।

2. तेज आंच पर पकाने से पौष्टिक तत्व नष्ट हो जाते है। विटामिन को हानि पहुंचती है। विटामिन ए और डी पर तो गर्मी का प्रभाव कम पड़ता है और शेष तो गर्मी के सम्पर्क में आते ही नष्ट हो जाते है। भूनने से विटामिन नष्टहो जाते है। अत: अधिक नहीं भूनना चाहिए।

3. सब्जी काटने के पश्चात उसे पानी में धो लिया जाय तो उसके विटामिन पानी के साथ निकल जाते है अत: पहले सब्जी धोकर फिर काटना चाहिए।

4. हरी सब्जियों को छिलके सहित पकाना चाहिए क्योंकि उनके विटामिन छिलकों में होते है। छिलके उतारने से खनिज.लवण एवं विटामिन नष्ट हो जाते है। यदि छिलका उतारना ही पड़े तो बहुत हल्का उतारना चाहिए।

5. प्राय: जिस पानी में खाद्य पदार्थ उबाले, उन्हें लोग फेंक देते है, परन्तु ऐसा नहीं करना चाहिए, क्योंकि खाद्य पदार्थो के गुण उसमें भी है। यदि पानी निकालना आवश्यक हो तो उस पानी को आटे में डालें। खाद्य पदार्थो को अधिक नहीं पकाना चाहिए। जितने में वे गल जायें।

6. अनाज पिसाने से पूर्व अनाज को भली.भांति स्वच्छ कर लेना चाहिए तथा बाद में बिना छाने पकाना चाहिए। भूसी निकाल देने से गेहूं के विटामिन नष्टहो जाते है। दालों को भी छिलके सहित पकाना चाहिए।

7. चावल का मांड कभी नहीं निकालना चाहिए। इससे चावल के पोषक तत्व निकल जाते है।

8. प्राय: लोग भोजन को शीघ्र पकाने के लिए सोडा डाल देते है। परन्तु यह हानिकारक है। ऐसा करने से खाद्य पदार्थो में पाये जाने वाले विटामिन बहुत अधिक मात्रा में नष्टहो जाते है।

9. पकाने या गर्म करने पर अधिकांश विटामिन्स नष्टहो जाते है।

सन्तुलित भोजन का महत्व

शरीर की वृद्धि और व्यक्ति के उत्तम स्वास्थ्य के लिए भोजन का सन्तुलित होना अति आवश्यक है। जिस प्रकार पेड़.पौधों को मिट्टी, खाद, पानी और प्रकाश पर्याप्त मात्रा में मिलने पर ही उनकी बढ़त ठीक से हो सकती है, उसी प्रकार व्यक्ति को संतुलित भोजन मिलने पर ही उसका स्वास्थ्य ठीक रह सकता है। भोजन में किसी भी तत्व की कमी अथवा अधिकता स्वास्थ्य को खराब कर देती है। उदाहरण के लिए प्रोटीन की कमी शरीर की वृद्धि को रोक देती है और उसका आधिक्य हो जाने से गुर्दे खराब हो जाते है। अत: भोजन के सभी तत्वों का भोजन में उचित मात्रा में होना अति आवश्यक है। प्रत्येक व्यक्ति का संतुलित भोजन अलग होता है। संतुलित भोजन व्यक्तियों की आयु , लिंग, कार्य और जलवायु के अनुसार भिन्न.भिन्न होता है।

कैलोरी मूल्य

मनुष्य के लिए भोजन अति आवश्यक है। भोजन शरीर में ताप उत्पन्न करता है। इसी ताप से भोजन की मात्रा का अनुमान लगाया जाता है। भोजन से उत्पन्न ताप को एक इकाई द्वारा नापते है। यह इकाई कैलोरी कहलाती है। इस प्रकार कैलोरी उष्णता की वह इकाई है जो कि 1 किलोग्राम जल के ताप को 1 डिग्री सेन्टीग्रेड तक बढ़ा दें।

संतुलित भोजन में अवयवों की मात्रा

एक साधारण व्यक्ति को प्रतिदिन के भोजन में अवयवों की निम्न मात्रा की आवश्यकता होती हैं.

भोजन के अवयव	मात्रा
कार्बोज	40 से 50 प्रतिशत
वसा	3 से 4 प्रतिशत
प्रोटीन	20 से 22 प्रतिशत
क्षार व विटामिन	20 से 25 प्रतिशत
रेशें	5 से 7 प्रतिशत

13.10 **विभिन्न व्यक्तियों के लिए संतुलित भोजन**

शरीर को सुन्दर, हस्ट.पुष्ट और शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य स्थाई बनाये रखने के लिए सात्विक एवं संतुलित भोजन ग्रहण करना आवश्यक है अर्थात् प्रत्येक मनुष्य को अपनी आवश्यकता के अनुसार संतुलित भोजन ग्रहण करना चाहिए। आवश्यकता से अधिक या कम भोजन करना अस्वास्थ्यप्रद है। जिस भोजन में भोजन के समस्त अवयव उचित मात्रा में विद्यमान रहते है। वह भोजन सन्तुलित भोजन है।

संतुलित भोजन के विभिन्न अवयव जैसे. कार्बोज, वसा, प्रोटीन, खनिज.लवण, विटामिन, जल और रेशों से युक्त होता है। भोजन की आवश्यक मात्रा प्रत्येक व्यक्ति की आयु, कार्य, लिंग और जलवायु आदि पर निर्भर करती है। शरीर की आवश्यकतानुसार ये अवयव संतुलित भोजन में उचित मात्रा में रहते है।

1. पुरूषों के लिए संतुलित भोजन : पुरूषों के लिए प्रतिदिन संतुलित भोजन अति आवश्यक है। पुरूषों में भी संतुलित भोजन की मात्रा उनके कार्य के अनुसार भिन्न.भिन्न होता है। उन्हें अपने शरीर को सुन्दर , स्वस्थ, हस्ट.पुष्ट बनाये रखने के लिए दैनिक परिश्रम के अनुसार ही भोजन करना चाहिए। वैसे कठोर परिश्रम करने वाले पुरूष व महिलायें गरिष्ट भोजन को पचा सकती है, लेकिन अधिक मात्रा में किये गये भोजन को कभी नहीं। इसलिए भोजन की अधिकता से सावधान रहें। शारीरिक श्रम और मानसिक कार्य करने वाले पुरूषों का संतुलित भोजन भिन्न.भिन्न होता है। यहाँ तक कि श्रम करने वाले व्यक्तियों में भी उनकी श्रम की मात्रा के अनुसार कैलोरी की आवश्यकता भिन्न.भिन्न होती है। उदाहरण के लिए अत्यधिक परिश्रम करने वाले व्यक्तियों को प्रति घन्टे 150 से 300 कैलोरी की आवश्यकता पड़ती है। मध्यम परिश्रम करने वाले व्यक्ति को प्रति घन्टा 75.150 कैलोरी और साधारण परिश्रम करने वाले व्यक्ति को प्रति घन्टा 72 कैलोरी की आवश्यकता होती है।

2. स्त्रियों के लिए सन्तुलित भोजन : पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियों को कम कैलोरी ऊर्जा की आवश्कयता होती है। स्त्रियाँ घरेलु कार्यो में सदैव व्यस्त रहती है। इस कारण स्त्रियों को प्रतिदिन संतुलित भोजन करना अति आवश्यक है। अन्यथा वे कुरूप दिखने लगेगी। उन्हें भी अपने शरीर को सुन्दर , स्वस्थ, हस्ट.पुष्ट बनाये रखने के लिए दैनिक परिश्रम के अनुसार ही भोजन करना चाहिए।

3. गर्भवती स्त्रियों के लिए संतुलित भोजन : गर्भवती स्त्रियों को प्रतिदिन दिये जाने वाले आहार का बड़ा महत्व है। उन्हें भी अपने शरीर को सुन्दर , स्वस्थ, हस्ट.पुष्ट बनाये रखने और अपने गर्भ के लिए पोषण को ध्यान में रखते हुए सरलता से पचने वाला , हल्का, रूचिकर तथा पौष्टिक भोजन करना चाहिए , न की ज्यादा मात्रा में। गर्भवती स्त्री को दिये जाने वाले आहार में भोजन के सभी तत्वों का होना जरूरी है। जो शिशु के निर्माण एवं विकास के लिए आवश्यक है। उसे दैनिक परिश्रम करने के साथ.साथ विशेषकर कब्ज का ध्यान रखना है।

विज्ञान के अनुसार गर्भवती स्त्रियों को प्रतिदिन 3500 कैलोरी उष्मा की आवश्यकता होती है अर्थात् गर्भवती माता व धात्री स्त्री को साधारण स्वस्थ स्त्री की अपेक्षा 500 से 600 कैलोरी की अधिक आवश्यकता पड़ती है। गर्भवती स्त्रियों को हरी सब्जियों में पालक , सेम, बथुआ, चौलाई, सलाद पत्ती, पत्तागोभी आदि का प्रयोग करना चाहिए। जिससे रक्त निर्माण हेतु लौह तत्व की पूर्ति हो सकें। खनिज.लवण, विटामिन की पूर्ति हेतु मोसमी फलों और सुखे मेवे का उपयोग करना चाहिए। जैसे. किशमिश, मुनक्का, काली, दाख, बादाम, अखरोट, मूंगफली, काजू, पिस्ता, चिलगोजा, चिरोंजी, ताल मखाना, खूबानी, पक्का नारियल, नीम्बू, संतरा, मौसम्बी, सेब, पपीता, अनार, अन्नानास, अमरूद, बेल, गन्ना, आम, केला, नाशपाती, चीकू, सीताफल, अंगूर, आँवला, आलू बुखारा, जामून, लीची, शहतूत आदि। गर्भवती स्त्रियों को दूध पीना चाहिए, क्योंकि उसमें सभी तत्वों के पाये जाने से वह सर्वोत्तम खाद्य है।

4. शिशु की माँ के लिए संतुलित भोजन : शिशु की माँ को प्रतिदिन दिये जाने वाले भोजन का भी बड़ा महत्व है , क्योंकि उसे अपने शरीर की क्षतिपूर्ति एवं बच्चे को पोषण प्रदान करना है , तभी वह स्वयं और उसका बच्चा सुन्दर , स्वस्थ, हस्ट.पुष्ट बन पायेगा। उसे अपने लिए ऐसा सात्विक एवं संतुलित भोजन चुनना चाहिए। जिसे वह सरलता से पचा सकें। उसे दैनिक परिश्रम या व्यायाम करना चाहिए। कब्ज पैदा न हो इसका उसे विशेष ध्यान रखना है।

5. बच्चों के लिए संतुलित भोजन : बच्चों के लिए प्रतिदिन संतुलित भोजन की अति आवश्यक है। उन्हें शरीर की वृद्धि के लिए सम्पूर्ण आहार आवश्यक है। मानसिक कार्यो में कार्यरत बच्चों को अधिक प्रोटीन

युक्त भोजन ग्रहण करना आवश्यक है। जैसे. उन्हें दूध , दही अधिक लेना चाहिए। बच्चों को शीघ्र ही पचने वाला और उचित अन्तराल के बाद भोजन देना या खिलाना चाहिए।

6. रोगियों के लिए संतुलित भोजन : रोगियों के लिए प्रतिदिन संतुलित आहार बहुत महत्वपूर्ण है। उन्हें अपने शरीर को स्वस्थ बनाने और बनाये रखने के लिए प्रतिदिन सात्विक आहार ही ग्रहण करना चाहिए और आहार के साथ उपवास , एनिमा और यौगिक क्रियाओं को भी स्थान दें। रोगावस्था के कारण पाचन शक्ति कमजोर पड़ जाती है। इस दशा में वह साधारण भोजन नहीं पचा सकता है। अत: डॉक्टर के कथनानुसार रोगी को ऐसा भोजन दिया जाता है , जो कि सरलता से पच सकें। रोगी का ऐसा तैयार भोजन को पाच्य भोजन कहते है।

13.11 **रोगी के भोजन का सिद्धान्त**

रोगी को सदैव हल्का , सादा और ताजा भोजन देना चाहिए। भोजन संतुलित होना चाहिए अर्थात् उसमें प्रोटीन , चर्बी, विटामिन, कार्बोहाइड्रेट पर्याप्त मात्रा में होनी चाहिए , जिससे कि उसके शरीर में पर्याप्त गर्मी व शक्ति उत्पन्न हो सकें। रोगी को तला हुआ और भुना हुआ भोजन कभी नहीं देना चाहिए। भोजन पकाते समय उसके भोज्य पदार्थ अधिकतर उबाल कर पकाये जायें। भोजन भली.भांति पका हो, साथ ही ऐसा भोजन देना चाहिए। जिसे रोगी को कम से कम चबाना पड़े तथा उसकी आंते सरलता से पचा सकें। रोगी को भोजन पचाते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए:

1. भोजन तेज आंच पर नहीं पकाना चाहिए। क्योंकि इससे भोजन तत्व तथा स्वाद नष्टहो जाता है।

2. रोगी का भोजन तलना और भूनना नहीं चाहिए।

3. भोजन साफ बर्तनों में पकाना चाहिए। क्योंकि गन्दगी का रोगी के स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा।

4. रोगी को भोजन गर्म बनाकर देवें। बार.बार गर्म करके नहीं दें। क्योंकि ऐसा करने से पोषक तत्व नष्ट हो जाते है।

5. भोजन अधिक देर तक नहीं पकाना चाहिए क्योंकि ऐसे भोजन को रोगी को पचाने में कठिनाई होती है।

रोगी का भोजन व बनाने की विधि

1. जौ का पानी: जौ का पानी बनाने के लिए दो बड़े चम्मच के बराबर साफ तथा शुद्ध किया हुआ जौ लेकर शुद्ध व निर्मल जल में भली प्रकार धोना चाहिए। पानी के अन्दर जौ डालकर धीरे.धीरे आग में उबलने के लिए रख देना चाहिए। इसको लगभग दो घन्टे उबाल लेना चाहिए। जब दाने उबलते हुए फट जायें तो साफ मलमल के कपड़े से छान लेना चाहिए। जब पानी ठण्ड़ा हो जाये तो रोगी की इच्छा तथा डाक्टर की सलाह के अनुसार उसे नींबू व गुड़ या अल्प मात्रा में डोरे वाली मिश्री या नमक मिलाकर पीने को देना चाहिए।

2. साबूदाना: साबूदाना दूध या पानी दोनों में पक सकता है। एक बड़ा चम्मच साबूदाना धोकर तीन पाव पानी में उबलने को चढ़ाना चाहिए। इसे बराबर चम्मच से हिलाते रहना चाहिए। जब तक साबूदाना पानी में घुलकर मिल न जायें। तब उसे आंच से उतारना नहीं चाहिए। साबूदाना पक जाने के पश्चात् दूध और डोरे वाली मिश्री मिलाकर देना चाहिए। साबूदाना पानी के स्थान पर दूध डालकर भी पकाया जाता है।

3. दलिया: दो चम्मच भर दलिया को 750 ग्राम पानी में भिगो देना चाहिए। भिगोने के करीब आधे घण्टे तक हल्की आंच पर उबालना चाहिए। रोगी की इच्छानुसार नमक या डोरे वाली मिश्री मिला देनी चाहिए।

4. सूजी की खीर: यह एक हल्का भोजन है। जो रोगी को दिया जाता है। यदि किसी व्यक्ति के कान , दाँत या गले मे दर्द हो तो सूजी का पथ्य अच्छा रहता है। इसे बनाने के लिए दो चम्मच सूजी लेकर भून लेना चाहिए। भुनी हुई सूजी में डेढ़ पाव दूध डालकर 15 मिनट तक उबालकर गाढ़ी कर डोरे वाली मिश्री मिलाकर रोगी को देना चाहिए।

5. फटे दूध का पानी: 750 ग्राम खौलता हुआ दूध लेना चाहिए और उसमें एक नीबू का रस डालना चाहिए। इस फटे हुए दूध को एक साफ कपड़े से छानकर पानी अलग कर देना चाहिए। यह पानी पचने में हल्का तथा शक्तिदायक होता है। इसे रोगी को दिया जाता है। इस पानी में डोरे वाली मिश्री या काली मिर्च, नमक मिलाकर भी दिया जा सकता है।

6. टोस्ट वाटर: 250 ग्राम रोटियों के टुकड़े करके हल्के गुलाबी रंग तक सेंक लेना चाहिए। इस पर गर्म खौलता पानी धीरे.धीरे करके डालना चाहिए। ताकि इसका सत निकल कर पानी में मिल कर नीचे के बर्तन में रह जाय। ठण्ड़ा हो जाने पर यह रोगी को दिया जाता है। इसे काली मिर्च, नमक के साथ या थोड़ी डोरे वाली मिश्री डालकर भी दिया जा सकता है।

7. चूने का पानी: 5 ग्राम खाने वाला चूना लेना चाहिए और उसे एक बर्तन में रखकर थोड़ा.सा पानी डालना चाहिए। ऐसा करने से चूना बुझ जायेगा। अब 1500 ग्राम पानी में चूना डालकर उसे खूब हिलाना चाहिए। इसके पश्चात् 12 घण्टे तक पानी को स्थिर रख देना चाहिए और छानकर साफ बोतलों में भर कर रख लेना चाहिए। फिर रोज़ सुबह यह चूना.पानी लगभग 100 ग्राम एक गिलास पानी के साथ पीना चाहिए, जिससे शरीर को आसानी से कैल्शियम की पूर्ति हो जाती है। लेकिन जिसको पथरी की समस्या हो वे यह चूना.पानी न पीयें।

8. चावल का पानी: पहले तीन बड़े चम्मच साफ चावल साफ पानी से भली.भांति धो डालना चाहिए। एक बर्तन में 450 ग्राम पानी लेकर आग पर उबाल लेते है। तत्पश्चात् एक साफ कपड़े में छानकर थोड़ा.सा नमक मिलाकर रोगी को देते है। इसमें शक्कर नहीं डालनी चाहिए।

9. अरारोट: दो चाय के चम्मच बराबर अरारोट लेकर पानी में मिलाकर लेई के समान घोल लेना चाहिए। अब अलग से 250 ग्राम पानी उबाल लेना चाहिए। इस उबले हुए पानी में अरारोट को मिला देना चाहिए और दूध डाल देना चाहिए। पेचिश के रोगी को दूध की जगह इसे पानी से बना कर देना चाहिए।

10. दाल का शोरबा: दाल का शोरबा बनाने के लिए उसे भली.भांति बीनकर साफ कर लेना चाहिए। बर्तन में घी डालकर गर्म कर लेना चाहिए। जब घी गर्म हो जाय तो उसमें दाल व पानी डाल देनी चाहिए। इसमें थोड़ा.सा अदरक डालकर रूचि के अनुसार नमक मिला देना चाहिए। दाल पकने के पश्चात् एक साफ कपड़े से छान लेना चाहिए और रोगी को गरम.गरम ही देना चाहिए।

11. पालक का सूप: 250 ग्राम पालक के पत्तों को खूब साफ पानी से धो डालना चाहिए। फिर उनके छोटे.छोटे टुकड़े करके बर्तन में उबलने देना चाहिए। यदि 250 ग्राम सब्जी के टुकड़ों को सूप तैयार करना हो तो 750 ग्राम पानी डालना चाहिए। आधा घण्टा उबालने के पश्चात् नीचे उतार कर छान लेना चाहिए। ठण्ड़ा होने पर नीबू और नमक मिलाकर पीने को देना चाहिए।

12. अण्ड़े का पानी: अण्ड़े की सफेदी को खूब फेंटना चाहिए। एक बर्तन में 450 ग्राम पानी रखकर इसमें थोड़ा.थोड़ा मिलाना चाहिए और फेंटते रहना चाहिए। रोगी की रूचि के अनुसार थोड़ा.सा नमक या डोरे वाली मिश्री मिलाकर देना चाहिए।

13. टमाटर का सूप: 250 ग्राम टमाटर साफ पानी में धोकर उनके हल्के टुकड़े कर 400 ग्राम पानी में उबालने चढ़ा देना चाहिए। पन्द्रह मिनट उबलने के पश्चात् यह देख लेना चाहिए कि गले है या नहीं। गल जाने पर उन्हें छान लेना चाहिए और टमाटर के टुकड़ों का रस कपड़े को दबाकर निकाल लेना चाहिए। इसमें नमक और जरा.सी काली मिर्च मिलाकर पीने को देना चाहिए।

14. मूंग की खिचड़ी: चावल और मूंग की दाल बराबर मात्रा में मिलाकर लेना चाहिए। अब आवश्यकतानुसार पानी मिलाकर चूल्हे पर पकने देना चाहिए। जब भली प्रकार पक जाये तो कालीमिर्च, बड़ी इलायची, नमक और केसर डाल कर देनी चाहिए। जब खिचड़ी पक जाये तो शुद्ध घी डालकर कण्डे की राख की आंच पर आधा घण्टा तक रखना चाहिए और यह खिचड़ी रोगी को देनी चाहिए।

15. फलों का रस: फलों का रस रोगी के लिए अत्यन्त उपयोगी होता है। रोगी को दिये जाने वाले फल सड़े.गले व कच्चे नहीं होने चाहिए। यह रोगी को हानि पहुंचाते है। फलों का रस निकालने से पूर्व फल खूब धो लेना चाहिए। साफ कपड़े द्वारा रस गिलास में निचोड़ लेना चाहिए। रस निकालने की मशीन से भी रस निकाला जा सकता है। रस में कालीमिर्च और नमक मिलाकर रोगी को देना चाहिए। रोगी को दिये जाने वाले फलों में मौसम्मी, अंगूर, सन्तरा, अनार आदि प्रमुख है।

16. चपाती: चपाती बनाने के लिए आटे को मुलायम गूंथ लेना चाहिए। लोई बनाकर चकला बेलन से बेल लेना चाहिए। रोटी घुमाकर बेलना चाहिए। बिल जाने पर चपाती को गर्म तवे पर डाल देनी चाहिए।

तवे पर चपाती को अधिक नहीं सेंकना चाहिए। दोनों तरफ सेंकने के पश्चात् कोयलों पर डालकर उसे फुला लेना चाहिए। यह रोटी रोगी को देना चाहिए।

17. एग.फ्लिप: एक अण्ड़े को लेकर उसे खूब फेंटना चाहिए। उसमें एक पाव दूध मिलाकर हल्की.सी डोरे वाली मिश्री डालकर रोगी को देना चाहिए।

18. चावल: आवश्यकतानुसार साफ चावल लेकर स्वच्छ पानी से धो लेना चाहिए। भगोने में पानी गर्म हो जाने पर चावल निचोड़ कर डाल देना चाहिए। पानी चावलों से दो अंगुल ऊपर रखना चाहिए। जब चावल पक जायें और पानी सूख जाये तो उतार लेना चाहिए। चावलों का मांड कभी फेंकना नहीं चाहिए। यदि मांड निकाल लिया हो तो उसे सूप की तरह पी लेना चाहिए।

प्रमुख रोगों में भोजन

विनापि भैषजै व्याधि: पथ्यादेव निवर्तते। न तु पथ्य विहीनानां भेषजानां शतैरपि।।

अर्थात् बिना दवा के केवल पथ्य द्वारा ही रोगों से छुटकारा पाया जा सकता है, लेकिन बिना पथ्य के सैकड़ों दवाईयों से भी रोग अच्छा नहीं होता है।

वैसे तो रोगी को भोजन डॉक्टर के परामर्श के अनुसार लेना चाहिए फिर भी किस रोग में क्या चीजें खाने को दी जायें। इसका वर्णन निम्न है:

अतिसार: इसमें भोजन पचता नहीं है , अत: रोगी को जौ का पानी , चावल का पानी और पानी में पका साबूदाना देना चाहिए। कच्चा केला उबाल कर दही के साथ मिलाकर देना चाहिए। पीने के पानी में नीबू निचोड़ कर देना चाहिए। दही चावल या बिना घी की खिचड़ी देनी चाहिए।

क्षय रोग: क्षय रोगी को तेल.घी चीजें , मिर्च.मसाला बिल्कुल नहीं देना चाहिए। दूध और फल अधिक देना चाहिए।

पेचिस: पेचिस मे बहुत ही हल्का भोजन देना चाहिए। पानी में पका हुआ साबूदाना , दही, चावल तथा इनके साथ ईसबगोल की भूसी देनी चाहिए। पेचिस ठीक हो जाने पर दाल का सूप व तरकारियों का सूप दिया जा सकता है।

टायफायड: इसमें आंते बहुत कमजोर पड़ जाती है। अत: दूध फाडक़र उसका पानी और फलों का रस रोगी को देना चाहिए। रोग ठीक हो जाने पर दाल का सूप और सब्जियों का सूप दिया जा सकता है। धीरे.धीरे रोटी का पतला भाग और परवल, लौकी आदि पचने योग्य सब्जियाँ दी जा सकती है।

मलेरिया: मलेरिया बुखार उतर जाने पर सूजी, साबूदाना, खिचड़ी, हरी सब्जी आदि देने चाहिए।

मधुमेह: इस रोग के रोगी को चने के आटे की रोटी , दाल, हरी सब्जी, हरी मटर, बेसन तथा फल देने चाहिए। इसमें चीनी, चावल, आलू नहीं देने चाहिए।

स्कर्वी: इसमें विटामिन सी युक्त पदार्थ देना चाहिए। जैसे. आंवला , संतरा, मुसम्मी और अंकुरित अनाज आदि।

बेरी.बेरी: इसमें विटामिनी बी युक्त भोजन देना चाहिए। जैसे. हरी सब्जी , अण्ड़ा, मछली और छिलकेदार दाल आदि। सरसों का तेल और चावल नहीं देना चाहिए।

हैजा: रोग में नीबू का रस पानी में मिलाकर देना चाहिए। नीबू के रस में ग्लूकोज मिलाकर देना चाहिए। रोगी की दशा सुधरने पर जौ का पानी देना चाहिए। ठीक हो जाने पर पानी में साबूदाना व पतली खिचड़ी देना चाहिए।

अपूर्ण पोषण

व्यक्ति के शरीर का विकास जब अवरूद्ध हो जाता है और उसके अंग.प्रत्यंग अपना कार्य भली प्रकार से नहीं कर पाते है तो इसको अपूर्ण पोषण कहा जाता है।

अपूर्ण पोषण के लक्षण : अपूर्ण पोषण वाले व्यक्ति में निम्नलिखित लक्षण दृष्टिगोचर होते है:

1. व्यक्ति कमजोर और अस्वस्थ रहता है।
2. उसे शीघ्र ही थकान का अनुभव होता है।
3. चेहरे पर पीलापन रहता है।
4. त्वचा ढ़ीली और झुर्रीदार हो जाती है।
5. सिर में दर्द रहता है।
6. बच्चों को शीघ्र ही सर्दी.जुकाम और खांसी हो जाती है।
7. बच्चों के दाँत देर से निकलते है और जल्दी ही खराब हो जाते है।
8. व्यक्ति अपनी आयु के अनुसार औसत व्यक्ति से कम लम्बा तथा कम वजन का होता है।

अपूर्ण पोषण के कारण : अपूर्ण पोषण के मुख्य दो कारण है:

1. भोजन सम्बन्धी कारण:

(अ) अनुपर्युक्त भोजन: भोजन की मात्रा आयु और व्यवसाय के अनुसार भिन्न.भिन्न होती है परन्तु व्यक्ति को जब भोजन उसकी मांग के अनुसार नहीं मिलता है तो दोषपूर्ण पोषण हो जाता है। उदाहरण के लिए एक मजदूर व्यक्ति के भोजन में यदि कार्बाेहाइड्रेट युक्त पदार्थो का समावेश उचित मात्रा में नहीं किया जायें। तो इसके अभाव के फलस्वरूप वह भोजन अपूर्ण पोषण होना स्वाभाविक है।

(ब) असामयिक भोजन: यदि व्यक्ति भोजन समय.असमय करता है तो उसे पाचन सम्बन्धी विकार हो जाते है। उसे कब्ज रहने लगता है। इसी प्रकार अन्य विकार उसके पोषण में बाधक होते है।

(स) अपर्याप्त भोजन: संतुलित भोजन के लिए भोजन में आवश्यक पौष्टिक तत्व होना चाहिए परन्तु यदि भोजन में पौष्टिक तत्वों जैसे. कार्बोज, विटामिन्स, प्रोटीन, खनिज.लवण, जल और रेशें आदि का अभाव है तो पोषण दोषपूर्ण हो जाता है।

2. सामान्य कारण:

(अ) निद्रा की कमी: यदि व्यक्ति की नींद पूरी नहीं हो पाती है। तो यह कमी अपूर्ण पोषण का कारण बन जाती है। नींद में कमी अनेक कारणों पर निर्भर करती है। जैसे. उसके सोने के लिए उचित स्थान का न होना, खुली हवा नहीं मिलना और अधिक कार्य करने के कारण व्यक्ति को रात्रि में अधिक देर तक जागना आदि।

(ब) अस्वास्थ्यकर वातावरण: यदि व्यक्ति जिस वातावरण में रहता है, वह स्वास्थ्यकर नहीं है, तो अपूर्ण पोषण हो जाता है। जैसे. यदि उसका घर गन्दी गलियों में है , जहाँ कि शुद्ध वायु का मिलना कठिन है तो उसका स्वास्थ्य खराब हो जायेगा।

(स) अत्यधिक कार्य: यदि व्यक्ति को उसकी खुराक से अधिक कार्य करना पड़ता है तो उसका पोषण दोषपूर्ण हो जाता है।

(द) उपेक्षा: यदि व्यक्ति की उसके घर में अथवा जहाँ पर वह कार्य करता है , उपेक्षा की जाये तो उसका पोषण दोषपूर्ण हो सकता है।

अपूर्ण पोषण को दूर करने के उपाय : यदि खुराक सम्बन्धी कारणों से अपूर्ण पोषण है तो उसके अन्य दोषों को दूर करना चाहिए। अपूर्ण पोषण से उत्पन्न शारीरिक एवं मानसिक दोष को दूर करने हेतु योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञ से परामर्श लेकर तुरन्त उपचार करवाना चाहिए।

13.12 घरेलु जड़ी बूटी चिकित्सा

संसार की प्रत्येक वनस्पति गुणों का भण्ड़ार है। हम यहाँ प्रतिदिन काम आने वाली एवं विशेष उपयोगी घरेलु जड़ी.बूटी एवं उनसे ठीक होने वाली समस्याओं एवं रोगों का ही वर्णन करेंगे। जो इस प्रकार है.

क्र.	जड़ी–बूटी	समस्या एवं रोग
1.	अजवायन	अपच, भूख न लगना, गैस, आफरा, पेट दर्द, पेट में कीड़े, दस्त, हैजा, प्लीहा वृद्धि, यकृत वृद्धि, आँतों में सूजन, दंत शूल, शराब की लत, जुकाम, फ्लू या इन्फ्लूएन्जा, गले में खराश, खाँसी, काली खाँसी, दमा, बुखार, ज्वर, कमजोरी, गठिया, रक्तप्रदर, सूजन व दर्द, फोड़े–फुंसियाँ एवं घाव आदि।
2.	कलौंजी	अपच, मुँह से दुर्गन्ध, भूख न लगना, आफरा, पेट दर्द, पेट में कीड़े, हिचकियाँ, जुकाम, सिर दर्द, दमा, खाँसी, तंत्रिका शोथ, मूत्रघात, कष्टार्तव, कष्टप्रसव, मलेरिया, गठिया, कमर दर्द, संधिशोथ, हाथ–पैरों की सूजन, गंजापन एवं त्वचा रोग आदि।
3.	काली मिर्च	अपच, भूख न लगना, जी मिचलना, मुँह में छाले, पेट में कीड़े, गैस, पेट दर्द, पेचिश, हैजा, यकृत विकार, बवासीर, गले की खराश, जुकाम, खाँसी, हिचकियाँ, ज्वर, हृदय दौर्बल्य, तंत्रिका विकार, स्मृति दौर्बल्य, मूत्रकृच्छ, कष्टार्तव, नेत्रदोष, दंतशूल, बालों का झड़ना, पित्ती उछलना, मुँहासे, सूजन, फोड़े–फुंसी, दाद, खुजली, गठिया, पक्षाघात, बवासीर एवं विषैले कीड़ों के काटने का दर्द आदि।

4.	छोटी इलायची	सिर दर्द, चक्कर आना, दिल व दिमागी कमजोरी, अपच, भ्ख न लगना, आफरा, पेट दर्द, जी मिचलना, उल्टी, अधिक प्यास, मुँह में छाले, बवासीर, हिचकियाँ, खाँसी, दमा, ज्वर, कमजोरी, गुर्दा रोग, मूत्रकृछ एवं दृष्टि दोष आदि।
5.	जायफल	अपच, भूख न लगना, दस्त, उल्टी, गैस, पेट में कीड़े, मुँह की दुर्गन्ध, यकृत विकार, हिचकियाँ, जुकाम, खाँसी, दमा, हृदय दौर्बल्य, सिरदर्द, तंत्रिका शूल, कमर दर्द, अनिद्रा, मिर्गी, अंगघात, कष्टार्तव, ऐंठन, दंतशूल, गठिया, मोच, नील पड़ना, मुँहासे एवं त्वचा रोग आदि।
6.	जीरा	अपच, भूख न लगना, गैस, आफरा, पेट दर्द, पेट में कीड़े, मुँह की दुर्गन्ध, मसूड़े फूलना, दस्त, पेचिश, बवासीर, हिचकियाँ, स्वर भंग, ज्वर, मलेरिया, स्तनों से दूध कम आना, स्तन गाँठ, मूत्राघात, सुजाक, श्वेत प्रदर, गर्भाशय या योनि शोथ, नेत्र रोग, खुजली, त्वचा रोग, सूजन, फुंसियाँ एवं बिच्छू का जहर आदि।
7.	तेजपत्ता	अपच, भूख न लगना, गैस, पेट दर्द, जी मिचलना, उल्टी, दस्त, दाँतों की गंदगी, सिर दर्द, जुकाम, खाँसी, बवासीर, रक्तस्त्राव एवं गर्भस्त्राव आदि।
8.	दाचीनी	अपच, भूख न लगना, गैस, पेट दर्द, जी मिचलना, उल्टी, दस्त, पचिश, ज्वर, यकृत विकार, पेट में कीड़े, बवासीर, दाँत दर्द, सिर दर्द, जुकाम, गला दर्द, तुतलाना, खाँसी, टीबी, हृदय दौर्बल्य, तंत्रिका दौर्बल्य, रक्तस्त्राव, मूत्रकृच्छ, पेशाब में पस, वीर्य दौर्बल्य, मुँह की गंध, त्वचा रोग, सूजन, नपुंसकता एवं बिच्छू का जहर आदि।
9.	मिर्च	भूख न लगना, पेट दर्द, हैजा, फोड़े-फुंसियाँ, दाढ़ दर्द, कान दर्द, आधासिर दर्द, खुजली, दाद, आँखें दर्द, पागल कुत्ते का काटना एवं बिच्छू काटने पर आदि।
10.	बड़ी इलायची	अपच, भूख न लगना, गैस, कब्ज, पेट दर्द, यकृत विकार, खाँसी, दमा, टीबी, हृदय दौर्बल्य, पथरी, मुँह-दाँत-मसूड़ों के रोग, हिचकी, सिर दर्द, खुजली, तंत्रिका शोथ, विष एवं ज्वर आदि।
11.	धनिया	अरूची, अपच, गैस, आफरा, पेट दर्द, जी मिचलना, मुँह की दुर्गन्ध, उल्टी, दस्त, खूनी दस्त, मुँह में छाले, यकृत दौर्बल्य, बवासीर, प्यास लगना, सिरदर्द, चक्कर आना, दृष्टि दोष, जुकाम, ज्वरमलेरिया, दमा , खाँसी, हिचकी आना, गलादर्द व जलन, दिल की धड़कन बढ़ना, मस्तिष्क दौर्बल्य, संधि-शूल, हाथ-पैरों में जलन, पेशाब में कष्ट व जलन, स्वप्नदोष, श्वेत प्रदर, नक्सीर, आँख दर्द, मोतियाबिन्द, गलगण्ड, गंजापन, तिल, मस्से, सूजन, जख्म से खून बहना एवं ततैये का काटना आदि।
12.	पीपल	अपच, भूख न लगना, गैस, कब्ज, पेट दर्द, पेट में कीड़े, प्लीहा वृद्धि, यकृत वृद्धि, खाँसी, दमा, टीबी, हृदय दौर्बल्य, तंत्रिका शोथ, रक्ताल्पता, सायटिक, गठिया, वीर्य दौर्बल्य, मासिक धर्म न आना, वीर्य दौर्बल्य, मूत्रकृच्छ, कुष्ठ रोग, सूजन एवं ज्वर आदि।

13.	मेथी	अपच, गैस, आफरा, पेट दर्द, जी मिचलना, खूनी उल्टी, मधुमेह, बवासीर, खाँसी, गठिया, दुर्बलता व दर्द, बूँद-बूँद पेशब, स्तनों में दूध की कमी, मासिक धर्म न होना, श्वेतप्रदर, वीर्य दौर्बल्य, गलगण्ड, फोड़ा, सूजन, दर्द एवं बालों का जड़ना आदि।
14.	राई	अपच, गैस, आफरा, पेट दर्द, हैजा दाँत दर्द, हिचकियाँ, जुकाम, गठिया, सूजन, दर्द, लकवा, तंत्रिका दौर्बल्य, मिर्गी, मासिक धर्म में कमी, पेशाब में रूकावट, खुजली, दाद, छाजन, फोड़ा, एवं विष आदि।
15.	लौंग	अपच, आफरा, पेट दर्द, जी मिचलना, मुँह की दुर्गन्ध, उल्टी, गर्भवती को उल्टी, प्यास अधिक लगना, हैजा, दाँत दर्द, दंत क्षरण, सिरदर्द, जुकाम, खाँसी, काली खाँसी, टॉन्सिल, गला खराब, क्षय, हिचकी आना, अम्लपित्त, ज्वर, खसरा, हृदय दौर्बल्य, गठिया, सायटिका, कमर दर्द, मूत्रकृच्छ, शीघ्रपतन, नपुंसकता, स्तनों में दूध की कमी, गुहेरियाँ, नासूर, त्वचा रोग एवं मच्छर का काटना आदि।
16.	सोंठ	अरूची, अपच, आफरा, पेट दर्द, अम्लपित्त, आँव की पेचिश, दस्त, संग्रहणी, बच्चों के दस्त, दाँत-दाढ़ के दर्द, प्यास लगना, पीलिया, बवासीर, मसूड़े सूजना, आधा सीसी दर्द, जुकाम , नजला, इन्फ्लुएन्जा, स्वर-भंग, खाँसी, क्षय, न्यूमोनिया, ज्वर, हिचकियाँ, दमा, सीने में जलन, हृदय दौर्बल्य, दुर्बलता, हाथ-पैर सुन्न, मिर्गी, मूर्च्छा, लकवा, भारी सिर, सिर दर्द, कमर दर्द, गर्दन दर्द, जोड़ों का दर्द, गठया, पेशाब रूकना, पेशाब में खून आना, मासिक धर्म रूक जाना, श्वेतप्रदर, रक्तप्रदर, वीर्य दौर्बल्य, कानों में आवाज, फोड़ा, घाव, कण्ठमाला एवं हाथीपाँव आदि।
17.	सौंफ	अपच, आफरा, कब्ज, पेट दर्द, खट्टी डकार, बेचैनी, मुँह में छाले, जी मचलना, उल्टी, दस्त, आँव की पेचिश, प्यास लगना, दाँत निकलते समय दर्द, बच्चों का पेट फूलना, पेट भारी, बवासीर, गर्मी लगना, सिर दर्द, चक्कर आना, जुकाम, ज्वर, खाँसी, दमा, नींद ज्यादा या कम आना, स्मृति दौर्बल्य, हृदय रोग, मूत्रकृच्छ, न्यून शुक्राणु, स्तनों में दूध की कमी, मासिक धर्म न आना, बाँझपन, गर्भपात, दृष्टिमांद्य एवं त्वचा रोग आदि।
18.	हल्दी	अरूची, आफरा, मुँह के छाले, दाँत दर्द, दाँत हिलना, कब्ज, पेट में कीड़े, प्यास अधिक लगना, पीलिया, जलोदर, बवासीर, जुकाम, नजला, नक्सीर, गले की खराश, खाँसी, दमा, पसलियों का दर्द, चोट का दर्द, तंत्रिका शूल, रक्तस्त्राव, एलर्जी, रक्ताल्पता, सिरदर्द, मिर्गी, प्रमेह, बहुमूत्र, मधुमेह, शुक्रमेह, श्वेतप्रदर, दुग्धविकार, प्रसव वेदना, सूजाक, जीर्ण ज्वर, कण्ठमाला, हाथ-पैर फटना, चोट लगना, मोच, अस्थिभंग, घाव, नासूर, जलने के स्थान पर, पित्ती उछलना, खुजली, स्तन शोध, गाँठ, दाद, कोढ़, कान बहना, आँख दुःखना, आँख का जख्म एवं विषाक्तता आदि।
19.	हींग	अपच, आफरा, पेट दर्द, हिचकी-डकार, दस्त, पेट में कृमि, दाँत दर्द, कब्ज, सिर दर्द, चक्कर आना, जुकाम, आवाज बैठना, खाँसी, न्यूमोनिया, पसलियों का दर्द, शरीर का ठण्ड़ा पड़ना, इण्ड़ा पसीना आना, हृदय दौर्बल्य व दौरा, निम्न रक्तचाप, स्मृति

		दौर्बल्य, हिस्टीरिया, मिर्गी, गठिया, सायटिका, लकवा, पेशब रूकना, कष्टार्तव, बार-बार गर्भपात, कष्टमय प्रसव, कान दर्द, पित्ती उछलना, खुजली, दाद, जख्म, अफीम का नशा, बिच्छू या ततैये का काटना एवं मलेरिया आदि।
20.	साबूत अरहर	मुँह के छाले, पीलिया, स्तनों में दूध की कमी, सूजन, खुजली, बालों का चकत्तों के रूप में उड़ना, पसीना आना एवं भाँग का नशा आदि।
21.	साबूत उड़द	कमजोरी, दुर्बलता, सिर दर्द, नकसीर, हिचकी, लकवा, मूत्रकृच्छ, वीर्य दौर्बल्य, नपुंसकता, स्तनों में दूध की कमी, मासिक धर्म न आना, गठिया, फोड़ा, गंजापन एवं सफेद दाग आदि।
22.	साबूत चना	अपच, अम्लता, भूख न लगना, कब्ज, गैस, उल्टी, दस्त, पेट के कीड़े, पीलिया, जलोदर, बवासीर, गले की खराश, जुकाम, खाँसी, चेचक, हृदय रोग, रक्ताल्पता, दर्द, बहुमूत्र, मधुमेह, पथरी, वीर्य दौर्बल्य, नपुंसकता, श्वेतप्रदर, स्तनों में दूध कम आना, झाईयाँ, दाद, चकत्ते, खुजली, पित्ती उछलना, कुष्ठ, आँख दुःखना एवं दृष्टि दोष आदि।
23.	साबूत मूँग	ज्वर, दुर्बलता, जलने पर, दाद, खाज, पसीना अधिक एवं दृष्टि दोष आदि।
24.	साबूत मोठ	अरूचि, अधिक पसीना एवं गर्भाशय को समस्या आदि।
25.	मसूर	कब्ज, पेट के रोग, श्वेतप्रदर, रक्तप्रदर, रक्तस्त्राव, गंदे दाँत, बहुमूत्र, मुँहासे, फोड़े एवं दृष्टि दोष आदि।
26.	मटर	कब्ज, दुर्बलता, सूजन, जलन, स्तनों में दूध कम आना एवं मासिक रूक-रूक कर आना आदि।
27.	सेम	एवं आदि।
28.	गेहूँ का दलिया, ज्वारे का रस	मन्दाग्नि, भूख कम लगना, कब्ज, सिर दर्द, गला खराब, नक्सीर, खाँसी, ज्वर, दर्द, स्मृति दौर्बल्य, गठिया, मधुमेह, शुक्रमेह, पेशाब में जलन, पथरी, नपुंसकता, बाँझपन स्तनशोथ, सूजन, मोच, अस्थिभंग, खुजली, मुहाँसं, जख्म, छाजन, एक्जिमा, कैंसर, आग के जलने, आँखों की कमजोरी एवं मधुमक्खी या ततैये का काटना आदि।
29.	बिना पॉलिश के चावल	दस्त, गर्भावस्था में उल्टी, पेट में गर्म, यकृत विकार, उच्च रक्त चाप, भांग का नशा, पेशाब का रूकना व जलन, झाईयाँ, फोड़ा एवं ज्वर आदि।
30.	ज्वार का दलिया	प्यास लगना, दुबलता, शरीर व पेट में जलन, मूत्रकृच्छ एवं वीर्य दौर्बल्य आदि।
31.	मक्का का	डुर्बलता, रक्ताल्पता, खाँसी, क्षय, पेशाब की जलन एवं पथरी आदि।

	दलिया	
32.	जौ का दलिया	अपच, प्यास लगना, गले में खराश, दुर्बलता, गर्भपात की सम्भवना, ज्वर, दमा एवं जले स्थान पर आदि।

13.13 **सारांश**

निराहार नहीं तो कुछ दिनों रसाहार व फलाहार का उपयोग कर स्वस्थ रह सकते है। इतना ही नहीं तो जीने के लिए ही खाना खा लें तो भी स्वस्थ रह सकते है।

हमने आहार को पंचतत्वों युक्त और भोजन को पृथ्वी तत्व माना है। खाद्य.पदार्थो में पृथ्वी तत्व का बहुत बड़ा अंश है और स्थूल शरीर के निर्माण में यह खाद्य.पदार्थ बहुत उपयोगी है।

जिस व्यक्ति को कोई भी रोग सता रहा हो तो सर्वप्रथम अनाज का त्याग कर दें। तत्पश्चात् नीम्बू.पानी.शहद पर एक दिन उपवास जरूर करें। दूसरे दिन से कम से कम सप्ताहभर रसाहार पर आ जायें और फिर सप्ताहभर फलाहार करें। इन पन्द्रह दिनों में रोगी को कम से कम 50 से 80 प्रतिशत तो व्याधियाँ जड़ से चली जाती है।

प्राणियों के अच्छे व पूर्ण स्वास्थ्य के लिए आहार अनिवार्य है। वनस्पतियाँ हमारे आहार की पूर्ति करती है। शरीर में प्राण का संचार करती है। वनस्पतियाँ ही हमारे जीवन का मुख्य आधार है। इसके बिना जीवन सम्भव नहीं है। इससे प्राप्त आहार ही हमारे जीवन की पहली मंजिल है। उसके बिना हमारी उत्पत्ति भी सम्भव नहीं योंकि माता के अण्ड़े और पिता के शुक्राणुओं में भी पर्याप्त मात्रा में भोजन संग्रहित होता है।

13.14 **बोधात्मक प्रश्न**

1. रसाहार एवं फलाहार कैसे करते है तथा कौन.कौन से रोगों में उपयोगी है?
2. आहार के प्रकार कौन.कौन से है?
3. भोजन के कार्य एवं अवयव कौन.कौन से है?
4. खाद्य पदार्थो के भेद एवं श्रेष्ठ संयोग क्या है?
5. खान.पान सम्बन्धी क्या असावधानियाँ प्रचलित है?
6. भोजन पकाते समय पौष्टिक तत्व ध्यान कैसे रखा जाता है?
7. सन्तुलित भोजन कैसा होता है?
8. रोग के साथ कैसा भोजन किया जाता है?
9. रोगी के भोजन का सिद्धान्त क्या है?
10. रोगी का भोजन व बनाने की विधि क्या है?
11. किन रोगों में क्या.क्या भोजन करना चाहिए?
12. अपूर्ण पोषण क्या है?

13.15 संदर्भ ग्रंथों की सूची

संदर्भ ग्रंथों की सूची में सम्मिलित ग्रन्थों एवं उनकी सहायक सामग्री का उपयोग हमने इस ग्रन्थ के निर्माण में सहायक के रूप में किया है। हम इन संदर्भित ग्रन्थों, उनके लेखकों, प्रकाशकों एवं संस्थाओं के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

क्र	संदर्भ साहित्य	लेखक	क्र	संदर्भ साहित्य	लेखक
1.	प्राकृतिक आयुर्विज्ञान	डॉ. राकेश जिन्दल	18.	प्राकृतिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य	डॉ. महेन्द्र कुमार जाजपुरा
2.	वृहद प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. ओ. पी. सक्सेना	19.	याग एवं स्वास्थ्य	डॉ. महेन्द्र कुमार जाजपुरा
3.	पातंजली योगसूत्र	स्वामी विवेकानंद	20.	प्राण शक्ति उपचार; प्राचीन विज्ञान कला	चौ. कोक सुई
4.	प्राकृतिक स्वास्थ्य शास्त्र	आचार्य शेषांद्रि स्वामीनाथन	21.	जीवनी शक्ति कैसे जगायें	डॉ. चन्द्र दीप सिंह
5.	प्राकृतिक चिकित्सा दर्शन	हेनरी लिंडलार	22.	आपका आरोग्य आपके हाथ में	देवेन्द्र वोरा
6.	प्राकृतिक जीवन की ओर	श्री एडोल्फ जस्ट	23.	प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग वैज्ञानिक प्रयोग	डॉ. नागेन्द्र कुमार नीरज
7.	100 वर्ष निरोगी रहिए	माणेक लाल म. पटेल	24.	जीवेम् शरद शतम्	पं. श्री राम शर्मा आचार्य वाङ्मय
8.	रोगों की अचूक चिकित्सा	जानकी शरण वर्मा	25.	बिना औषयियों के कायाकल्प	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
9.	स्वास्थ्य के सोपान	नरूपमल सुराणा	26.	निरोग जीवन का राज मार्ग	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
10.	आरोग्य की कुंजी	राष्ट्रपिता महात्मा गाी	27.	दीर्घ जीवन की प्राप्ति	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
11.	कुदरती चिकित्सा	राष्ट्रपिता महात्मा गाी	28.	पंच तत्वों द्वारा सम्पर्ण रोगों का निवारण	पं. श्री राम शर्मा आचार्य
12.	सरल प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. लक्ष्मी नारायण शर्मा	29.	रोगों की सरल चिकित्सा	विट्ठलदास मोदी
13.	प्राकृतिक चिकित्सा	डॉ. सतीश गोयल	30.	जीने की कला	विट्ठलदास मोदी
14.	प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग	श्रीमत्ती राज कुमारी गुप्ता	31.	मौलिक चिकित्सा कौन सी?	डॉ. चंचलमल चोरडिया
15.	आर्गेनन ऑफ दी मेडीसन्स	डालटन हनीमेन	32.	100 वर्ष कैसे जीयें	आचार्य श्याम सुन्दर सुमन
16.	आरोग्य प्रकाश	वैद्यराज पं. रामनारायण शर्मा	33.	Food combining made easy	Dr. Herbert m. Shelton

****

इकाई 14

गौ तत्व एवं पंचगव्य चिकित्सा. गोबर, गोमूत्र, दूध, दही एवं घी

14.1. उद्देश्य

14.2. प्रस्तावना

14.3. गोबर चिकित्सा

14.4. गोमूत्र चिकित्सा

14.5. दूध चिकित्सा

14.6. दही.छाछ चिकित्सा

14.7. घी चिकित्सा

14.8. सारांश

14.9. बोधात्मक प्रश्न

14.10. संदर्भ ग्रंथ

14.1 उद्देश्य

इस अध्याय में निम्न बिन्दुओं पर अध्ययन करने का उद्देश्य है.

- गौ माता का गोबर कितना उपयोगी है
- गौ माता का गौमूत्र कितना उपयोगी है
- गौमूत्र में ऐसा क्या है
- गौमूत्र पर पेटेंट किसका है और क्यों
- देशी गाय के दूध की कौन.कौन सी विशेषताएँ है
- हमारे लिए दही.छाछ कितने उपयोगी है
- गौघृत अमृत के समान कैसे है

उपरोक्त समस्त जिज्ञासाओं का उत्तर पाना ही इस अध्याय का उद्देश्य है।

14.2 प्रस्तावना

ईशतत्व अर्थात् प्रकृति ने सम्पूर्ण जीव जगत् में एक प्राणी ऐसा बनाया जो सर्वगुण सम्पन्न है जिसमें सभी 33 देवी.देवता का वास है। जिसे 'गौ माता या गऊ माता' कहा जाता है। महात्मा गाँधी जी ने एक नहीं अनेक बार अहिंसात्मक आन्दोलन में कहा कि 'तुम कहो जो मैं करने को तैयार हूँ, गाय माता को छोड़ दो। तुम चाहे मुझे मार दो, परन्तु गो माता को बचा लो।' हजारों.हजारों वर्षो से इस देव भूमि को गाय माता पाल रहीं। आप यह न समझे कि आप गाय माता को पाल रहे है।

हमारे देवऋषियों ने गौमाता और उसके पंचगव्यों (गोबर, गोमूत्र, दूध, दही एवं घी) का बहुत.बहुत गुण गान करते हुए इसे कामधेनु की उपाधी दी है।

14.3 गोबर चिकित्सा

।। गौमय वस्ते लक्ष्मी।। अर्थात् देशी गाय के गोबर में लक्ष्मी का निवास है।

गाय के गोबर का चिकित्सकीय लाभ.

1. गाय के गोबर का रस शरीर के सूक्ष्म छिद्रों को खोलकर पसीनें के माध्यम से चर्म रोग के कारकों (गंदगी) को

बाहर निकालता है। गाय के गोबर में समस्त चर्म रोगों तथा घावों को ठीक करने की अद्भूत शक्ति होती है।

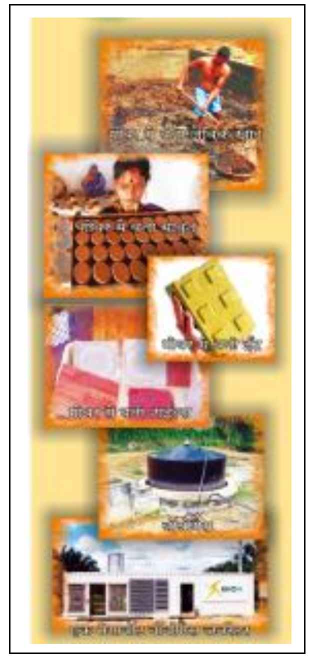

2. गाय के गोबर का रस प्रसूति के लिए अमृत तुल्य है, इसके प्रयोग से प्रसूति सामान्य हो जाती है। और प्रसूति के लिए ऑपरेशन की आवश्यकता नहीं पड़ती है।
3. यदि हम उपयोग में लाये तो एक गाय के गोबर एवं गौमूत्र से प्रतिदिन 0.75 घनमीटर बॉयोगैस और 500 वॉट से ज्यादा बिजली का उत्पादन होता है।
4. यदि हम उपयोग में लाये तो एक गाय के गोबर एवं गौमूत्र से प्रतिदिन 5 एकड़ खेत के लिए पर्याप्त खाद और कीटनाशक मिलता है।
5. गाय के ताजा गोबर व मिट्टी से लेपन किये गये मकानों.झोंपड़ों वाले स्थान पर विशेषकर टीबी या क्षय या यक्ष्मा तथा मलेरिया के कीटाणु तत्काल प्रभाव से मर जाते है या भाग जाते है।
6. आज अनेक जगह कई लोग गाय के गोबर का गैस, विद्युत निर्माण, गोबर युक्त डिस्टेम्पर, ईंट, टाईल्स, खाद, कीटनाशक, सौंदर्य प्रसाधन एवं औषधिय उपयोग कर रहे है।

14.4 गोमूत्र चिकित्सा

।। गौमूत्र धनवंतरी ।। अर्थात् गौमूत्र में स्वयं भगवान धनवंतरी निवास करते है।

इस बात का वैज्ञानिक आधार यह है कि मनुष्य के शरीर में पाए जाने वाले सभी ज्ञात24 तत्व गौमूत्र में भी पाए जाते है। एवं इन 24 तत्वों के अलावा भी 8 तत्व गौमूत्र में ओर पाये जाते है, जिनका उल्लेख हमारे प्राचीन ग्रंथों में

भी वर्णित है। मनुष्य शरीर के लिए आवश्यक सभी तत्वों की उपस्थिति की वजह से गौमूत्र सभी बिमारियों में लाभकारी है।

गौमूत्र से कैंसर, हृदय रोग, रक्तचाप, दमा, मधुमेह, चर्मरोग, गुर्दा रोग, मोटापा, स्त्रीरोग आदि असाध्य समझे जाने वाले इन रोगों को जड़.मूल से ठीक करने में पूर्ण सफलता मिली है। गोमूत्र मानव शरीर में व्याप्त विष को नष्ट करता है। शरीर में सफेद रक्त कोशिकाओं की वृद्धि कर रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है।

अमेरिकी वैज्ञानिक क्राकोड हेमिल्टन ने आधुनिक विज्ञान को यह सिद्ध कर दिया है कि गौमूत्र के उपयोग से हृदय रोग को ठीक किया जाता सकता है। डॉ. सीमर्स ने गौमूत्र से रक्त बहने वाली नाड़ियों को नुकसानदायक कीटाणुओं से मुक्त करने का दावा किया है। गौमूत्र अर्क से कैंसर का उपचार करने का तरीका अमेरिका ने पेटेंट करवा लिया है। अमेरिका द्वारा लिए गए गौमूत्र पेटेंट का नाम फार्मास्युटिकल कम्पोजिशन कन्टेनिंग काउ यूरिन, डिस्टीलेट एण्ड एन एंटिबॉयोटिक है, जिसका नं. 6410059 है।

वैज्ञानिकों का मानान है कि गौमूत्र से हाईड्रोजन सबसे शुद्ध रूप में प्राप्त हो सकती है , जो कि भविष्य का ईंधन है और बिना प्रदूषण के जलती है। इसी के साथ वे यह भी स्वीकार करते हुए कहते है कि अगर विश्व को कोई यह हाईड्रोजन दे सकता है तो वह देश सिर्फ भारत ही है। क्योंकि भारत की देशी गायों में ही वह शक्ति है।

गौमूत्र में ताम्र होता है, जो मानव शरीर में स्वर्ण के रूप में परिवर्तित हो जाता है।

गौमूत्र कीटनाशक होने से वातावरण को शुद्ध करता है और जमीन की उर्वरा शक्ति को बढ़ाता है।

गौमूत्र त्रिदोष नाशक है, किन्तु पित्त निर्माण करता है। लेकिन काली गाय का मूत्र पित्त नाशक होता है।

गोमूत्र में जैव.रासायनिक तत्व एवं रोग नाशक शक्तियाँ निम्न है.

क्र.	**जैव-रासायनिक तत्व**	**रोग नाशक शक्तियाँ**
1.	नाइट्रोजन	रक्त शुद्धिकरण
2.	सल्फर	रक्त शुद्धिकरण, चर्म रोग नाशक, आयरण का नियामक
3.	अमोनिया	कफ-पित्त-वात नाशक, अम्ल नाशक
4.	कॉपर	चर्बी नियंत्रक
5.	लोहा	लाल रक्तकण एवं हिमोग्लोबिन का निर्माण
6.	यूरिया	मूत्रल, उत्तेजक, रोगाणु नाशक
7.	यूरिक एसिड	विष नाशक, शोथ नाशक
8.	हिप्यूरिक एसिड	निर्विषीकरण, उत्सर्ग
9.	कार्बोलिक एसिड	क्षार रक्षक, रक्त शोधक, अम्लता नाशक
10.	सोडियम क्लोराइड	भार नियामक, क्षार क्षरण, अम्लता नाशक
11.	सोडियम	रक्त शुद्धिकरण, पित्त नाशक, क्षार क्षरण
12.	पोटेशियम	संधिवात विरोधी, आम वात नाशक, क्षुधा वर्धक
13.	क्लोरीन	पाचक, धातु नियामक, विकार नाशक
14.	कैल्शियम	वर्धक, रक्त स्कन्दक, रक्तशोधक
15.	मैग्नीशियम	वर्धक, कीटाणु नाशक, रक्तशोधक, दौर्बल्य नाशक
16.	फॉस्फेट्स	रोग प्रतिरोधक, वृद्धि, सामीकरण
17.	मेंग्नीज	
18.	विटामिन्स- ए,बी,सी,डी,ई	
19.	लेक्टोज	

20.	एंजाइम्स	
21.	पानी	
22.	क्रिएटोनीन	
23.	औरम हाईड्रोक्साईड	
24.	अन्य लवण	

गौमूत्र गौमाता से प्राप्त कर ताजा व शुद्ध रूप में खाली पेट तुरन्त पीना चाहिए। जहाँ तक सम्भव हो सके तो सुबह सूर्योदय के पहले या सूर्योदय के साथ में ग्रहण करें। मात्रा पहले थोड़ी रखें फिर दिनोंदिन बढ़ाते हुए 100 ग्राम तक पी सकते है। जिन्हें ताजा उपलब्ध न हो सके, वे गौमूत्र.अर्क का नियमित उपयोग करके लाभ लेवें।

14.5 दूध चिकित्सा

देशी गाय के दूध की विशेषताएँ

1.	सर्वोषधीसार या रसोत्तम	हमारे देवऋषियों ने आयुर्वेद में दूध को 'सर्वोषधीसार' कहा गया है। अर्थात् दूध सभी औषधियों का सार (सत्) है। देशी गाय का दूध जीवन-शक्ति को प्रदान करने वाले द्रव्यों में सर्वश्रेष्ठ है।
2.	सम्पूर्ण खाद्य-पदार्थ	इसमें सभी पोषक तत्व होने के साथ ही सुपाच्य है।
3.	आयुवर्द्धक	आयु बढ़ाने वाला है।
4.	अक्षि-ज्योति	इसमें केरोटीन या विटामिन ए नामक पीला पदार्थ रहता है, जो आँखों की ज्योति बढ़ाता है।
5.	मेध्य-वर्धक	इसके कण सूक्ष्म व सुपाच्य होने से वे मस्तिष्क की सूक्ष्मतम नाड़ियों में पहुँचकर मस्तिष्क को शक्ति प्रदान करते है।
6.	हृद्य-वर्धक	हृदय को बल दने वाला है।
7.	वीर्यवान	वीर्य में वृद्धि करने वाला है।
8.	बल्य	बल में वृद्धि करने वाला है।

दूध की उपयोगिता

दूध एक प्राणिज्य भोज्य पदार्थ है। हमें देशी गाय, भैंस, भेड़

तथा बकरी आदि से प्राप्त होता है। परन्तु देशी गाय का दूध उत्तम होता है। दूध एक आदर्श सन्तुलित भोजन है। यह सभी अवस्था वाले लोगों के लिए उत्तम और सम्पूर्ण आहार है। दूध एक संतुलित भोजन है। हमारे जीवन के लिए अनिवार्य सभी भोज्य.तत्व इसमें होते है।

व्यक्ति के लिए जन्म से लेकर मृत्यु तक दूध आवश्यक रहता है। शैशव काल में शिशु के लिए माता का दूध उसका भोजन होता है। माता के दूध में एल्ब्यूमिन की मात्रा अधिक रहती है। अत: यह दूध सरलता से पच जाता है। माता के दूध में सभी प्रकार के पोषक तत्व होते है , अत: शिशु की शारीरिक वृद्धि , आरोग्यता तथा कैलोरी मांग से सम्बन्धित सभी आवश्यकताएं पूरी होती रहती है। माँ के दूध में पोषक तत्वों की मात्रा इस बात पर निर्भर करती है कि माता किस प्रकार का भोजन लेती है , अत: माता को ऐसा भोजन लेना चाहिए, जो पोषक तत्वों से पूर्ण हों। अक्सर वृद्धावस्था में शारीरिक शक्ति का ह्रास होने से पाचन शक्ति शिथिल हो जाती है। इस अवस्था में यदि उन्हें मांस , मछली तथा अंड़े आदि दिये जाये तो वे उसे पचाने में असमर्थ होंगें। उन्हें प्रोटीन युक्त दूध की आवश्यकता है। जो उन्हें निश्चित मात्रा में प्रतिदिन देना चाहिए। इसी प्रकार वृद्धों की अस्थियाँ भी निर्बल होने से दूध में उपस्थित कैल्शियम और फास्फोरस उनके शरीर को मजबूत बनाते है।

देशी गाय का दूध जुकाम, डिप्थीरिया, तपेदिक रोगों को ठीक करने वाला; थकान एवं धतुरे के विष को उतारने वाला तथा पेट के कीड़ें मारने वाला है।

देशी गाय के दूध व मट्ठा से शरीर शोधन हेतु कल्प (दुग्ध.कल्प, मट्ठा.कल्प) किया जाता है।

क्र.	कल्प	स्त्रोत	समस्या या रोग
1.	दुग्–कल्प	देशी गाय	अम्लपित, गेस्ट्रीक अल्सर, सिरदर्द, माइग्रेन।
2.	मठ्ठा–कल्प	देशी गाय	खुनी आँव, पुरानी आँव, संग्रहणी, पेचिस, डिसेन्ट्री, अल्सर लेटिव कोलाइटिय, बड़ी आँत की सूजन।

दूध का रासायनिक संगठन

गाय के अमृत तुल्य दूध में 87.1 प्रतिशत जल तथा शेष 12.9 प्रतिशत निम्न घन पदार्थ पाये जाते है।

1.	प्रोटीन	दू में प्रोटीन की मात्रा लगभग 3 से 3.5 प्रतिशत रहती है। दू में पाए जाने वाले प्रोटीन को केसीनोजन कहते है। इसके अतिरिक्त अन्य प्रोटीन जो दू में रहता है, लेक्टो-एल्ब्यूमिन कहलाता है। लेक्टो-एल्ब्यूमिन की मात्रा केसीनोजन की तुलना में कम रहती है। लेक्टो-एल्ब्यूमिन की मात्रा माता के दू में अकि होती है।
2.	कार्बोहाइड्रेट (श्वेतसार)	दू में पाये जाने वाला श्वेतसार शर्करा अथवा लेक्टोज पदार्थ के रूप में होता है। यह 4 से 5 प्रतिशत होता है। इसकी मात्रा माता के दू में अकि होती है।
3.	वसा	इसकी मात्रा भिन्न-भिन्न पशुओं के दू में भिन्न-भिन्न या लगभग 2-4 प्रतिशत होती है।
4.	लवण	दू में पोटेशियम, कैल्शियम आर फास्फोरस होते है। कुछ मात्रा में आयोडीन भी पाया जाता है।
5.	विटामिन	दू में विटामिन ए, डी, ई, बी एवं सी पाया जाता है। विटामिन डी गर्मियों में अकि रहता है। दू में विटामिन सी अत्यन्त कम मात्रा में रहता है।

दूध की स्वच्छता

दूध को स्वच्छ रखना अति आवश्यक है , क्योंकि इसमें जीवाणु बड़ी शीघ्रता से बढ़ते है। दूध की स्वच्छता के लिए आवश्यक है कि दूध को सदैव स्वच्छ स्थान पर दुहा जाना चाहिए। जिस बर्तन में दूध निकाला जायें, उसे साफ रखना चाहिए। दूध को उबालने से पूर्व छान लेना चाहिए। गर्म करने के पश्चात् दूध कपड़े या जालीदार ढ़क्कन से ढक़ देना चाहिए। दूध को जीवाणुओं से रहित रखने और देर तक सुरक्षित रखने के लिए उसे 100 डिग्री सेंटीग्रेड ताप पर 1.2 उबाल तक उबालना चाहिए। क्योंकि इस ताप पर उसके जीवाणु नष्ट हो जाते है। यदि दूध को अधिक देर तक रखना है तो गर्म दूध के बर्तन को ठंड़े पानी में रखकर ठंड़ा कर लेना चाहिए, तत्पश्चात् उसे रखना चाहिए। इससे दूध ठीक रहता है, क्योंकि ठंड़े दूध में जीवाणु नहीं बढ़ते है।

दूध से बनने वाले पदार्थ

1. दही: दूध में जब एक विशेष प्रकार के बैक्टीरिया उत्पन्न हो जाते है तो दही बनता है। दही खाने में स्वादिष्ट

होता है। इसमें दूध में पाऐ जाने वाले समस्त तत्व रहते है। दही शीघ्रता से पच जाता है। पेचिस और अतिसार के रोगी को दही दिया जाता है।

2. मक्खन : मक्खन दही से निकाला जाता है। इसमें विटामिन ए और वसा होता है। मक्खन ठोस रूप में कैलोरी गुण से युक्त होता है। मक्खन घी की अपेक्षा अधिक शीघ्रता से पचता है। मक्खन नेत्र रोगी के लिए अत्यन्त हितकारी होता है, क्योंकि इसमें विटामिन ए पर्याप्त मात्रा में है।

3. घी : मक्खन और क्रीम की अपेक्षा घी के खाद्योज तत्वों के जल जाने से इसको अधिक दिनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। घी में विटामिन ए मक्खन की अपेक्षा कम होता है। इसमें कुछ मात्रा में विटामिन डी का अंश भी होता है।

4. मट्ठा : दही को मथकर मक्खन निकाल देने के उपरान्त जो पदार्थ शेष रह जाता है, वह मट्ठा है। मट्ठा अत्यधिक शीघ्रता से पच जाता है, क्योंकि इसमें स्निग्ध पदार्थ बहुत कम रहता है। मट्ठा पाचन सम्बन्धी विकारों को दूर करने के लिए अत्यन्त उपयुक्त है। मट्ठा.कल्प में खट्टा मट्ठा काम में नहीं लिया जाता है। मट्ठा.कल्प की विधि दुग्ध.कल्प के समानान्तर ही है।

5. पनीर : पनीर दूध को संरक्षित करने के लिए बनाया गया पदार्थ है। पनीर में 28 प्रतिशत स्निग्ध पदार्थ रहते है। यदि यह अच्छे दूध से तैयार किया जाये तो इसमें विटामिन ए, डी, फास्फोरस, कैल्शियम तथा रिवेफ्लेमिन सभी रहते है। यह शाकाहारियों के लिए अत्यन्त उपयोगी पदार्थ है। यदि शाकाहारियों को 4 औंस पनीर प्रतिदिन दिया जाय तो मांस आदि के स्थान पर खाद्योज की पूर्ति करेगा।

6. तोड़ का पानी : यह एक तरल पदार्थ है जिसे जमे हुए और फटे हुए दूध से पृथक किया जाता है। दूध को रेनिन अथवा किसी अम्ल तत्व के द्वारा फाड़ दिया जाता है अब जमा हुआ खाद्योज किसी कपड़े में रखकर अलग कर दिया जाता है और कपड़े में से पानी छान लिया जाता है, तब यह तोड़ का पानी कहलाता है। तोड़ का पानी उसी दशा में ठीक कहा जा सकता है, जबकि वह पारदर्शक और हल्के हरे रंग का हों। विषम ज्वर में इसको दिया जा सकता है। इसमें कैलोरी मूल्य कम होता है। कब्ज वाले मनुष्यों के लिए यह उत्तम भोजन है।

7. क्रीम : क्रीम एक स्निग्ध पदार्थ है। इसमें दूध की भांति दुग्ध शर्करा रहती है।   100 ग्राम क्रीम लगभग 1425 कैलोरी उष्णता देती है। यही कारण है कि रोगी के भोजन में उष्णता प्रदान करने के लिए इसका समावेश किया जाता है। यह शीघ्रता से पच जाती है। क्रीम एक उत्तम भोज्य पदार्थ है। परन्तु महंगी होने के कारण अधिक प्रचलित नहीं है। इसको संरक्षित रखने के लिए अत्यन्त सावधानी रखनी चाहिए।

14.6 दही छाछ चिकित्सा

शरीर के 95 प्रतिशत रोग आमाशय के विकार, रोग जनित् कीटाणु, वायु और अणुसृष्टि से उत्पन्न होते है। इन सब विपत्तियों को टालने की शक्ति दूध.दही की अणुसृष्टि में है। दूध.दही में उत्तम प्रकार के पोषण पदार्थ (अणु) अधिक मात्रा में है। देशी गाय के 35 बूँद दूध (1 क्यूबिक सेंटीमीटर) में 5 से 10 लाख और छाछ में 5 से 10 करोड़ पोषक अणु रहते है। इनका कार्य रोगाणुओं को मार भगाना है , ये प्राकृतिक एन्टीबायोटिक्स है। ये ही शरीर के लिए उपयोगी है। कृत्रिम एन्टीबायोटिक्स दवाओं का उपयोग संसार में अंधाधुंध बढ़ा है , लेकिन गहन सोच एवं वैज्ञानिक अनुसंधान से यह स्पष्ट हो गया है कि कृत्रिम एन्टीबायोटिक्स दवाओं से सर्वप्रथम लाभ प्राप्त किया जा सकता है। बाद में इसके नुकसान ही नुकसान है। कृत्रिम एन्टीबायोटिक्स दवाओं से शरीर में मौजूद बैक्टीरियों की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ जाती है, जो रोगी के स्वास्थ्य के लिए बहुत बड़ा खतरनाक सिद्ध होता है। प्राकृतिक एन्टीबायोटिक्स विशेषकर दही.छाछ हानिकारक बैक्टीरिया को मार कर शरीर से बाहर निकालने तक का काम करता है। इस क्रिया को आँतों का स्टरलाइजेशन कहा जाता है। यह आँतों, यकृत, गुर्दो, हृदय, ग्रंथियों, फेफड़ों एवं मस्तिष्क को अपनी स्वाभाविक स्थिति में लाकर स्वस्थ रखने का भी महत्वपूर्ण कार्य करता है।

देशी गाय व अमेरिकन गाय के दूध.दही में इन्हीं उत्तम अणुओं का अन्तर पाया जाता है। इसलिए हर किसी गाय के दूध.दही से पेट तो भरा जा सकता है, परन्तु फायदा सिर्फ ओर सिर्फ देशी गाय के दूध.दही से ही होता है। वैसे तो भारतीय संस्कृति में भैंस को पवित्र नहीं माना गया है तथा शास्त्र.विधियों में भी इसके दूध का महत्व नहीं है। क्योंकि यह तमोगुणी होने से दीर्घायु प्रदान नहीं करता है। इसमें वसा या फेट ज्यादा होता है। इसका दूध आलसी बनाता है तथा कफ के रोग पैदा करता है। अमेरिकन गाय का दूध तो भैंस के दूध के गुणों का एक प्रतिशत भी मुकाबले के लायक नहीं है। यदि बच्चे को माँ का दूध न मिले तो उसे देशी गाय का दूध ही देना चाहिए।

दूध.दही के लिए उपयोग में लिए जाने वाले बर्तनों का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है। दूध.दही.छाछ में विशेष प्रकार के लैक्टिक एसिड नामक बैक्टीरिया बेसलिस बल्गेरिक्स जाति के पाये जाते है। उनमें जीवन रक्षक तत्व पाया जाता है। इनके साथ दूसरी जाती के अणुजीवों के मिलने से दही खट्टा होकर गंध, रंग एवं स्वाद में विकृत हो जाता है।

ताजा धारोष्ण दूध सात्विक होता है। उसमें स्वास्थ्यप्रद क्षारीय गुण पाये जाते है। तुरन्त उपयोग न करने की स्थिति में दूध को गर्म करके उबालना आवश्यक होता है। अन्यथा बिना उबाला दूध घंटों तक पड़ा रहने से हानिकारक परिवर्तन होता है। इसलिए दूध का उपयोग व गर्म करने का कार्य जल्दी से जल्दी होना बहुत ही जरूरी माना माना गया है।

दही जमाने के लिए एक बार मंद आँच पर उबाला गया दूध को ठण्ड़ा होकर गुनगुना रहने पर उसमें पहले का ताजा दही एक प्रतिशत और सर्दी के दिनों में दो प्रतिशत मिला कर अच्छी तरह हिलाकर ढक्कन लगा कर रख देते है। पाँच से सात घण्टे बाद दही जमकर तैयार हो जाता है। उक्त विधि से दही जमाने पर दही हल्का खट्टा.मीठा लगता है। यदि उस समय दही पानी छोड़े, फुदकी मारे, स्वाद में अजीब.सा लगे तो दूध ठीक नहीं है या उसे दही जमाने तक की उक्त विधि में कोई कमी रही है। ताजा जमें दही का जल्दी ही

उपयोग कर लेना चाहिए। अन्यथा वह भी से पुराने पड़े रहने वाले दूध के समान विकार युक्त हो जाता है। हवा, प्रकाश, धूप, एवं धूएँ से बचाकर लोग दूध.दही.छाछ को फ्रिज में रख दिया करते है। परन्तु वे इनसे बच तो जायेगें। लेकिन फ्रिज की ‘क्लोरो फ्लोरो कार्बन ’ (ष्टस्नष्ट) गैस दूध.दही.छाछ एवं अन्य खाद्य.पदार्थो की बायोकेमेस्ट्री को जटिल बना देती है। जिससे वे खाद्य.पदार्थ किसी के भी खाने लायक नहीं होते है। फिर भी लोग जाने.अनजाने में खाकर पेट तो भर लेते है। उन्हें निकट भविष्य में ही उसके परिणाम भी भूगतने पड़ते है। दही से जल्द ही आगे श्रीखण्ड़ , छाछ बनाकर जल्दी ही उपयोग में ले लेना चाहिए।

जो भोरहिं माठा पियत है, जीरा नमक मिलाय। बलबुद्धि तीसे बढ़त है, सबे रोग जरि जाय।।

दही.छाछ की तासीर सम करके ही ग्रहण करना चाहिए। तासीर सम करने के लिए उनमें सदैव काला या सेंधा नमक, अजवायन एवं जीरा क्रमश: पाउडर 1:2:3 के अनुपात में मिलायें या देशी गुड़ मिलाकर खाना.पीना चाहिए। जिससे वात एवं पित्त दोनों दोष ठीक होते है। छाछ वायु नाशक है और पेट की अग्नि को प्रदिप्त करती है। ताजा मठ्ठा.तक्र.छाछ दिल की धडक़न वाले रोगियों के लिए अमृत है। छाछ का स्वभाव शीतल होता है।

पेट की समस्त समस्या एवं रोगों को दूर करने के लिए देशी गाय का दही.छाछ श्रेष्ठ माना गया है। छाछ से राब बनाकर जल्दी ही उपयोग में लेनी चाहिए। इनका उपयोग प्रात:काल से सूर्यास्त तक किया जा सकता है।

आँवले के चूर्ण के साथ दही का सेवन करने से शरीर के सभी दोष मिट जाते है। घी के साथ दही के सेवन से कफ बढ़ता है, लेकिन वात एवं पित्त शांत हो जाते है। दही का सेवन वर्षा, हेमन्त और शिशिर ऋतुओं में नहीं करना चाहिए। नियमित रूप से दही का सेवन करने से शीत एवं संक्रामक रोग नहीं होते है। दही में पाये जाने वाला एसिडोफिलस कॉलन.कैंसर को रोकने में मदद करता है। दही में पाये जाने वाले अनगिनत बैक्टिरिया शरीर में गैस्ट्रो.इन्टेस्टाइनल , डायरिया, कब्ज, इरिटेबल बाउल सिंड्रोम तथा फूड पॉयजनिंग को कभी नहीं होने देते है।

दही से हमारे शरीर को भरपूर कैल्शियम , प्रोटीन, जिंक, राइबोफ्लेविन तथा विटामिन बी 12 मिलता है। नियमित रूप से दही का सेवन करते रहने से हमारे शरीर की रोगों से लडऩे की क्षमता (इम्युनिटी) बढ़ती है।

दही से मठ्ठा.तक्र.छाछ बनती है। इनको बनाने की विधियाँ निम्न है.

मठ्ठा : दही में आवश्यक हो तो 5 प्रतिशत पानी मिलाकर अच्छी तरह से मथकर थोड़ा मक्खन निकालने के बाद शेष बचा अंश को मठ्ठा कहते है। मठ्ठा वात एवं पित्त दोनों का परम शत्रु है।

तक्र : दही में एक चौथाई पानी मिलाकर अच्छी तरह से मथकर मक्खन निकालने के बाद जो बचता है , उसे तक्र कहते है। तक्र शरीर में जमी गंदगी को बाहर निकालकर वीर्य बनाने का काम करता है। तक्र कफ नाशक होता है। तक्र पीने वाले व्यक्ति में बिजली.सी ऊर्जा आ जाती है तथा पाँवों में पहिए जैसी चलने की शक्ति आ जाती है। शारीरिक थकान एवं दुर्बल व्यक्तियों के लिए तक्र बहुपयोगी है।

छाछ : दही से मलाई निकालकर पाँच गुने से ज्यादा पानी मिलाकर अच्छी तरह मथने के बाद जो द्रव्य बनता है, उसे छाछ कहते है।

14.7 घी चिकित्सा

पृथ्वी पर कुछ अमृत है तो वह 'गउघृत' है।

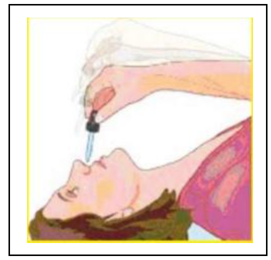

देशी गाय का नया घी : भोजन, तर्पण, परिश्रम, बलहीनता, पाँडु, कामला एवं नेत्र रोगों में अमृत जैसा है।

देशी गाय का पुराना घी : त्रिदोष नाशक, मूच्र्छा, कुष्ठ विष, उन्माद, मिर्गी एवं मोतियाबिन्द को दूर करने की अद्भूत क्षमता है।

यज्ञ में गौघृत के साथ चावल की आहुती देने से ईथीलीन ऑक्साइड, प्रोपीलीन ऑक्साइड और फारमैल्डीहाइड गैसें उत्पन्न होती है। प्रोपीलीन ऑक्साइड वर्षा कराने में सहायक होती है। ईथीलीन ऑक्साइड और फारमैल्डीहाइड गैसों का उपयोग ऑपरेशन कक्ष को जीवाणु रहित रखने में किया जाता है। गौघृत यज्ञ से ओजोन व ऑक्सीजन बनती है।

देशी गाय का घी रात को सोते समय नाक में लगाने से मस्तिष्क के सभी रोग मिट जाते है जैसे सिर दर्द, माइग्रेन, अनिद्रा, स्मरणशक्ति दौर्बल्य, सर्दी.जुकाम आदि कफ के लगभग 40 रोग जड़ से ही ठीक हो जाते है।

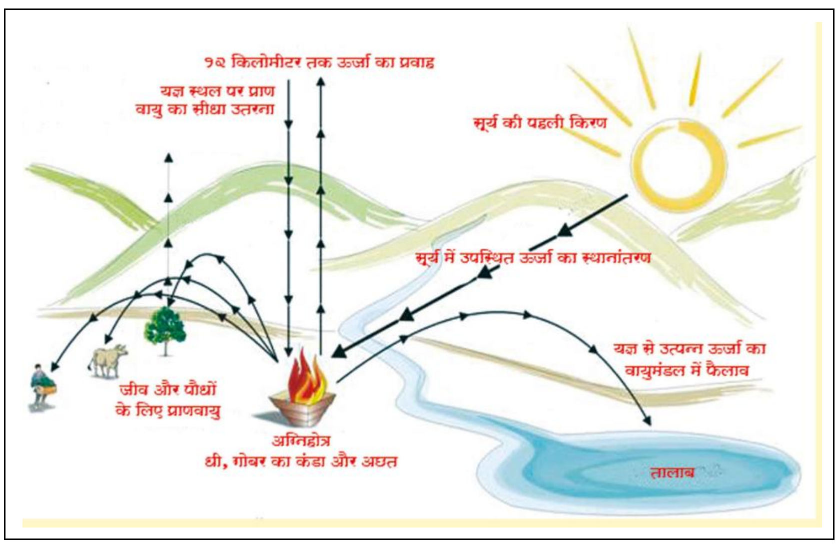

गौघृत नेत्रों के लिए हितकारी, अग्निप्रदीपक, त्रिदोष नाशक, बलवर्धक, आयुवर्धक, शुद्ध जैविक रसायन, सुगंधयुक्त, मधुर, शीतल, सुन्दर और उत्तम जैव.रसायन होता है।

गौघृत हृदय रोगियों के लिए उत्तम औषधि है। गौघृत के सेवन से कॉलेस्ट्रॉल नहीं बढ़ता है। क्योंकि इसमें हाई डेंसिटी लिपोप्रोटीन होता है। अत: इसके सेवन से हृदय पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता है, बल्कि हृदय बलिष्ठ होता है। रूसी वैज्ञनिक शिरोविच के शोध के अनुसार गाय के घी में मनुष्य शरीर में पहुँचे रेडियोधर्मी कणों का प्रभाव नष्ट करने की असीम शक्ति होती है।

पंचगव्य (गोबर, गोमूत्र, दूध, दही एवं घी) चिकित्सा से होने वाले मुख्य लाभ

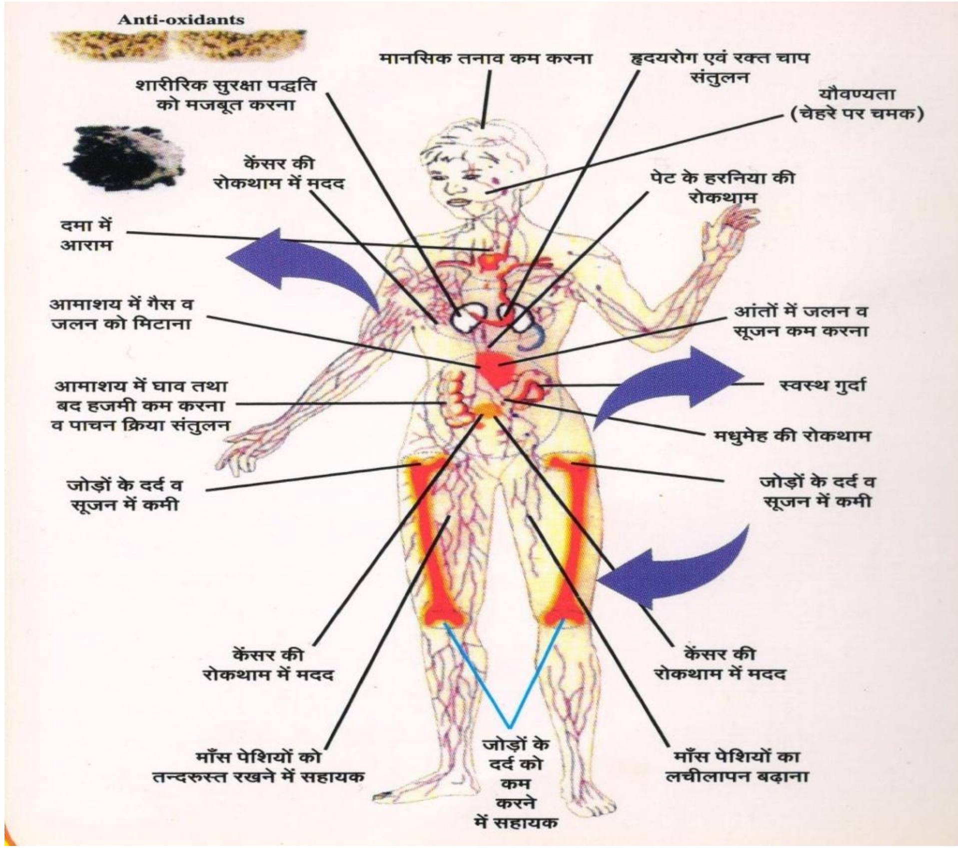

14.8 सारांश

रोज सवेरे जल पिएँ, भोजन के संग छाछ। दूध पिएँ फिर रात को, रोग न आवे पास को।।

इस संसार में गौमाता की सेवा करके उत्तम स्वास्थ्य ही नहीं पुण्य भी प्राप्त कर सकते है। गौमाता चाहे दूध देवे या न दें, वह चाहे बुढ़ी हो गई हो तो भी आपको अमृत तुल्य गोबर, मूत्र तो मरते दम तक देती ही रहेगी। वह मरने के बाद भी उत्तम खाद एवं कीटनाशक देती है। जो एक साधारण विधि से बनाया जाता है। गौमाता वास्तव में पूरी जगत् की माता है।

14.9 बोधात्मक प्रश्न

1. गौ माता में कितने देवी.देवताओं का वास है?
2. गौ माता को कौन सी उपाधी दी गई है?
3. गौमाता से प्राप्त पंचगव्यों के नाम बताइयें?
4. देशी गाय के गोबर में किसका निवास है?
5. गाय के गोबर के चिकित्सकीय लाभ बताइयें?
6. देशी गाय के गोमूत्र में किसका निवास है?

7. देशी गाय के गोमूत्र में कौन.कौन से तत्व पाये जाते है?

8. गौ माता का गौमूत्र का उपयोगी कैसे करना चाहिए?

9. गौमूत्र पर पेटेंट किसने करा लिया है और क्यों?

10. देशी गाय के दूध की कौन.कौन सी विशेषताएँ है।

11. दूध की उपयोगिता की उपयोगीमा का वर्णन कीजिए?

12. देशी गाय के दूध व मट्ठा से कल्प किन.किन समस्या या रोग में किया जाता है?

13. देशी गाय के दूध का रासायनिक संगठन बताइये?

14. दूध की स्वच्छता की स्वच्छता क्यों आवश्यक है?

15. दूध से बनने वाले पदार्थ कौन.कौन से है?

16. देशी गाय के दूध.दही.छाछ का विस्तार से वर्णन करो?

17. दही.छाछ की तासीर सम कैसे करनी चाहिए?

18. दही से मट्ठा.तक्र.छाछ बनाने की विधियाँ बताइयें?

19. पृथ्वी पर कुछ अमृत है तो वह 'गउघृत' है। विस्तार से समझाइयें?

20. 'गौघृत हृदय रोगियों के लिए उत्तम औषधि है।' वर्णन कीजिए?

21. गौ माता की उपयोगीता पर एक लेख लिखिए?

14.10 संदर्भ ग्रंथों की सूची

संदर्भ ग्रंथों की सूची में सम्मिलित ग्रन्थों एवं उनकी सहायक सामग्री का उपयोग हमने इस ग्रन्थ के निर्माण में सहायक के रूप में किया है। हम इन संदर्भित ग्रन्थों, उनके लेखकों, प्रकाशकों एवं संस्थाओं के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

क्र	संदर्भ साहित्य	लेखक
1.	महर्षि वाग्भट्ट गौशाला एवं पंचगव्य अनुसंधान केन्द्र	www.panchgavya.org
2.	गोबर–गौमूत्र से चिकित्सा	केशरीचंद मेहता
3.	प्राकृतिक आयुर्विज्ञान	डॉ. राकेश जिन्दल
4.	प्राकृतिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य	डॉ. महेन्द्र कुमार जाजपुरा

इकाई 15

वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियाँ

15.1. उद्देश्य

15.2. प्रस्तावना

15.3. वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 1. पैंसिल थेरेपी

15.4. वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 2. स्वमूत्र चिकित्सा (शिवाम्बु कल्प)

15.5. वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 3. स्पर्श चिकित्सा

15.6. वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 4. एक्यूप्रेशर चिकित्सा

15.7. वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 5. संगीत, नृत्य व हास्य चिकित्सा

15.8. वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 6. मधु चिकित्सा (मधु कल्प)

15.9. वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 7. मेनिपुलेशन थेरेपी

15.10. वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 8. कीरो प्रैक्टिस

15.11. वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 9. ओस्टीयोपेथी

15.12. वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 10. नेप्रापेथी

15.13. वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 11. मिकेनोपेथी

15.14. वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 12. स्पॉन्डिलो थेरेपी

15.15. सारांश

15.16. बोधात्मक प्रश्न

15.7 संदर्भ ग्रन्थ

15.1 उद्देश्य

- वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 1. पैंसिल थेरेपी
- वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 2. स्वमूत्र चिकित्सा (शिवाम्बु कल्प)
- वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 3. स्पर्श चिकित्सा ञ्जशह्वष्द्ध द्धद्गड्डद्यद्बठ्ठद्द, क्रद्गद्बद्मद्ब
- वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 4. एक्यूप्रेशर चिकित्सा
- वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 5. संगीत, नृत्य व हास्य चिकित्सा
- वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 6. मधु चिकित्सा (मधु कल्प)
- वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 7. मेनिपुलेशन थेरेपी
- वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 8. कीरो प्रैक्टिस
- वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 9. ओस्टीयोपेथी
- वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 10. नेप्रापेथी
- वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 11. मिकेनोपेथी
- वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 12. स्पॉन्डिलो थेरेपी

उपरोक्त समस्त जिज्ञासाओं का उत्तर पाना ही इस अध्याय का उद्देश्य है।

15.2 प्रस्तावना

किसी भी उपाय या तरीकें से रोगी को आराम मिले, समस्या में राहत मिले और धीरे.धीरे रोगी का रोग दूर हो जाये, वहीं विधि रोगी के लिए 'रामबाण दवा' या 'उत्तम चिकित्सा' मानी जाती है। अनेक मामलों में आज के युग में बड़े.बड़े अस्पतालों के नामी डॉक्टरों द्वारा लिखी गई महँगी दवाओं , महँगी जाँचों एवं गहन ऑपरेशन से भी रोगी को तनिक भी फायदा नहीं होता है। ऐसे में 'ऊँची दुकान फीके पकवान ' नामक लोकोक्ति चरितार्थ होती है। ऐसे अनेक रोग व समस्याएँ है , जिनका इलाज आज भी मेडिकल साइन्स में नहीं है , वे रोगी को अस्पताल में भर्ती जरूर कर लेते है , परन्तु वे ठीक नहीं होते है , ऐसे ही समय व धन को बर्बाद कर बैठते है तथा रात.दिन उन डॉक्टरों के चक्कर में चक्कर काटते रहते है।

प्राकृतिक चिकित्सा, योग चिकित्सा एवं वैकल्पिक चिकित्सा की विधियाँ मनुष्य के मन का भी इलाज करती है। यहाँ कुछ उदाहरण इस प्रकार है. अनेक रोग देवी.देवताओं के फेरी लगाने एवं बड़ों का आशीर्वाद लेने मात्र से ही ठीक हो जाते है। लू लगने पर पानी से भीगे तौलिएँ से झाड़ने मात्र से लू का दूष्प्रभाव नष्ट हो जाता है। पीलिया में गन्ने.मूली के रस के साथ सेंके हुए चने खाने मात्र से पीलिया ठीक हो जाता है। अनेक मामलों में ज़हर का दूष्प्रभाव मोर.पंखी से झाड़ने पर ही नष्ट हो जाता है। अनेक

मामलों में भय से पैदा समस्या व रोगों को मंत्रों के उच्चारण से झाडऩे पर ही स्वास्थ्य मिल जाता है। ऐसे अनेक सरल.सरल तरीकें व विधियाँ समाज में सर्वत्र व्याप्त है , जिनसे मेडिकल साइन्स के असाध्य रोग भी ठीक होते हुए देखे गये है, लेकिन बड़ी विडम्बना है कि उन्हें अभी.भी कानूनी मान्यता नहीं है।

वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियाँ बिना दवाई , बिना साईड.इफैक्ट्स के सस्ती , सुलभ, सरल, स्वाभाविक एवं सबके लिए प्राकृतिक तरीकें से की जाने वाली आरोग्यपूर्ण चिकित्सा है। इन्हें अहिंसक चिकित्सा पद्धतियों के नाम से भी जानते है। यहाँ सिर्फ इन वैकल्पिक विधियों के बारे में संक्षिप्त जानकारी दी जा रही है। इन विधियों का विज्ञान भी बहुत विस्तृत है , जिन्हें उनके विशेषज्ञों के मार्गदर्शन में रहकर ही सिखना होता है। मार्गदर्शन में रहकर सिखने से उन विशेषज्ञों के अनेकानेक अनुभव प्राप्त होने का विशेष लाभ मिलता है। अत: इस प्रकार विभिन्न वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियों का अनुभव प्राप्त करके ही इन वैकल्पिक विधियों में पारंगत हो सकते है।

15.3 वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 1. पैंसिल थेरेपी

परिचय

पैंसिल थेरेपी शारीरिक दर्द और मानसिक तनाव के निवारण की एक सरल पद्धति है। यह सीखने में भी सरल और उपयोग में लेने में भी आसान है। कोई भी इसे सीखकर स्वयं या दूसरों का दर्द निवारण कर सकता है।

पैंसिल थेरेपी

पैंसिल थेरेपी से एक्युपेशर, एक्युपंचर, सुजोक एवं रेफ्लेक्सोलोजी आदि के लाभ मिलते है।

पैंसिल थेरेपी से लाभ

पैंसिल थेरेपी करने से दर्द से पीड़ित व्यक्ति को दर्द से राहत मिलती है और मानसिक तनाव ग्रस्त को तनाव से मुक्ति मिलती है। इसके अलावा अन्य समस्याओं में भी यदि रोगी चाहे तो इसका उपयोग कर सकता है, उसे लाभ तो मिलेग ही।

पैंसिल थेरेपी के दौरान का दर्द

पैंसिल थेरेपी करते समय दर्द से पीड़ित व्यक्ति को उँगली में असहनीय दर्द का अनुभव होता है। जिसके शरीर में अधिक दर्द हो उन्हें उँगली पर भी अधिक दर्द होगा तथा जिनके शरीर में दर्द कम हो उन्हें उँगली में दर्द भी कम होगा।

पैंसिल थेरेपी की विधि

बेलनाकार पैंसिल को हाथ और पैर की उँगलियों पर अँगूठे से थोड़े से दबाव के साथ घुमाया जाता है। पैंसिल को उँगलियों के चारों तरफ और चारों कोणों पर घुमाया जाता है। नाखुनों पर पैंसिल नहीं घुमाते है। नाखुन को छोडक़र बाकी सारी उँगली पर पैंसिल घुमाई जाती है।

पैंसिल थेरेपी का समय

पैंसिल थेरेपी भोजन के एक घण्टे पहले या दो.ढ़ाई घण्टे बाद दी जा सकती है। स्नान के एक घण्टे पहले या एक घण्टे बाद भी दी जा सकती है।

थेरेपी के लिए जाँच

पैंसिल थेरेपी करने से पहले यह देख लेना चाहिए कि जिन उँगलियों पर पैंसिल घुमाना है वे उँगलियाँ स्वस्थ है या नहीं। उँगलियाँ कहीं कटी.फटी न हो, उन पर कोई घाव, फोड़ा.फुँसी या चोट न लगी हुई हो। जिन उँगलियों में पहले से ही दर्द हो उन पर पैंसिल थेरेपी नहीं करनी चाहिए।

महिलाओं पर पैंसिल थेरेपी

मासिक धर्म के समय तथा गर्भवती महिलाओं को पैंसिल थेरेपी का उपचार नहीं देना चाहिए।

पैंसिल थेरेपी की विशेषता

पैंसिल थेरेपी बहुत ही आसान और तुरन्त आराम देने वाली चिकित्सा है। इसे कभी.भी किया जा सकता है। इसका कोई नेगेटिव साइड इफैक्ट भी नहीं है। यह पद्धति पूर्णतया पारदर्शी है। यदि शरीर में दर्द या तनाव हो तो ही पैंसिल थेरेपी के दौरान उँगलियों पर दर्द होता है अन्यथा नहीं।

15.4 वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 2. स्वमूत्र चिकित्सा (शिवाम्बु कल्प)

परिचय

यह चिकित्सा विधि भगवान शंकर जी ने माता पार्वती जी को बताई। जिसका उल्लेख‘डामरतंत्र’ में 107 संस्कृत श्लोक के रूप में मिलता है। कहाँ जाता है कि इस कल्प विधि द्वारा हर तरह के रोगों के निवारण सम्भव है। इस चिकित्सा का उपयोग करके स्वास्थ्य लाभ के साथ शारीरिक रूप से शक्तिशाली भी बन सकते है। इस चिकित्सा को श्री मोरारजी भाई देसाई ने अपनाया। उन्होंने इसके साथ पूर्णत: ‘प्राकृतिक

जीवन शैली' को अपनाकर एक सौ वर्ष की आयु (जीवेम शरद: शतम्) प्राप्त कर एक जीवन्त उदाहरण प्रस्तुत किया।

स्वमूत्र चिकित्सा (शिवाम्बु कल्प)

श्री मोरारजी भाई देसाई के मतानुसार संसार की सभी रचनाओं में सर्वश्रेष्ठ रचना मनुष्य का शरीर है। बाहर की किसी भी सहायता के बिना शरीर के भीतर स्वयं को ठीक करने की पूर्ण क्षमता है। प्रकृति ने जहाँ जन्म से पूर्व ही शिशु के पोषण के लिए माँ के स्तनों में जहाँ अमृततुल्य दूध की व्यवस्था की है , वहीं मानव शरीर ठीक जन्म से मृत्यु पर्यन्त निरन्तर स्वत: निर्माण हो रहे शिवाम्बु मानव.जाति का डॉक्टर भी है और रात.दिन मुफ्त में अमृत तुल्य सब रोगों की एक ही दवा का निर्माण कर रहा है।

स्वमूत्र स्वयं ही रोग की पहचान करके विशेष प्रकार का औषधिय जैव रसायन का निर्माण करता है। अब तक इससे मामूली जुकाम से लेकर असाध्य कैंसर एवं एड्स जैसे रोगों का प्राय: जड़.मूल से नष्ट करने की अद्भूत शक्ति को अनेक रोगियों पर देखा जा चुका है। यह देव व ऋषि.मुनियों की द्वारा अपनाई गई स्वमूत्र.चिकित्सा बहुत प्राचीन काल से ही हमारे भारत में प्रचलन में है। आधुनिक युग के बड़े.बड़े डॉक्टरों ने भी इसको स्वयं पर आजमाकर परिणाम देखकर समर्थन किया है। आज के नवीन प्रयोगशाला परीक्षणों की कसौटी पर भी यह चिकित्सा खरी उतरी है। उनके शोधों से यह पूर्णतया सिद्ध हो चुका है कि मानव मूत्र एक प्रबल विषनाशक , तीव्र रोगों का कीटाणुनाशक, सशक्त रक्तशोधक, सर्वरोग नाशक एवं महारसायन है। इसी कारण विश्व.स्वास्थ्य.संगठन ने भी इस वैकल्पिक चिकित्सा का पूर्णत: समर्थन किया है।

इससे रोगों को नष्ट करने के प्रमाण हिन्दू धर्म के पौराणिक ग्रंथों के अलावा सभी धर्मो में मिलते है जैसे. बाइबल, कुरान, जैन, बौध एवं अनेक सम्प्रदायों के ग्रंथों में। इस सम्बन्ध में सभी ग्रंथों से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि मानव.मूत्र शरीर द्वारा शरीर से बाहर फेंका जाने वाला कचरा नहीं है बल्कि अनेक उत्तम औषधिय तत्वों का अनुपम भंडार है। इसमें अनेक प्रकार के विटामिन , अन्तस्त्रावी हार्मोन्स, एंजाइम्स, क्षार, पोटेशियम, कैल्शियम, मेग्रेशियम, अमीनों अम्ल, कार्बोनेट, बाइकार्बोनेट आदि खनिज.लवणों का भण्ड़ार है। जिसमें पोषक, रोगनाशक, रोग प्रतिनाशक एवं शरीर की शक्ति बढ़ाने की अद्भूत क्षमता है।

आज के ये सुसभ्य एवं बुद्धिमान रोगी बड़ें ही टेढ़े दिमाग के है। उनमें से हृदय रोगी और कई वर्षो से बिमार रोगी और ज्यादा ही टेढ़े है। उनको स्वमूत्र की अमृत.तुल्य चिकित्सा बताते है तो वे अपनाते नहीं और एलौपेथी की दवाएँ खा खाकर संसार में भारी भीड़ पैदा कर दी है। यदि भीड़भाड़ का मेला देखना हो तो अस्पतालों में आसानी से देखा जा सकता है। एक मुख्य बात बता देना चाहता हूँ कि हृदय रोग का एक बहुत महँगा इंजेक्शन 'यूरोकीनेंस' है। जो सड़े.गले मानव.मूत्र से बनाया है। यह इंजेक्शन रोगी को लगते ही शरीर में अवरूद्ध रक्त वाहिनियाँ तुरन्त साफ हो जाती है। लेकिन उस रोगी के शरीर में इंफेक्शन होना शुरू हो जाता है और इंफेक्शन बढने पर रोगी को नहीं बचाया जा सकता। इसका मुख्य कारण यह है कि 'यूरोकीनेंस' इंजेक्शन अनेक व्यक्ति के सड़े.गले मिश्रित मूत्र से बना है। यदि रोगी को समस्या या अस्वथ होने पर ही वह स्वमूत्र का उपयोग शुरू कर लेता तो रोग का उस समय ही निवारण हो जाता।

स्वमूत्र चिकित्सा (शिवाम्बु कल्प) की विधि

किसी भी रोग से ग्रस्त रोगी सर्वप्रथम अपना भोजन सुधार कर पूर्णत: प्राकृतिक भोजन पर आ जाये। साथ ही शरीर की अधिकाधिक साफ.सफाई पर हर समय ध्यान रखें। रात्री को सोते समय शौचादि से निवृत्त होकर क्षमतानुसार पानी पीकर सोएँ। मध्यरात्री से सूर्योदय तक निकलने वाले स्वमूत्र को सहर्ष पी जायें। उसे तुरन्त पीना अधिक श्रेष्ठकर है।

स्वमूत्र ग्रहण करने वाले व्यक्ति के लिए सुबह.शाम क्षमतानुसार खुली हवा में टहलना बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। स्वमूत्र ग्रहण करने के अलावा भी वह अपने रोगग्रस्त अंगों को स्वमूत्र से धो सकता है उस पर मूत्र की बूँदें टपका सकता है, कुल्ले या गरारें कर सकता है, मूत्र में सूती कपड़ा या रूई भीगोकर बाँध सकता है, मूत्र चुपड़ सकता है , मूत्र की मालिश कर सकता है , साफ बारीक मिट्टी में मूत्र मिलाकर लेप कर सकता है।

उपचारित रोग एवं सफल प्रयोग

अब तक शिवाम्बु कल्प करने से पूर्णत: ठीक हुए रोगों के नाम निम्नवत् है.

सभी प्रकार के कैंसर, सभी प्रकार के चर्म रोग, सभी प्रकार के आँखों के रोग, सभी प्रकार के कान के रोग, सभी प्रकार के दाँत व मसूड़ों के रोग , सभी प्रकार के मुँह व चेहरे के रोग , सभी प्रकार के गले के रोग , सभी प्रकार के घाव व चोट , सभी प्रकार के रक्तस्राव , हड्डी का जुडऩा , सभी प्रकार के आंतरिक व बाहरी फोड़ें, सभी प्रकार की गाठें व सूजन , सभी प्रकार के कफ.पित्त.वात के रोग , सभी प्रकार के बालों के रोग , गंजापन, गठिया, दमा, अपच, क्षय, पेट की जलन व दर्द , अपेण्डिसाइटिस, संग्रहणी, बवासीरदस्त, पुरानी कब्ज, दृष्टि.दोष, ग्लूकोमा, घाव, कुष्ठ रोग, सोराइसीस, ज्वर, सिर दर्द एवं शारीरिक वेदना आदि।

संदर्भ ग्रंथों की सूची

संदर्भ ग्रंथों की सूची में सम्मिलित ग्रन्थों एवं उनकी सहायक सामग्री का उपयोग हमने इस ग्रन्थ के निर्माण में सहायक के रूप में किया है। हम इन संदर्भित ग्रन्थों, उनके लेखकों, प्रकाशकों एवं संस्थाओं के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

क्र संदर्भ साहित्य लेखक

1. आरोग्य का अमूल्य साधन रावजीभाई मणिभाई पटेल
2. सहज.सुलभ संजीवनी स्वमूत्र नवनीत पब्लिकेशन्स
3. इन्ट्रोडक्शन टू बायोकैमिस्ट्री डॉ. फारेन
4. दी वाटर ऑफ लाइफ डॉ. जॉन डब्ल्यू आर्मस्ट्रांग

15.5 वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 3. स्पर्श चिकित्सा

परिचय

स्पर्श चिकित्सा सरल, सस्ती, स्वावलम्बी, पीड़ा व दुष्प्रभावों से रहित शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक व आत्मिक संतुलन के सिद्धान्तों पर आधारित सबके लिए हर समय पर उपलब्ध या दी जाने वाली चिकित्सा पद्धति है। यह प्रणाली शरीर से विजातीय तत्वों को पूर्ण रूप से दूर करने में सक्षम है अर्थात् एक बार पुन: रोगी अपने तन.मन से रोगमुक्त हो जाता है। स्पर्श चिकित्सा को जापान में 'रेकी', चीन में 'ची' और रूस में 'बायोप्लामिज्मिक ऊर्जा' कहते है।

इस चिकित्सा में ब्रह्माण्ड में उपलब्ध चैतन्य शक्ति की तरंगों को शरीर में सुव्यवस्थित ढ़ंग से प्रवाहित करने का उपचार नियमानुसार दिया जाता है। कुछ दिनों के प्रयास से ही रोगी के शरीर में ये तरंगें अपने आप प्रवाहित होने लगती है। जिससे रोगी के स्वास्थ्य में दिनोंदिन सुधार होता हुआ रोगमुक्त हो जाता है।

इतिहास

अश्र्ववेद में इसके प्रमाण मिलते है। महात्म बुद्ध ने भी अपने शिष्यों को यह विद्या सिखाई, जिसका वर्णन 'कमल सूत्र' नामक किताब में वर्णित है। हजारों वर्षो से ही इसे पूरे विश्व में जानकार लोगों द्वारा उपयोग में ली जाती रही थी। जापान के एक संत डॉक्टर मिकाओ उसुई ने इसे गहराई से समझकर अपने जीवन काल 1869.1926 तक इसका खूब प्रचार.प्रसार किया। तब से इसका पुनर्जन्म जापान या विदेशों में कहा जा सकता है। भारतीय परम्पराओं में यह चिकित्सा कई रूपों में आज भी जीवन्त है , जैसे. चरण.स्पर्श करना, देवी.देवताओं के स्थान पर जाना आदि।

अन्य का उल्लेख नहीं किया जा रहा है , क्योंकि आज के सभ्य लोगों एवं कानून ने उसे जादू.टोने.टोटके और न जाने क्या.क्या नामों के रूप में अमान्य स्वीकार किया है , परन्तु वही विद्या रेकी में अपनाई गई है तथा भारतीय परम्पराओं में तो वह आदीकाल से ही सर्वव्याप्त है।

इस विद्या से लाभ लेने के लिए उन सभ्य लोगों को सरल होना होता है , सकारात्मक बनना पड़ता है , ध्यान लगाना होता है , सत्य मार्ग का अनुसरण करना होता है , अहंकार को त्यागना होता है , बड़ों के चरणों में बैठ कर उनके मार्ग.दर्शन पर चलना होता है , जो उनसे कदापि नहीं हो सकता और न ही वे सरल बन पाते है , तब उनसे ऐसी आलोचना होना तो स्वभाविक बात है। एक मुख्य व महत्वपूर्ण बात यही कह देना चाहता हूँ कि जो सभी के प्रयासों से सम्भव भी हो सकती है , यदि वे सभ्य लोग सरल हो जाये तो केवल इसी चिकित्सा विधि के माध्यम से दुनिया के समस्त रोगी जल्द ही स्वस्थ हो जायें।

परिभाषा या अर्थ

रेकी शब्द में 'रे' का अर्थ वैश्विक या सर्वव्यापी या ईश्वरीय शक्ति से है तथा 'की' का अर्थ हमारे आस.पास ही उपस्थित अदृश्य ऊर्जा से है। जिसे जीवन ऊर्जा या प्राण शक्ति भी कहते है, यही इस चिकित्सा का आधार है।

विधि

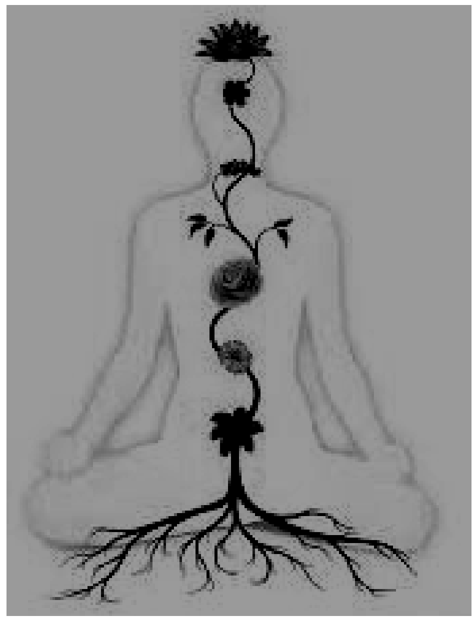

यह दिव्य शक्ति मस्तिष्क के सहस्त्रार चक्र द्वारा ग्रहण की जाती है। फिर यह क्रमोनत चक्रों में प्रवेश करती हुई पूरे शरीर में व्याप्त हो जाती है। यह हर क्षण मन की दशाओं के अनुसार शरीर में परिवर्तित हो जाती है और हाथ व पैरों के छोर या पोर द्वारा लगभग दो से आठ हजार स्तर पर तरंगों के रूप में शरीर से बाहर भी निकलती रहती है। रेकी विशेषज्ञ अपने हृदय क्षेत्र में स्थित अनाहत चक्र में रोगी की शुभकामनाओं का भाव.प्रकट करके अर्थात् धारणा बनाकर इसी दिव्य शक्ति को अपने हाथों में प्रवाहित करके रोगी को कोमल स्पर्शो से उपचारित करता है। जिसका प्रभाव विशेषकर रोगी के शरीर , दिमाग, ग्रंथियों एवं मन आदि पर पड़ता है।

उपचार के दौरान रोगी की मनोदशा जितनी सकारात्मक होगी , उतनी शक्ति का प्रवाह उसके शरीर में तुरन्त हो जायेगा और वह कुछ ही पल, समय, दिनों के उपचार से क्रमिक सुधार होकर ठीक हो जायेगा। इस प्रकार रोगी रोग मुक्त होकर स्वस्थ हो जाते है तथा रेकी विशेषज्ञ के शरीर में और नई दिव्य शक्ति आती रहती है। यहाँ यह तो स्पष्ट हो ही जाता है कि रोग मुक्त होना रोगी की इच्छा पर निर्भर करता है , क्योंकि उपचार के दौरान यदि वह अपनी सकारात्मक मनोदशा बनाएगा तो ही रेकी विशेषज्ञ का जादू या विद्या चलेगी। अन्यथा रेकी विशेषज्ञ चाहें लाख कोशिश ही क्यों न कर ले , रोगी की समस्या ठीक नहीं हो सकती है। विशेषज्ञ के शरीर से ऊर्जा प्रवाहित होने पर उस स्वयं के शरीर में शक्ति की कमी नहीं होती

है, बल्कि उसकी कुण्डलिनी शक्ति जागृत होने में सहायता मिलती है। इस विधि को आध्यात्मिक चेतन अवस्था या अलौकिक ज्ञान कहते है।

मान्यता

रेकी की मान्यता है कि जब तक मनुष्य या कोई भी जीव जीवित है , 'की' उसके ईर्द.गिर्द बनी रहती है। जब 'की' उसका साथ छोड़ जाती है तो उसकी मृत्यु हो जाती है। हरेक जीव में विचार , भाव एवं आध्यात्म्कि जीवन भी 'की' के माध्यम से ही उपजते है। अनेक नकारात्मक मनोवृत्तियों से शरीर के अंगों, गंथियो एवं नाडिय़ों में तीव्र हलचल पैदा करके अनेक प्रकार के शारीरिक एवं मानसिक विकारों को पैदा करते है। ये विकाररूपी बीज ही रोग बन जाते या कहलाते है। रेकी के द्वारा मानसिक भावनाओं का संतुलन है , अत: यह एक मनोचिकित्सा का भी रूप है। यह सभी प्रकार के कष्टों , समस्याओं, भावनाओं, विचारों, व्याधियों, एवं रोगों से छुटकारा दिलाने में सक्षम है।

रेकी विद्या के अन्र्तगत शरीर में व्याप्त नकारात्मक ऊर्जा को समाप्त कर सकारात्मक ऊर्जा का प्रवाह तेज करना होता है या नकारात्मक को सकारात्मक में बदलना होता है। इस प्रकार रेकी एक ऐसा विज्ञान है जिसमें ब्रह्माण्डीय ऊर्जा से अपनी शारीरिक एवं मानसिक ऊर्जा संतुलन बनाए रखने की विधि है, क्योंकि सभी तरह के रोग ऊर्जा के असंतुलन से ही पैदा होते है और शरीर का आन्तरिक वातावरण गड़बड़ा कर बीमार बना देता है।

स्वस्थ शरीर में ही स्थिर व शांत मन का वास होता है। यदि शरीर ठीक नहीं है तो किसी भी काम में मन नहीं लगता। अनेकों प्रकार के विचार पैदा होते है। यदि वे विचार नकारात्मक हुए तो अस्वस्थ या रोग की और प्रवृत्त होंगे तथा सकारात्मक विचार और सोच रही तो पुन: मन स्थिर व शांत हो जायेगा तथा शरीर रोग मुक्त बना रहेगा और उसका मनोबल बढ़ेगा।

सिद्धान्त

इसके निम्र सिद्धान्त है.

1. आज मैं क्रोध नहीं करूँगा। 4. आज मैं सभी का आदर करूँगा।

2. आज मैं चिंता नहीं करूँगा।5. आज मैं मन, वचन एवं कर्म से सत् कार्य करूँगा।

3. परम सत्ता का आभार व्यक्त करूँगा।

सफल चिकित्सा

रेकी के द्वारा अनेक शारीरिक और मानसिक समस्याओं व रोगों जैसे. गठिया , दमा, कैंसर, रक्तचाप, पक्षाघात, अल्सर, एसिडिटी, पथरी, बवासीर, मधुमेह, अनिद्रा, सिरदर्द, माइग्रेन, बुखार, कब्ज, साइनस, सर्दी.जुकाम, मोटापा, गुर्दे के रोग , आँखों के रोग , स्त्रियों के रोग , बाँझपन, नपुंसकता, कमजोरी एवं पागलपन को जड़ से ठीक करने में पूर्णतया समर्थ है।

15.6 वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 4. एक्युपेशर चिकित्सा

लम्बाई में शरीर के दस भाग

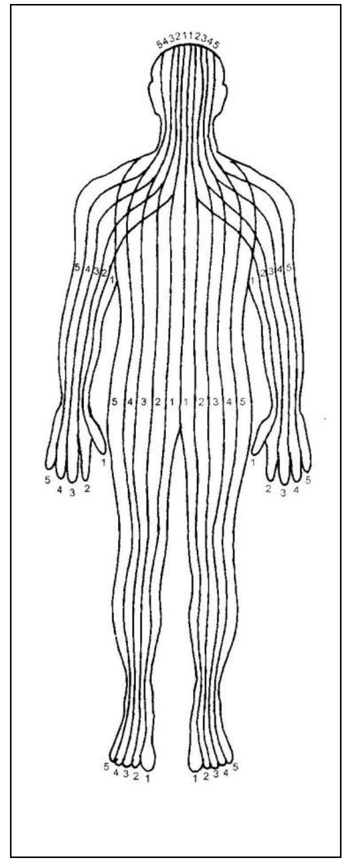

परिचय

हजारों वर्षो से भारतीय स्त्री.पुरूष सोना, चाँदी, ताँबा.पीतल से बने आभूषणों को अपने अंग.अंग पर धारण करने की प्रथा को निभा रहे है। इनके अलावा अब ओर भी धातुएँ आभूषण के रूप में प्रचलन में लायी गयी है। इन आभूषणों के साथ में हीरा, माणिक्य, मोती, ज्वाहरात एवं अन्य बहुमूल्य रंग.बिरंगे पत्थरों को इन धातुओं में सुन्दर.सुन्दर ढंग से प्रयोग कर विविध प्रकार के आभूषणों का प्रचलन आदि काल से ही होता चला आ रहा है। आभूषणों को धारण करने के पीछे जो रहस्य या विज्ञान है उसे 'एक्युप्रेशर' एवं 'एक्युपंचर' के नाम से पहचान सकते है।

चौड़ाई में शरीर के तीन भाग

प्रकृति द्वारा निर्मित जटिल मानव संरचना एवं उसकी अतिसूक्ष्म क्रिया सतत् चलती रहें। इसके लिए हर पल हर अंगों को जाने वाली नाडियों पर दबाव पड़ता रहे तो नाडियों को बाहर से अतिरिक्त बल (विद्युत ऊर्जा) मिलता रहेगा और स्वास्थ्य भी अच्छा रहेगा। इस सम्बन्ध में हमारे देव व ऋषि.मुनियों ने गहन अनुसंधान करके समस्त शरीर की 72864 नाडियों एवं उनके केन्द्र बिन्दूओं को खोज निकाला। केन्द्र बिन्दूओं पर दबाव पड़ता रहे। इसके लिए उन्होंने अनेक आभूषणों का आविष्कार कर दिया, जैसे. कान में जनेऊ लपेटना (यज्ञोपवीत संस्कार), हाथ में कड़ा.कंगन.चुडियाँ, बाजु पर बाजुबँध, कानों में बालियाँ.कुण्डल (स्मरण शक्ति.वर्धक), पैरों में झाँजर.पायजम.कड़े.बिछियाँ, गले में माला.हार.कंठी.तुलसी, माथे पर बिंदी.सिंदूर.बोर (मासिक.धर्म में सुधार), सिर में चोटी, कमर में कमरबँध एवं अँगुलियों में अंगूठी आदि। 'एक्युपंचर' के रूप में शरीर पर गोदने की प्रथा, नाक व कान छिदने का प्रचलन आदिकाल से ही होता चला आ रहा है।

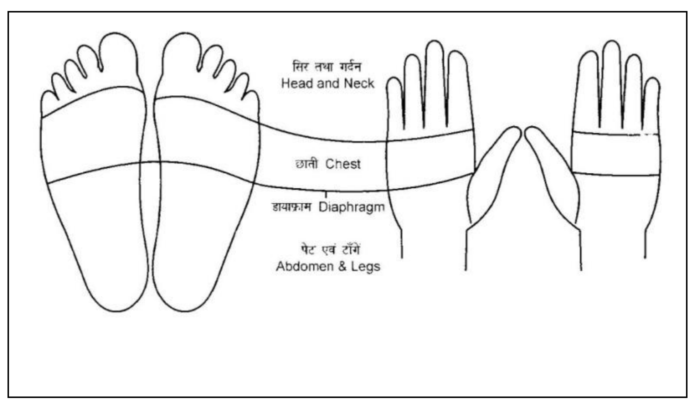

एक्युप्रेशर का अर्थ

'एक्युप्रेशर' दो शब्दों से मिलकर बना है.

'एक्यु' का अर्थ तीखी वस्तु तथा

‘प्रेशर’ का अर्थ दबाव।

इस प्रकार किसी तीखी वस्तु द्वारा दबाव देने की क्रिया को‘एक्युप्रेशर’ कहते है।

एक्युप्रेशर का सिद्धान्त एवं उपयोग

रोगों के निदान के लिए ‘एक्युप्रेशर’ चिकित्सा द्वारा शरीर के कुछ विशिष्ट बिन्दुओं पर मध्यम अतिरिक्त बल का प्रयोग करते हुए दबाव डाला जाता है। ऐसा करते समय यदि रोगी को किसी बिन्दु पर असहनीय दर्द हो तो इस तथ्य की जाँच (निदान) हो जाती है कि रागी के शरीर में उस बिन्दु से सम्बन्धित अंग में कोई विकार या रोग है। प्रमुखतया इन बिन्दुओं को विशेषज्ञ रोग से सम्बन्धित अंग जैसे. पैरों, हाथों, तलवों, पंजों, कान, चेहरे, रीढ़, पीठ, कमर, पेट, छाती आदि जाँच लिया करते है। फिर वहाँ अभिष्ट बिन्दू पर उपचार शुरू करते है।

एक्युप्रेशर पद्धति मानती है कि किसी अंग में नकारात्मक तत्वों के जमा होने से सम्बन्धित अंग के स्नायु तंत्र का काम शिथिल या निष्क्रिय हो जाने पर रोग पैदा हो जाता है। जिसको दूर करने के लिए निदान कर उपचार दिया जाता है।

एक्युप्रेशर पद्धति में हाथ की हथेली व पैरों के पंजें में शरीर के विभिन्न बिन्दुओं की खोजकर रोगग्रस्त अंग के अभिष्ठ बिन्दू पर दबाव देने की उपचार भी सम्मिलित है।

एक्युप्रेशर पद्धति में हाथ की अँगुलियों व अँगूठें की विविध मुद्राओं के द्वारा भी रोगग्रस्त अंग पर दबाव देने की विधि भी सम्मिलित है।

हाथों में एक्यूप्रेशर बिन्दु

एक्युप्रेशर पद्धति से कुछ रोगों व रोगियों को छोडक़र लगभग सभी रोगों का सफल ईलाज किया जाता है।

एक्युप्रेशर चिकित्सा के नियम व सावधानियाँ

1. चिकित्सा का स्थान साफ.सुथरा, शांत व हवादार होना चाहिए।

2. उपचार के दौरान रोगी व उपचारक तनाव रहित होने चाहिए।

3. उपचार लेने लायक रोगी को ही उपचार देवें।

4. रोगी उपचार के दिनों में हल्का भोजन व व्यायाम करे।

पैरों में एक्यूप्रेशर बिन्दु

5. भोजन के 3 घण्टे बाद उपचार दे सकते है।

6. उपचारक के नाखून कटे.फटे व बड़े नहीं होने चाहिए।

7. उपचारक द्वारा दिया गया दबाव रोगी के सहन करने लायक होना चाहिए।

8. रोगी को उपचार के बारे में जानकारी देनी चाहिए कि शुरूआत में दर्द अधिक मालूम चलेगा, परन्तु वह धीरे.धीरे कम हो जायेगा।

9. गर्भवती महिलाओं एवं मासिक धर्म के समय यह चिकित्सा नहीं दी जाती है।

10. फ्रेक्चर, चोट, ऑपरेशन एवं जले हुए अंगों पर यह चिकित्सा नहीं दी जाती है।

11. रोगी अपने शरीर की साफ.सफाई का अच्छी तरह ध्यान रखें।

12. उपचार व स्नान में एक घण्टे का अन्तर होना चाहिए।

13. कमजोर व वृद्ध रोगियों को यह चिकित्सा नहीं दी जाती है।

14. घुटनों व टखनों के साथ अँगुलियों के नीचे वाले भाग तथा कोमल भागों में दबाव कम व धीरे.धीरे दिया जाता है।

15. रोग की जाँच करने में रोगी को उपचारक की सहायता करनी चाहिए।

16. अंगूठे या अँगुलियाँ बिल्कुल सीधी खड़ी करके दबाव नहीं देना चाहिए।

17. दबाव देने के लिए अंगूठे या अँगुलियों को गोलाई में दबाव देना चाहिए।

15.7 वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 5. संगीत, नृत्य व हास्य चिकित्सा

संगीत, नृत्य व हास्य ये तीनों चिकित्साएँ मन को मुग्ध कर देने वाली, जीवन को सरल बनाने वाली, सब में प्रेम भरने वाली, आनन्द और खुशी पैदा करने वाली, मन को एक जगह स्थिर करने वाली करने वाली, उत्तम स्वास्थ्य प्रदान करने वाली अनमोल चिकित्सा है। इसमें किसी प्रकार का कोई खर्चा नहीं है। आदिकाल से अब तक इन चिकित्सा विधियों को संसार के हरेक क्षेत्र में क्षेत्रवार विकास हुआ है।

भारत मे तो हर कार्य में इनको स्थान देकर कार्यो को सरल बना दिया। हर समय एवं हर कार्य के लिए अलग.अलग गीत.संगीत.राग, अलग.अलग नाच.नृत्य और अलग.अलग हास्यभरे चुटकलों का प्रचलन होता चला आ रहा है. जैसे. खेत तैयार करते समय के गीत.संगीत, नाच.नृत्य एवं हास्य भरी बातें, फिर ये बारिश के समय, बीज बोते समय, निदान करते समय, सिंचाई करते समय, फसल पकते समय, फसल काटते समय, फसल से अनाज निकालते समय, अनाज की साफ.सफाई करते समय, अनाज को कोठों में भण्ड़ार करते समय, आटा पिसते या घट्टी चलाते समय बड़े ही हर्षोउल्लास के साथ गीत गाते, नृत्य करते एवं हँसी.मजाक की बातें करते आदि में इनको प्रमुख स्थान दिया गया है। एक कल्पना कीजिए कि इस तरीके से पैदा किया हुआ अनाज कितना गुणकारी और उससे बनी रोटी कितनी स्वादिष्ट एवं स्वास्थ्यप्रद होगी। ठीक ऐसा ही हर काम में किये जाने का प्रचलन है।

संगीत, नृत्य व हास्य ये तीनों वैज्ञानिक महत्व रखने के कारण इन्हें चिकित्सा की श्रेणी में रखा गया है। पहले ही बताया जा चुका है कि ये मन को प्रसन्न और एकाग्रचीत्त करने वाली मनोचिकित्सा है। फिर देखा जाये जो इन्हें हर्षोउल्लास के साथ अपनाया या उपयोग में लिया जाता है। जिससे शारीरिक अपशिष्ट बाहर निकलने की क्रिया तेज होकर शरीर की शुद्धि कर देती है। इन्हें हर्षोउल्लास के साथ मनाने से अंत:स्रावी ग्रंथियाँ स्वस्थ होकर हार्मोन्स का स्राव करने लगती है। मन के स्थिर होने से आध्यात्मिक लाभ भी मिलता रहता है और क्रमोन्नत उन्नति की ओर आगे बढ़ते रहते है। इनसे गज़ब का शारीरिक सौंदर्य एवं हौंसला बढ़ता है। लोगों में प्रेम.भाव बढ़ते है, मान.सम्मान बढ़ते है।

आदिकाल से संगीत, नृत्य व हास्य की उक्त विवेचनाओं की तरह प्रचलन चला आ रहा है। समय के साथ किन्ही कारणों की वज़ह से इनमें कुछ परिवर्तन भी हुआ है और कुछ स्थान विशेष या क्षेत्र विशेष में प्रचलन में भी कमी आई है। परन्तु ये प्रचलन आज भी संसार के हर कोने.कोने में और गाँव व ढ़ाणियों में देखा जा सकता है। इन प्रचलित विधियों का वास्तविक लाभ वास्तव में कुछ लोग ही उठा रहे है। आप चाहे इन्हें चिकित्सा का नाम देकर थोड़े समय के लिए करते है 'सत्संग या अन्य कार्यक्रम' करके लाभ तो ले सकते है लेकिन वास्तविकता उनमें, उनके जीवन में ही देखने को मिलेगी।

आज वैसे संगीत, नृत्य व हास्य जैसे विषयों पर बड़ी.बड़ी टाईम.पास पुस्तकें लिखी जा चुकी है। मेरा एक छोटा.सा विचार है कि किसी विधि को पढक़र गुलाब जामुन बनाना अच्छा है या किसी अच्छे जानकार हलवाई के साथ काम करके सीख लेना अच्छा है। आपकी पसन्द कोई भी हो मेरा तो यहीं कहना है कि उन लोगों के साथ व्यक्तिगत रहकर जीवन सीख लो जो यह सब कुछ अपनाये हुए है। एक बार पुन: प्रकृति की ओर अर्थात् सरल व सुलभ प्राकृतिक चिकित्सा की ओर लौट आने का आहवान् करता हूँ।

15.8 वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 6. मधु चिकित्सा (मधु कल्प)

मधुमक्खी का असली शहद सर्वश्रेष्ठ गुणों का भण्ड़ार है। यह वास्तव में एक प्राकृतिक औषधि है। जिसे दुनिया की सभी चिकित्सा पद्धतियाँ रोगियों को खाने की सलाह देती है। इसका मतलब यह श्रेष्ठ औषधि है। आयुर्वेद व प्राकृतिक चिकित्सा में तो यह हर रोगी को दी जाती है। वे मधुमेह के रोगी जिनका घाव नहीं भरता, इसका कुछ दिनों के सेवन से ही इसके आश्चर्य जनक परिणाम सामने आते है कि घाव भर कर ठीक हो गया है। यह अंग.प्रत्यंगों को बलशाली एवं मजबूत करने में अद्बितीय है। हृदय , मस्तिष्क एवं उदर को शक्ति प्रदान करने वाला है।

नि:संतान दम्पतियों के लिए यह चमत्कारीक औषधि है। देशी गाजर या चटक सफेद प्याज के रस के साथ स्त्री व पुरूष की क्रमश: बांझता व नपुंसकता नामक ताला तोड़ देती है।

गरम पानी के साथ शहद मोटापा कम कर देता है। श्वास रोगों को ठीक करता है। खाना हजम कर देता है। कब्ज को तोड़ता है। सभी प्रकार के नशों की जगह शहद काम में ली जाये तो नशेडियों की हालत सुधर जाती है।

प्रतिदिन आँख का पानी से उपचार अर्थात् नेत्रधौति करने के बाद 30 बूँद शहद , 2.2 बूँद प्याज.अदरक.निम्बू का रस मिलाकर 2.2 बूँद दिन में सुबह.दोपहर.शाम को डालने पर आँख के लगभग सभी रोग बहुत जल्दी दूर हो जाते है।

माँ का दूध पीने वाले बच्चों के अलावा जो लोग दिन में दूध पीते है, उनका दूध 100 प्रतिशत पचता नहीं है और अम्लता पैदा करता है। यदि उनको दिन में दूध पीना ही है तो वे शहद के साथ दूध पीने से दूध हजम होकर स्वास्थ्यप्रद रहेगा। शहद जठराग्रि को तीव्र करता है, भूख बढ़ाता है। मस्तिष्क के ज्ञान.तंतुओं पर अचूक प्रभाव डालकर स्मरण.शक्ति को बढ़ाता है। इस प्रकार तमाम व्याधियों या समस्याओं या रोगों में बहुत ही उपयोगी 'शहद' है। शहद में वे सभी तत्व मौजूद है, जो शरीर को हर समय आवश्यकता बनी रहती है अत: एक पूर्ण पौष्टिक आहार भी कहा जाता है।

15.9 वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 7. मेनिपुलेशन थेरेपी

प्रस्तावना

यह एक कला है जिसमें हाथों को एक चमत्कारिक विशेषज्ञ के रूप में भी उपयोग किया जाता है। आज इस कला को फीजियोथेरेपी, मोबीलाइजेशन, नेचुरोपैथ, ओस्टियोपैथ और किरोप्रेक्टर्स के चिकित्सकों ने अपनाना शुरू कर लिया है।

मेनिपुलेशन थेरेपी सिद्धान्त

मेनिपुलेशन थेरेपी प्रमुखतया रीढ़ और जोड़ों में प्रयोग की जाती है। मेरूदण्ड़ मेनिपुलेशन से रीढ़ के रक्त का संचालन ठीक होकर समग्र शरीर को इससे लाभ मिलता है। इंटरवर्टिब्री फोरेमिग और ज्वाइन्ट्स में ब्लॉकेड्स या रूकावटें ही रोगों की जननी है। इस तरह जोड़ों व मेरूदण्ड़ मेनिपुलेशन रूकावटों को दूर कर रोग या दर्द से प्रभावित अंगों में रक्त संचार सही करता है।

रीढ़ की इँजूरी या लेज़िन से कार्य में दोष उत्पन्न होता है। रीढ़ की इँजूरी से सिर्फ नुक्स वाले स्थानों में ही तकलीफ नहीं होती है बल्कि नाडियों , रक्त और लिम्फ सिस्टम में अल्टरेशन से दूरी पर स्थित कोशिकाओं और अन्य अंगों को भी प्रभावित करती है , जिससे रोगों की उत्पत्ति होती है। इस तरह मेरूदण्ड़ मेनिपुलेशन के द्वारा सभी प्रकार के रोगों से मुक्ति मिलने में सहायक है।

प्रमुख रोगों में उपयोगी

मेनिपुलेशन कुछ प्रमुख रोगों में ही उपयोगी है , जैसे. सर्वाईकल, स्पोण्डिलाइटिस, कमर दर्द, जोड़ों का दर्द, अर्थराइटिस, स्लीप डिस्क, फ्रोजन शोल्डर और सायटिका आदि को ठीक करने में अति उपयोगी है। यदि इसे सीखकर सही ढ़ंग से प्रयोग में लाया जाए और साथ में मालिश की जाये तो रोगी का दर्द दूर होकर रोग मुक्ति हो जाता है। मेनिपुलेशन थेरेपी से इन समस्याओं में अति उत्तम परिणाम मिलते है।

15.10 वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 8. कीरो प्रैक्टिस

प्रस्तावना : कीरो प्रैक्टिस मेरूदण्ड के मनकों के पदच्यूत होने का निदान है तथा उसे पुन: व्यवस्थित करने का उपचार की बहुत सरल विधि है।

सिद्धान्त : जब किसी तरह मेरूदण्ड के किसी मनके को नुकसान होने से उसमें से गुजरने वाली नसों में असाधारण परिवर्तन हो जाने की वज़ह से उन नसों से सम्बन्धित अंगों व स्नायु तंतुओं की स्थिति और कार्यो में विकृति पैदा हो जाती है।

उपचार : कीरो प्रैक्टिस के विशेषज्ञ मेरूदण्ड के उस मनके को पहचान कर उसे पूर्व स्थिति में लाकर स्नायु तंतुओं को घर्षण और दबाव से मुक्त किया जाता है। विशेषज्ञ द्वारा मेरूदण्ड के उस मनके को धक्का मारा जाता है।

15.11 वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 9. ओस्टीयोपेथी

प्रस्तावना : मेरूदण्ड, स्नायुओं, अस्थिबंध एवं हड्डियों में असाधारण परिवर्तन होने से रोग पैदा होते है।

सिद्धान्त : मेरूदण्ड को सही स्थिति में रखकर या लाकर रोग की अवस्था को बदला जा सकता है। मेरूदण्ड को सही स्थिति में रखने से सभी अंगों की प्रक्रिया सुचारू रूप से चलने लगती है।

उपचार : ओस्टीयोपेथी विशेषज्ञ मेरूदण्ड, स्नायुओं, अस्थिबंध एवं हड्डियों पर दबाव देकर उसे सही स्थिति में लाता है।

15.12 वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 10. नेप्रापेथी

प्रस्तावना : माँसपेशियों में असाधारण परिवर्तन होने से रोग पैदा होते है।

सिद्धान्त : अस्थिबँधन को खींचकर उसे मूल स्थान पर लाकर समस्या या रोग को ठीक किया जाता है। मेरूदण्ड को सही स्थिति में रखने से सभी अंगों की प्रक्रिया सुचारू रूप से चलने लगती है।

उपचार : नेप्रापेथी विशेषज्ञ ढ़ीले पड़े अस्थिबँधन को खींचकर स्नायुओं के संकुचन को दूर करते है जिससे माँसपेशियों का तनाव व स्नायुओं का अवरोध दूर हो जाता है और अंग.प्रत्यंग सही ढग़ से कार्य करने लगते है।

15.13 वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 11. मिकेनोपेथी

चोट या रोग ग्रस्त अंग को दबाकर या मालिश करके या सहला कर रोगी का ध्यान दर्द से दूर करना होता है।

15.14 वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति. 12. स्पॉन्डिलो थेरेपी

लकड़ी के हथौड़े का बहुत धीमा प्रहार या बहुत धीमा करंट से रोगी को ध्यानमग्र करना होता है। ऐसा करने से रोगी को अच्छा अनुभव होता है।

15.15 सारांश

वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियाँ भी प्राकृतिक चिकित्सा के मूल सिद्धान्तों के अनुरूप होकर उनका ही पालन करती तथा रोगियों से पालन कराती है। इन पद्धतियों द्वारा भी शरीर में पंचतत्वों के संतुलन पर जोर देती है तथा शरीर में स्वत: हो रही समस्त क्रियाओं को गति या बल प्रदान करती है। ये भी जीवनी.शक्ति प्राण.शक्ति एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता को मानती है। शरीर में अपशिष्ट जमा होने को ही रोग का कारण समझती है। अत: उक्त वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियाँ भी योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा पद्धतियों का ही एक हिस्सा है।

कपिंग थेरेपी

प्रस्तावना - रक्तसंचार बाधित होने से रोग पैदा होते है।

सिद्धान्त - प्लास्टिक के कपों का त्वचा पर रखते हुए वेक्यूम बनाकर दो से पांच मिनट थेरेपी विभिन्न स्थानों पर देते है।

उपचार - वेक्यूम से त्वचा का कप में उभार खिंचवा होता है जिससे मांसपेषियों का तनाव दूर होकर शिथिल होती है। इससे रक्त संचार व सम्पक् होता है। एवं शरीर की अकड़न, जकड़न एवं दर्द दूर होते है।

ब्लड कपिंग थेरेपी

प्रस्तावना – अशुद्ध रक्त के कारण रोग उत्पन्न होते है।

सिद्धान्त - ब्लड कपिंग के माध्यम से त्वचा पर प्रच्छान लगाकर वेक्यूम के माध्यम से रक्त निकाला जाता है।

उपचार – दूषित रक्त का ब्लडकपिंग के माध्यम से निकालकर जोड़ों के दर्द को दूर किया जाता है। स्लिपडिस्क, सवाईकल, सायटिका, फोजनषोल्डर एवं त्वचा के रोगों में लाभदायक है।

जैलोकाथेरेपी लीच

प्रस्तावना - अषुद्ध रक्त के कारण चर्म रोग उत्पन्न् होते है।

सिद्धान्त - जलौका जौंक के द्वारा त्वचा के रोगों को ठीक किया जाता है। पित्त दोश के कारण अषु हुये रक्त का जौंक द्वारा पान किया जाता है।

उपचार - चेहरे फुन्सियों, सारायसिस एवं एग्जिमा आदि रोगों में लाभदायक है।

15.16 बोधात्मक प्रश्न

1. पैंसिल थेरेपी का वर्णन किजिए?
2. पैंसिल थेरेपी से रोग की जाँच कैसे करते है?
3. पैंसिल थेरेपी की विशेषता क्या है?
4. स्वमूत्र चिकित्सा (शिवाम्बु कल्प) किसने किसकों बताई?
5. स्वमूत्र चिकित्सा (शिवाम्बु कल्प) का सम्पूर्ण उल्लेख किस ग्रंथ से मिलता है?
6. स्वमूत्र चिकित्सा (शिवाम्बु कल्प) आजीवन किसने आपनाई?
7. स्वमूत्र चिकित्सा (शिवाम्बु कल्प) के बारे में श्री मोरारजी भाई देसाई के मत है? बताइयें।

8. ‘मानव.मूत्र शरीर द्वारा शरीर से बाहर फेंका जाने वाला कचरा नहीं है बल्कि अनेक उत्तम औषधिय तत्वों का अनुपम भंडार है।’ वर्णन कीजिए?
9. स्वमूत्र चिकित्सा पर किये गये अनुसंधान क्या बताते है?
10. स्वमूत्र में कौन.कौन सी अद्भूत क्षमता है?
11. ‘यूरोकीनेंस’ इंजेक्शन के बारे में बताइये?
12. स्वमूत्र चिकित्सा (शिवाम्बु कल्प) की विधि का वर्णन कीजिए?
13. स्वमूत्र चिकित्सा (शिवाम्बु कल्प) से कौन.कौन से रोगों अभी तक ठीक करने में पूर्ण सफलता मिली है?
14. मेनिपुलेशन थेरेपी सिद्धान्त का सिद्धान्त क्या है?
15. मेनिपुलेशन थेरेपी किन रोगों में काम आती है?
16. स्पर्श चिकित्सा का संक्षिप्त वर्णन करों?
17. मधु चिकित्सा (मधु कल्प) क्या है? समझाइये।
18. ‘एक्युप्रेशर’ दो शब्द का अर्थ बताइयें?
19. ‘एक्युप्रेशर’ चिकित्सा कैसे और कहाँ से ली गई है? वर्णन कीजिए।
20. एक्युप्रेशर चिकित्सा का सिद्धान्त एवं उपयोग बताइये?
21. एक्युप्रेशर चिकित्सा के नियम व सावधानियाँ क्य.क्या है? बताइयें?
22. संगीत, नृत्य व हास्य चिकित्साओं पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिए?

15.17 संदर्भ ग्रंथों की सूची

संदर्भ ग्रंथों की सूची में सम्मिलित ग्रन्थों एवं उनकी सहायक सामग्री का उपयोग हमने इस ग्रन्थ के निर्माण में सहायक के रूप में किया है। हम इन संदर्भित ग्रन्थों, उनके लेखकों, प्रकाशकों एवं संस्थाओं के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

क्र	संदर्भ साहित्य	लेखक
1.	महर्षि वाग्भट्ट गौशाला एवं पंचगव्य अनुसंधान केन्द्र	www.panchgavya.org
2.	गोबर-गौमूत्र से चिकित्सा	केशरीचंद मेहता
3.	प्राकृतिक आयुर्विज्ञान	डॉ. राकेश जिन्दल
4.	प्राकृतिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य	डॉ. महेन्द्र कुमार जाजपुरा

इकाई - 16

घासा चिकित्सा पद्धति

इकाई की रूपरेखा

16.1 उद्देश्य
16.2 प्रस्तावना
16.3 घासा चिकित्सा पद्धति का परिचय
16.4 घासा चिकित्सा पद्धति के सिद्धांत एवं सावधानियां
16.**5** जीवन शैली जन्य रोगों के 12 घासे का वर्णन
16.6 सामान्य घासा निर्माण के निर्देश
16.**7** सारांश
16.**8** बोधात्मक प्रश्न
16.9 संदर्भ ग्रंथ

16.1 **उद्देश्य**

प्रस्तुत इकाई में हम जान सकेंगे की

- घासा चिकित्सा पद्धति का परिचय
- घासा चिकित्सा पद्धति के सिद्धांत एवं सावधानियां
- जीवन शैली जन्य रोगों के 12 घासे का वर्णन
- घासा निर्माण के निर्देश

16.2 **प्रस्तावना**

पुरा वैदिक काल में जब आयुर्वेद भी पूर्ण रूप से विकसित नहीं हो सका था तब से ही जन साधारण में पायी जाने वाली बीमारियों के उपचार के लिये जो चिकित्सा प्रथा प्रचलित थी उसी का नाम घासा चिकित्सा पद्धति है।

थोड़ा सा पीछे इतिहास की तरफ पलटकर देखने पर पता चलता है कि आज से दस पंद्रह साल पहले तक हमारे देश के प्रत्येक घर में दादी या नानी अपने नाती पोतों सहित सभी बच्चों को नियमित रूप से हरड़े का घासा दिया करती थी और उसका प्रभावशाली असर देखकर ही कई कम्पनियों ने उसका व्यावसायिक लाभ लेने के लिये रामबाण हरड़े, बालहरड़े आदि को अचूक औषधि के रूप में घासे के रूप में बाजारों में प्रचलित कर दिया था और आदिवासी एवं कई ग्रामीण क्षैत्रों में तो आज भी ये घासा चिकित्सा पद्धति प्रचलित हैं।

16.3 **घासा चिकित्सा पद्धति का परिचय**

घासा चिकित्सा पद्धति को पुनर्जिवित करने का श्रेय स्व. वैद्य चंदनमल दाधीच निवासी नोखा (बीकानेर) को जाता है जिन्होने आजीवन इसी चिकित्सा पद्धति के माध्यम से स्वामी रामसुखदासजी के प्रत्येक चातुर्मास में नि:शुल्क सेवा देकर इस पद्धति का प्रचार प्रसार कर जनसामान्य को लाभान्वित किया।

घास चिकित्सा पद्धति से सभी रोगियों को सस्ती एवं सुलभ रूप से चिकित्सा उपलब्ध करायी जा सकती है लेकिन मुख्यरूप से हम यह कह सकते हैं कि किसी भी समाज के संपूर्ण स्वास्थ्य की कल्पना तब तक नहीं की जा सकती जब तक की रोगों को नष्ट करने के लिए प्रयोग में लिये जाने वाले साधन यानि औषधि और चिकित्सा पद्धति की जानकारी एवं उपलब्धता सर्वसाधारण के लिए सुलभ नहीं हो जाती या दूसरे शब्दों में कहें तो वर्तमान में रोग निदान के लिए प्रचलित विभिन्न जांच प्रणालियों एवं औषधियों की आसमान छूती कीमतों ने हमें ये सोचने को बाध्य कर दिया हैं कि किसी ना किसी पांरम्परिक चिकित्सा विधान से ही हम सभी को स्वास्थ्य प्रदान करने के बारे में सोच सकते है। जबकि वर्तमान तो में ये हालात हैं कि यदि किसी मध्यम या निम्न आय वर्ग वाले व्यक्ति को यदि साधारण बुखार या जुकाम भी होता है तो रोग निदान के लिए की जाने वाली जांचों में ही वो रोगी इतना उलझकर रह जाता है कि दवा लेने की स्थिति तक पंहुचते पहुंचते तो वो आर्थिक तंगहाली के कारण एक नये मानसिक अवसाद का रोगी और बन जाता है और यदि किसी तरह दवा की उपलब्धता हो भी जाती है तो उन औषधियों के दुष्प्रभाव से एक रोग को दूर करने के चक्कर में अनेकों रोगों को गले लगाने को मजबूर होता है। इन्ही सब समस्याओं को देखते हुए वर्तमान परिप्रेक्ष्य में तो विशेष रूप से हमें एक ऐसी चिकित्सा पद्धति की आवश्यकता हैं जिससे हम सही अर्थो में सामुदायिक स्वास्थ्य की परिकल्पना को साकार कर सकें। और इन्ही सब समस्याओं को ध्यान में रखने पर हमें जो एक आशा की किरण दिखायी देती है वो हैं हमारी वर्षो पुरानी और किसी समय में घर घर में प्रचलित रहने वाली घासा चिकित्सा पद्धति।

इस पद्धति में रोगी के स्वयं के घर में एवं आसपास में पायी जाने वाली वनस्पतियों अथवा संग्रहित वानस्पतिक उत्पादों को आवश्यकतानुसार समुचित मात्रा में रात्रि में किसी भी मिट्टी के बर्तन में पानी के साथ भिगोकर प्रात: उसे किसी विशेष अनुपान के साथ सिलबट्टे पर घिसकर रोगी को शौचादि से निवृत्त होने के पश्चात् एकदम भूखे पेट सेवन करवाने का प्रावधान है।

16.4 **घासा चिकित्सा पद्धति के सिद्धांत एवं सावधानियां**

1. रोगी के घर में या आसपास में पाये जाने वाले उत्पाद का ही उपयोग**-** इसका कारण ये हैं कि प्रकृति ने क्षैत्र विशेष में पाये जाने वाली व्याधियों के उपशमन के लिए उसी स्थान के आसपास ही वनस्पतियों का भी निर्माण भी किया है जो स्थानीय वातावरण में सवंर्धित होने के कारण उस क्षैत्र में होने वाले रोगों के लिए एवं उस स्थान के निवासियों के लिए सर्वश्रेष्ठ हो सकती हैं ये निर्विवाद तथ्य है। क्यों कि वेदों में भी कहा गया हैं कि : -

यस्य देशस्य यो जन्तु**:,** तंजम् तस्यौषधम् हितम्।

अर्थात् जो प्राणी जिस देश या स्थान का रहनेवाला है उसके लिए उस स्थान पर उत्पन्न होने वाली औषधि ही हितकर हो सकती है। जैसे शीत प्रधान देशों में रहने वाले रोगियों के लिए मदिरापान अथवा अन्य कोई भी उत्तेजक पदार्थ यथा चाय, कॉफी आदि एक प्रकार का औषधीय विकल्प हो सकता हैं किंतु भारत जैसे उष्णप्रधान देश में तो ये सभी विष का काम ही करते है।

2. रात्रि में मिट्टी के बर्तन में पानी के साथ भिगोकर ही उपयोग- इसका कारण ये हैं कि औषधीय उपयोग के लिए किसी भी वानस्पतिक उत्पाद का संग्रहण प्राय: छाया में सुखाकर किया जाता है जिससे आर्द्र वनस्पति में पाये जाने वाले प्राकृतिक गुणों की क्षति हो जाती हैं उसी क्षति के पुनर्भरण के लिए किसी भी सूखी औषधि को आवश्यकतानुसार अन्य औषधियों के साथ दो, तीन या चार प्रहर तक मृदा एवं जल के संयोग में रखने के लिए ही मिट्टी के बर्तन में पानी में भिगोकर रखा जाता है जिससे वो औषधि अपने प्राकृतिक गुण पंचमहाभूतों (मिट्टी के बर्तन से पृथ्वी, जल, वायु, आकाश एवं घर्शण से अग्नि इस प्रकार पांचों महाभूतों) से प्राप्त कर पुन: अपनी प्राकृतिक शक्ति से युक्त होकर रोगों की चिकित्सा में आश्चर्यजनकरूप से प्रभाव दिखाती है।

3. सिलबट्टे पर घिसकर विशेष अनुपान के साथ भूखे ही रोगी को देना- इसके पीछे जो वैज्ञानिक तथ्य हैं वो ये है कि विशेष अनुपान के साथ घिसने से विभिन्न औषधियों के स्वयं के गुणों में वृद्धि होने के साथ साथ एक दूसरे के गुणों का आदान प्रदान भी होता है जिससे वो सम्मिलित औषधियां मिलकर दिव्य औषधीय स्वरूप को प्राप्त करती है यही घासा कहलाता है जिसे रोगी को एकदम भूखे पेट ही देने का प्रावधान है क्यों कि प्रात:काल शौचादि से निवृत्त होने के पश्चात् रोगी का पाचन संस्थान एक लम्बे विश्राम के बाद किसी भी वस्तु को ग्रहण करने के लिए अपनी संपूर्ण क्षमता से तैयार रहता हैं जिससे उस समय ग्रहण की गयी औषधि का प्रभाव अन्य समय ली जाने वाली औषध से लगभग दो गुना या उससे भी ज्यादा होता है और इसीलिए घासे को भूखे पेट ही लेने का प्रावधान है।

उपर्युक्त नियमों को ध्यान में रखकर यदि हम घासा चिकित्सा पद्धति के माध्यम से रोगों की चिकित्सा करने का प्रयास करते है और अधिक से अधिक लोगों को इसके लिए जागरूक करते हैं तो मेरा मानना हैं कि ना केवल हम वर्तमान में प्रचलित मंहगे चिकित्सा जाल में फंसने से जनसाधारण को बचा सकेंगें बल्कि एक स्वस्थ एवं सुदृढ़ भारत की कल्पना को साकार करते हुए सबके लिए स्वास्थ्य के लक्ष्य को भी आसानी से प्राप्त कर सकेंगें।

उक्त घासा चिकित्सा पद्धति को पुनर्जिवित करने का श्रेय स्व. वैद्य चंदनमल दाधीच निवासी नोखा (बीकानेर) को जाता है जिन्होने आजीवन इसी चिकित्सा पद्धति के माध्यम से स्वामी रामसुखदासजी के प्रत्येक चातुर्मास में नि:शुल्क सेवा देकर इस पद्धति का प्रचार प्रसार कर जनसामान्य को लाभान्वित किया।

घासा की वैज्ञानिकता

एशा भुताना पुथ्वी रस: - छांदोग्य उपनिशद्

अर्थात् जिन पांच तत्वों से हमारा शरीर बना है उसमें मिट्टी तत्व सबसे अधिक महत्वपूर्ण है।

मिट्टी में एक प्रकार का रेडियम होता है जो शरीर की ग्रंथियों को प्रभावित करके स्वास्थ्य वृद्धि करता है। (प्रो. स्टांकलासा)

घासा चिकित्सा में घासा द्रव्यों को मिट्टी के बर्तन में रख कर गलाया जाता है जिससे घासे के सभी पोशक तत्वों में गुणों की अभिवद्धि होती है जो कि संबंधित रोग को दूर करने में सक्षम होते है।

16.5 जीवन शैली जन्य रोगों के 12 घासे का वर्णन

1. मधुमेह (शुगर/डायबीटीज) नाशक घासा

1-	दाना मेथी	10 ग्राम
2-	करेले के छिलके	5 ग्राम
3-	सदाबहार के पत्ते	5 ग्राम
4-	गुड़मार	5 ग्राम

उक्त सभी को जौकूट करके मिट्टी के बर्तन में रात भर आकण्ठ पानी में भिगोकर सुबह खरल में घिसकर उचित सैंधानमक मिलाकर हलका गर्म करके एकदम भूखे पेट लें तत्पश्चात् 2 घंटे तक कुछ भी न खायें।

2. जोड़ों का दर्द (संधिवात) नाशक घासा

दाना मेथी	5 ग्राम
आसकन्द	5 ग्राम
सौंठ	2 ग्राम
जौ हरड़	2 नग
सूखा आंवला	3 ग्राम

उक्त सभी को जौकूट करके मिट्टी के बर्तन में रात भर आकण्ठ पानी में भिगोकर सुबह खरल में घिसकर उचित सैंधानमक व मिश्री मिलाकर हलका गर्म करके एकदम भूखे पेट लें तत्पश्चात् 2 घंटे तक कुछ भी न खायें।

3. उदर रोग (गैस व कब्ज) नाशक घासा

अजवायन	3 ग्राम
पींपर	2 नग
सौंफ	3 ग्राम
जौ हरड़	2 नग
सौंठ	2 ग्राम

उक्त सभी को जौकूट करके मिट्टी के बर्तन में रात भर आकण्ठ पानी में भिगोकर सुबह खरल में घिसकर उचित सैंधानमक व कालानमक मिलाकर हलका गर्म करके एकदम भूखे पेट लें तत्पश्चात् 2 घंटे तक कुछ भी न खायें।

अर्श (मस्सा व बवासीर) नाशक घासा

नारियल जटा की राख 4 ग्राम

मुनक्का दाख	4 नग
सौंफ	3 ग्राम
जौ हरड़	2 नग

उक्त सभी को जौकूट करके मिट्टी के बर्तन में रात भर आकण्ठ पानी में भिगोकर सुबह खरल में घिसकर उचित कालानमक व मिश्री मिलाकर ताजा छाछ के साथ एकदम भूखे पेट लें तत्पश्चात् 2 घंटे तक कुछ भी न खायें।

4. श्वास रोग(दमा व अस्थमा) नाशक घासा

पींपर	2 नग
काकड़ासींगी	4 ग्राम
सौंठ	2 ग्राम
अड़ूसे के पत्ते	2 नग
फिटकरी का फूला	2 ग्राम
तुलसी की मंजरी	3 सिट्टे

उक्त सभी को जौकूट करके मिट्टी के बर्तन में रात भर आकण्ठ पानी में भिगोकर सुबह खरल में घिसकर उचित सैंधानमक व मिश्री मिलाकर हलका गरम करके एकदम भूखे पेट लें तत्पश्चात् 2 घंटे तक कुछ भी न खायें।

5. ज्वर रोग (बुखार) नाशक घासा

गिलोय	3 ग्राम
तुलसी	5 पत्ते
कालीमिर्च	4 नग
नीम के पत्ते	5 नग
कुटकी चिरायता	4 ग्राम

उक्त सभी को जौकूट करके मिट्टी के बर्तन में रात भर आकण्ठ पानी में भिगोकर सुबह खरल में घिसकर उचित सैंधानमक व मिश्री मिलाकर हलका गरम करके एकदम भूखे पेट लें तत्पश्चात् 2 घंटे तक कुछ भी न खायें।

6. पिलीया (जॉइंडिस) नाशक घासा

पुनर्नवा की जड़	3 ग्राम
पींपर	2 नग
फिटकरी का फूला	3 ग्राम
कुटकी चिरायता	5 ग्राम

उक्त सभी को जौकूट करके मिट्टी के बर्तन में रात भर आकण्ठ पानी में भिगोकर सुबह खरल में घिसकर उचित सैंधानमक व मिश्री मिलाकर हलका गरम करके एकदम भूखे पेट लें तत्पश्चात् 2 घंटे तक कुछ भी न खायें।

7. चर्म रोग (दाद,खाज,एक्जिमा) नाशक घासा

चोपचीनी	3 ग्राम
हल्दी	4 ग्राम
नीम के पत्ते	5 नग
कुटकी चिरायता	5 ग्राम

उक्त सभी को जौकूट करके मिट्टी के बर्तन में आकण्ठ गोमूत्र में रात भर भिगोकर सुबह खरल में घिसकर उचित सैंधानमक व मिश्री मिलाकर हलका गरम करके एकदम भूखे पेट लें तत्पश्चात् 2 घंटे तक कुछ भी न खायें।

8. प्रदर रोग (श्वेत एवं रक्त प्रदर) नाशक घासा

सिंघोड़ा	3 ग्राम
बबूल का गोंद	3 ग्राम
सूखा धनियां	3 ग्राम
दूर्वा / दूब	5 ग्राम
नागकेशर	3 ग्राम

उक्त सभी को जौकूट करके मिट्टी के बर्तन में रात भर आकण्ठ पानी में भिगोकर सुबह खरल में घिसकर उचित मिश्री मिलाकर धारोष्ण दूध के साथ भूखे पेट लें तत्पश्चात् 2 घंटे तक कुछ भी न खायें।

9. मलेरिया (चिकनगुनिया,डेंगू) नाशक घासा

गिलोय	3 ग्राम
तुलसी	5 पत्ते
पित्तपापड़ा	4 ग्राम
नीम के पत्ते	5 नग
कुटकी चिरायता	5 ग्राम
अर्क मूल की छाल	3 ग्राम

उक्त सभी को जौकूट करके मिट्टी के बर्तन में रात भर आकण्ठ पानी में भिगोकर सुबह खरल में घिसकर उचित मिश्री व सैंधानमक मिलाकर हल्का गरम करके भूखे पेट लें तत्पश्चात् 2 घंटे तक कुछ भी न खायें।

10. रोग प्रतिरोधक क्षमता वर्द्धक घासा

तुलसी के पत्र	-	4 पत्र
गिलोय का काण्ड	-	4 ग्राम
आंवला	-	3 ग्राम

मुनक्का - 3 नग

अंसगन्ध - 4 ग्राम

उपरोक्त सभी को लेकर जौकूट करके रात्रि में मिट्टी के बर्तन में भिगोकर रख दे। प्रात: काल 10 बूंद गाय के घी, 100 मि.ली. गाय का दूध, एवं मिश्री 10 ग्राम के साथ मर्दन करके भूखे पेट लें उसके बाद 2 घंटे तक कुछ भी ना खायें।

11. अश्मरी (पथरी रोग) नाशक घासा

पाषाण भेद 4 ग्राम

गोखरू 4 पत्ते

पुनर्नवा 4 ग्राम

यवक्षार 3 नग

कुलथी की दाल 5 ग्राम

उक्त सभी को जौकूट करके कांच के बर्तन में रात भर आकण्ठ पानी में भिगोकर सुबह खरल में घिसकर उचित मिश्री व सैंधानमक मिलाकर हल्का गरम करके भूखे पेट लें तत्पश्चात् 2 घंटे तक कुछ भी न खायें।

16. 6 सामान्य घासा निर्माण के निर्देश

1. सर्वप्रथम जौकूट किये हुए सूखे द्रव्यों को किसी भी मिट्टी के बर्तन में रखकर आकण्ठ डूबने तक एकदम साफ पानी भरें
2. तत्पश्चात् किसी भी छलनी या साफ सूती कपड़े का ढ़क्कन लगाकर उसे रात भर के लिए खुले आकाश के नीचे रख दें।
3. सुबह उसे हल्के हाथों से मसलकर उसी पानी में सिलबट्टे पर या खरल में घिसकर अच्छी तरह से निचोड़कर छान लें।
4. इस तरह से प्राप्त घासे को हल्का गर्म करके एकदम भूखे पेट लें।

ये सामान्य घासा निर्माण विधि हैं। अलग अलग रोगों के अनुसार निर्माण विधि एवं लेने की विधि में अंतर आ सकता हैं अत: इसके लिए किसी भी घासा विशेषज्ञ चिकित्सक से सलाह लें।

16.7 सारांश

पुरा वैदिक काल में जब आयुर्वेद भी पूर्ण रूप से विकसित नहीं हो सका था तब से ही जन साधारण में पायी जाने वाली बीमारियों के उपचार के लिये जो चिकित्सा प्रथा प्रचलित थी उसी का नाम घासा चिकित्सा पद्धति है।

घासा चिकित्सा पद्धति को पुनर्जिवित करने का श्रेय स्व. वैद्य चंदनमल दाधीच निवासी नोखा (बीकानेर) को जाता है जिन्होने आजीवन इसी चिकित्सा पद्धति के माध्यम से स्वामी रामसुखदासजी के प्रत्येक चातुर्मास में नि:शुल्क सेवा देकर इस पद्धति का प्रचार प्रसार कर जनसामान्य को लाभान्वित किया।

16.8 **बोधात्मक प्रश्न**

- घासा चिकित्सा पद्धति का परिचय दीजिए
- घासा चिकित्सा पद्धति के सिद्धांत एवं सावधानियाँ लिखियें
- मधुमेह, जोड़ों के दर्द, उदररोग एवं अर्शनाशक घासे का वर्णन कीजिए
- श्वास, पीलिया, चर्मरोग एवं पथरी नाशक घासे का वर्णन कीजिए
- रोग प्रतिरोधक क्षमता वर्धक घासे का सामान्य वर्णन कीजिए
- चिकन गुनिया एवं डेंगू नाशक घासे का वर्णन कीजिए
- घासे की वैज्ञानिकता लिखिए।

16.9 **संदर्भ ग्रंथ**

1. चरक सहिंता एवं द्रव्य गुण विज्ञान
2. प्रोफेसर महेश दाधीच बी.पी.एस, वि.वि. सोनियत हरियाणा

Unit -17

Introducation of Yoga and Naturopathy

Structure of the Unit

17.1 Objective

17.2 Intordocation and Definition of Yoga

17.3 General Rules to Practice Yoga

17.4 Basics Yoga Practising

17.5 Definition of Health

17.6 Ancient Way Of Lifestyle

17.7 "Pratidinam kartavyaa charyaa dinacharya"

17.8 Technique of Yoga

17.9 Definition of Naturophy

17.10 Concept of Health and disease (Naturopathy)

17.11 Maint Priencipal of Naturopathy

17.13 Important Treatments of Naturopathy

17.14 Summary

17.15 Exersixe Question

17.16 References

17.1 Objective

The read of the unit end about -

- General Rules to P ractice Yoga
- Basics Yoga Practising
- Definition of Health
- Ancient Way Of Lifestyle
- "Pratidinam kartavyaa charyaa dinacharya"
- Technique of Yoga

- Definition of Naturophy
- Concept of Health and disease (Naturopathy)
- Maint Priencipal of Naturopathy

17.2 Introduction

YOGA is an ancient. Indian science and is one among the shat darshanas (Six great Indian philosophies) which has evolved over thousands of years. In the spiritual dimension, Yoga is a path towards attainment of super conscious states beyond sensory perception and knowledge. It deals with the physical, mental, moral and spiritual wellbeing of description of this practice and various aphorisms in the classic treatise the "Yoga Sutras" of Patanjali, dating back to 900 B.C., which helped to define the modern practice of Yoga.

This pragmatic description enumerates eight stages of Yoga, which if practiced systematically allows one to attain a state of sublimation of all mental modifications in the mind and attaining super consciousness (*Samadhi*). These systematic Yoga techniques include yamas (moral doctrines), niyamas (disciplines), asanas (postures), pranayama (regulated nostril breathing/breath control), pratyahara perceptible external sensory stimuli dharana (concentration), dhyana (meditation) and finally to attain a state of Samadhi (absorption).

Definition of Yoga

The word Yoga comes from the root word yuj meaning to union. Accordingly Yoga can be defined as a means for uniting the individual consciousness with the universal consciousness. Patanjali define in his second aphorism 'yogah citta vrtti nirdhah'; Yoga is a process of gaining control over the mind by cessation of the mind modifications of mind by controlling the mind, one can teach the original state – 'Tada drashtuh swarupe avasthanam" . Then the Seer establishes himself in his original state. This technique of 'mind control' prescribed by Patanjali, has tools to develop the power of concentration and focusing of mind with increased speed of thoughts. Emphasizes the second aspects defining Yoga as *Manah prashamanopayah Yoga ityabhidheyate.* Yoga is called a skiful trick to calm down the mind. According to Swami Vivekananda, Yoga is a conscious process to accelerate the evolution into a single lige, a few years or just a few days by controlling the behavior internally as well as externally, this state can be achieved

by following work or Karma Yoga, by worship or Bhakti Yoga, by knownledge or Jnana Yoga and by psychic control or Raja Yoga.

17.3 General Rules to P ractice Yoga

Pre-requisites while doing yoga:

- One should have faith in yoga is doing's
- Practice, after having the good sleep
- Person should be free from all sort of physical and mental tension or stress
- After clearing the bowels (Passing the urine stools)
- Before practicing one should consume near about 100ml of luke warm water
- Mild oil massage should be given to weight bearing major joints (Improves the flexibility)
- While practicing person should wear loose comfortable clothes preferably the track suit and lower
- Person should not wear the spectacles, belt, wrist watch, necklace, rings etc while practicing the Yoga
- Practice should be done over the comfortable mat/carpet/ bed sheet spread over the floor
- Always loosening exercises which warms up the body should be done prior to practicing the Yoga asana's
- During the conditions like fever, tiredness, weakness and female during the menstrual period should not practice the Yoga.
- Yoga being more practical, should not be done under the guidance of the physician (Doctor) who is expert in Yoga.
- Yoga practice cannot be made generalized because the yoga practice varies according to the person's body structure, age and diseases condition. So, before practicing Yoga consult specialist who is master in medicine as well as in yoga, and know about the indicated and contraindicated asana, pranayama etc.

- Try to do yoga in company (Friends, Colleagues, Family members etc) for consistent practice.

17.4 Basics Yoga Practising

- Each and every steps of yoga asana's should be synchronized with the breathing pattern.

For examples, while doing forward bending asana's person should exhale (Exhale the air/take out of the air from lungs) and bend forward (Padahastasana, Paschimottasana, Pavanamuktasana, Halasana, etc)

- Similarly while bending backward one should inhale (Air should be take inn)
- Every asana should be ended with the counter poses
- Person should give a pause of 10-15 second after every set of Asana to relax himself.
- Muscles, tendons and be joints should not be kept in continues strain and should not to be exchausted.
- Never practice Yoga asana and general exercises like weight lifting, Dumbbells, etc all together
- Must to have the basic knowledge about body organs, their structure and their site in the body to practice asasna and get the effect.
- Yoga practice always should be done in the following sequential order Asana (Posture), Pranayama (Breathing techniques), Dhyama (Meditation) and Visrama (Relaxation)
- It is best and must to have the healthy diet (Satvika ahara Fruits, Vegetables, Milk, Ghee) while practicing the Yoga
- Initially, Yoga practitioners should start consuming the Ghee and Milk
- Soon after Yoga practice, person should not take bath; at least there should be a gap of 30minutes to 1 hour.
- Sip of luke warm water can be consumed in between the yoga practice if individual feels thirst.

- Yoga mat which has good cushion is recommended or any blanket/ bed sheet can be used.
- Person should have his/her own yoga mat, should not share Yoga matting's with other person.

Place of Practice:

- Preferably in open space/area where wind is calm, pleasant and cool.
- Best to choose quite place where there is minimum noise pollution.
- Best place is over the terrace, lawn, garden, park, sea shore etc which is comfortable.
- In rainy and summer season, practice can be done in indoor according to once own comfort (Proper lighting ventilation should maintained)

Time of practice:

- Beginners, better to start practicing in evening between 5.00 PM to 6.00 PM (Evening time body will be having good flexibility)
- Summer season 5 am to 6 am in morning and 6pm to 7pm in the evening (During minimum heat)
  In extreme summer person can do yoga practice under the fan, but not in AC rooms
- Winter season 7 am to 8 am in morning and 5pm to 6pm In extreme winter person can do yoga practice by wear thermals
- Rainy season – when the sky is clear

17.5 Definition of Health

Health is generally defined as being "a state of complete physical, mental and social well-being and not merely the absence of disease or merely the absence of disease or infirmity" according to the World Health Organization (WHO). It also suggests a fourth dimension i.e. "spiritual well being". Overall health is achieved through a combination of physical, mental, emotional, social and spiritual well-being.

Physical health is characterized by good body health (average height or weight), absence of any diseases, and is the result of regular exercise, proper diet and nutrition, and proper rest for physical recovery.

Mental health describes either a level of cognitive or emotional well-being or an absence of a mental disorder. WHO defines mental health as “a state of well-being in which the individual realizes his or her own abilities, can cope with the normal stresses of life, can work productively and fruitfully, and is able to make a contribution to his or her community”. However despite official definitions, the term mental health, and the question of whether or not an individual is ‘mentally well’, remains a subjective assessment. Social determinants of health are conditions, in which people are born, grow, live and work including the health system.

In the modern era, stress and faulty lifestyle are the main cause of various problems. Such unhealthy lifestyle and unvarying stress contribute significantly to the pathogenesis of not only psychiatric but also many other systemic disorders. The abrupt pace of modernization and industrialization expose us to lots of challenges to face like pollution, infections, psychological stress and so on. Dealing with these, our lifestyle is getting altered by adopting to unhealthy dietary habits- preserved food, fast foods, high calorie diets along with smoking, alcohol, drugs and lack of exercise, all offer a incessant stress result in the development of various psychosomatic diseases such as diabetes, hypertension, arthritis, back pain etc.

‘Stress is both a Challenge and a Boon’. The momentum of technological advancement has engrossed both accelerated growth in different sectors as well as intensified the stress levels in human’s life. This speed and concentration of the mental faculty has aggravated stress factor even among young students and adolescents.

17.6 Ancient Way of Lifestyle

Lifestyle related disorders are on the rise in modern times due to erratic sedentary lifestyle one has resorted to. High level of competition, deadlines, traveling, night shifts and many other roles that every individual has to handle has left one under high levels of stress. It’s not a surprise that one ignores to follow a proper lifestyle and the trend has been passed on to next generations. Contrary to that is the lack of information about a healthy lifestyle. There are simple tips that an individual can adopt to keep himself fit. It starts right from waking up early and going to bed early. Nowhere that the modern education emphasizes on education for a healthy

individual to restore health. Ancient systems are one such science that not only talks about healing the diseased but also to impart good health for the healthy. This can be achieved following simple routine practices. These routine being deceptively simple gives a comprehensive idea about the principles to be adopted daily to keep oneself healthy. Following these principles as a daily routine bring radical change in body mind, and consciousness. A collective information of all the practices that the ancient Sages followed in order to maintain health and longevity is explained under.

17.7 "Pratidinam kartavyaa charyaa dinacharya"

Those activities we perform everyday a a habit is called Dinacharya. It is the mandatory regular principles to lead a hygienic lifestyle. The daily schedule commences from the time a person rises from bed till he/she retires for the night. Would healing and anti bacterial properties. Rinse the mouth with cold water during winter season. Cleaning the tongue is also necessary to remove hindrances breathing, for fresh breathe and to enhance the taste. Naturopathy believes that coating of tongue indicates toxins in colon.

Ear, Nose and Eye Care: Ear should be cleaned daily. Clean the nose using warm water mixed with rock salt (net). Rinse your mouth with warm water after the procedure.

Bathing: is cleansing and refreshing. It removes sweat, dirt, and fatigue, brings energy to the body, clarity to the mind, and holiness to your life. Cold water should be used to bathe. One should not take bath immediately after meals.

Breakfast: Certain rules have to be followed prior to intake of food. One should choose a clean place, offer salutations to god and maintain calm and pleasant state of mind throughout process. Fresh and light food should be taken and most importantly the food you take and most importantly the food you take should be the one you are accustomed to and enriched with all six rasas (taste)- (sweet, astringent, bitter, sour, pungent/hot, salty). One should not eat food while you are depressed and angry mood, that food which is stale and heavy for digestion. It is said that when the food is pure, sattva is pure and when sattva is pure the mind is strong.

Lunch: During noon large part of the meal should be taken during afternoon. Hot, salty and sour predominant food should be avoided. Sleeping immediately after food is not advisable while one is permitted to take rest during summer

Dinner: One should take light food, easily digestible and taken early. It would be good if one part of the stomach is left empty (i.e, don't fill your stomach). Thinking of God or engaging one's mind with good thoughts one should sleep on to his left. It is recommended that the head should be facing East or South direction. One should not involve in strenuous activities or go to bed immediately after food.

Good Conduct: Apart from all these things description about conduct is given. Two types of conduct have been explained. Personal conduct and social conduct. Personal conduct is explained above and awards us good health and a control over our senses and desires.

Social conduct ensures personal mental peace and aid good interpersonal relation. It includes respecting the elders, forefathers, teachers, preachers, scholars, etc. Empathy towards elderly people, women, children those ailing, weak, physically challenged etc. One should share your joys and achievements with well-wishers. One should not give authority and unknown person and rely on anyone completely. Don't disclose anyone's secrets in public and speak only when it's your turn and within the context of truth. Abstain from lies, anger, in extreme grief, jealousy, greed, sins, in extreme grief, jealousy, greed, sins, gossip, ill-commenting, unhealthy criticism and enmity towards others. Do not mingle in the company of ill-mannered people or people with evil thoughts.

17.8 Technique of Yoga

There are many methods of Yoga catering to the needs of different persons in society to bring about the transformation of the individual. They are broadly classified into four streams. Swami Vivekananda puts them as work, worship, philosophy and psychic control.

1. **Karma Yoga:** This path of working in relaxation involves doing action with an attitude of detachment to fruits of action. This makes man release himself from the strong attachments thereby brings in him a steadiness of

mind, which verily is Yoga'-Samatvam yogah Uchyate'. Instruments of action and understanding (karmendriyas and Janendriyas) get cleansed.

2. **Bhkati Yoga :** the control of emotions is the key in the path of worship that involves pure love to the divine and is characterized by total surrender. In the age of globalization, man is tossed up and down due to emotional onslaughts. The path of Bhakti is boon to gain control over emotional instabilities by properly harnessing the involved in it.
3. **Jnana Yoga:** The present age of science has made man a rational being. Intellectual sharpness is imminent. Analysis forms the tool. The path of philosophy (Jnana Yoga) is apt for the keen intellectuals and is centered around the analysis of "happiness'. The vital contribution of Upanishads. Also many other fundamental questions regarding the mind, the outside and inside world and the reality are taken up. Basic questions are raised even involving the intellect itself to reach the very basis of intellect.
4. **Raja Yoga:** Culturing of mind is the key for success in almost all endeavors in our lives. This Yoga of 'mind culture or psychic control (Raja Yoga) gives a practical and easy approach to reach higher states of consciousness. It is based on the Ashtanga Yoga (Eight limbed Yoga consisting of Yama, Niyama, Asana, Pranayama, Pratyahara, Dharana, Dhyana and Samadhi) of Patanjali's Yoga system. The first five are called bhiranga Yoga and dharama, dhyana and Samadhi are antaranga Yoga.

Ashtanga Yoga:

Maharrshi Patanjali has explained in eight steps known as Ashtanga Yoga to reach the higher state. They are (Eight limbed Yoga consisting Yama, Niyama, Asana, Pranayama, Pratyahara, Dharana, Dhyana and Smadhi). The first five are called bahiranga Yoga and dharana dhyana and Samadhi are antaranga Yoga.

यमनियमासन- प्राणायाम- -प्रत्याहार – धारणा- ध्यान – समध्योंअष्टांग्नि-

,noitcartsba ,htaerb fo noitaluger ,erutsop ,secnavresbo dexif ,stniartser– fleS enilpicsid-fles eht fo) strap thgie eht era ecnart dna ,noitalpmetnoc ,noitartnecnoc (agoY fo

1. **amaY**

अहिंसा सत्यास्तेय ब्रम्हचर्यापरिग्रहायमाः

,tfeht dooh eslaf ,ecneloviv morf noitnetsba esirpmoc ,tniartser fles fo swoV .ssenevitisiuqca dna ecnenitnocni

latnem ,noitartnecnoc fo rewop eht esaercni ot yaw sevap amaY fo ecitcarp ehT :samaY eht era gniwollof ehT .ssenidaets dna ytirup

asmihA - srehto mrah ot ton

aytaS - lufhturt eb ot

ayetsA - laets ot ton

ayrahcamharB - ycabilec

ahargirapA - sdeen ssessop ot ton

2. amayiN

शौचसंतोष – तप: - स्वध्यायेश्वरप्राणीधानानि नियमा: ।–

etutitsnoc rednerrus-fles dna ,yduts-fles ,ytiretsua ,tnemtnetnoc ,ytiruP .secnavresbo

:samayiN evif era erehT

ahcuoS - noitacifirup lanretni dna lanretxe

ahsotnaS - tnemtnetnoc

hapaT - slaog eveihca ot troffe thgir ekam ot

ayayhdawS - suoigiler dna stxet citnehtua yduts ot ytinivid s eht dna fles fo eriuqca ot serutoircs

nahdinarP rawhsI - .lliw enivid eht ot rednerrus etelpmoc

From that no assaults from the pairs of opposites.

Generally Asanas for the under- standing is explained and cateforised as special patterns of postures that stabilize the mind and the body through static stretching. Their aim is to establish proper mechanism in the neuromuscular tonic impulses and improve the general

Asanas may be classified as

(1) Meditative
(2) Cultural

(3) Relaxative

1. **Meditative Asanas** are sitting postures, which maintain the body in a steady and comfortable condition. By various arrangements of legs and hands, different Meditative Asanas viz. Siddhasana, Swastikasana, Padmasana, Vajrasana, Bhadrarau, muktasana and Sukhasana are performed. The characteristic feature of the Meditative Asana is, however, keeping the head, neck and trunk erect.
2. **Cultural Asanas** involve static stretching, which bring about proper tone of muscles. They contribute to the flexibility of the spine and render the back and spinal muscles stronger. They also stimulate proper working of the organs in the thoracic and abdominal cavities. There are innumerable varieties of Cultural Asana, which are performed through sitting, lying and standing position Pavan Muktasana, Naukasana, Viparita Karni, Sarvangasana, Matsyasana, Halasana, Chakrasana etc.
3. **Relaxative Asanas** are few in numbers like Shavasana, Makarasana, Balasana etc. They are performed in the lying position and are meant for giving rest the body and mind.
4. **Pranayama:**

तस्मिन सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदःप्राणायाम : ।

After mastering posture the science of regulating and gaining control over the prana or breath or life force. Normally, there are 3 components of breathing – Inhalation (Puraka), Exhalation (Rechaka) and stoppage of breath (Kumbhaka). Maintaining kumbhaka is the main aim of pranayama but it should be kevala Kumbhaka, a natural cessation of breath without any force. There are different types of pranayama techniques mentioned in the Hatha Yoga text; they are Surabhedana pranayama, Nadishuddhi pranayama, Bhramari pranayama, Ujjayi pranayama, Bhastrika pranayama, Plavani pranayama Mrcha pranayama etc. These pranayamas help in getting control over the thought processes in the mind as breath acts as a mediator between body and mind. The other benefits of pranayama along with Kumbhaka are development of deep relaxation, lowered metabolic rate, sense of bilssfuness, expansiveness and solitary thought.

5. **Pratyahara**

स्वविषया सम्प्रयोगे चित्तस्वरूपनुकार इवेन्द्रियाणा प्रत्याहारः :

Pratyaahaara or abstraction is, as it were, the imitation by the senses of the mind by withdrawing themselves from their objects.

Pratyaahaara is in-drawing the mind away from perceptible external sensory stimuli by developing introspection. Usually our sense organs are used to percetive the things happening around us but the same sense organs can be indrawn after getting control over the mind by the practice of asanas and prnayamas and start concentrating on the change, which are happening inside the body. This helps to gain control over the sense organs, develop single thought thereby controlling the thought processes and leads one to practice meditation.

6. Dharana, Dhyana and Samadhi

देशबंधश्चित्तस्य धारणा।

Concentration is the confining of the mind within a limited (object of concentration).

7. तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्।

Uninterrupted flow (of the mind) towards the object (chosen for meditation) is contemplation.

8. तदेवार्थनिर्भासं स्वरूपशुन्यमिव समाधि :

The same (Contemplation) when there is consciousness only of the object of meditation and not of itself (the mind) is samaadhi.

Dharana is focusing of mind then leads to relaxed dwelling of the mind on a single thought is Dhyana. Longer practices of dhyana leading to thought less state or super conscious state called Samadhi.

Apart from Ashtanga Yoga mentioned by sage patanjali, the other known as Hathayoga prescribes other techniques such as Kriyas, Bandhas, Mudras etc.

Kriyas

These are purificatory processes usually classified into six divisions and therefore they are often called Shatkriyas. These are

1) Dhauti for cleansing upper gastro intestinal tract (GIT) up to stomach.
2) Basti for cleansing lower gastro intestinal tract (GIT) especially the rectum. (Shankha Prakshalana is for the entire GIT).

3) Net for cleansing the abdominal organs and
4) Trataka for cleansing the eyes.
5) Nauli for cleansing the abdominal organs and
6) Kapalbhati for cleansing the lower respiratory tract (from nostrils to lungs).

Each one of which consists of many sub.-sections. Kriyas bring control on different reflexes and establish psycho-physiological balance. The main effects of kriyas are

1) Cleansing, activating and revitalizing the organs.
2) Tones up the functions of the organs.
3) Desensitization.
4) Development of deep internal awareness.

Banshas and Mudras

These are locks and hold of the semi voluntary and involuntary muscles in the body. They decongest the vital organs, improve circulation and nutrition by pressure manipulations and contribute to general health and emotional stability. A difference is made between the Bandhas and Mudras on the basis of their use in Pranayama. Mudras that are used in Pranayama are used called Bandhas because they bind and channelize a particular nervous activity in a particular place or direction. Jalandhara, Uddiyana and Moola are called Mudras because of their specific effects and channels through which the effects are brought about.

17.9 Definition of Naturophy

Naturopathy is system of man building in harmony with the constructive principles of natute of physical, mental, moral and spiritual plances of living. It has great health promotive, disease preventive and curative as well as restorative potential.

17.10 Concept of Health and disease (Naturopathy)

1. Vitality or vital force
2. Health and disease
3. Lowered vitality
4. Abnormal composition of blood and lymph
5. Accumulation of morbid matter and poisons
6. Mantal and emotional influences

17.11 Maint Priencipal of Naturopathy

1. All diseases, their causes and treatment are one. Except for traumatic and environmental conditionsm, the cause of all diseases is one i.e. accumulation of morbid matter in the body. The treatment of all diseases is elimination of morbid matter form the body.
2. The primary causes of disease is accumulation of morbid matter. In the body only after the accumulation of morbid matter when a favourable atmosphere for their growth is established in body. Hence, the basis cause of disease is morbid matter and bacttria secondary causes.
3. Acute diseases are self-healing efforts of the body. Hence they are our friends, not the enemy. Chronic diseases are outcome of wrong treatment and suppression of the acute diseases.
4. Nature is the greatest healer. The human body itself has the heading power to prevent itself from disease and regain health if unhealthy.
5. In nature cure it is not the diseases but the entire body of the patient which is caused and is renewed.
6. Naturopathy cyres patients suffering from chronic ailments are also treated suceessfully in comparatively less time by naturopathy.
7. In nature cure the suppressed diseases are brought to surface and are removed permanently.
8. Naturopahthy are not need for Rog nidhan
9. Naturophthy teats the body as a whole
10. According to naturopathy, “Food is only the the medicine”, no external medications are used.
11. Performing prayer according to one’s spiritual faith is an important part of treatment (According to Gandhiji Rama Nama is the best natural treatment.

17.12 Important Treatments of Naturopathy

- Mud pack, mud Applications
- Mud Bath, Underground Mud Bath, Mud Pool Bath
- Hip Bath
- Spinal Bath, Spinal Spray Bath

- Immersion Bath, Fruction Bath
- Foot Bath, Arm Bath
- Steam Bath, Saun Bath
- Sun Bath, Colour Sun Bath (Chromo Bath),
- Green Leaves Sun Bath
- Hot & Cold Fomentation
- Wet Sheet Pack, Chest Pack, Adomen Pack, Trunk Pack,
- Knee Pack, Neck Pack, Wet Girdle Pack
- Enema-warm Water, Butter Milk, Tender Cocular Jet Bath
- Colon Irrigation
- Deluxe Hydro Massaage, Jacuzi
- Hot and Cold Water Douches, Effusions
- Whirlpool Bath
- Under Water Exercises
- Magnet Therapy
- Acupuncture
- Acupressure
- Reflexology
- Physiotherapy Treatments –
- Exercise Therapy, Electro Therapy

17.13 Summary

Health is generally defined as being "a state of complete physical, mental and social well-being and not merely the absence of disease or merely the absence of disease or infirmity" according to the World Health Organization (WHO). It also suggests a fourth dimension i.e. "spiritual well being". Overall health is achieved through a combination of physical, mental, emotional, social and spiritual well-being.

Physical health is characterized by good body health (average height or weight), absence of any diseases, and is the result of regular exercise, proper diet and nutrition, and proper rest for physical recovery.

The word Yoga comes from the root word yuj meaning to union. Accordingly Yoga can be defined as a means for uniting the individual consciousness with the universal consciousness. Patanjali define in his second aphorism 'yogah citta vrtti nirdhah'; Yoga is a process of gaining control over the mind by cessation of the mind modifications of mind by controlling the mind, one can teach the original state – 'Tada drashtuh swarupe avasthanam" . YOGA is an ancient. Indian science and is one among the shat darshanas (Six great Indian philosophies) which has evolved over thousands of years. In the spiritual dimension, Yoga is a path towards attainment of super conscious states beyond sensory perception and knowledge.

17.1**4** Exersixe Question

Write the Short note no :

1. Definition of Health and Yoga
2. Definition of Naturophy
3. General Rules to Practice Yoga
4. Ancient Way of Lifestyle
5. What are the "Pratidinam kartavyaa charyaa dinacharya"
6. Concept of Health and disease (Naturopathy) Explain
7. Write the Maint Priencipal of Naturopathy. Explain

17.1**5** References

1. Yognsudha, Dr. Kashi nath Samgandi and Dr. Jagrati Sharma
2. Yoga and Naturopathy for holistic health , CCRYN (AYUSH)